MAGP-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

मोहनदास से महात्मा गाँधी

MAGP – 01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

मोहनदास से महात्मा गाँधी

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति, वर्धमान महावीर खुला विष्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक / सदस्य

संयोजक

डॉ. बी. अरूण कुमार

सह आचार्य, राजनीति विज्ञान

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. (डॉ.) एन. राधाकृष्णन

पूर्व अध्यक्ष गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

राजघाट, नई दिल्ली

प्रो. (डॉ.) के.एस. भारती

विभागाध्यक्ष (गांधी एवं विचार)

टी.के.एम. नागपुर विश्वविद्यालय, नगापुर

प्रो. (डॉ.) एम. एल. शर्मा

आचार्य, गाँधी अध्ययन केन्द्र

पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

पाठ लेखन

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच 1

पूर्व कुलपति, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय

कोटा (राजस्थान)

आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग

राजस्थान विस्वविद्यालय, जयपुर

प्रो. (डॉ.) हिमांशु बोराई 2, 3, 9

आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग

हेमवती नन्दन बहुगुणा, विश्वविद्यालय

श्रीनगर (गढ़वाल) उत्तराँचल

प्रो. (डॉ.) बी. अरूण कुमार 4, 5

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,

कोटा (राजस्थान)

डॉ. नरेश भार्गव 6, 7, 8

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय

कोटा (राजस्थान)

डॉ. गोपाल मीना 10, 12, 13

पूर्व गेस्ट फेकल्टी, राजनीति विज्ञान

राजकीय महाविद्यालय, बेहरोड़

बेहरोड़ (राजस्थान)

प्रो.(डॉ.) वी. के. राय 11, 14

आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग

इलाहबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. (डॉ.) अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्याल
कोटा

प्रो. (डॉ.) एल आर. गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय
कोटा

प्रो. (डॉ.) कर्ण सिंह
निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्याल
कोटा

डॉ. सुबोध कुमार
अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्याल
कोटा

उत्पादन : जनवरी 2016 ISBN No: 978-81-8496-591-9

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि, कोटा के लिये कुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

MAGP-01

वर्धमान महावीर खुला विश्विद्यालय, कोटा

मोहनदास से महात्मा गाँधी

अनुक्रमणिका

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई - 1	महात्मा गाँधी	1 - 18
इकाई - 2	गाँधी जीवन (1869 ई - 1948 ई)	19 - 44
इकाई - 3	गाँधी के जीवन और चिंतन पर प्रभाव	45 - 57
इकाई - 4	दक्षिण अफ्रिका में गाँधी का अभियान	58 - 75
इकाई - 5	भारत में गाँधी : चम्पारण सत्याग्रह से भारत छोड़ो आन्दोलन तक	76 - 110
इकाई - 6	चंपारण आन्दोलन और महात्मा गाँधी	111 - 127
इकाई - 7	खेड़ा सत्याग्रह एवं गाँधी	128 - 148
इकाई - 8	बारदोली सत्याग्रह और महात्मा गाँधी	149 - 166
इकाई - 9	गाँधी: आध्यात्मिक व्यक्तित्व	167 - 182
इकाई - 10	लंदन में गाँधीजी का विद्यार्थी जीवन	183 - 195
इकाई - 11	गाँधी का व्रत सम्बन्धी विचार	196 - 209
इकाई - 12	वॉयकोम सत्याग्रह	210 - 220
इकाई - 13	नोआखली सत्याग्रह	221 - 233
इकाई - 14	महात्मा गाँधी : एक जननेता के रूप में	234 – 249

इकाई – 1

महात्मा गाँधी

इकाई रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 जीवन परिचय

1.3 गाँधी चिन्तन पर प्रभाव

1.3.1 पूर्वी प्रभाव

1.3.2 पश्चिमी प्रभाव

1.4 दार्शनिक विचार

1.5 सत्याग्रह

1.6 आर्थिक विचार

1.7 राजनीतिक विचार

1.8 महात्मा गाँधी का चिन्तन में योगदान

1.9 सारांश

1.10 अभ्यास प्रश्न

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझ सकतेहैं :-

- महात्मा गाँधी के जीवन के बारे में।
- महात्मा गाँधी का महान चिन्तन क्या था।
- महात्मा गाँधी के चिन्तन की विशेषतायें।
- महात्मा गाँधी के चिन्तन की प्रमुख अवधारणाओं को जानना
- महात्मा गाँधी का योगदान।

1.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी को एक चिन्तक के रूप में प्रस्तुत करने में सबसे बड़ी बाधा यह आती है कि उनका व्यक्तित्व इतना विशाल था कि उनके चिन्तन पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। उनका कथन 'मेरा जीवन ही मेरा सन्देश है' उनको चिन्तक के रूप में जानने में बाधक है।जैसे कि अलबर्ट आईस्टीन ने कहा कि आने वाली पीढ़ियाँ यह विश्वास नहीं करेगी कि गाँधी जैसा एक हाड मांस का मानव पृथ्वी पर रहता था। महात्मा गाँधी की तुलना इतिहास बदलने वाले व्यक्तियों में की जाती है। उन्हें बुद्ध और ईसा जैसे व्यक्तित्व के समान वर्ग में रखा जाता है। इतने महान व्यक्तित्व के धनी होने के कारण तथा समय के सन्दर्भ में हमसे इतने नजदीक होने के कारण उनको बहुत वर्षो तक एक विचारक के रूप में महत्व नहीं दिया गया । 21 वीं शताब्दी के आरम्भ में आज उनको विकास की एक वैकल्पिक व्यवस्था जनक के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। आज के सभी समाजिक वैज्ञानिकों को जब भी पूँजीवादी, भौतिकतावादी व इन्द्रियजन्य विकास की अवधारणा के विकल्प की आवश्यकता होती है, महात्मा गाँधी को याद किया जाता हैं । विश्व में धर्म की स्थापना करने वालों के अलावा किसी भी अन्य व्यक्ति पर इतना अधिक नहीं लिखा गया है और न ही किसी भी व्यक्ति की इतनी अधिक और विपरीत व्यक्तित्व वाले महान लोगों से इनकी तुलना की गई है। महात्मा गाँधी की तुलना बुद्ध, सन्त फ्रांसिस, ऐम्रसन, लिंकन, सनयातसेन, रूसो, थोरो, मार्क्‍स और टॉलस्टॉय जैसे व्यक्तियों से की गई है।

उनका व्यक्तित्व भी बहु आयामी था। दक्षिण अफ्रीका में मानव अधिकारों के लिए संघर्श करने वाला भारत के जन आन्दोलन का सफलतापूर्वक नेतृत्व करने वाला, सामाजिक बुराइयों, अस्पृश्यता के विरूद्ध युद्ध करने वाला, प्राकृतिक चिकित्सा स्वस्थ भोजन का प्रयोग करने वाला, समाज सुधारक, महिलाओं को समान दर्जा दिलाने

वाला, विभिन्न धर्मो का तुलनात्मक अध्ययन करने वाला, बुद्धिमान प्रचारक, कुशल पेम्फलेटर, हजारों व्यक्तियों को नैतिक निर्देशन देने वाला तथा आश्रम और सामुदायिक जीवन की स्थापना करने वाला और एक संत के रूप में पहचाना जाने वाला व्यक्तित्व महात्मा गाँधी का था। उनके द्वारा लिखे गये लेखन की विस्तृतता इतनी अधिक है कि उसे व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करना असंभव है। उनके द्वारा अपने जीवन में डेढ़ करोड़ शब्द लिखे गये जिनका 100 ग्रन्थों में संकलन किया गया है। उन्होंने जीवन के हर पहलू पर अपने विचार प्रस्तुत किये है। 1933 में उन्होंने लिखा कि मैने जो कुछ लिखा है उसमें सत्य और अहिंसा के सिद्धान्तों का समावेश करना आवश्यक है। जिन बातों में उनके सिद्धान्तों का समावेश नहीं होता है, उन बातों को त्याग देना चाहिये उन्होंने अपने चिन्तन के विकासात्मक पहलूओं पर जोर दिया। 1939 में उन्होंने लिखा कि लिखते समय यह कभी नहीं सोचता हूँ कि इस विषय पर पहले क्या लिखाघ् मेरा उद्देश्य अपने पहले लिखे गये वक्तव्य के प्रति समानता बनाये रखना नहीं है, अपितु सत्य के प्रति प्रतिबद्धता बनाये रखना है। उन्होंने अपने चिन्तन में कई अवधारणाओं को जन्म दिया है और पुरानी अवधारणाओं को नये ढंग से प्रस्तुत कर स्वराज, स्वदेशी, सत्याग्रह, सर्वोदय इत्यादि अवधारणाओं को संशोधित किया और लोकप्रिय बनाया। इतना लिखने के पीछे उनका कारण विस्तृत पठन की प्रवृति थी। 1923 में यर्वदा जेल में 55 वर्ष की आयु में उन्होंने एक साल में 150 पुस्तकों का अध्ययन किया जिसमें उन्होंने महाभारत, भारतीय दर्शन के सभी छः सम्प्रदायों मनुस्मृति, उपनिषद्, गीता की सभी टीकाऐं, विलियम जेम्स, एच.जि. वेल्स, रूडयार्ड, किपलिंग जैसे लेखकों की रचनायें पढ़ी थी। 1944 में कार्लमार्क्स के दास केपिटल का अध्ययन किया और यह टिप्पणी की कि मैं यह नहींजानता कि माक्र्सवाद सही है या नहीं है, लेकिन जब तक गरीब का शोषण होता रहेगा उनके लिए कुछ करना चाहिए।

आज विश्व में भारत की पहचान का एक बहुत बड़ा कारण महात्मा गाँधी हैं। महात्मा गाँधीजी द्वारा किये गये कार्यों और उनके द्वारा बताये गये सिद्धान्तों का अनुसरण सारे विश्व में होता है और भारत के नागरिक होने के कारण हमें उनके कार्यों और विचारों के सही परिप्रेक्ष्य को समझना चाहिए और उस पर गर्व करना चाहिये।

1.2 जीवन परिचय

महात्मा गाँधी का जन्म 2 अक्टुबर, 1869 को गुजरात प्रांत के पोरबन्दर में हुआ था। इनके पिता करमचंद गाँधी ने 4 शादियां की थी और 3 पत्नियों की मृत्यु के पश्चात् चैथी पत्नी पुतली बाई से उन्हें 3 पुत्र और 1 पुत्री हुए। करमचंद गाँधी की पहली पत्नी के भी 2 पुत्रियां थी। उनके 3 पुत्रों में सबसे बड़े लक्ष्मीदास, दूसरे कृष्णदास और तीसरे मोहनदास थे। तीसरे और सबसे छोटे पुत्र मोहनदास ही महात्मा बने। गाँधीजी जाति से बनिया थे तथा जूनागढ़ राज्य के कुटियाना जगह से सम्बन्धित थे। गाँधीजी के पड़दादा हरजीवन गाँधी ने 1777 में पोरबन्दर में एक मकान खरीदा और व्यापारी के रूप में वे वहाँ स्थापित हुए। हरजीवन गाँधी के पुत्र उत्तमचंद महात्मा गाँधी के दादा पोरबन्दर के शासक राणा सिंह जी के दीवान नियुक्त हुए। 1847 में उत्तमचंद इस राज्य के 28 वर्ष तक

दीवान बने रहे। करमचंद गाँधी की शिक्षा बहुत कम हुई थी, लेकिन उन्हें राज्य के कार्यो और व्यक्तियों का पर्याप्त अनुभव था। उनकी ख्याति एक ईमानदार, प्रतिबद्ध, सक्षम एवं आज्ञाकारी प्रशासक के रूप में थी। महात्मा गाँधी की माता पुतली बाई एक धार्मिक एवं मजबूत महिला थी। वे अनेक व्रतों और उपवासों से मजबूत बनी थी तथा वे आंतरिक रूप से सशक्त महिला थी। महात्मा गाँधी ने माना कि उनके जीवन के व्यक्तित्व में जो कुछ शुद्धता है वह उनकी माता की देन है। महात्मा गाँधी ने 6 वर्ष की उम्र में पढ़ाई आरम्भ की और राजकोट के तालिका विध्यालय में शिक्षा प्राप्त की, शिक्षा के आरम्भिक दिनों में वे एक भीरू बच्चे थे। अन्य बच्चों से दोस्ती करने की अपेक्षा स्वयं तक सीमित रहते थे। वे प्रकृति से झूठ व फरेब से परे थे।1887 में महात्मा गाँधी ने मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की और उनको परिवार के मित्र माउजी दवे ने यह सुझाव दिया कि उन्हे कानून की षिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड जाना चाहिए ताकि वे बेरिस्टर बन सके और वापसी में अपने पिता का स्थान ले सके।

4 सितम्बर, 1888 को वे पानी के जहाज से इंग्लैण्ड के लिए रवाना हो गये। 3 वर्ष तक उन्होंने इंग्लैण्ड में रहकर कानून की शिक्षा प्राप्त की और पुनः भारत लौट आये। उन्होंने भारत में वकालात करने की कोशिश, की लेकिन वे अधिक सफल न हुए। उनमें सार्वजनिक भाषण देने की कला का अभाव था और वे न्यायालय के जज के समक्ष अपने तर्को को सही प्रकार से प्रस्तुत नहीं कर पा रहे थे। ऐसे समय उन्हें दक्षिण अफ्रीका जाने का न्योता मिला। दक्षिण अफ्रीका में एक मुस्लिम भारतीय व्यापारी अब्दुला ने उन्हें अपना मुकदमा लड़ने के लिए आमंत्रित किया। मई 1893 में महात्मा गाँधी डरबन में पहुँचे। वहाँ एक रेल यात्रा के दौरान उन्हें रंगभेद का सामना करना पड़ा और इस रंगभेद की नीति को उन्होंने बाद में कई स्थानों पर एक भयावह रूप में देखा। धीरे.धीरे महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका सरकार की रंगभेद नीतियों के विरूद्ध बढ़ती जन चेतना को संगठित रूप प्रदान किया। दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गाँधी 1915 तक रहे और इस बीच उन्होंने न केवल अपनी राजनीति को विकसित किया अपितु राजनीतिक संगठन बनाया, राजनीतिक विरोध के स्वरूप का निर्धारण किया तथा राजनीतिक विरोध को जनता और विश्व के कोने-कोने तक फैलाने के सफल प्रयास का तरीका सीख लिया। राजनीति में सफल होने के बावजूद उन्होंने स्वयं के साथ प्रयोग करना नहीं छोड़ा। इसे उन्होंने ष्सत्य के साथ प्रयोग" नाम दिया। यह 1925 में उनके द्वारा लिखी गई आत्मकथा का शीर्षक भी था। दक्षिण अफ्रीका के प्रवास के दौरान हड़तालें की, अहिंसात्मक संघर्ष किया, कई अखबार निकाले, आश्रमों की स्थापना की और एक पेम्फलेटर के रूप में ख्याति प्राप्त की। इसी दौरान उन्होंने अपनी दार्शनिक सोच को पहली बार एक पुस्तक 'हिन्द स्वराज्य' में प्रस्तुत किया। महात्मा गाँधी ने 1909 में इस पुस्तक को लिखा यह पुस्तक 20 छोटे.छोटे अध्यायों में विभक्त है। 11 अध्यायों में उस समय के इतिहास के परिप्रेक्ष्य में टिप्पणियाँ है, बाकी में दार्शनिक प्रश्नों पर टिप्पणियां है। यह पुस्तक इंग्लैण्ड से दक्षिण अफ्रीका जाते समय जहाज पर 13 से 22 नवम्बर, 1909 में दस दिनों के भीतर गुजराती भाषा में लिखी गयी। आज इस पुस्तक को आधुनिकता की प्रमुख आलोचना की पुस्तक के रूप में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है।

1915 में भारत लौटने के पश्चात् महात्मा गाँधी ने 1947 तक भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।1920 से 1947 तक का समय गाँधी युग के रूप में जाना जाता है। भारत आने के पश्चात् गाँधीजी ने गोपाल कृष्ण गोखले की सलाह पर एक वर्ष तक भारत का दौरा किया जिससे कि वह भारत के आम आदमियों की सभी समस्याओं को जान सके और भारतीय समाज के बारे में समझ सके। भारत में आने से पूर्व उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में सत्ता के विरोध का एक नया और सफल हथियार ष्सत्याग्रह” खोज लिया था। उन्होंने भारत की आजादी की लड़ाई में इसका सफलतापूर्वक प्रयोग किया। भारत में महात्मा गाँधी ने कई आन्दोलनों का सफलतापूर्वक नेतृत्व प्रदान किया। इसमें सबसे पहला बड़ा आन्दोलन 1917 में चम्पारण में हुआ।उसके पश्चात् 1919 का खिलाफत आन्दोलन, 1920, का असहयोग आन्दोलन, 1930 का नमक सत्याग्रह आन्दोलन एवं सविनय अवज्ञा आन्दोलन, 1942 का भारत छोड़ों आन्दोलन आदि प्रमुख हैं। महात्मा गाँधी द्वारा भारत में किये गये इन आन्दोलनों के विस्तार में न जाते हुए हम यह कह सकते है कि कुछ प्रवृतियाँ इन आन्दोलनों को विशिष्टता प्रदान करती है।

(1) महात्मा गाँधी ने राष्ट्रीय आन्दोलन की राजनीतिक चेतना को सकारात्मक रूप से जानने व संगठित करने का अभूतपूर्व कार्य किया।

(2) इन आन्दोलनों के माध्यम से राजनीति से आम आदमी को जोड़ने का प्रयास किया। उन्होंने अंग्रेजी के बजाय हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग, खादी का प्रचलन, महिलाओं को आन्दोलन से जोड़ना, भारतीय पूँजीपतियों का सहयोग और अन्तर्राष्ट्रीय जगत को निरन्तर अखबारों के माध्यम से अपने कार्यों से प्रभावित किया।

(3) राष्ट्रीय आन्दोलन के सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक दल कांग्रेस को जनतांत्रिक संगठन बनाया और कांग्रेस की सदस्यता के लिए बनाये गये नियमों का निरूपण किया जो आज भी दल का सदस्य बनाने के लिए आवश्यक नियम माने जाते है।

(4) इन आन्दोलनों में नेतृत्व देने की एक नई शैली विकसित की जिसमें नेतृत्व और सामान्य जनता के भेद को समाप्त किया। वे मेक्स वेबर के करिश्माई नेतृत्व का जीता जागता उदाहरण हैं।

1947 में भारत के स्वतंत्र होने के समय देश के बँटवारे के कारण साम्प्रदायिक दंगे हो रहे थे। 15 अगस्त 1947 को भारत आजादी के जश्न में डूबा था। महात्मा गाँधी आजादी का जश्न न मनाकर बंगाल में नोआखली साम्प्रदायिक दंगे रोकने में लगे हुए थे। 30 जनवरी, 1948 को उनकी हत्या कर दी गई। उनका जीवन एक संत का जीवन था और उनका यह कहना सही था कि उनका जीवन ही उनका संदेश है। उनके कई वक्तव्य दुनिया भर में बार.बार उद्धृत किये जाते हैं जैसे किसी भी नीतिगत निर्णय करने के बारे में भ्रम पैदा हो रहा हो तो उसका एकमात्र तरीका मापदण्ड यह है कि वह निर्णय लेने से पूर्व अपनी आँखें बंद कर के सोचे कि क्या इस निर्णय से किसी

गरीब की आँख का एक आँसू पुछ जाएगा? अगर ऐसा है तो वह निर्णय सही है।इसी प्रकार आज पर्यावरण की रक्षा के बारे में चिन्तित लोगों के बारे में उनका मंत्र था कि पृथ्वी के पास सभी मनुष्यों की आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता है लेकिन किसी एक व्यक्ति के लालच को पूर्ण करने का इसमें सामथ्र्य नहीं है। इसलिए विकास की यात्रा का आधार मनुष्य की आवश्यकता होनी चाहिए, लालच नहीं।

1.3 गाँधी चिन्तन पर प्रभाव

महात्मा गाँधी ने अपना बचपन भारत में बिताया तथा वे वकालात की शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड गये थे। उनका कार्यक्षेत्र 20 वर्षो तक दक्षिण अफ्रीका रहा। 1915 में भारत लौटने के पश्चात् अपनी मृत्यु तक वे भारत में रहे और भारत की आजादी के लिए काम करते रहे। अपने जीवन में उन्होंने कई नये अनुभव प्राप्त किये और उनमें अनुभवों से सीखने की अद्भुत क्षमता थी। उन्होंने किसी भी अनुभव को न सीखने के योग्य नहीं माना। उन्होंने न केवल अपने जीवन के अनुभवों से जो कुछ सीखा उसे अपने विचारों में ढ़ाल दिया, अपितु उसे जीवन में भी उतारने की कोशिश की। कर्म और चिन्तन के इस सटीक सम्मिश्रण से उनका चिन्तन अनुभव जन्य और आदर्शवादी सिद्ध हुआ।अपने बचपन में उन्होंने किसी भी सामान्य हिन्दू परिवार के बच्चों की तरह राम, कृष्ण, महाभारत एवं पुराणों की कथाएं सुनी। भारतीय संस्कृतियों के मूल्यों से ओतप्रोत इन कथाओं ने उन्हें प्रेरणा दी। बचपन का प्रभाव था कि वे उम्र भर राम को अपना आदर्श मानते थे और उसे उन्होंने राम नाम को एक अद्भुत आंतरिक शक्ति प्रदान करने वाला प्रकाश पुंजमाना।

उनका परिवार एक वैष्णव परिवार था। इसलिए भक्ति और संतों का उन पर काफी प्रभाव पड़ा। जिसमेंनरसिंह मेहता का सुप्रिय भजन ‘‘वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीर पराई जानी रे’’ उनका सर्वाधिक प्रिय था।महात्मा गाँधी अपनी युवावस्था में जैन धर्म से भी काफी प्रभावित हुए और इंग्लैण्ड जाने पर उन्होंने ईसाई धर्म को भी समझने का प्रयास किया। दक्षिण अफ्रीका में उनके यहूदी और अंग्रेज मित्र भी बने उनका तथा वहाँ मुस्लिम मित्रों ने भी उनका साथ निभाया। इस प्रकार वे अनेक धर्मों व संस्कृति के माध्यम से विभिन्न व्यक्तियों के सम्पर्क में आये और उनसे कुछ न कुछ बात ग्रहण की।

उनके चिन्तन पर पड़ने वाले प्रभावों को दो भागों में विभक्त कर सकते है - पूर्वी प्रभाव तथा पश्चिमी प्रभाव।

1.3.1.1 पूर्वी प्रभाव

1. पूर्वी धार्मिक प्रभाव :- महात्मा गाँधी के जीवन पर हिन्दू धर्म जिसमें विशेष रूप से वैष्णव धर्म का प्रभाव पड़ा। उन्होंने सारी उम्र स्वयं को एक हिन्दू मानने पर बल दिया। उनका कहना था कि एक अच्छा हिन्दू ही एक अच्छा मुस्लिम और अच्छा ईसाई हो सकता है और अच्छा धार्मिक व्यक्ति बन सकता है।

हिन्दू धर्म में भक्त परम्परा को उन्होंने सबसे अधिक महत्व दिया और उसका प्रभाव उन पर यह था कि उन्होंने अपना व्यवहार भी बनाए रखा और स्वयं अहंकार पर नियन्त्रण रखा। हिन्दू धर्म के अलावा जैन धर्म उनके जीवन में बहुत महत्वपूर्ण था। अहिंसा का सबसे अधिक महत्व जैन धर्म में ही है। महात्मा गाँधी ने धर्म के अलावा जीवन के सभी पहलुओं में अहिंसा को महत्व दिया है। महात्मा गाँधी के योगदान का विशेष महत्व अहिंसा को राजनीति के क्षेत्र में प्रयोग करना था।गाँधी का धर्म नैतिकता से पूर्ण था। उनका अहिंसा के प्रति लगाव जीवन के सभी क्षेत्रों में परिलक्षित होता था। गाँधी जी इस्लाम के समानता के सिद्धान्त से ही प्रभावित थे। वे एक मुस्लिम व्यापारी का मुकदमा लड़ने के लिए दक्षिण अफ्रीका गये थे।

2. पूर्वी गैर-धार्मिक प्रभावर:-महात्मा गाँधी अपने समय के कई व्यक्तियों के कार्यों एवं चिन्तन से प्रभावित थे। जिसमें प्रमुखतः गोपाल कृष्ण गोखले का नाम आता है जिन्हें उन्होंने अपना राजनीतिक गुरू माना। महात्मा गाँधी ने गोपाल कृष्ण गोखले की तरह अंग्रेजी कानून का अध्ययन किया और उसमें विशिष्टता प्राप्त की। गोपाल कृष्ण गोखले की तरह उन्होंने माना कि समस्याओं का समाधान जहाँ तक हो सके संवैधानिक तरीकों से किया जाना चाहिए और यदि शासन का विरोध प्रकट करना हो तो संवैधानिक तरीको से विरोध करने चाहिए जैसे ज्ञापन आदि प्रस्तुत करना, सार्वजनिक सुझाव तथा अखबारों के माध्यम से विचारों को व्यक्त करना इत्यादि शामिल है। इन सभी तरीकों के माध्यम से सरकार से, अपनी बात मनवाने का प्रयास किया जाना चाहिए तथा आन्दोलन करने से पूर्व सभी प्रकार के संवैधानिक प्रयास करने चाहिये। महात्मा गाँधी कानून तोड़ने और आन्दोलन करने के बावजूद हमेशा मानते थे किविरोधी पक्ष से बातचीत करने के दरवाजे हमेशा खुले रखने चाहिए। महात्मा गाँधी गोपाल कृष्ण गोखले के विचारों से प्रभावित थे किन्तु वे गोपाल कृष्ण गोखले से कुछ कदम आगे थे। उन पर उग्रवादी प्रभाव भी पड़ा। वे अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कानून भंग करने को भी तैयार थे। तिलक द्वारा लोकप्रिय बनाया गया स्वदेशी तथा स्वराज के नारों को आत्मसात् कर उन्होंने अपने आन्दोलन को सार्थक बनाया।उन्होंने माना कि तिलक द्वारा राजनीति को एक जन आन्दोलन बनाने को सर्व व्यापकता प्रदान की। इस कारण तिलक की मृत्यु के पष्चात् गाँधी भारत में जन आन्दोलन के प्रतीक बन गए।

1.3.2 पश्चिमी प्रभाव

1. पश्चिमी धार्मिक प्रभाव :- 1888 में इंग्लैंड जाने पर महात्मा गाँधी अंग्रेजी सभ्यता के नजदीक आये और प्रारंभ में उन्होंने अंग्रेजी सभ्यता के नजदीक अपने आपको ढ़ालने का प्रयास किया। लेकिन शीघ्र ही उनका मोह भंग हो गया। ईसा के इस सन्देश की अगर तुम्हारे दायें गाल पर कोई थप्पड़ मारे तो बायां गाल भी आगे कर दो, से काफी प्रभावित थे। ईसाई धर्म के सामाजिक सुधार के सन्देश से वे काफी प्रभावित थे। कुछ लेखकों ने उन्हें एक सुधारवादी ईसाई बताया है।

2. पश्चिमी गैर-धार्मिक प्रभावरू. महात्मा गाँधी ने अपनी आत्मकथा में जिन प्रमुख पुस्तकों का उल्लेख किया है, वे तीन पश्चिमी विचारकों द्वारा लिखित है :-

पहली पुस्तक रूसी विचारक टॉलस्टॉय की ‘दी किंगडम ऑफ गाड इज विथिन यू’ है, इस पुस्तक में उन्होंने प्रेम का सन्देश दिया हैं।

दूसरी पुस्तक रस्किन की‘अनटू दिस लास्ट’ है जिसका उन्होंने गुजराती में सर्वोदय नाम से अनुवाद किया। इस पुस्तक से उन्होंने 3 शिक्षाऐं प्राप्त की :-

प्रथम, सभी के हित में खुद का हित।

द्वितीय, एक वकील का कार्य और एक नाई का कार्य समान है क्योंकि प्रत्येक को अपना जीवन यापनकरने का समान अधिकार है।

तृतीय, एक श्रमिक का जीवन सबसे अच्छा जीवन है।

तीसरी पुस्तक थी हेनरी डेविड थोरो की ‘ऐसेज ऑन सिविल डिसओबिडियेन्स’। इस पुस्तक में उन्होंने राज्य का विरोध करने के आन्दोलन का स्वरूप पहचाना तथा कुछ वर्षो तक वे सविनय अवज्ञा के नाम से अपना आन्दोलन चलाते रहे।

इस महत्वपूर्ण पुस्तकों के अलावा महात्मा गाँधी ने 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में प्रचलित लगभग सभी विचारक तथा पश्चिमी विचारधाराओं का अध्ययन किया और उन पर अपनी स्वतंत्र टीका-टिप्पणी की। उन्होंने समाजवाद, साम्यवाद, लोकतंत्र, उदारवाद इत्यादि सभी पर अपनी टिप्पणियां लिखी है।बेन्थम के उपयोगितावादके वे कटु आलोचक थे। गाँधीजी के अध्ययन का दायरा भी बहुत विस्तृत था तथा उन्होंने अपने जीवन काल में बहुत लिखा भी है।उनके निरन्तर अध्ययनरत रहने का प्रमुख कारण ही उन्होंने लगभग सभी विषयों पर अपने विचारों की अभिव्यक्ति की।

1.4 दार्शनिक विचार

सबसे पहले गोपीनाथ धवन ने महात्मा गाँधी के जीवनकाल में 1944 में उनके राजनीतिक दर्शन पर पहला शोध प्रस्तुत किया, जो बाद में ष्पोलिटिकल फिलॉसॉफी ऑफमहात्मा गाँधी” के नाम से प्रकाशित हुआ। 50 के दशक में जोन वी बोंदुरां ने महात्मा गाँधी के सत्याग्रह की तकनीक को द्वन्द्वात्मिकता के सिद्धान्त से समझने का प्रयास किया और उसकी तुलना मार्क्सवादी द्वन्द्वात्मिकता से की है। 60 के दशक में जब महात्मा गाँधी द्वारा रचित लेखन का भारत सरकार द्वारा संकलन किया गया, तब 1969 में उनके द्वारा लिखित साहित्य को सम्पूर्ण

गाँधी वांड्गमय के रूप में प्रकाशित किया गया। जिसमें 100 ग्रन्थ थे तब सबसे पहली बार शोधकर्ताओं को गाँधी विचारों का संकलन मिला। 1960 के दशक में ही विश्व में आये नये परिवर्तनों विशेष रूप से पूँजीवादी प्रभुत्व और आधुनिकता की तानाशाही प्रवृति के विरूद्ध आन्दोलन आरम्भ हुआ तथा नये आजाद हुए देशों ने भी अपनी आवाज को बुलन्द करना आरंभ किया। ऐसे समय में गाँधी के विचारों पर लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ और उनके विचारों को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने की कोशिश की गयी इसमें राघवन अय्यर, बुद्धदेव भट्टाचार्य, बी.एन. गांगुली, रामाश्रयराय, इत्यादि प्रमुख है। जिन्होंने 70 के दशक में गाँधी को एक विचारक के रूप में प्रस्तुत किया और उन्हें किसी भी अन्य विचारक के समक्ष प्रबुद्ध व्यवस्थित वैकल्पिक विचार देने वाला दार्शनिक बताया 80-90 के दशक में गाँधी के विचारों की तुलना समकालीन पश्चिमी विचारधाराओं से की गई। रिचर्ड ऐटेनवेरों ने गाँधी फिल्म से 80 के दशक में गाँधी का महत्व बताया है। जिन लेखकों ने गाँधी को इस आधुनिक समाज में प्रासंगिक तथा विचारों को समसामयिक का महत्व बताया। उनमें प्रमुख है, भीखू पारेख, रोनाल्ड टर्चेक, थामस पेन्थम, दत्त, वी.आर. मेहता, नरेश दाधीच, मार्गरेट चटर्जी, डगलस एलन, इत्यादि।

आज गाँधी को एक दार्शनिक के रूप में माना जाता है तथा विद्वतजन उनके विचारों से उत्तर आधुनिक, आधुनिक, वैकल्पिक विवाद निवारण, वैकल्पिक आर्थिक सोच, पर्यावरण, नारीवाद, इत्यादि के सन्दर्भ में परीक्षण कर रहे है।

गाँधी के दर्शन को कुछ लोग जैसे बी.एम. दत्ता, धीरेन्द्र मोहन दत्त वैष्णव दार्शनिक मानते है। हालांकि गाँधी ईश्वर को नहीं मानकर उसको विचार और विधि का स्वरूप मानते है। गाँधी मानते है कि ईश्वर को परिभाषित करना असंभव है, लेकिन हम उनके अस्तित्व को महसूस करते है और केवल उसका ही अस्तित्व है। गाँधी ईश्वर को सत्य के रूप में भी परिभाषित करते है। 1925 में उन्होंने कहा कि ईश्वर और सत्य दोनों एक दूसरे की परिवर्तनीय इकाईयाँ हैं। 1931 में स्वीटजरलैंड में गाँधी ने कहा कि मैं यह चाहूँगा कि ईश्वर सत्य है की अपेक्षा सत्य ईश्वर है कहना अधिक उपयुक्त होगा। क्योंकि अनीश्वरवादी के लिए इसे अपनाना अधिक सुविधाजनक होगा। गाँधी ईश्वर की सत्ता का विवेक से संचालन नहीं करना चाहते थे।यह ब्रह्मांड नियमों से चल रहा है और उन नियमों को बनाने और लागू करने का कार्य ईश्वरीय सत्ता के अलावा कोई शक्ति नहीं कर सकती। रोम्या रोला उन्हें एक रहस्यवादी मानते है क्योंकि गाँधी किसी भी निर्णय को लेने से पूर्व अपने अन्दर की आवाज का हवाला देते थे और अन्दर की आवाज उन्हें सही रास्ते पर ले जाती थी। महात्मा गाँधी ने अपने जीवन में तप के द्वारा अपने आप व्यक्तित्व को इतना शुद्ध बना लिया था कि उनकी आवाज में ईश्वर की आवाज का आभास होता था। दार्शनिक सिद्धान्त में महात्मा गाँधी सत्य और अहिंसा को सर्वाधिक महत्व देते थे।

1.4.1 सत्य

महात्मा गाँधी का सिद्धान्त सत्य और अहिंसा पर आधारित है। उनके अनुसार वास्तविकता में केवल सत्य का अस्तित्व हैं।उनके सत्य की अवधारणा सैद्धान्तिक स्तर पर प्लेटो के नजदीक मानी जा सकती है लेकिन यथार्थ में अस्तित्ववाद के नजदीक है। यूनानी विचारकों ने सत्य को सबसे महत्वपूर्ण अवधारणा माना है और जिसकी परछाई इस दुनिया में यथार्थ के रूप में नजर आती है। उस निरपेक्ष सत्य के आधार पर ही सिद्धान्त का निर्माण किया जाता है और व्यक्ति को उसके जीवन में सत्य तक पहुँचने का प्रयास किया जाना चाहिए। महात्मा गाँधी इस निरपेक्ष सत्य को स्वीकार करते है क्योंकि अस्तित्व निरपेक्ष है। लेकिन उस निरपेक्ष सत्य को व्यक्ति के सत्य में मिलने का आधार व्यक्ति की चेतना का सर्वोच्च स्तर को प्राप्त करना है। जब तक ऐसा न हो व्यक्ति के सत्य को सापेक्षवादी सत्य माना जायेगा और हर व्यक्ति का सत्य ही उसका अंतिम सत्य होगा। यह धारणा अस्तित्ववादी धारणा से मिलती जुलती है। निरपेक्ष सत्य को आत्मसात करने के लिए महात्मा गाँधी अपने स्व को निरन्तर प्रयोगों के द्वारा तथा तप के माध्यम से उच्च चेतना युक्त बनाया। इसलिए गाँधी ने व्रत, उपवास, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय, अपरिग्रह आदि ईश्वर को अपनाने पर बल दिया है। जिससे व्यक्ति की आवाज बन सके। इस प्रकार वे निरपेक्ष सत्य के पराभौतिक विचार और सापेक्ष सत्य के यथार्थवादी विचार का सम्मिश्रण प्रस्तुत करते है। वे सत्य को केवल आध्यात्मिक क्षेत्र में ही महत्व नहीं देते है बल्कि राजनीतिक क्षेत्र में भी इसे बनाये रखते थे। उनके अनुसार राजनीति और समाज में किये जाने वाले कार्यों में सत्य परिभाषित होना चाहिये।सत्य के अभाव में मनुश्य उद्देश्यहीन हो जाता है और अपने कार्यों से समाज का हित नहीं कर पाता हैं।

1.4.2 अहिंसा

महात्मा गाँधी की पहचान उनकी अहिंसा की प्रतिबद्धता के कारण है। उन्होंने मानव इतिहास में पहली बार अहिंसा का उपयोग राजनीतिक क्षेत्र में सफलतापूर्वक किया और अहिंसा को एक आधुनिक क्षेत्र बनाकर राजनीति व सामाजिक क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। स्वयं के और समाज के संघर्ष निवारण के लिए अहिंसा का प्रयोग किया गया जिसे विष्व संघर्ष निवारण के लिए स्वीकार्य और सफल तकनीकी माना जाता है। साधारणतया अहिंसा का अर्थ चोट न पहुँचाना और हत्या न करना माना जाता है और विस्तृत स्वरूप देने पर इसका अर्थ है किसी जीव को मन, वचन और कर्म से दुःख नहीं पहुँचाना है। अहिंसा हिन्दू, बौद्ध धर्म और जैन धर्म में किसी न किसी रूप में आवश्यक तत्व है। मोक्ष प्राप्त करने के लिए पातंजलि जैसे योग शास्त्रियों ने इसे आवश्यक माना है। जैन धर्म में इसको अत्यधिक महत्व दिया है और हिंसा को कई श्रेणियों में जैसे आरम्भ भज और अनारंभ भज यानि जान बूझकर या अनजाने में की जाने वाली हिंसा के रूप में देखा जाता है। जैन धर्म में व्यवहार में भी इसे लागू करने पर बल दिया जाता है। बौद्ध धर्म में प्रत्येक साधू के लिए अहिंसा का पालन करना आवश्यक है। महाभारत में अहिंसा को सर्वाधिक महत्व दिया गया है और क्षमा को वीरों का आभूषण माना है। महात्मा गाँधी ने टॉलस्टॉय की पुस्तक से अहिंसा के महत्व को जाना और बाद में भारतीय परम्परा में अहिंसा के कई उदाहरणों से इसका महत्व समझा। जैसे पौराणिक कथा में भक्त प्रहलाद के उदाहरण में उन्होंने गीता की

व्याख्या करते हुए इसे अहिंसक ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित किया। महात्मा गाँधी ने 1916 में अहिंसा में नकारात्मक और सकारात्मक भेद प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार अहिंसा का अर्थ है किसी भी जीव को शारीरिक या मानसिक रूप में पीड़ा न पहुँचाना। इसके सकारात्मक रूप में है - प्रेम और दान। सकारात्मक रूप में अहिंसा की पालना करने पर व्यक्ति को अपने शत्रु से प्रेम करना आवश्यक है तथा ऐसी अहिंसा सत्य और अभय को सम्मिलित करती है। इस प्रकार महात्मा गाँधी की अहिंसा का अर्थ नकारात्मक पक्ष तक सीमित नहीं था, वे अहिंसा के समारात्मक पक्ष को को अधिक महत्व देते है जिसमें अपने विरोधी को प्रेम करना सम्मिलित है और इसी कारण वे यह मानते थे कि पाप से घृणा करो पापी से नहीं। उनका दृढ़ विश्वास था कि अहिंसा न केवल सार्वभौमिक रूप से लागू की जा सकती है अपितु यह अंतिम रूप से सही सिद्ध होती है तथा इसका उपयोग करने वाला ही अंतिम विजय प्राप्त करता है। उनकी यह मान्यता थी कि मनुष्य मूलतः देवीय स्वरूप होता है, पर उसमें पशुता के अंश मौजूद है और इसलिए हिंसा करना बहुदा मनुष्य का स्वभाव बन जाता है लेकिन वे यह भी मानते थे कि निरन्तर प्रयास से मनुष्य अपने जीवन में बहुत कुछ हद तक अहिंसक बना रह सकता है। सत्य और असत्य, हिंसा और अहिंसा की लड़ाई मनुष्य तथा समाज में निरन्तर चलती रहती है। महात्मा गाँधी के अनुसार अहिंसा तीन तरह की हो सकती हैर:-

1. कायरों की अहिंसा जो दुर्बलता के कारण हिंसा का सहारा नहीं ले सकता।
2. राजनीतिक तरीके के रूप में अहिंसा का प्रयोग।
3. अहिंसा के प्रति आत्म प्रतिबद्धता जो आत्मानुशासन व आंतरिक आत्मानुभक्ति से आती है।

गाँधी कायर की अहिंसा को अहिंसा नहीं मानते है। राजनीति या सामाजिक क्षेत्र में सफलता के लिए की जाने वाली सर्वश्रेष्ठ अहिंसा नहीं है। जब तक मनुष्य आंतरिक रूप से अहिंसा के प्रति प्रतिबद्ध न हो, सर्वश्रेष्ठ अहिंसा नहीं हो सकती।गाँधी व्यावहारिक अहिंसा को चार क्षेत्रों में इंगित किये है:-

1. सत्ता के विरूद्ध अहिंसा का प्रयोग।
2. आंतरिक उपद्रवों के मध्य अहिंसा का प्रयोग।
3. बाह्य आक्रमण में अहिंसा का प्रयोग
4. घरेलू क्षेत्र में अहिंसा का प्रयोग।

1.5 सत्याग्रह

राजनीतिक दर्शन में महात्मा गाँधी की प्रमुख देन थी सत्याग्रह। सत्याग्रह का शाब्दिक अर्थ है सत्य के प्रति आग्रह। सत्य के प्रति यह आग्रह व्यक्ति को शक्तिशाली बनाता है। इस आग्रह को बनाये रखने के लिए एक मात्र साधन है अहिंसा। दक्षिण अफ्रीका में सरकार का प्रतिरोध करते समय महात्मा गाँधी ने अपने आन्दोलन को निष्क्रिय प्रतिरोध का नाम दिया था। धीरे.धीरे महात्मा गाँधी को यह एहसास हुआ कि उनके द्वारा चलाया गया आन्दोलन निष्क्रिय शब्द से पूर्णतया नहीं समझा जा सकता क्योंकि उनके आन्दोलन में कुछ विशेषताएं ऐसी थीं जो उसे निष्क्रिय प्रतिरोध से अलग करती थी।महात्मा गाँधी का सविनय अवज्ञा आन्दोलन उनके सच्चे भाव और उनके ठोस सिद्धान्त पर आधारित था जिसमें तिरस्कार नहीं था। निष्क्रिय प्रतिरोध कमजोरों का हथियार माना जाता था।महात्मा गाँधी के जीवन में हिंसा की कोई गुंजाइश नहीं थी।अपने आन्दोलन को अवधारणात्मक पहचान देने के लिए गाँधीजी ने अपने पत्र “इण्डियन ओपिनियन” में पाठकों से इस बारे में सुझाव माँगें। मगनलाल गाँधी ने ‘सदाग्रह’ शब्द सुझाया। गाँधीजी ने इसको व्यापक बनाते हुए अपने आन्दोलन का नाम ष्सत्याग्रह” दिया। यह दो शब्दों से मिलकर बना है- सत् और आग्रह। यानि सत्य के प्रति आग्रह। यह आग्रह अहिंसा के बिना संभव नहीं।आज सारी दुनिया में अहिंसक प्रतिरोध को सत्याग्रह के नाम से जाना जाता है। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में किये गये आन्दोलनों के इतिहास को ष्सत्याग्रह का इतिहास,नामक पुस्तक में वर्णित किया गया है। गाँधीजी सत्याग्रह को एक क्रमिक विकास के रूप में देखते थे। उनके अनुसार व्यक्ति स्वयं को तप के द्वारा उत्कृष्ट बनाने के लिए निरन्तर कोशिश करता है तथा चेतना के उच्च स्तर को प्राप्त करता है। वह निष्क्रिय प्रतिरोध को गरीबों का हथियार मानते थे और सत्याग्रह को बलवानों का अस्त्र मानते थे। इसमें अहिंसा आवश्यक तत्व थी। सत्याग्रह का उद्देश्य सत्य को प्राप्त करना है और उसे किसी भी कीमत पर त्यागा नहीं जा सकता। सत्याग्रह का प्रयोग करने वाला और कानून का विरोध करने वाला हर व्यक्ति परेशानी झेलने को तैयार रहता है। वास्तव में सत्याग्रही कानून की पालना करने वाला होता है और वे उसी कानून के विरोध की बात करते है जो नैतिकता का विरोधी होता है। गाँधी जी के लिए नैतिकता सर्वोच्च थी। सत्याग्रह के व्यावहारिक पक्ष को स्पष्ट करते हुए गाँधी जी मानते थे कि सत्याग्रह करने वाले को अपनी मूल माँगों से आगे नहीं बढ़ना चाहिए। उनका विचार था कि सत्याग्रह से प्राप्त सफलता को बनाये रखने के लिए निरन्तर सत्याग्रही बने रहना आवश्यक है। हेनरी डेविड थोरो के विचारों से प्रभावित होते हुए गाँधीजी मानते थे कि व्यक्ति सबसे पहले है और उसको नैतिक मूल्यों को बनाये रखने के लिए हमेशा संघर्षरत रहना चाहिए। अपने अधिकारों की रक्षा के लिए सविनय अवज्ञा आन्दोलन का प्रयोग करना चाहिए और इसके परिणाम को भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए। गाँधीजी के अनुसार व्यक्तिगत हितों के लिए सत्याग्रह नहीं करना चाहिए। सत्याग्रह का प्रयोग हमेशा जन-हिताय, जन-सुखाय होना चाहिए। सत्याग्रह का प्रयोग करते समय भी महात्मा गाँधी विरोधी पक्ष से निरन्तर बात-चीत करने पर बल देते थे और सभी प्रयासों में विफल होने पर ही सत्याग्रह प्रयुक्त करने की सलाह देते थे। सत्याग्रह आरम्भ

करने से पूर्व सत्याग्रही को लोकमत अपने पक्ष में करना चाहिए। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जिन बुराईयों के विरूद्ध वह संघर्ष करता है वे बुराईयाँ स्वयं में विद्यमान न हो। वह आत्मशुद्धी और सत्याग्रह से अपनी लड़ाई जीत सकता है। उसे हमेशा अपने विरोधी से बात-चीत करने के लिए रास्ता खुला रखना चाहिए। गाँधीजी सत्याग्रहीबनने की बहुत सी शर्ते बताते है। सत्याग्रह के साथ-साथ रचनात्मक कार्य भी करते रहना चाहिए। सेवा तथा प्रेम की भावना के फलस्वरूप ही सत्याग्रह सफलहो सकता है। सत्याग्रह विनम्रता का प्रतीक है और हिंसा का विकल्प है। आमरण अनशन सत्याग्रही का अंतिम हथियार है। जिसका प्रयोग विशेष परिस्थिति में ही किया जाना चाहिए। गाँधीजी ने सत्याग्रह में विभिन्न अस्त्रों का प्रयोग किया था जिस में असहयोग आन्दोलन सबसे महत्वपूर्ण था। वे इसमें हड़ताल, सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक बहिष्कार, धरना, सविनय अवज्ञा, हजरत, उपवास इत्यादि है। वे सत्याग्रह के सकारात्मक पक्ष को महत्व देते थे जिसमें केवल विरोध करना ही नहीं अपितु सकारात्मक कार्यक्रम को बनाये रखना भी आवश्यक है। उन्होंने 15 सूत्री सकारात्मक कार्यक्रम बनाये थे जिसमें खादी का प्रचार-प्रसार, ग्रामोद्योगों का विकास, ग्राम स्वराज्य की स्थापना, बुनियादी शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, नारी उद्धार, आर्थिक समानता, इत्यादि शामिल हैं।

भारत में आने के पश्चात् गाँधीजी ने कई सत्याग्रह किये। जिसमें अखिल भारतीय स्तर पर किये गये सत्याग्रहों में रॉलत एक्ट के खिलाफ 1919 में किया गया आन्दोलन, खिलाफत आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन 1920, 1930 में 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह, 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन प्रमुख है। स्थानीय लोगों के लिए 1917 में चम्पारन, 1918 में अहमदाबाद में श्रमिकों के समर्थन में किया गया तथा 1924 में ट्रावनकोर का सत्याग्रह आदि प्रमुख है।

1.6 आर्थिक विचार

गाँधीजी के आर्थिक विचार भी सत्य और अहिंसा से ओत-प्रोत थे। वे यह मानते थे कि आधुनिकता बड़े-बड़े उद्योगों तथा मशीनीकरण पर आधारित है और ये हिंसा को बढ़ावा देते है। एक आदर्श समाज की रचना के लिए स्वावलम्बी गाँवो की आवश्यकता हैं। व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखे और नैतिक जीवन व्यतीत करें। उन्होंने ग्राम स्वराज्य की कल्पना में कुटीर उद्योगों को अधिक महत्व दिया है तथा कायिक श्रम पर बल दिया है। गाँधीजी मानते थे कि प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति को दिन में कम से कम दो घण्टे शारीरिक श्रम करना चाहिए तभी वह भोजन पाने का अधिकारी है। वे मानसिक और शारीरिक श्रम की समानता के दृष्टिकोणों को स्वीकार करते है।वे उस पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था के विरूद्ध थे जो भौतिकवादी इच्छाओं की पूर्ति के लिए उद्योगों की स्थापना करती है। गाँधीजी साम्यवादी विचारधारा के भी विरोधी थे क्योकि उनके अनुसार वह हिंसा पर आधारित विचारधारा है और व्यवहार में तत्कालीन सोवियत संघ की व्यवस्था के आधार पर यह मानते थे कि यह व्यवस्था केन्द्रीयकृत व्यवस्था को बढ़ावा देती है, जिसमें शक्ति का केन्द्रीयकरण होता है। गाँधीजी शक्ति के

केन्द्रीयकरण को शोषण का आधार मानते है। उनके अनुसार शक्ति का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए और वे इसी भाव को ध्यान में रखकर आर्थिक विकेन्द्रीकरण की वकालात करते थे। उन्होंने पूँजीवाद व साम्यवाद से परे न्यास के सिद्धान्त को अधिक महत्व दिया है जिसके अनुसार आर्थिक साधनों पर नियन्त्रण निजी हाथों में होगा। लेकिन वे उसे न्यास मानकार न्यासी के रूप में कार्य करेंगे। पूँजी का उपयोग ष्षसर्वजन हिताय" करे। राजनीतिक क्षेत्र में उन्होंने उपयोगितावाद के स्थान पर सर्वोदय की वकालात की । जहाँ उपयोगितावाद व्यक्ति के अधिकतम सुख की कल्पना करता है वहीं सर्वोदय सभी के उदय की कल्पना करता है। उपयोगिकतावाद में सुख की परिभाषा शारीरिक सुख या इन्द्रियजन्य सुख है। जबकि महात्मा गाँधी के सर्वोदय में सबके उदय में इन्द्रियजन्य सुख के बजाय आत्मिक सुख को सम्मिलित किया है। गाँधीजी अपने आदर्श राज्य को राम राज्य की संज्ञा देते थे जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अहिंसा पर आधारित जीवन का उपयोग करता है और अपने कर्त्तव्यों को पूरा करता हैं। गाँधीजी का मानना था कि आदर्श समाज एक राज्यविहीन समाज है। जिसमें शक्ति पूर्ण रूप से विकेन्द्रित है और वह स्वावलम्बी गाँवों को शामिल कर बना है जिसमें व्यक्ति का महत्व है। लेकिन व्यक्ति का अस्तित्व समाज के बिना संभव नहीं है। उन्होंने व्यक्ति और समाज के मध्य के सम्बन्धों को 'मुद्रिक वर्तुल' या 'ओशेनिक सर्किल' के आधार पर समझाया है। जिस प्रकार समुद्र में पत्थर फेंकने पर हजारों की संख्या में लहरों के वर्तुलद्ध का निर्माण होता है जिनके आकार आधार अलग-अलग प्रकार है किन्तु जिसका केन्द्र एक ही होता है। उसी प्रकार समाज में कई प्रकार के समूह है, जो वर्तुल के रूप में एक दूसरे से जुड़े है। लेकिन उनका केन्द्र व्यक्ति होता है। समूह व्यक्ति के बिना परिभाषित नहीं होता है।वे प्रजातंत्र की व्यवस्था में विश्वास रखते थे और उदारवादी सिद्धान्त को महत्वपूर्ण मानते थे लेकिन उनकी सोच भारतीय परम्परा के मूलभूत सिद्धान्तों पर आधारित थी। वह अपनी संस्कृति और परम्परा की उदारवादी व्याख्या के पक्षधर थे। आधुनिक समय में भारतीयता के प्रतीक थे। उनकी गणना आज विश्व के सर्वाधिक महानतम विचारकों में की जाती है वे केवल भारत के प्रतिनिधि ही न होकर विश्व की मानवता के प्रतीक थे और लोकमंगल के साधक-उपासक थे।

1.7 राजनीतिक विचार

गाँधी स्वयं को एक राजनीतिक विचारक नहीं मानते थे हालांकि उनके दार्शनिक विचारों की पहली व्यवस्थित प्रस्तुति हिन्द स्वराज्य में है। लेकिन उन्होंने कभी भी राजनीतिक गतिविधियों के बारे में अपने विचारों को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया। उन्होंने माना है कि वे निरन्तर सत्य के रास्ते पर चलते रहे और उस रास्ते पर उन्हें जो सफलताएं मिली उस आधार पर अपने विचारों को संगठित करते रहे। वे सभी राजनीतिक गतिविधियों को नैतिक दृष्टि से देखते थे। उनके अनुसार कोई भी गतिविधि जो नैतिक दृष्टि से नहींहो उचित नहीं है। चूँकि वे किसी विशेष राजनीतिक दर्शन से सम्बन्धित नहीं थे। इसलिए उनके विचारों में कई बार पारस्परिक विरोध नजर आता है। लेकिन सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि वे एक राजनीतिक

अराजकतावादी थे जो शक्ति के केन्द्रीयकरण के विरोधी थे और राज्य को सक्रिय केन्द्रीयकरण का सबसे बड़ा उदाहरण मानते थे। वे राज्य के बढ़ते स्वरूप और कार्य को भय से देखते थे। उनके अनुसार एक आदर्श समाज की कल्पना में राज्य का कोई स्थान नहीं था। वे आदर्श समाज को रामराज्य की संज्ञा देते थे। वे यह मानते थे कि राज्य हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है और राज्य की बढ़ती शक्ति से सर्वाधिक नुकसान व्यक्ति की अस्मिता को होता है। व्यक्ति के पास आत्मा है राज्य आत्मा विहीन है। गाँधीजी ने कहा था कि ऐसे कानूनों की पालना नहीं करनी चाहिए जो हमारी नैतिक मान्यताओं के विरूद्ध हो। उनके अनुसार राजनीतिक शक्ति अपने आप में एक साध्य नहीं है। राजनीतिक शक्ति का उपयोग समाज के सदस्य को जीवन की सुविधाएं प्रदान करना है उनकी मान्यता थी कि व्यक्ति सम्प्रभू होता है और उसके सम्प्रभूत्व का आधार उसकी नैतिक सत्ता है।गाँधी राज्य और समाज में अन्तर करते थे। उनके अनुसार अगर व्यक्ति समाप्त होता है तो कुछ बाकी नहीं रहेगा। इसलिए व्यक्ति के आधिपत्य को राजनीतिक दर्शन में स्वीकार किया जाना चाहिए। 1916 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था कि वे अराजकतावादी है।गाँधी केवल आदर्शवादी विचारक ही नहीं थे उनका उद्देश्य आदर्श प्राप्त करना था। उन्होंने द्वितीय स्तर के राज्य की बात भी की है। जिसमें राज्य एक उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य होगा तथा लोक शक्ति का विकेन्द्रीकरण होगा। ऐसे राज्य में अधिकतम शक्तियाँ गाँव के स्तर पर पंचायत के पास रहेगी। वह गाँव आदर्श गाँव होगा जो आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से स्वायत्त निकाय के रूप में कार्य करेगा। गाँधी के स्वराज्य की कल्पना एक ऐसे देश की कल्पना थी जिसमें सत्ता उस देश के नागरिकों के पास हो तथा वे राजनीतिक रूप से स्वतंत्र हो तथा जिसमें अपने समाज को बदलने की शक्ति और अधिकार समाज के व्यक्तियों के पास हों। ऐसे राज्य में सरकार व्यक्तियों के प्रति उत्तरदायी हो तथा जिसमें गरीब व्यक्ति का शासन हो। गाँधी के स्वराज की अवधारणा आर्थिक और राजनीति दोनों स्तरों पर स्वतंत्रता को बनाये रखने का समर्थन करती है। गाँधी व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा का भी समर्थन करते है। गाँधीवादी अधिकार मूलतः वे अधिकार है, जिसके उपयोग से व्यक्ति अपने मूल्यों को बनाये रख सके और एक नैतिक समाज की स्थापना कर सके। गाँधी स्वतंत्रता के साथ-साथ समानता और न्याय के सिद्धान्त में विश्वास करते थे। इसमें वे न केवल स्त्री-पुरूष समानता अपितु जातिगत समानता, मानसिक और शारीरिक समानता के भी पक्षधर थे। गाँधी हालांकि प्रजातंत्र में विश्वास करते थे। लेकिन उन्होंने हिन्द स्वराज्य में अंग्रेजी संसदीय प्रणाली की आलोचना की और माना है कि अगर भारत इंग्लैण्ड की प्रणाली को अपनाता है तो यह उसके लिए अच्छा नहीं होगा। गाँधीजी के अनुसार ब्रिटिश संसद के द्वारा कोई भी अच्छा कार्य नहीं किया गया है और वह मंत्रियों के प्रभाव से संचालित होती है अतः वह जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाती है। पश्चिमी प्रजात्रंत का आधार हिंसा है। प्रजातंत्र जो अपने व्यवहार में बिना हिंसा के जीवित नहीं है वह वास्तव में प्रजातंत्र नहीं है। उसमें और फासीवाद में किसी प्रकार का अन्तर नहीं है। बुद्धदेव भट्टाचार्य के अनुसार गाँधी की पश्चिमी प्रजातंत्र की आलोचना तीन प्रमुख कारकों पर आधारित है :-

1. पूँजीपतियों द्वारा निर्धन व्यक्तियों का शोषण।

2. पूँजीवाद का विस्तार जो जन सामान्य के शोषण की राह बताता है।

3. गोरी चमड़ी वालों की रंगभेद नीति।

हालांकि गाँधीजी बोअर युद्ध 1899 में अंग्रेजों की तरफ से हिस्सा लिया था। लेकिन वे युद्ध के खिलाफ थे। प्रथम विश्व युद्ध के आते-आते गाँधी पूर्णतया युद्ध विरोधी बन गये। गाँधीजी ने प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध की निन्दा की और कहा कि हिंसा से किसी समस्या का समाधान नहीं होता है। कोई भी राजनीतिक विचारधारा हो और उसके अनुसार आदर्श समाज का निर्माण मूलतः हिंसा के द्वारा होगा तो वह सही विचारधारा नहीं हो सकती है। गाँधीजी शान्ति के पक्षधर थे पर उनकी शान्ति की अवधारणा कोई स्थिर शान्ति नहीं थी। वे शान्ति को सकारात्मक और परिवर्तनशील प्रक्रिया के रूप में देखते थे। जिसमें समस्या का समाधान अहिंसा के माध्यम से किया जाता हैं। गाँधीजी में दृढ़ विश्वास था कि विश्व की समस्या का समाधान केवल अहिंसा के माध्यम से संभव है। गाँधी को मूलतः सत्ता के विरोध का दार्शनिक माना जाता है। सत्ता का विरोध करने पर गाँधी का नाम सम्मान से लिया जाता है। दुर्भाग्यवशः गाँधी के राजनीतिक विचारों पर आधारित आदर्श समाज के निर्माण की पुरजोर कोशिश नहीं की गई। इसलिए गाँधीवादी आदर्श समाज के अस्तित्व में न आने के कारण उनके राजनीतिक दर्शन के व्यावहारिक पक्ष का परिक्षण नहीं किया जा सका।

1.8 महात्मा गाँधी का चिन्तन में योगदान

महात्मा गाँधी 20वीं शताब्दी के सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक विचारकों में से एक थे, जिन्होंने राजनीतिक चिन्तन में सर्वकालिक योगदान दिया है, जिसे निम्न प्रकार देख सकते हैः

1. गाँधी ने राजनीति का विरोध करने के एक नये साधन ‘सत्याग्रह’ की खोज की और उसका सफलतापूर्वक प्रयोग करके भारत को आजादी दिलायी। राज्य सत्ता के विरोध में तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की नीतियों के विरूद्ध होने वाले आन्दोलनों में सत्याग्रह का व्यापक स्तर पर प्रयोग किया जाता है।

2. गाँधी के अहिंसा ओर संघर्ष निवारण की तकनीक का समाज के विभिन्न समूहों और स्थितियों में निरन्तर प्रयोग किया जा रहा है। उसे “वैकल्पिक विवाद निपटारा” में सफलतापूर्वक महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है।हाल ही में आई भारतीय फिल्म ‘लगे रहो मुन्ना भाई’ ‘गाँधी गिरी’ का इस्तेमाल हुआ है, इसमें गाँधी के सिद्धान्त को व्यक्ति के जीवन में छोटी-छोटी समस्याओं के समाधान हेतु उपयोग में लाने का विवरण प्रस्तुत किया गया है। गाँधी गिरी” आज लोकप्रिय शब्द बनता जा रहा है जो विरोध प्रकट करने के एक सभ्य तरीके को प्रकट करता है।

3. गाँधी ने आधुनिक समाज के नकारात्मक पक्ष को जाग्रत किया और उसे बचाने के उपाय सुझाये जिनके कारण उन्हें वैकल्पिक सफलता के विचार देने वाले विचारकों में शामिल किया जाता है।

4. उनके न्यासिता सिद्धान्त में अहिंसा से वर्ग संघर्ष को समाप्त किये जाने का तरीका सुझाया है। जिसमें हिंसा का उपयोग नहीं करते हुए समाज में सामाजिक न्याय की स्थापना की जा सके।

5. उनके पर्यावरण सम्बन्धी विचार ने विकास की पश्चिमी अवधारणा को सशक्त चुनौती दी है और विकास का आधार मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करना बताया है न कि उसके लालच को पूरा करना।

6. गाँधी ने नैतिकता को मनुष्य की सभी गतिविधियों का आधार माना है और वे बीसवीं शताब्दी में उन नैतिक विचारकों में है जो राजनीति को भी नैतिक दृष्टि से विश्लेषित करना चाहते है।

7. उन्होंने अहिंसा को राजनीतिक दृष्टि में स्थापित किया और प्लेटो के पश्चात् सत्य को राजनीतिक दर्शन में पुर्नस्थापित किया।

1.9 सारांश

प्रस्तुत पाठ में महात्मा गाँधी के जीवन और विचारों का अध्ययन किया गया है। इससे हमें यह पता लगता है कि महात्मा गाँधी ने अपना जीवन एक साधारण व्यक्ति के रूप में आरम्भ किया और धीरे-धीरे अपने परिश्रम से एक महान व्यक्ति बनें। उन्होंने बड़ी से बड़ी मुसीबतों में सत्य और ईश्वर का साथ नहीं छोड़ा और सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलते रहे उनके सत्य और विश्वास ने उन्हें महान व्यक्ति बनाया।गाँधी अपने चिन्तन में किसी विशेष विचारधारा के प्रतिपादक नहीं थे। उन्होंने अपने जीवन में अनुभवों से बहुत कुछ सीखा वे निरन्तर राजनीति में संलग्न रहने के उपरान्त भी एक अच्छे पाठक थे। खुले मस्तिष्क के होने के कारण उन्होंने अध्ययन और जीवन मूल्यों से बहुत कुछ सीखा और उसे अपनी तरह से विचारों के रूप में प्रस्तुत किया जिसे हम आज गाँधी चिन्तन के नाम से जानते है वे अपने जीवन के प्रत्येक पहलू को नैतिक दृष्टि से देखते थे। वे जीवन के हर क्षेत्र में नैतिकता के पक्षधर थे। इसलिए उन्होंने अपने आर्थिक जीवन और राजनैतिक चिन्तन में भी अहिंसा को प्रमुखता दी है। इस अध्याय को पढ़ने से हमें मालूम होता है कि गाँधी न केवल महान व्यक्तित्व के धनी थे वरन् वे एक महान विचारक भी थे।

1.10 अभ्यास प्रश्न

1. महात्मा गाँधी के चिन्तन पर पड़ने वाले प्रभावों को इंगित कीजिए।

2. गाँधी चिन्तन में सत्य और अहिंसा का महत्व बतलाइये।

3. महात्मा गाँधी के सत्याग्रह की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गाँधी, एम. के., आत्म कथा : सत्य के साथ मेरा प्रयोग, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1966
2. गाँधी, एम. के., हिन्द स्वराज्यए नवजीवन प्रकाशनए अहमदाबाद, 1990
3. दाधीच, नरेश, गाँधी एंड एक्जेस्टेन्शलिज्म, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 1993
4. धवन, गोपीनाथ, दी पॉलिटिकल फिलॉसॉफी ऑफ महात्मा गाँधी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1990
5. कुमार, बी. अरूण, गाँधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2008

इकाई – 2

गाँधी जीवन (1869 – 1948)

इकाई रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 जीवन परिचय

2.3 पृष्ठभूमि

2.4 गाँधीजी का दर्शन

2.5 गाँधीवादी प्रविधि

2.5.1 सत्य

2.5.2 अहिंसा

2.5.3 सत्याग्रह

2.6 राजनीति

2.7 अर्थव्यवस्था

2.8 सारांश

2.9 अभ्यास प्रश्न

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझ सकतेहै:-

- गाँधी जीवन के बारे में।
- गाँधी जीवन की पृष्ठभूमि के बारे में।
- गाँधीवादी पद्धतियों के बारे में।

2.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी मूलतः एक धार्मिक, मानवतावादी, कर्मयोगी और अन्तप्रेरणा के पुरूष थे, यद्यपि परिस्थितियों के वश उन्हें राजनीतिक क्षेत्र में आना पड़ा, पर जब वे एक बार राजनीतिक क्षेत्र में आ गए, तो फिर उन्होनें अपनी पूरी प्रतिभा को उसमें लगाया तथा अपनी सात्विक प्रवृत्ति, परिश्रमशीलता, व्यावहारिक ज्ञान तथा अपनी सहृदयता से राजनीति तथा उसके उद्देश्य को बहुत ऊँचा उठाया। उनका मूल मन्त्र राजनीति को पवित्र करना, उसे आध्यात्म व नैतिकतायुक्त बनाना, मानव मात्र के हृदय में प्रेम व अंहिसा का प्रसार करके विश्व में मातृ भावना का फैलाना, व्यक्ति की सच्ची स्वतन्त्रता की पुर्नस्थापना करना तथा पुरूषार्थ के महत्व को सिखाना और उसकी प्रतिष्ठा करना था।

गाँधीजी ने स्वयं किसी वाद के प्रचलन की बात कभी नहीं की थी। वे अपने विचारों को पूर्ण भी नहीं मानते थे। उन्होनें अपने विचारों को कोई विशेष सिद्धान्त या वाद न कहकर किसी विशेष सिद्धान्त या वाद पर आधारित नहीं माना है और अपने विचारों को केवल ‘सत्य के प्रयोग’ कहा है। उनके विचारों एवं कार्यों का आधार कोई विशेष सिद्धान्त नहीं रहा। उन्होनें सदैव अपने मस्तिष्क को खुला रखने की चेष्टा की। वास्तव में उनका जीवन एक ‘अन्तहीन प्रयोग’ था। गाँधी जी ने स्वयं मार्च 1936 में सर्व सेवा संघ के सदस्यों से कहा था – ‘‘गाँधीवादधीवाद नाम की कोई वस्तु नहीं है और मैं अपने पीछे कोई सम्प्रदाय नहीं छोड़ना चाहता। मैं यह दावा कभी नहीं करता कि मैने कोइ नया सिद्धान्त चलाया है। मैंने केवल अपने निजी ढंग से मूलभूत सच्चाइयों का अपने नित्यप्रति के जीवन और समस्याओं में प्रयोग करने की चेष्टा की है। जो मत मैने बनाये हैं और जिन परिणामें पर मैं पहुँचा हूँ, वे अन्तिम नहीं है। मैं उन्हें कल बदल सकता हूँ। मुझे दुनिया को कुछ सिखाना नहीं है। सच्चाई और अहिंसा उतने ही पुराने हैं, जितने ये पहाड़। मैंने दोनों का उपयोग इतनी विस्तृत सीमा में करने की चेष्टा की है, जितनी मैं कर सकता था।’’ गाँधीजी के विचार इस प्रकार किसी विशेष वाद के रूप में नहीं हैं, फिर भी सत्य एवं अंहिसा के अटल सिद्धान्तों को उन्होनें मनुष्य के जीवन की व्यक्तिगत, सामाजिक, नैतिक एवं सांसारिक अवस्थाओं में

प्रयोग करके और उसके आधार पर विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक या व्यक्तिगत समस्याओं के विषय में उन्होनें जो विचार प्रकट किए हैं वे बड़े व्यवस्थित हैं तथा यही कारण है कि उन्हीं को हम गाँधीवाद कहकर पुकारते हैं।

2.2 जीवन परिचय

महात्मा गाँधी का पूरा नाम मोहन दास करमचन्द गाँधी था । उनका जन्म 2 अक्टूबर 1869 में सौराष्ट्र (काठियावाड़) के पोरबन्दर नामक स्थान पर हुआ था। गाँधी परिवार इस क्षेत्र का प्रतिष्ठित परिवार था। गाँधीजी के दादा उत्तमचन्द गाँधी पोरबन्दर रियासत के दिवान थे। इसी पद को केवल 25 वर्ष की उम्र में गाँधीजी के पिता करमचन्द काबा गाँधी ने प्राप्त किया था। इनके जीवन तथा प्रारम्भिक चरित्र पर परिवार के वातावरण तथा माता का बड़ा प्रभाव पड़ा।

गाँधीजी ने 12 वर्ष की आयु में राजकोट के एलफर्ड हाईविध्यालय में प्रवेश किया। इसी वर्ष इनका विवाह कस्तूरबा बाई से हो गया। 1887 में इन्होनें हाई विध्यालय पास किया। गाँधीजी ने कहा है कि इसी समय उनके जीवन पर 'श्रवण पितृ भक्ति' तथा हरिशचन्द्र नाटक का बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होनें यह निश्चय किया कि उन्हें भी अपने को श्रवण कुमार और हरिशचन्द्र जैसा बनाना है।

हाईविध्यालय के बाद उच्च अध्ययन के लिए गाँधीजी के चाचा ने उनको इंग्लैण्ड भेजने का निश्चय किया। फलतः 4 सितम्बर, 1888 को वे जहाज द्वारा लन्दन को गये। इंग्लैण्ड में वे दादाभाई नारौजी व अन्य कई भारतीय विद्वानों के संरक्षण में रहे। इसी समय उन्हें एरनोल्ड द्वारा अनुवादित श्रीमद्भागवत गीता का अंग्रेजी रूपान्तर 'दी सोंग सेलेस्टियल' तथा 'लाइट ऑफ एशिया' के अध्ययन का अवसर मिला तथा गीता इनके जीवन की सहचरी बन गई।

इंग्लैण्ड में 11 जून, 1891 को उन्हें वकालत की परीक्षा में उत्तीण घोषित किया गया और दूसरे ही दिन उन्हें हाईकोर्ट के लिए पंजीकृत कर लिया गया। पर भारत में जाग्रत हो रही राजनीतिक चेतना व उथल पुथल की ओर गाँधीजी का ध्यान आकृष्ट हो चुका था। अतः 12 जून को वे राजकोट के लिए रवाना हो गये, जहाँ वे 1892 तक रहे।

अप्रैल 1893 में दादा अब्दुल्ला एण्ड कम्पनी के निमन्त्रण पर गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका गए, वहाँ उन्हें रस्किन के , अण्टु दिस लास्ट,तथा टालस्टॉय के 'दी किंगडम ऑफ गौउ इज विदिन यू' पढ़ने का अवसर मिला। अहिंसा व शान्तिपूर्ण असहयोग के सम्बन्ध में उनकी मान्यताओं को इन ग्रन्थों से बहुत अधिक बल मिला। सत्य, अंहिसा व सत्याग्रह का अनन्त प्रयोग जो उनका मृत्युपर्यन्त चलता रहा। महात्मा गाँधी, दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की रक्षा के लिए संघर्ष करते रहे।

सन् 1915 में भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम की परिस्थितियों ने गाँधीजी को सक्रिय राजनीति की ओर आकृष्ट किया। सन् 1916 में गोखले के परम शिष्यत्व में गाँधी जी ने 'लखनऊ पैक्ट' के आधार पर हिन्दू मुसलमालों के मध्य समझौता करवाया तथा 'स्वदेशी व स्वराज्य' को अपना मूलमन्त्र बनाया।

1919 के जलियावाला बाग, रॉलत अधिनियम तथा अंग्रेजी शासन के अन्य अमानवीय व कृत्यों नेगाँधीजी को अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ करने को बाध्य किया। फलतः 1920-21 में सम्पूर्ण देश गाँधीजी के नेतृत्व में आ गया। इसी प्रकार का एक आन्दोलन उन्हानें सन् 1930-32 में भी संचालित किया, जिसे सविनय अवज्ञा आन्दोलन का नाम दिया गया था। कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में उन्होनें लन्दन में सितम्बर, 1931 में हुई द्वितीय गोलमेज परिषद में भी भाग लिया। आंग्ल शासन के गलत कानूनों की अवज्ञा करने के प्रतीक स्वरूप उन्होनें (मार्च-अप्रैल, 1930 में) अपना इतिहास प्रसिद्ध दाण्डी कूच किया तथा दाण्डी पर 5 अप्रैल, 1930 को नमक बनाकर नमक कानून को भंग किया।

गाँधीजी ने समय-समय पर कांग्रेस की गलत नीतियों की भी खुलकर आलोचना की। नवम्बर, 1938 में कांग्रेश में बढ़ रहे अनुशासनहीनता तथा भ्रष्टाचार के विरूद्ध चेतावनी दी। अक्टूबर में गाँधी जी ने व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी किया। इसी बीच 22 फरवरी, 1944 को जब वे कारावास में थे, उनकी पत्नी कस्तूरबा की मृत्यु हो गई। गाँधीजी के जीवन पर इस घटना का काफी प्रभाव पड़ा।

देश की तात्कालिक परिस्थितियों में गाँधी जी को देश की पूर्ण स्वतन्त्रता के लिए कार्य करने को बाध्य किया। उनका दृढ़ विश्वास था कि विद्यमान सम्पूर्ण कठिनाइयां ब्रिटिश शासन के कारण थी तथा पूर्ण स्वतन्त्रता को वे अपना एकमात्र उपचार समझते थे। उनकी स्वतन्त्रता की कल्पना सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिए थी, जिसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए उन्होनें 15 जुलाई 1946 को हरिजन में लिखा था कि "स्वतन्त्रता का अभिप्राय सम्पूर्ण भारत की स्वतन्त्रता से है, जिसमें भारतीय देशी रियासतें, फ्रांसीसी व पुर्तगालियों के अधीन क्षेत्र सभी सम्मिलित हैं। भारतीय स्वतन्त्रता नीचे से प्रारम्भ होनी चाहिए, जिससे वर्तमान देशी शासकों को भी जनता की इच्छा के अनुसार चलने के लिए बाध्य होना पडे।" अंग्रेजों की ओर से जब भारत विभाजन का प्रस्ताव आया, तो उन्होनें स्पष्ट कहा था कि भारत का विभाजन किसी भी तरह मान्य नहीं होगा। उन्होनें तो इस सम्बन्ध में यहाँ तक कहा था कि विभाजन उनके मृत शरीर पर ही हो सकता है। किन्तु अन्त में कांग्रेस को भारत का विभाजन स्वीकार करना ही पड़ा।

स्वतन्त्रता के दिन सम्पूर्ण दिन गाँधीजी में प्रार्थना व मौन व्रत रखा। वे एक ऐसे भारत का निर्माण करना चाहते थे, जो पूर्णतः अहिंसा व राम के आदर्शों के लिए हुए हो। किन्तु स्वतन्त्रता के कुछ ही समय बाद वे अपने स्वप्न को अधूरा लेकर शुक्रवार 30 जनवरी, 1948 की संध्या को दिल्ली के बिड़ला भवन में प्रार्थना स्थल की ओर जाते हुए नाथूराम विनायक गौडसे की गोली का शिकार होकर अपने पार्थिक शरीर को छोड़कर चले गए।

2.3 पृष्ठभूमि

2.3.1 पारिवारिक जीवन

गाँधीजी को धार्मिक दृष्टिकोण उनके पारिवारिक जीवन से प्राप्त हुआ था। वे अपनी माता के सादगीपूर्ण जीवन से अत्यन्त प्रभावित हुए तथा इसी प्रभाव के कारण इंग्लैण्ड में भी वे सादगी एवं सात्विकपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके। वैष्णव मतावलम्बी होने के कारण उन्हें अपनी माता के साथ प्रतिदिन मन्दिर भी जाना होता था। इससे उनके हृदय में इश्वर के प्रति दृढ़ आस्था उत्पन्न हुई। उन्हें भूत-प्रेत के भय से बचने के लिए राम-नाम लेने के लिए कहा गया, जिसे उन्होंने जीवन में कभी विस्मरण नहीं कर सके।

2.3.2 हिन्दू धर्म ग्रन्थ

पारिवारिक जीवन में ही वे रामायण तथा महाभारत से भी परिचित हुए वे पिता की रूग्णावस्था में उन्हें नियमित रामायण सुनाया करते थे। वे रामायण से इतने अधिक प्रभावित थे कि इसे भक्ति की एक सर्वोत्तम पुस्तक मानते थे। ‘गवद्गीता,के सम्पर्क में गाँधीजी सर्वप्रथम अपने इंग्लैण्ड के अध्ययन काल में (1888-89) में आए वहाँ उन्होंने सर एडविन अरनाल्ड द्वारा अनुवादित गीता को पढ़ा। वे गीता को ‘आध्यात्मिक सन्दर्भ ग्रन्थ’ मानते थे। उन्होनें यह दावा किया कि गीता देखने में तो सत्य और धर्म के लिए हिंसा का प्रयोग करने की शिक्षा देती हुई दिखाई देती है, पर वास्तव में यह अहिंसा की शिक्षा देती है। गीता का कहना है कि यदि किसी को शस्त्र ग्रहण करना ही पडे तो उसे ऐसा निष्काम भाव से करना चाहिए। मनुष्य को काम करने का अधिकार है, पर उसे उसके परिणाम पर कोई अधिकार नहीं है - ‘कर्मण्येवाधिकारस्ते ना फलेशु कदाचन्ना’। गाँधीजी के विचार के अनुसार कोई भी मनुष्य निष्काम भाव से युद्ध नहीं कर सकता, अतः गीता अहिंसा की ही शिक्षा देती है। अपने जीवन के बाद के वर्षो में गाँधीजी ने किसी भी अन्य स्रोत की अपेक्षा गीता से ही सर्वाधिक प्रेरणा ली है। इस सम्बन्ध में 28 जुलाई, 1925 को कलकत्ता क्रिश्चियन मिश्नरी को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था कि ‘‘जब शंकाये मुझे परेशान करती हैं, मेरे चेहरे पर जब कभी निराशा दिखाई देती है, जब पूरे क्षितिज पर मुझे प्रकाश की एक भी किरण दिखाई नहीं देती, तो मैं भगवतगीताकी ओर मुडता हूँ और सांत्वना के लिए एक श्लोक ढूंढ लेता हूँ तथा विकट दुःखों के बीच में भी मैं मुस्कराने लगता हूँ।’’

पातांजलि के योग सूत्र के पंचयमों से भी उन्होनें अहिंसा की शिक्षा ग्रहण की। योगसूत्र को वे आध्यात्मिक विकास के अनुशासन का नियम मानते थे। जैन तथा बौद्ध साहित्य, हरिश्चन्द्र तथा श्रवण कुमार के नाटकों का उनके चिन्तन व जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। इन्हें उन्होंने अपने जीवन के आदर्श के रूप में माना। अस्तेय (चोरी न करना) सत्य (झूठ न बोलना), ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह तथा न्यास सिद्धान्त आदि की चर्चा उनके दर्शन में

हमें गाँधीजी पर उपर्युक्त के प्रभाव के कारण ही मिलती है। उस उपनिषदीय शिक्षा का उन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा जिसका सार यह है कि संसार को त्याग दिया जाना चाहिए।

2.3.3 ईसाई धर्म

गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका के प्रवाझकाल में ईसायत तथा इस्लाम ग्रन्थों का भी अध्यन किया, तथा उनसे वे धर्म के सच्चे स्वरूप को समझने की ओर और भी अधिक प्रेरित हो सके 'दी सर्मन ऑनद माउण्ट', (ईसाइयों की धर्म पुस्तक बाइबिल में दी हुई ईसा मसीह की शिक्षा) का उन पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा। जब उन्होनें इस पहले-पहल पढ़ा तो यह सीधे उनके हृदय में स्थान पा गया वे ईसा की इन शिक्षाओं को कभी नहीं भूले कि 'बुराई को अच्छाई से जीतना चाहिए', 'यदि कोई तुम्होरे एक गाल पर थप्पड़ मारे, तो उसके सामने दूसरा गाल भी कर दो', 'अपने शत्रुओं को भी प्यार करो', 'तुमसे जो घृणा करता है उसके साथ नेकी करो'। अहिंसक प्रतिरोध का सर्वोच्च उदाहरण गाँधीजी को ईसा मसीह के इन अन्तिम शब्दों में मिला – 'भगवान उन्हें क्षमा कर दीजिए क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं।'

2.3.4 इस्लाम धर्म

इस्लाम को बहुधा हिंसा और जोर-दबाव से सम्बद्ध माना जाता है पर गाँधीजी ने उससे भी अंहिसा की ही शिक्षा ली। उन्होनें इसमें दयालुता, शान्ति, प्रेम और विचारशीलता का सन्देश पाया। गाँधीजी जानते थे कि, इस्लाम शब्द का मतलब ही है – शान्ति, सुरक्षा और मुक्ति। कुरान की एक महत्वपूर्ण शिक्षा है,कि 'धर्म में जोर जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए।'

2.3.5 विविध विचारक

गाँधीजी की नैतिक व राजनीतिक विचारधारा पर लाओत्से, कन्फ्यूशियस व कार्लायल का भी गहरा प्रभाव पड़ा। ईसा के कई शताब्दी पूर्व लाओत्से ने निरहमं भाव की शिक्षा देते हुए कहा था –''जोमेरे प्रति अच्छे हैं, मैं उनके लिए अच्छा हूँ जो मेरे प्रति अच्छे नहीं हैं, उनके प्रति भी मैं अच्छा हूँ। इस प्रकार सभी अच्छे होते जायेंगे। जो मेरे प्रति सच्चे हैं, मैं उनके लिए सच्चा हूँ और जो मेरे प्रति सच्चे नहीं हैं, उनके प्रति भी मैं सच्चा हूँ। इस प्रकार सभी सच्चे होते जायेंगे''। इससे गाँधीजी ने शत्रु के प्रति सद्भाव रखने की प्रेरणा ली। कन्फ्यूशियस से उन्होनें दूसरे के प्रति वैसा ही व्यवहार करने की शिक्षा ली जैसे व्यवहार कोई दूसरों से अपने प्रति चाहता हो।

धर्म निरपेक्षता सम्बन्धी विचारकों में थोरो, रस्किन और टालस्टॉय ने गाँधी को सबसे अधिक प्रभावित किया। राजनीतिक चिन्तन में थोरो का प्रत्यक्ष प्रभाव गाँधीजी के सविनय अवज्ञा और करबन्दी आन्दोलनों पर पड़ा। दक्षिण अफ्रीका में गाँधीजी ने जो सत्याग्रह चलाया, का बड़ा उसकी तकनीकि व कार्यविधि पर थोरो के निबन्ध

‘एस्से ऑन सिविल डिसओबीडीयंस’ का प्रभाव पड़ा। वे थोरो के इस विचार से पूर्णतः सहमत थे कि ‘‘जन हित करने वाले सभी व्यक्तियों और संस्थाओ के साथ अधिकतम् सहयोग किया जाना चाहिए।’’ मगर थोरो के हिंसा के विचार से वे असहमत थे।

गाँधीजी ने रस्किन की पुस्तक ‘अन्टू दिस लास्ट’ तथा ‘क्राउन ऑफ वाइल्ड ओलिव्स’ से शारीरिक श्रम का आदर करना सीखा। रस्किन की इन पुस्तकों का उन पर जो प्रभाव पडा उसका विवेचन उन्होनें अपनी आत्मकथा के एक अध्याय ‘दी मेजिक स्पेल ऑफ ए बुक’ में किया है। सर्वहित (सर्वोदय) में ही स्वहित निहित होता है, एक वकील के काम का तथा एक नाई के काम का मूल्य सामाजिक दृष्टि से समान है, क्योंकि दोनों को आजीविका कमाने का अधिकार है। तथा श्रमिकों अर्थात कृशकों, मजदूरों व हस्तोद्योग शिल्पियों का जीवन ही सच्चा जीवन है, ये वे प्रमुख विचार हैं, जो उन्हें रस्किन के साहित्य से प्राप्त हुए तथा जिन्होनें उनके जीवन को बड़े व्यापक रूप से प्रभावित किया।

लियो टालस्टॉय गाँधीजी के जीवन व दर्शन पर, थोरो व रस्किन की अपेक्षा, अधिक छाये हुए हैं। गाँधीजी के सचिव एवं उनके जीवन चरित्र लेखक श्री प्यारेलाल ने लिखा है कि ‘‘जीवन के बारे में गाँधीजी के सम्पूर्ण दृष्टिकोण को टालस्टॉय ने बदल दिया। कला, धर्म, अर्थशास्त्र, पुरूष और महिलाओं के पारस्परिक सम्बन्ध तथा राजनीति के बारे में गाँधीजी के विचारों पर टालस्टॉय की गहरी छाप पड़ी है।’’

टालस्टॉय की पुस्तक ‘दी किंगडम ऑफ गोड इस विथिन यू’ - ईश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है, ने अंहिसा के विषय में गाँधी जी की शंकाओं को दूर कर उन्हे पक्का अहिंसावादी बनाया। टालस्टॉय के दार्शनिक अराजकतावाद के दर्शन गाँधीजी के विचारों में स्पष्टतः कर सकते है। रोमारोला ने अपनी पुस्तक ‘महात्मा गाँधी’ में यह मत प्रतिपादित किया कि यूरोपीय व पश्चिमी सभ्यता के प्रति जिस आलोचनात्मक दृष्टिकोण के दर्शन हमें गाँधीजी में दृष्टिगत होता है, उस पर टालस्टॉय का ही प्रभाव प्रतीत होता है। फिर भी गाँधीजी ने टालस्टॉय का अन्धानुकरण नहीं किया है। गाँधीजी का अंहिसा का दृष्टिकोण टालस्टॉय से कहीं अधिक आगे है। क्योंकि गाँधीजी ने अंहिसा को मन वचन व कर्म तीनों से स्वीकार किया है, जबकि टालस्टॉय ने अपने को केवल कर्म तक ही सीमित रखा है।

इनके अलावा प्लेटो, थामस पेन, हक्सले, एमर्सन,मजिनी एवं एडवर्ड कारपेन्टर आदि यूरोपीय व अमरीकन विचारकों का भी गाँधीजी ने गहन अध्ययन किया तथा उनके उत्तम विचारों को अपने चिन्तन, जीवन तथा दर्शन में उपयुक्त स्थान दिया।

2.4 गाँधीजी का दर्शन

धर्म के बिना राजनीति पाप :-

गाँधीजी ने राजनीति में मैकियावलीवाद का जोरदार विरोध करते हुए घोषणा की कि धर्म के बिना राजनीति पाप है क्योंकि वह आत्मा का हनन करती है।" उनक विश्वास था कि यदि राजनीति में घृणा, अपवित्रता और दोष विद्यमान है तो उसका एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि ईश्वर से भयभीत होने वाले सदाचारी, निस्वार्थी, सच्चे तथा धर्म प्रधान व्यक्ति इसमें भाग नहीं लेते। राजनीति को यदि विशुद्ध बनना है, तो इसमें धार्मिक व्यक्तियों का बाहुलय होना चाहिए।

राजनीति में धर्म को प्रविष्ट कराना गाँधीजी का प्रथम उद्देश्य:-

उक्त विचार के कारण ही राजनीति में धर्म के प्रवेश किये जाने को गाँधीजी ने अपना प्रथम उद्देश्य समझा। 'यंग इण्डिया' में प्रकाशित लेखों में गाँधीजी ने लिखा है कि ''सार्वजनिक जीवन क्या है, इस बात को मैने जब से समझा है, तब से मेरे कहे हुए प्रत्येक शब्द और मेरे द्वारा किए गए प्रत्येक कार्य के पीछे धार्मिक चेतना तथा धार्मिक प्रयोजन रहा है।'' किसी अन्य प्रसंग में उन्होनें कहा था कि ''बहुत से धार्मिक व्यक्ति जो मुझे मिले, वे वस्तुतः राजनीतिज्ञ हैं, पर मेरा वेश राजनीतिज्ञ का होते हुए भी मैं हृदय से धार्मिक हूँ।'' उनका मत था कि "आज राजनीतिक हमें सर्प पाश की तरह लपेटे हुए है, जिसमें से व्यक्ति का निकलना असम्भव है, चाहे वह कितना भी प्रयत्न क्यों न करें। मैं उस सांप से जूझना चाहता हूँ। मैं राजनीति में धर्म को प्रविष्ट कराने का प्रयत्न कर रहा हूँ।'' स्पष्टतः गाँधीजी ने धार्मिक कर्तव्य समझकर ही राजनीति में प्रवेश करने की प्रेरणा ली।

देश की स्वतन्त्रता गाँधीजी के राजनीति में प्रवेश का दूसरा उद्देश्य:-

उनकी धार्मिक मान्यता थी कि देश के प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह पराधीनता से मुक्ति प्राप्त करने के लिए आगे आए देश की आजादी के लिए प्रयत्न करे तथा सामाजिक बुराइयों, शोषण, व भेदभाव को मिटाने के लिए कार्य करे समाज सुधार की लगन न उन्हें सम्भवतः एक ओर देश के स्वतन्त्रता संग्राम की ओर खींचा तो दूसरी ओर उनके विचारों की धार्मिक पृष्ठभूमि ने उन्हें राजनीति को धर्मयुक्त बनाने के लिए प्रेरित किया।

ईश्वर एवं धर्म गाँधीजी के जीवन आधार:-

गाँधीजी ने धर्म एवं ईश्वर की विषद विवेचना की है। धर्म से उनका आशय किसी 'मत या धर्म विशेष' से नहीं है। वे एक सर्वव्यापी ईश्वर में विश्वास रखते थे। 'सत्य के प्रति मेरे प्रयोग मेंद्' उन्होनें ईश्वर, एक अनिर्वचनीय, निगूढ़, रहस्यमय सत्ता है, जो प्रत्येक वस्तु में व्याप्त है। मैं उसे देख तो नहीं सकता, परन्तु उसकी अनुभूति होती है परन्तु जिसका प्रमाण नहीं मिलता, क्योंकि वह समस्त इन्द्रियगोचर पदार्थों से बिल्कुल भिन्न है। वह बाह्य प्रमाणों द्वारा नहीं, उन लोगों के लोकोत्तर व्यवहार एवं चरित्र द्वारा सिद्ध होती है, जो अपने अन्दर भगवान की वास्तविक सत्ता की अनुभूति करते हैं।''

ईश्वर के विषय में उनका कहना था कि "ईश्वर सत्य है" वे केवल यही नहीं कहते थे कि ईश्वर सत्य है, बल्कि यह भी कहते थे कि "सत्य ही ईश्वर है।"उनके अनुसार ईश्वर की प्राप्ति मन वचन तथा कर्म द्वारा सत्य प्रेम व अंहिसा के पालन से हो सकती है। उन्होनें कहा था "बिना अंहिसा के सत्य की खोज तथा प्राप्ति असम्भव है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक साधन है तो दूसरा साध्य, जो कोई भी इन सिद्धान्तों का अनुसरण करता है, वह एक धार्मिक तथा आध्यत्मिक व्यक्ति है, वह ईश्वर के नजदीक है।" स्पष्टतः गाँधीजी के अनुसार ईश्वर एवं धर्म हृदय की ही वस्तुएं हैं।

धर्म सत्य तथा अंहिसा पर आधारित एक नैतिक जीवन पद्धति है, धर्म के अर्थ को स्पष्ट करते हुए गाँधीजी ने उसे सृष्टि की नैतिक व्यवस्था के क्रमिक विकास से सम्बद्ध किया है। उनका मत है कि "धर्म यान्त्रिक सिद्धान्तों का समूह, वरन् सत्य और अहिसा पर आधारित एक नैतिक जीवन पद्धति है।" जैसा धवन ने कहा है, "गाँधीजी के अनुसार धर्म एक सजीव भावना है, जिसका विकास समाज के विकास के अनुसार होता है। धर्म का कार्य सामाजिक व्यवस्था को सामंजस्यपूर्ण बनाये रखना तथा व्यक्ति की आत्मा का मार्गदर्शन इस प्रकार करना है कि उसे अपनी अन्तर्निहित शक्तियों को प्राप्त करने की शिक्षा मिल सके।" इस आधार पर कोई भी नैतिक जीवन धर्मरहित नहीं हो सकता, उनके लिए नैतिकता धर्म तथा नीति एक दूसरे के पर्याय हैं। अपनी आत्मकथा में उन्होनें लिखा है कि "आदर्श नैतिकता व धर्म एक ही वस्तु के अनेक नाम हैं। धर्म के बिना नैतिक जीवन बालू पर बने मकान जैसा होता है तथा नैतिकता के बिना धर्म बजने वाले पीतल जैसा होता है जो केवल शोर करने तथा सर फोड़ने का काम कर सकती है।" वे रूढ़ियों पर आधारित किसी धर्म में बंधे नहीं थे। सर्वश्रेष्ठ धर्म के विषय में उन्होनें कहा था कि जिस धर्म को मैं अन्य सभी धर्मों से अच्छा समझता हूँ वह हिन्दू धर्म नहीं, अपितु वह धर्म है जो हिन्दू से भी आगे की वस्तु है, जो मनुष्य की प्रकृति को बदल देता है, जो आन्तरिक सत्य से उसका अभेद सम्बन्ध स्थापित करता है, और जो सदाशुद्धि करता है। वह मानव प्रकृति का स्थायी तत्व है। जो अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति को प्राप्त करने के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने में नहीं झिझकता और जो आत्मा को उस समय तक चैन नहीं लेने देता जब तक उसे आत्म प्राप्ति नहीं हो जाती, जब तक वह अपने सृष्टा को नहीं जान लेता और उसके साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर लेता।" गाँधीजी के अनुसार इस प्रकार धर्म वह है जो व्यक्ति को व्यक्तित्व की पूर्णता प्रदान करता है तथा जिसका आभास हमें केवल उसके जीवन के ढंग से ही होता है।

जीवन में मन-वचन-कर्म से सत्य व अहिंसा का प्रयोग :-

राजनीति का संचालन सत्य व अंहिसा के आधार पर ही किया जाये एवं राजनीति में हिंसा का प्रयोग क्यों नहीं किया जाए, इस सम्बन्ध में गाँधीजी ने अनेक तर्क प्रस्तुत किए हैं। उनकी मान्यता थी कि -

1. ईश्वर एवं जीवमात्र एक है, अतः जो व्यक्ति ईश्वर में विश्वास रखता है, वह दूसरों के विरूद्ध हिंसात्मक साधन अपनाने पर कभी जोर नहीं दे सकता।

2. गाँधीजी के अनुसार अच्छे साधन के प्राप्ति के लिए साधनों की पवित्रता आवश्यक है। प्रथम की पवित्रता से द्वितीय के औचित्य का निर्धारण होता है। राजनीतिक उद्देश्यों की सिद्धि भी सही ढंग से पवित्र साधनों से ही हो सकती है। अंहिसात्मक साधन राजनीति को उत्कृष्ट एवं नैतिक बना सकते हैं।

3. व्यक्ति की स्वतन्त्रता सर्वोच्च सामाजिक हित है। समाज व राज्य का निर्माण इसी की रक्षा के लिए हुआ है। यदि नवीन सामाजिक व्यवस्था की स्थापना हिंसात्मक साधनों द्वारा की गई, तो वहाँ व्यक्ति स्वतन्त्र नहीं रह सकेगा।

इस प्रकार गाँधीजी ने राजनीकि उद्देश्यों की सिद्धि के लिए अंहिसात्मक एवं नैतिक साधनों पर बल देकर राजनीति को आध्यात्मिक बनाया।

2.5 गाँधीवादी प्रविधि

अच्छे साध्य के लिए साधनों की पवित्रता आवश्यक :-

अच्छे परिणामों की प्राप्ति के लिए अच्छे व नैतिक साधनों का प्रयोग गाँधीजी आवश्यक मानते थे। उनके मतानुसार अच्छे उद्देश्यों की प्राप्ति अच्छे साधनों से ही सम्भव है। इस रूप में उनके मतानुसार साधन व साध्य अभिन्न होते हैं। उनका कहना है कि ‘साधन एक बीज की तरह है तथा उद्देश्य पेड़ की तरह। अतः जिस प्रकार बीज के अनुसार पेड़ होता है। उसी प्रकार साधन के अनुसार ही उद्देश्य की सिद्धि होती है।

साधनों की पवित्रता में इतना अटूट विश्वास रखने वाले व्यक्ति के लिए यह स्वाभाविक था कि अपने द्वारा निर्धारित उद्देश्य की सिद्धि के लिए वह ऐसे साधन चुने जिनकी पवित्रता अग्नि जैसी हो और यही कारण था कि उन्होनें अपने प्रत्येक उद्देश्य की सिद्धि के लिए सत्य व अहिंसा के साधनों का प्रयोग किया। आलंकारिक भाषा में हम कह सकते हैं कि साधनों की पवित्रता को आधार बना कर अपने गन्तव्य की प्राप्ति के लिए गाँधीजी ने एक ऐसे रथ का निर्माण किया, जिसके पहिए अहिंसा तथा सत्याग्रह (सत्य के प्रति आग्रह) रहे और जिसका वाहक सत्य रहा।

गाँधीवादी प्रविधि के तीन स्तम्भ है, जिनका विवेचन निम्न प्रकार किया जा सकता है :-

2.5.1 सत्य

गाँधीजी के लिये सत्य ही जीवन का आधरभूत सिद्धान्त है। सत्य गाँधीजी के जीवन तथा दर्शन का ध्रुवतारा या सर्वोच्च लक्ष्य है जिसकी प्राप्ति के लिए वे सर्वदा प्राणोत्सर्ग करने के लिए तत्पर थे। गाँधीजी के अनुसार सत्य के दो रूप होते हैं। सत्य का पहला रूप सापेक्ष सत्य या स्थूल सत्य का है, जिसका साक्षात्कार मनुष्य को देश काल

व परिस्थितियों के अनुसार होता है सत्य का दूसरा रूप निरपेक्ष सत्य या सूक्ष्म सत्य का होता है। जो पूर्ण, सर्वव्यापक, असीमित व काल तथा दिक् से परे है। पूर्ण सत्य का अर्थ गाँधीजी ईश्वर के अर्थ में ग्रहण करते थे। उनका मत था कि वास्तविक अस्तित्व,अर्थात ईश्वर ही सत्य है तथा इसलिए वे यह कहा करते थे कि सत्य ही ईश्वर है। उनके अनुसार पूर्ण सत्य में पूर्ण ऐश्वर्य व पूर्ण आनन्द होता है। इसीलिये ईश्वर को 'सत् चित् आनन्द' कहा जाता है। गाँधीजी का सत्याग्रह का दर्शन इसी मान्यता पर आधारित है।

गाँधीजी की यह मान्यता है कि पूर्ण एवं सर्वव्यापक सत्य का साक्षातकार नश्वर शरीर के माध्यम से नहीं हो सकता, इसे केवल अनुभव किया जा सकता है। अतः वे सत्य के व्यावहारिक स्वरूप पर अधिक बल देते हैं और कहते हैं कि उसका पालन एक साधारण व्यक्ति भी कर सकता है। उनका मत है कि मन-वचन तथा कर्म से सच्चाई का पालन करना, जो कुछ भी शान्तिपूर्वक सोचने के बाद हमें न्यायोचित, धर्मविहित एवं युक्तियुक्त मालूम हो, जिसे अन्तः करण अपने प्रतिकूल न समझे, उसे ही करना सत्य है।

गाँधीजी की यह भी मान्यता है मन-वचन तथा कर्म द्वारा सत्य का आचरण ही पूर्ण सत्यप्राप्ति का एकमात्र मार्ग। गाँधीजी का विश्वास था कि इस प्रकार व्यावहारिक सत्य का पालन करने से व्यक्ति शनैः-शनैः सूक्ष्म या अमूर्त सत्य को भी प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार प्रत्येक कार्य में सत्य को ग्रहण कर उस पर चलने का निश्चय कर, सत्य वचनों का आचरण कर, सत्य कर्म पर प्रवृत होने से हम अन्त में ईश्वर का भी साक्षात्कार कर सकते हैं।

स्पष्टतः गाँधीजी की सत्य सम्बन्धी धारणा में केवल सत्य बोलना ही पर्याप्त नहीं, अपितु इसके साथ सत्य विचार तथा सत्य कर्म भी परमावश्यक है। गाँधीजी के अनुसार सत्य का दायरा असीमित हैं। उसके क्षेत्र में जीवन के सभी कार्यकलाप सम्मिलित है और राजनीति भी इससे पृथक नहीं है। गाँधी का विचार है कि सत्य के मार्ग का अनुसरण या उसकी खोज केवल व्यक्तिगत सीमा में रहकर सम्भव नहीं है। उसका अनुसरण सबकी सेवा करते हुए ही सम्भव है। जीवन के सभी क्षेत्रों में सत्य का अनुसरण या उसकी खोज केवल व्यक्तिगत सीमा में रहकर सम्भव नहीं है। उसका अनुसरण सबकी सेवा करते हुए ही सम्भव है। जीवन के सभी क्षेत्रों में सत्य का अनुसरण एक नए सुधार का एक अथक प्रयास है, इसके लिए एक सत्यव्रती को अपना सब कुछ न्यौछावर करना पड़ता है। यदि वह ऐसा करने में असमर्थ रहता है, तो इसका तात्पर्य होता है। कि वह अपने सत्य मार्ग से च्युत हो गया है। अपनी आत्मा से विमुख हो गया है और वह वास्तविकता से दूर भागने वाला हो गया है अथवा यों कहना चाहिए कि उसका नैतिक पतन हो गया है और वह सत्य की आरे उन्मुख हो गया है।

2.5.2 अहिंसा

गाँधीजी के आधार मनुष्य स्वभावतः अहिंसाप्रिय है और वह हिंसावान केवल परिस्थितिवश होता है। यही कारण है कि मनुष्य जाति बढ़ती ही जाती है। अन्यथा यदि मनुष्य स्वाभावतः हिंसक होता और सदा उसकी

हिंसक वृत्ति ही कम करती तो मनुष्य जाति नष्ट हो गई होती। वे यह मानते थे कि संसार में हिसा का अस्तित्व नहीं है, पर ऐसा होते हुए भी वे अहिंसा को मानव जगत का मूल नियम व संचालन शक्ति मानते थे तथा उनका विश्वास था कि अहिंसा पर ही चल कर मानव समाज ऊपर उठ सकता है।

गाँधीजी की सम्पूर्ण विचारधारा की आधारशिला सत्य व अहिंसा तथा सत्य व अहिंसा के अंतर-सम्बंध है। गाँधीवाद इस रूप में सत्य की साधना का विज्ञान व अहिंसा एवं सत्य के साक्षात्कार का साधन है। किन्तु इन दोनों में से गाँधीजी सत्य को अहिंसा से उच्चतर स्थान देते हैं। उनके अनुसार सत्य के लिए अहिंसा का त्याग किया जा सकता है। किन्तु अहिंसा के लिए सत्य का त्याग नहीं किया जा सकता है।

सत्याग्रह सत्य व अहिंसा के लिए प्रेमपूर्ण आग्रह है। सत्याग्रह का अर्थ है – 'सत्य के लिए आग्रह, जीवन में सर्वत्र सत्य की प्रतिष्ठा करना ही गाँधीजी के अनुसार सत्याग्रह है तथा इसलिए व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनो ही प्रकार के जीवन में अधर्म व अन्याय का अहिंसात्मक विरोध उसके अन्तर्गत आता है। जैसा सत्याग्रह करना है तथा नकारात्मक रूप से उसका अर्थ जो कुछ असत्य है, उसका विरोध करना भी होता है। अन्याय व अनाचार के निराकरण के लिए हिंसा पर आधारित अन्याय व अनाचारपूर्ण उपायों का प्रयोग गाँधीजी के अनुसार विहित नहीं था। अतः इसके लिए उन्होनें सत्य व अहिंसा पर आधारित शान्तिपूर्ण किन्तु सक्रिय विरोध का ढंग अपनाया तथा उसी को उन्होनें सत्य व अहिंसा पर आधारित शान्तिपूर्ण किन्तु सक्रिय विरोध का ढंग अपनाया तथा उसी को उन्होनें सत्याग्रह का नाम दिया। वे सत्याग्रह को ईश्वरीय एवं सत्याग्रही के हृदय में ईश्वरांश या ईश्वर का निवास मानते थे। उनके अनुसार सत्याग्रही ईश्वरत्व के उस श्रेष्ठ तत्व को, जो कुसंस्कार, कुसंगत, कुचाल, कुचिन्तन तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण नीचे दब जाता है। उस मूर्छित देवत्व या ईश्वरत्व को सत्याग्रह के द्वारा जाग्रत करने का प्रयत्न करता है। कष्ट तथा सहिष्णुता सत्याग्रह के अनिवार्य अंग है। जिसमें सत्याग्रही स्वयं कष्ट उठाकर अपने व्यक्तित्व बल से, प्रेमपूर्वक आनाचार करने वाले को इस बात का आभास कराता है कि उसके कार्य अनैतिक हैं। अत्याचारी, आक्रामक या विद्रोही द्वारा किए जाने वाले उत्पीड़न का वह प्रबल विरोध करता है, पर वह उस पर क्रोध नहीं करता वह स्वयं किसी प्रकार की लालसा नहीं रखता और न असफल होने पर मन मैला करता है। इसके विपरीत वह उल्टे विपक्षी के प्रति आदर भाव रखता है।

2.5.3 सत्याग्रह

गाँधीजी ने समय-समय पर सत्याग्रह की अनेक प्रणालियों का प्रयोग किया है। श्री किशोरीलाल मशदवाला ने इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ष्सत्याग्रह जितनी रीतियों से हो सकता हैए उन सबको गिनाया नहीं जा सकता"। असत्य व अत्याचार के सत्य व अहिंसापूर्ण विरोध के विविध ढंगों में स्पष्ट अन्तर करना कठिन है, क्योंकि सभी वस्तुतः सत्याग्रह के ही विविध रूप हैं। यदि विचारपूर्वक देखा जाए, तो सत्य व न्याय के लिए आग्रह करना अथवा असत्य व अन्याय का विरोध करना या उनका साथ न देना अथवा अन्यायपूर्ण नियमों की

अवज्ञा करना आदि सब इसी एक बात के विविध पहलू हैं कि सत्य व अहिंसापूर्ण ढंग से सत्य को विजयी बनाया जाए। अफ्रीका में निष्क्रिय विरोध द्वारा भी उस सत्य व अन्याय का शान्तिपूर्ण विरोध किया गया था, जो वहाँ की सरकार के कानूनों में निहित था सन् 1920-21 के असहयोग आन्दोलन द्वारा, सन् 1930-31 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन द्वारा व सन् 41-42 के सत्याग्रह द्वारा भी तत्कालीन भारतीय सरकार द्वारा किये जाने वाले अन्याय व अत्याचार का ही सत्य व अहिंसापूर्ण ढंग से विरोध किया गया था। इस प्रकार इन सबमें तात्विक दृष्टि से कोई सुस्पष्ट भेद नहीं है, तथापि इनके विषय में यह कहा जा सकता है कि निष्क्रिय विरोध से असहयोग, असहयोग से सविनय अवज्ञा तथा सविनय अवज्ञा से विशुद्ध सत्याग्रह अधिकाधिक प्रभावशाली है और उन पर चलने के लिए उत्तरोत्तर अधिकाधिक संयम की साधना की आवश्यकता पड़ती है।

सत्याग्रह की कुछ प्रविधियां निम्न प्रकार हैं :-

1. असहयोगर :- प्रतिपक्षी से अपना निजी या सार्वजनिक सहयोग हटा लेना ही असहयोग है। यह सत्याग्रह का एक स्थूल साधन है, जिसका प्रयोग वहीं सम्भव है, जहाँ पहले सहयोग की स्थिति रही हो, जब हमें अनुभव होता है कि परपक्ष जो अन्याय कर सकता है, उसके मूल में हमारी शक्ति है, तब हमें चाहिए कि हम अपना सहयोग उस पक्ष से हटा लें।

गाँधीजी का विचार था कि अत्याचार एवं शोषण केवल तभी पनपनपता है, जब अज्ञान, भय अथवा निर्बलता के कारण लोग अपने पर किए जाने वाले अत्याचार या शोषण के प्रति इच्छा या अनिच्छा से सहयोग करते हैं। अतः उनका विश्वास था कि ऐसी स्थिति में यदि सब लोग अत्याचारी या अत्याचार पूर्ण प्रणाली से पूर्णतया सहयोग करना बन्द कर दें, तो अन्त में वह प्रणाली स्वतः समाप्त हो जाएगी। यह बात मनमानी करने वाले किसी व्यक्ति या किन्हीं व्यक्तियों, शोषक समुदायों या समूहों तथा सरकारों के सम्बन्ध में भी लागू की जा सकती है। असहयोग के कई सहयोगी उपाय है यथा:-

(अ) बहिष्कार :- जिस प्रकार कलंकित या भ्रष्ट व्यक्तियों का समाज द्वारा बहिष्कार किया जाता है उसी प्रकार अवांछनीय शासन, सरकारी सेवाओं, उत्सवों, वस्तुओं आदि के प्रयोग का बहिष्कार करना असहयोग का एक साधन है। बहिष्कारात्मक असहयोग का प्रयोग ऐसे व्यक्तियों अथवा ऐसी संस्थाओं के विरूद्ध अधिक प्रभावी सिद्ध होता हे। जो जनमत की अवहेलना करते हुए मनमानी करते हैं स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान सन् 1920 में गाँधीजी ने स्कूलों, कालेजों, सरकारी नौकरियों, अदालतों, चिकित्सालयों तथा वाहनों आदि के बहिष्कार करने का कार्यक्रम चलाया था।

(ब) धरना :- धरना असहयोग किसी व्यवसायी, सरकार या व्यक्ति के विरूद्ध प्रयोग में लाया जा सकता है तथा उसका उद्देश्य अनैतिक व्यापार तथा अनुचित सरकारी आदेश को रोकना हो सकता है। गाँधीजी ने

असहयोग आन्दोलन के दौरान विदेशी वस्त्रों, शराब आदि के व्यापार को रोकने हेतु धरना असहयोग का प्रयोग किया था।

इसमें यह स्मरणीय है कि धरना किसी पर दबाव डालने के लिए नहीं करना चाहिए। वरन् उसे प्रभावित करने के लिए किया जाना चाहिए। धरना केवल समझाने-बुझाने के रूप में होना चाहिए। किसी एक स्थान पर बैठकर आने-जाने वालों को रोककर या घेराव के रूप में धरने को गाँधीजी निन्दनीय समझते थे। धमकी, विपक्षी के पुतले जलाना या भूख हड़ताल आदि जैसे कार्य गाँधीवादी धरने के अन्तर्गत नहीं आते। धरना आत्मबल व अहिंसा पर आधारित होना चाहिए।

(स) हड़ताल :- काम बन्द करने को साधारणतः हड़ताल कहते हैं पर इसका उद्देश्य काम कराने वाले को किसी प्रकार की हानि पहुँचाना नहीं होता, वरन् इसका उद्देश्य उसके मस्तिष्क को इस प्रकार प्रभावित करना होता है कि वह अपनी नीति व कार्यों का अनौचित्य समझा सके। गाँधीजी के अनुसार हड़ताल जल्दी-जल्दी नहीं की जानी चाहिए अन्यथा यह निष्प्रभावी हो जाती है और हड़ताल पूर्णतः स्वेच्छापूर्ण तथा सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में होनी चाहिए और वह पूर्णतः अहिंसात्मक होनी चाहिए। हड़ताल असहयोग की अन्तिम एवं तीव्रतम स्थिति है। अतः इसका प्रयोग तभी किया जाना चाहिए, जब अन्य सभी असहयोग के ढंग निष्फल सिद्ध हो जाये।

(2) सविनय अवज्ञा :- सविनय अवज्ञा, सत्याग्रह की उच्चतर सीढ़ी है। गाँधीजी ने इसे 'सबसे अधिक प्रभावशाली एवं सशस्त्र क्रान्ति का रक्तहीन रूप' कहा है। अनैतिक कानूनों एवं आदेशों को समाप्त कराने का यह सबसे अधिक उत्कृष्ट ढंग है। इस सम्बन्ध में गाँधीजी ने 'सविनय' शब्द पर अधिक जोर दिया है और कहा है कि अवज्ञा किसी भी दशा में हिंसात्मक नहीं होनी चाहिए। गाँधीजी के अनुसार सविनय अवज्ञा विपक्षी के प्रति हृदय से आदर रखते हुए संयत ढंग से की जानी चाहिए। उसका प्रयोग उच्च उद्देश्यों की सिद्धि होनी चाहिए। वह ठोस सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए तथा उसके पीछे घृणा, शत्रुता या स्वार्थ की भावना नहीं होनी चाहिए।

सविनय अवज्ञा का अर्थ अन्यायपूर्ण कृत्य या कानून को आदरपूर्वक न मानना होता है। इसके लिए अवज्ञा हेतु कानूनों का चयन बहुत सावधानी से करना चाहिए। किस कानून की अवज्ञा किस सीमा तक करनी है, इसका निर्णय भी सत्याग्रही को न्याय, बुद्धि, आत्मबल व निष्ठा के आधार पर करना चाहिए। सन् 1930-1931 में गाँधी जी ने जो आन्दोलन चलाया था, उसे उन्होनें सविनय अवज्ञा आन्दोलन ही कहा था।

(3) हिजरत :- स्थायी निवास स्थान को छोड़कर अन्यत्र चले जाना हिजरत कहलाता है। गाँधीजी ने घर छोड़ने की सम्मति उन लोगों को दी थी, जो अपने स्थान पर आत्म सम्मान से न रह सकने के कारण दुःख अनुभव करते हों तथा जिनमें अन्य प्रकार के सत्याग्रह करने की शक्ति साहस व आत्मबल की कमी हो। गाँधीजी

का विचार था कि उन लोगों को जो अहिंसापूर्ण ढंग से अपनी रक्षा वहीं कर सकते, हिजरत के उपाय का सहारा लेना चाहिए और उन्हें अन्यत्र चले जाना चाहिए।

गाँधीजी ने 1928 में बारदोली के सत्यग्रहियों को 1939 में लम्बड़ी जूनागढ़ और बिट्ठलगढ़ ओर बिट्ठलगढ़ के सत्याग्रहियों को तथा 1935 में केंथा के हरिजनों को भी अपना घर छोड़कर अन्यत्र जाने की सम्मति दी थी।

(4) उपवास:- सत्याग्रह का सबसे शक्तिशाली रूप, जिसे गाँधीजी ने 'अग्निबाण' कहा था, अनशन या उपवास है। उपवास उनके अनुसार सत्याग्रह का एक अमोघ अस्त्र है जो कभी असफल नहीं होता। गाँधीजी के अनुसार अनशन को भूख हड़ताल नहीं समझा जाना चाहिए, क्योंकि उसका उद्देश्य विपक्षी पर एक प्रकार का दबाव डालना होता है, जबकि अनशन का उद्देश्य आत्मशुद्धि होता है। गाँधीजी का दावा है कि "शुद्ध अनशन, मस्तिष्क एवं आत्मा को शुद्ध करता है यह शरीर को कष्ट देकर आत्मा का को बन्धनमुक्त करता है।" गाँधीजी लिखते हैं कि, "अनशन प्रार्थना होती है या प्रार्थना की तैयारी, बशर्ते कि अनशन आध्यात्मिक हो अनशन टूटे हृदय की प्रार्थना होती है।" गाँधीजी के प्रत्येक उपवास में तीव्र हृदय मंथन, ईश्वरापेण तथा दूसरों पर दबाव डालने के स्थान पर आत्म-प्रायश्चित का भाव रहता था।

ईश्वरीय प्रेरणा से किया गया अनशन ही उचित होता है - गाँधीजी की धारणा थी कि सत्याग्रह के अस्त्र का प्रयोग किसी नीति के रूप में अथवा काम चलाऊ ढंग से नहीं किया जाना चाहिए, वरन् इसका प्रयोग व्यक्ति द्वारा तभी किया जाना चाहिए जब ऐसा करने के लिए उसे ईश्वरीय प्रेरणा मिले तथा उनका मत था कि इस प्रकार किया गया अनशन कभी बेकार नहीं जाता। राजकोट अनशन के अवसर पर लिखते हुए गाँधीजी ने कहा था। "मुझे आपने एक भी ऐसे अनशन का स्मरण नहीं, जो व्यर्थ रहा हो, यही नहीं, मुझे अपने सभी अनशनों में अमूल्य शान्ति एवं अनन्त आनन्द का अनुभव होता रहा है। मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूँ कि ईश्वर की प्रेरणा के बिना किया गया अनशन अपने को व्यर्थ में भूखों मारना है। जिसने मुझे अनशन करने की प्रेरणा दी, वह ही मुझे उसे सहन करने की शक्ति भी देगा। यदि परमात्मा चाहता हैं कि मैं कुछ और जीवित रहकर अपना मिशन पूरा करूं तो ले कोई अनशन चाहे वह कितना लम्बा क्यों न हो, मेरे शरीर का अन्त नही कर सकता।"

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि अनशन रूपी सत्याग्रह के लिए मनुष्य उच्चकोटि की पवित्रता, आत्मविश्वास, संयम, नम्रता तथा ईश्वर मे अटल विश्वास होना आवश्यक है। जब इसका प्रयोग उचित रूप में, उचित उद्देश्य के लिए होता है, तो वह गिरी हुई आत्माओं में भी खलबली मचा देता है। ये ऐसा अहिंसात्मक दबाव होता है, जिससे दुष्टतम व क्रूरतम शक्तियां भी नतमस्तक हो जाती हैं, क्योंकि यह उन लोगों के हृदयों को स्पर्श कर उन्हें द्रवीभूत कर देता है। विशेष परिस्थितियों में गाँधीजी आमरण अनशन को भी सत्याग्रह का अंग मानते थे, पर वे ऐसे किसी उपवास के विरूद्ध थे, जो किसी खीझ, क्रोध, ईर्ष्या द्वेश या किसी स्वार्थ की पूर्ति के लिए किया जाए, वे ऐसे अनशनों की कड़ी भर्त्सना करते थे।

अहिंसापूर्ण सत्याग्रह एवं विदेशी आक्रमण:-

गाँधीजी के अनुसार जो अहिंसक हैं, वे प्रत्याक्रमण के बारे में कभी नहीं सोचते। उनके मतानुसार आक्रमणकारियों के विरूद्ध भी प्रतिरोध अहिंसात्मक होना चाहिए जो दो प्रकार से हो सकता है :-

(1) अहिंसा में विश्वास करने वाली जनता को चाहिए कि वह प्रत्याक्रमण की बात कभी न सोचे। इसके परिणामस्वरूप आक्रमणकारी देश में आ सकते हैं। पर उसके बाद उन्हें देशवासियों द्वारा किसी भी प्रकार का सहयोग नहीं दिया जाना चाहिए सहयोग के अभाव में आक्रामक स्वतः लौट जाएंगे।

(2) अहिंसात्मक ढंग के कार्य करने में शिक्षित जनता को आक्रमणकारियों के सम्मुख, उनकी तोपों के सम्मुख स्वयं को सहर्ष बलिदान हेतु प्रस्तुत कर देना चाहिए। आक्रमणकारियों का भी हृदय होता है। उन स्त्री पुरूष बच्चों की कभी न समाप्त होने वाली पंक्तियों का दृश्य जो आक्रमणकारी के समक्ष आत्मसमर्पण की अपेक्षा आत्मदान अधिक पसन्द करते हैं, अन्त में आक्रमणकारियों के कठोर-क्रूर हृदय को भी पिघला देगा।

समाजिक व्यवस्था के विषय में गाँधी जी के विचार :-

(1) जातीय भेदभाव का अनस्तित्व :- गाँधी जी की कल्पना के समाज में ऊँच-नीच तथा जाति-पांति पर आधारित भेदभाव नहीं होगा। उसमें न कोई अछूत और न कोई सवर्ण होगा। इस प्रसंग में उनका विचार था कि अस्पृश्यता भारतीय समाज का कलंक है और उनकी कल्पना के समाज में इसके लिए कोई स्थान नहीं हो सकता।

(2) धार्मिक सहिष्णुता :- गाँधीवादी समाज में सब धर्मों की स्थिति समानता की होगी विविध धर्मों के अनुयायी अपने-अपने धर्मों का पालन करने के लिए स्वतन्त्र होगें।

(3) वर्ण व्यवस्था :- गाँधीवादी समाज में वर्ण व्यवस्था मान्य होगी पर उसका आधार जाति न होकर कर्म होगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र सब वर्ण अपना अपना कार्य वंश परम्परा से करेंगे, पर वर्ण के आधार पर लोगों के साथ कोई भेदभाव न किया जा सकेगा।

(4) स्त्री पुरूष का समान सम्मान :- गाँधीजी की कल्पना के समाज में स्त्री-पुरूष दोनों का सम्मान प्राप्त होगा और उनके अधिकार समान होंगे। पर स्त्रियों का कार्यक्षेत्र मुख्यतः गृहस्थी ही होगी।

(5) गौवध निषेध :- गाँधीजी गो वंश की रक्षा को धार्मिक व आर्थिक दोनों दृष्टियों से आवश्यक मानते थे। इसलिए अपने आदर्श समाज में उन्होनें गौवध का निषेध किया है।

(6) मद्य निषेध :- गाँधीजी का विचार था कि मादक पदार्थों का सेवन मनुष्य का चारित्रिक पतन करता है। अतः उनके अनुसार समाज में मादक वस्तुओं का न तो कोई उत्पादन होना चाहिए और न बिक्री।

(7) निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा :- गाँधीजी के अनुसार प्रत्येक बालक को निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा देना समाज का कर्त्तव्य है इसके लिए उनका सुझाव था कि मौहल्ले-मौहल्ले व गाँव-गाँव में बुनियादी पाठशालाएँ हों, जो प्राथमिक शिक्षा सबको निःशुल्क दें।

2.6 राजनीति

जिस अर्थ में राजनीति का प्रयोग साधारणतः किया जाता है, उससे गाँधीजी को वस्तुतः कोई प्रयोजन नहीं था। गाँधीजी मूलतः धार्मिक व्यक्ति थे और उन्होनें राजनीति के क्षेत्र में जो कुछ किया, वह भी धार्मिक साधना के अन्र्तगत ही किया। भारतीय परम्परा के सन्त होने के नाते वे भगवत् भक्त थे और मनुष्य जाति की सेवा को ही भगवान की सच्ची सेवा समझते थे। मनुष्य जाति की सेवा करने के लिए वे राजनीति के क्षेत्र में आये। उन्होनें 'हरिजन' में लिखा था, "मेरे देशवासी मेरे सबसे निकट के पड़ोसी हैं। वे इतने असहाय, निरूपाय व निर्जीव हो गए हैं कि मुझे उनकी सेवा में लग जाना आवश्यक है। यदि मै समझता कि भगवान मुझे हिमालय की कन्दरा में मिलेंगे, तो मैं तुरन्त वहाँ चला जाता। पर मैं जानता हूँ कि मानव समूह से प्रथक उन्हें मैं नहीं पा सकता।" इससे यह स्पष्ट है कि गाँधीजी ने जाति सेवा ईश्वर की प्राप्ति को एक साधन के रूप में ग्रहण की और उन्होनें राजनीति में भाग इसलिए लिया कि राजनीति में माध्यम से जन-सेवा करके वे ईश्वर क प्राप्ति कर सकें। गाँधीजी की राजनीति वस्तुतः उनकी ईश्वर प्राप्ति की साधना का अंग मात्र थी। उन्होनें कहा था कि "मेरा उद्देश्य पूर्णतः धार्मिक रहा है। मैं यदि अपने अपने को मानव समाज से न मिला देता तो मैं धार्मिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकता था और ऐसा मैं तब तक नहीं कर सकता था, जब तक मैं राजनीति में भाग न लेता।"

ईश्वर की प्राप्ति की साधना का अंग मात्र होने के कारण उनकी राजनीति वह राजनीति नहीं थी, जिसे साधारणतः राजनीति कहा जाता है। उनकी राजनीति छल कपटपूर्ण राजनीति ने होकर धर्म पर आधारित राजनीति थी। उन्होनें अपनी आत्मकथा में स्वंय कहा है कि "यदि मैं राजनीति में भाग लेता हूँ, तो घेरे हुए है, जिससे कोई चाहे कितनी ही चेष्टा करे, बाहर नहीं निकल सकता। मैं उस सर्प से युद्ध करना चाहता हूँ। धर्म से पृथक वे राजनीति को वे मृत्यु जाल है, क्योंकि वह आत्मा का हनन कर देती है।" उनके अनुसार, "वे लोग जो यह कहते हैं कि धर्म का राजनीत से कोई सम्बन्ध नहीं है, धर्म का अर्थ नहीं जानते।" इस प्रकार गाँधीजी छल, कपट व अस्वस्थ कूटनीति पर आधारित राजनीति के प्रचलित रूप को बुरा समझते थे और उसमें धर्म का समावेश कर उसे आध्यत्मिक बनाने के पक्षपाती थे।

राज्य के सम्बन्ध में गाँधीजी के विचार

(1) गाँधीजी मूलतः अराजकतावादी हैं :- गाँधी जी का मत है कि राज्य व राजकीय शक्ति की आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि मनुष्य अपूर्ण है यदि मानव जीवन इतना पूर्ण हो जाए कि वह स्वंय संचालित हो सके तो फिर राज्य व राजकीय शक्ति को समाज की कोई आवश्यकता न रहे। गाँधीजी के विचार के अनुसार ऐसी स्थिति होगी, क्योंकि उस दशा में एक ऐसी विवेकपूर्ण अराजकता स्थापित हो जायेगी जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के हित साधन में बाधा न डालते हुए स्वंय अपना शासक बन जायेगा। गाँधीजी के मतानुसार वह समाज, जिसमें राज्य व राजनीतिक शक्ति का अभाव होगा और व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्ध सत्य व अहिंसा पर आधारित होंगेय आदर्श समाज होगाय क्योंकि ऐसी ही सामाजिक स्थिति में मनुष्य वास्तविक रूप से स्वतन्त्रत होगा। गाँधीजी के अनुसार स्वतन्त्रता व समाज का अर्थ है व्यक्ति की बाह्य अर्थात् सरकारी नियन्त्रण से मुक्ति। उनका कहना था कि यदि व्यक्ति अधिकांश बातों के लिए राज्य व सरकार पर ही निर्भर रहा, तो वह वास्तविक स्वतन्त्रता व स्वराज नहीं हैं। उनके अनुसार आत्मनिर्भरता ही स्वतन्त्रता का मूल है। इस प्रकार गाँधीजी के अनुसार समाज की आदर्श दशा वहीं होगी, जिसमें व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्ध सत्य व अहिंसा के आधार पर स्वंय संचालित होंगे।

(2) व्यावहारिक दृष्टि से राज्य एक आवश्यक बुराई है :- गाँधीजी केवल विचार जगत के व्यक्ति नहीं थे। वे जगत की वास्तविकताओं का सदा ध्यान रखते थे। इस सम्बन्ध में भी उन्हें आदर्श के साथ-साथ यर्थाथ का भी ध्यान रहता था। वे यह मानते थे कि वास्तविक मानव जीवन में पूर्ण अराजकता की व्यवस्था स्थापित होना सम्भव नहीं है। अतः व्यक्तिवादियों की तरह वे यह मानते थे कि एक आवश्यक बुराई के रूप मे राज्य व सरकार का बना रहना आवश्यक हैय उन्होनें कहा था कि “राज्य की शक्तियों में वृद्धि को मैं बड़ी आशंका से देखता हूँ। ऊपर से जान पड़ता है कि बढ़ती हुई राज्य की शक्ति शोषण को रोककर लोगों का भला कर रही है, पर वास्तव में इससे मानव जाति की बड़ी हानि होती है। क्योंकि व्यक्ति का व्यक्तित्व, जो सभी प्रकार की उन्नति का मूल है, नष्ट हो जाता है।” इसलिए व्यक्ति के व्यक्तित्व के पूर्ण विनाश के लिए आवश्यक है कि वह अधिक से अधिक राज्य के नियन्त्रण से मुक्त हो।

(3) राज्य व्यक्ति-हित का साधन मात्र है :- गाँधीजी के अनुसार अपने वर्तमान रूप में राज्य केन्द्रीयकृत व संगठित हिंसा का प्रतीक है। जितनी अधिक शक्ति उसके हाथ में रहती है, वह व्यक्ति के स्वाभाविक विकास में उतना ही बाधक सिद्ध होता है। अतः यदि व्यक्ति को अपने स्वाभाविक विकास का अवसर मिलता है और उसके लिये वे परिस्थितियां सुलभ होती हैं, जिनमे वह जीवन के चरम उद्देश्य की प्राप्ति कर सके, तो यह आवश्यक है कि सामाजिक व्यवस्था प्रधानतः सत्य व अहिंसा पर आधारित हो तथा राजकीय शक्ति (जिसका आधार हिंसा है) का प्रयोग न्यूनतम हो। इस प्रकार महात्मा गाँधी की राज्य के स्वरूप के कल्पना उन सब कल्पनाओं से भिन्न है, जो किसी प्रकार व्यक्ति के नैतिक व्यक्तित्व व उसकी नैतिक शक्ति की तुलना में राज्य के व्यक्तित्व व उसकी शक्ति को अधिक महत्व देती हो। वे न तो राज्य के स्वरूप सम्बन्धी इस आदर्शवादी कल्पना में विश्वास करते हैं

कि राज्य मनुष्य की समाजिकता व उसकी नैतिकता का उत्कृष्टतम रूप है और न इस एकत्ववादी विचार के समर्थक हैं कि वह मनुष्य समाज की सर्वोत्तम सत्ताधारी संस्था है, उनके अनुसार राज्य की स्थिति व्यक्ति के जीवन के चरम् उद्देश्य की प्राप्ति का एक साधन मात्र है।

(4) राज्य में शक्तियों का अत्यधिक केन्द्रीकरण नहीं होना चाहिए :- गाँधीजी के अनुसार राज्य में समाज की सब शक्तियों का केन्द्रीकरण नहीं होना चाहिए। क्योंकि शक्ति का जिनता अधिक केन्द्रीकरण होता है, उतना ही उसका दुरूपयोग होता है। गाँधीजी की कल्पना के समाज में राज्य को राज्य को स्वंय पर्याप्त व स्वशासित ग्रामों की इकाइयों का संघ होना चाहिए और उसमें सत्ता का विकेन्द्रीकरण अधिक से अधिक होना चाहिए।

(5) राज्य का उद्देश्य व कार्य सर्वोदय :- गाँधीजी के मतानुसार राज्य का उद्देश्य सर्वोदय अर्थात सभी की सर्वांगीण उन्नति है। उनके अनुसार वह किसी वर्ग विशेष के हितों का साधन नहीं हो सकता। गाँधीजी की कल्पना के राज्य में ऐसा कोई वर्ग नहीं होना चाहिए जिसे जीवन की आवश्यक वस्तुएं सुलभ न हों। इस सम्बन्ध में गाँधीजी ने लिखा है, "मेरा स्वराज्य का स्वप्न गरीबों के स्वराज्य का है। उन्हें भी जीवन की आवश्यक वस्तुएं उसी प्रकार प्राप्त होनी चाहिए। सुखी जीवन के लिए राजाओं जैसे वे धनिकों व राजाओं को होती है। पर इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उनके लिए राजाओं जैसे महल होने चाहिए। सुखी जीवन के लिए महल आवश्यक नहीं है। मैं या आप उसमें रास्ता ही भूल जाएंगे, पर जीवन की साधारण सुविधाएं धनिकों की भांति ही सबको सुलभ नहीं होगी, तब तक स्वराज्य पूर्ण स्वराज्य नहीं हो सकता।"

शासन व्यवस्था के विषय में गाँधीजी के विचार :-

(1) शासन के विकेन्द्रीकरण पर आधारित स्वशासित ग्रामों का संघ:- देशीय स्तर पर गाँधीजी का आध्यात्मिक प्रजातन्त्र स्वयं पर्याप्त तथा स्वयं संचालित ग्रामों के एक ऐच्छिक संघ के रूप में होगा। अहिंसा तथा उसी से उत्पन्न अन्य सिद्धान्तों का पूर्णरूप से अनुकरण करने के कारण गाँवों का प्रत्येक नागरिक स्वंय अपना शासक होगा। वह इस प्रकार व्यवहार करेगा कि अपने पड़ोसी के लिए कभी बोझ न सिद्ध हो। इस प्रकार के ग्राम एक संघ या समूह का निर्माण करेंगे, जिनमें ऐच्छिक सहयोग ही शान्ति एवं सम्मानित जीवन की शर्त होगी। उसमें लोग अहिंसा के ऊंचे स्तर पर पहुँचे हुए होंगे और पूर्ण आत्म संयम के आधार पर सत्य का ज्ञान सत्य का ज्ञान रखते हुए सादगी और त्याग का जीवन व्यतीत करेंगे।

(2) शक्ति व सत्ता का प्रभाव पंचायतों से संघ की ओर :- गाँधीजी का विश्वास था कि इस प्रकार के विकेन्द्रित शासन में जहाँ प्रत्येक ग्राम आत्मनिर्भर तथा स्वशासी होगा, शासन की आवश्यकता केवल उसी सीमा तक होगा, जिस सीमा तक उसकी आवश्यकता ऐसे व्यक्तियों की अवांछनीय हिंसात्मक प्रवृत्तियों को रोकने के लिए होगा, जो नैतिकता तथा आत्मनियन्त्रण के आवश्यक स्तर पर नहीं पहुँच सके हैं उक्त प्रकार की

ग्रामीण इकाइयों को एक सूत्र में समन्वित करने हेतु गाँधीजी ने एक केन्द्रीय सत्ता के पास उनके मतानुसार आदेश देने व नियन्त्रण करने के अधिकार नहीं होंगे। शासन व शान्ति की मुख्य इकाइयाँ उक्त प्रकार के ग्रामों की ग्राम पंचायतें होगी।ग्राम पंचायतों की सत्ता केन्द्र से प्राप्त नहीं होगी, वरन् ग्राम पंचायतों से सत्ता ऊपर की ओर प्रभावित होगी। इस प्रकार के शासन का संचालन गाँधीजी के अनुसार पूर्णतः अहिंसात्मक ढंग से होगा तथा शक्ति की अपेक्षा वह अनुनय-विनय पर अधिक आधारित होगा।

गाँधीवादी पंचायती राज :- गाँधीजी ने अपनी विकेन्द्रीकरण की योजना में एक ऐसी पंचायती राज-व्यवस्था का निरूपण करने के प्रयास किया है। जिसकी शासन-व्यवस्था में शासन की मूल इकाई पंचायत होगी।

गाँधीवादी पंचायती राज्य का संगठन :- ग्राम पंचायत का संगठन एक या कुछ गाँवों को मिलाकर किया जाएगा। पंचायत में पाँच व्यक्ति होंगे, जो गाँव की जनता द्वारा प्रत्यक्ष चुनावों से सर्वसम्मति द्वारा चने जाएंगे। ग्राम पंचायत को अपने श्रेष्ठ के सम्पूर्ण कार्य के सम्पादन का अन्तिम अधिकार होगा। इनमें ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधियों के द्वारा चुनाव से निर्वाचित प्रतिनिधि होंगे। इसी प्रकार प्रान्तीय व केन्द्रीय पंचायत का गठन किया जाएगा। यद्यपि गाँधीजी ने इनके संगठन व अधिकारों की कोई स्पष्ट रूपरेखा प्रस्तुत नहीं की।

2.7 अर्थ व्यवस्था

(1) औद्योगीकरण का विरोध व रोटी व श्रम की महत्ता :- गाँधीजी आधुनिक जटिल आर्थिक व्यवस्था को मानवकल्याण की दृष्टि से उपयोगी नहीं समझते थे। वे मशीनों की सहायता से चलने वाले विशालकाय उद्योगों वाली अर्थव्यव्था के स्थान पर कुटीर उद्योगों पर आधरित अपेक्षाकृत सरल अर्थव्यस्था की ओर लौटने की बात कहते थे, जिससे मानव शक्ति का उपयोग आधिकाधिक हो। गाँधीजी का मत था कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जीविका के लिए कुछ न कुछ शारीरिक परिश्रम करना अवश्य करना चाहिए। गाँधीजी इस प्रकार के परिश्रम को ब्रोटी के श्रम,की संज्ञा देते थे और कहते थे कि बिना रोटी का श्रम किए जो लोग अपना पेट भरते है, वे समाज के चोर हैं गाँधीजी इसे प्रकृति का नियम मानते थे, क्योंकि इसके बिना मनुष्य को भूख ही नहीं लगती। वे लोग, जो शारीरिक परिश्रम नहीं करते और खेलकूद कसरत आदि जैसे उपायों द्वारा भूख उत्पन्न करते हैं, कृत्रिम व्यवस्था का सहारा लेते हैं कि अपनी आवश्यकता की वस्तुओं के उत्पादन के लिए व्यक्ति नित्य-प्रति कुछ न कुछ शारीरिक श्रम अवश्य करें, अन्यथा वह पेट भरने का अधिकारी नहीं है।

बौद्धिक श्रम गाँधीजी के अनुसार व्यक्ति को भोजन पाने का अधिकारी नहीं बनाता। वह केवल बुद्धि की भूख पूरी करता है। शरीर की भूख पूरी करने के लिए शारीरिक परिश्रम करना आवश्यक है।बौद्धिक श्रम करने वालों के लिए तो गाँधीजी का कहना था कि उन्हें किसी वेतन या पारिश्रमिक की आशा ही नहीं करनी चाहिए। वरन् उन्हें अपना श्रम समाज के हित के लिए निःशुल्क करना चाहिए। गाँधीजी के मतानुसार आदर्श परिश्रम तो वही है, जो

पृथ्वी में से कुछ उपजाने में लगे पर उन लोगों के लिए, जिन्हें नगर आदि में रहने के कारण इस प्रकार का श्रम करने की सुविधा नहीं है, गाँधी जी का कहना था कि वे लोग चरखा द्वारा सूत की कताई या अन्य किसी दस्तकारी द्वारा शारीरिक परिश्रम कर सकते हैं और पेट भरने के अधिकारी हो सकते हैं। शारीरिक परिश्रम गाँधीजी के अनुसार आर्थिक व स्वास्थ्य की दृष्टि से ही आवश्यक नहीं है, क्योंकि कठिन परिश्रम करने वालों को व्यर्थ की खुराफातें प्रायः नहीं सूझतीं।

(2) उत्पादन में कुटीर उद्योग की प्रधानता ;- शारीरिक परिश्रम की इतनी उपयोगिता मानने वाले गाँधीजी के लिए यह स्वाभाविक था कि वे आधुनिक औद्योगिकता एवं मशीनों द्वारा बड़े पैमाने पर केन्द्रीभूत उत्पादन आदि को मनुष्य जाति के लिए एक अभिशाप माने। उनका मत था कि बड़े पैमाने पर उत्पादन की प्रणाली द्वारा ही संसार में व्यक्ति का व्यक्ति द्वारा व राष्ट्र का अन्य राष्ट्र द्वारा शोषण सम्भव हुआ है। भारत जैसे अधिक ही हानिकारक मानते थे। अतः उनका कहना था कि उत्पादन का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए तथा जहाँ तक सम्भव होए उत्पादन मनुष्यों के हस्तकौशल व पशुओं के श्रम द्वारा संचालित कुटीर उद्योगों के माध्यम से होना चाहिए। उत्पादन का उद्देश्य आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए, लाभार्जन नहीं। भारत जैसे देश के लिए तो कुटीर उद्योगों का प्रचलन वे अत्यन्त लाभकारी समझते थे, क्योंकि इसके द्वारा मनुष्य की वस्त्र सम्बन्धी एक मुख्य आवश्यकता की पूर्ति होती है और इससे करोड़ों लोग जीविका कमा सकते हैं। पर इसके अतिरिक्त आटे की पिसाई, चावल कूटना, गुड बनाना, मधुमक्खियों को पालना, तेल पेरना, रस्सी बाटना, टोकरियां बनाना, खिलौने व मिट्टी के बर्तन व ईंट बनाना आदि अनेक ऐसे कुटीर उद्योग हैं, जिन्हें मशीनो के आविष्कार के कारण लोग छोड़ते जा रहे हैं। अतः उनका विचार था कि यदि उन्हें प्रोत्साहित किया जाए, तो उत्पादन व बेकारी दोनो की समस्या सरलतापूर्वक हल हो सकती है। पर इससे यह नहीं समझा जाना चाहिए कि गाँधीजी मशीनों व मशीनों द्वारा संचालित बड़े-बड़े उद्योगों के पूर्णतः विरूद्ध थे या वे मशीनों का प्रयोग बिल्कुल बन्द कर देना चाहते थे, वे ऐसी मशीनों के प्रयोग को नहीं चाहते थे जो या विनाशकारी हो या शोषण को प्रोत्साहन देने वाली हों। उदाहरणार्थ तोप, बन्दूक, मशीनगन व बम आदि विनाशकारी हैं। इसलिए गाँधीजी का मत था कि वे सर्वथा त्याज्य हैं। इसी प्रकार बड़े-बड़े कारखानों में प्रयुक्त होने वाली वे मशीनें, जो श्रमिकों का शोषण करने में पूँजीपतियों की सहायता करती है त्याज्य है। पर रेल, जहाज, सिलाई मशीन, हल, चरखा, फावड़ा आदि जैसी मशीनों का प्रयोग विहित है, क्योंकि वे मनुष्य के लिए आवश्यकता की वस्तुओं का उत्पादन करने में सहायक होती हैं। यदि बड़े कारखानों का रखना आवश्यक ही हो, तो गाँधीजी का मत था कि वे राज्य द्वारा संचालित होने चाहिए जिससे उनके द्वारा लाभ के लिए उत्पादन व शोषण न होने पाए। मशीनों के प्रयोग के विषय में उनका सिद्धान्त यह था कि जो मशीन सर्वसाधारण के हितसाधन में काम आती है। उसका प्रयोग विहित है। वे गृह उद्योगों में काम आने वाली मशीनों के प्रयोग व उनके सुधार के समर्थक थे, पर कहते थे कि "यान्त्रिक शक्ति से चलने वाली मशीनों का व्यवहार करके लाखों लोगों को बेकार कर देना मेरी दृष्टि में अपराध है।"

राष्ट्रवाद व अन्तर्राष्ट्रवाद पर गाँधीजी के विचार :-

गाँधीजी भारत के राष्ट्रपिता कहे जाते है। वे भारतीय राष्ट्रीयता के कर्णधार थे। पर उनकी राष्ट्रीयता संकुचित राष्ट्रीयता न थी। गाँधीजी सब प्राणियों को एक ही ईश्वर की सन्तान मानते थे। अतः उनके लिए यह स्वाभाविक था कि वे सब राष्ट्रों के मनुष्यों को भाई-भाई मानते। अतः गाँधीजी सदा 'वसुधैव कुटुम्बकम' के सिद्धान्त पर चले और अपने राष्ट्रप्रेम को कभी संकुचित न होने दिया। उनका कहना था कि "भारत में उत्पन्न होने और उसकी संस्कृति का उत्तराधिकारी होने के कारण मैं भारत की सेवा सर्वोत्तम रूप से कर सकता हूँ। उसकी सेवा पर मेरा सर्वप्रथम अधिकार है। पर मेरी देश भक्ति संकुचित नहीं हैं। मैं किसी अन्य राष्ट्र को कोई हानि नहीं पहुंचाना चाहता। सबको सच्चा लाभ पहुचाना चाहता हूँ मेरे अनुसार भारतीय स्वतन्त्रता कभी भी संसार के भय के कारण नहीं बनेगी।"

गाँधीजी वस्तुतः एक सच्चे देशभक्त एवं राष्ट्रवादी थे। किन्तु उनके राष्ट्रवाद को तब तक ठीक से नहीं समझा जा सकता जब तक यह ध्यान न रखा जाय कि मूलतः वे एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रवादी थे जो सम्पूर्ण विश्व की आध्यात्मिक एकता में विश्वास रखते थे। उन्होनें एक फ्रांसीसी पत्र में कहा था "मेरी राष्ट्रीयता गहरी अन्तर्राष्ट्रीयता है।"

गाँधीजी देश की स्वतन्त्रता चाहते थे एवं इसके लिए उन्होनें प्रयास भी किए। किन्तु उनके ये प्रयास संकुचित या देशी दायरे तक सीमित नहीं थे। वे अपने देश की स्वतन्त्रता भी इसलिए चाहते थे कि विश्व के अन्य देश भी स्वतन्त्र भारत से कुछ सीख सकें तथा स्वतन्त्र भारत के साधनों का उपयोग मानवता के लिए किया जा सके। गाँधीजी का विचार था कि "जिस प्रकार देश भक्ति की भावना हमें यह सिखाती है कि व्यक्ति जिले के लिए, जिला प्रान्त के लिए और प्रान्त देश के लिए न्यौछावर हो जाए उसी प्रकार देश को आवश्यकता पड़ने पर विश्व की भलाई के लिए न्यौछावर होने के लिए तैयार होना चाहिए।"

गाँधीजी का विचार था कि राष्ट्रवाद कभी भी बुराई नहीं होती वरन् बुराई होती है संकुचित भावना जिसमें अधिकांश आधुनिक राष्ट्र त्रस्त हैं। गाँधीजी का राष्ट्रवाद सेवा एवं आत्म बलिदान के दृढ़ आधारों पर अवस्थित था। अतः उससे अन्य किसी राष्ट्र को कोई भय नहीं हो सकता था। जहाँ सहयोग, निर्माण एवं मानवतावाद राष्ट्रीयता के मूल सिद्धान्त हो, वहाँ राष्ट्रवाद एक विश्व एवं विश्व सरकार का निर्माणक ही हो सकता है। क्योंकि ऐसा राष्ट्रवाद मानवतावादी होगा और उसमें प्रजातिवाद का कोई स्थान नहीं होगा।

गाँधीजी का यह दृढ़ विश्वास था कि "राष्ट्रवादी हुए बिना अन्तर्राष्ट्रवादी होना पूर्णतः असम्भव है। अन्तर्राष्ट्रवाद तभी सम्भव हो सकता है, जबकि राष्ट्रवाद एक यर्थाथ बन जाय, विभिन्न देशों के लोग संगठित होकर एक हो जाएं और एक व्यक्ति के रूप में काम करने लगें।"

गाँधीजी का सुझाव इस सम्बन्ध में यह था कि विश्व के स्वतन्त्र राष्ट्रों के सहयोग के आधार पर विश्व सरकार बनाई जानी चाहिए, जिसमें सहयोगी राष्ट्रों के प्रतिनिधि शासक के रूप में कार्य करें। उनका विचार था कि ऐसी सरकार सत्य एवं अहिंसा पर आधारित होनी चाहिए तथा भारत को इसकी स्थापना के लिए अपने प्रयास करने चाहिए। गाँधीजी ने एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय अहिंसक सेना की स्थापना पर भी बल दिया था, जो सैनिक रूप से संगठित न हो, पर जो सुधारक पुलिस के रूप में कार्य करे।

गाँधी जीवन की विचारधारा का पक्ष :- गाँधी जीवन की विचारधारा के पक्ष में जो कुछ कहा जा सकता है, उसे निम्न प्रकार रख सकते हैं :-

(1) गाँधीजी ने विश्व में नैतिक मूल्यों की पुनस्थापना की :- महात्मा गाँधी जिस समय सार्वजनिक क्षेत्र में आये उस समय देश व विश्व का सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक वातावरण भ्रष्टता से पूर्ण था। व्यक्तिगत जीवन में तो अनैतिक साधनों का प्रयोग खुले रूप से अच्छा समझा जाता था। नैतिकता के नियम केवल व्यक्तिगत जीवन के नियम हैं, अधिक से अधिक लोग केवल इसे मानने को तो तैयार थे, परन्तु सार्वजनिक जीवन को वे नैतिक नियमों से परे समझते थे। गाँधीजी ने अपने विचारों व कार्यों से संसार को यह बताया कि नैतिकता का प्रयोग व्यक्तिगत जीवन में ही नही सार्वजनिक जीवन में भी अच्छे परिणामों के साथ किया जा सकता है। उन्होनें इस बात से विश्व को अवगत कराया और यह करके दिखाया कि कोई भी कार्य ऐसा नहीं है, जो अच्छे साधनों से सिद्ध न किया जा सके। अच्छे साध्य के लिए यदि बुरा साधन अपनाया जाय, तो साध्य भी अच्छा नहीं रहता। अतः किसी अच्छे साध्य की सिद्धि के लिए आवश्यक है कि साधन भी अच्छा हो। इस सम्बन्ध में गाँधीजी ने विश्व के समक्ष यह महत्वपूर्ण तथ्य रखा कि ‘‘साधन बीज और साध्य वृक्ष होता है। अतः जो सम्बन्ध बीच और वृक्ष में होता है। वही सम्बन्ध साधन और साध्य में होता है। किसीभी शैतान की उपासना करके ईश्वर की उपासना का फल प्राप्त नहीं कर सकता।‘‘

(2) गाँधीजी ने राजनीति का आध्यात्मीकरण किया :- गाँधीजी से पहले राजनीति के क्षेत्र में मैकियावलीवाद का बोलबाला था। उस क्षेत्र में प्रचालित मान्यता यह थी कि अच्छे या बुरे जिस भी साधन से साध्य की सिद्धि हो जाए, वही साधन अच्छा है। साध्य से ही साधन का औचित्य होता है, यह राजनीतिक क्रिया-कलाप का आधार माना जाता था। पर गाँधीजी ने इसका सक्रिय खण्डन किया और यह बताया कि जीवन के सभी क्षेत्रों में जिसमें राजनीति का क्षेत्र भी सम्मिलित है साधनों की पवित्रता बरती जानी चाहिए। उन्होनें यह केवल कहा ही नहीं, करके भी दिखाया और अपने द्वारा निर्धारित राजनीतिक उद्देश्यों की सिद्धि सत्य व अहिंसा जैसे नैतिक साधनों से करके दिखाई, यद्यपि कुछ उद्देश्यों की सिद्धि में वे असफल रहे, कई बार उनका सत्याग्रह वांछित उद्देश्य को सिद्धि न कर सका तथा विपक्षियों का हृदय परिवर्तन न हो सका। तथापि यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि सत्याग्रह की वे असफलताएं केवल अस्थायी असफलताएं ही थी, क्योंकि

गाँधीजी द्वारा संचालित भारत के स्वाधीनता संग्राम का अन्त जिस प्रकार हुआ, उससे यह पूर्णतया सिद्ध हो जाता है कि सत्य के लिए अहिंसा-पूर्वक आग्रह से निर्दयी से निर्दयी प्रतिपक्ष पर विजय प्राप्त की जाती है और बड़ी से बड़ी राजनीतिक समस्या का समाधान निकल सकता है।

(3) गाँधीजी ने धर्म का लौकिकीकरण कियार :- धर्म का लौकिकीकरण भी गाँधीजी की एक महत्वपूर्ण देन है, गाँधीजी ने धर्म के प्रचलन के सम्बन्ध में इस दोषपूर्ण स्थिति को देखा कि धर्म का सम्बन्ध लोग केवल परलोक सुधार से ही समझते हैं तथा धर्म के ठेकेदारों ने उसके अर्थ ऐसे कर रखे हैं, जो धर्मान्धिता से पूर्ण तथा ऐसे हैं, जो सत्य की कसौटी पर खरे नहीं उतर सकते तथा उन पर चलने से व्यक्ति का कल्याण नहीं हो सकता। अतः गाँधीजी ने धर्म के ऐसे रूढ़िवादी रूप का विरोध किया तथा धर्मान्धता के विरूद्ध लोगों को प्रशिक्षित किया। उन्होनें इस महत्वपूर्ण तथ्य को लोगों के सामने रखा कि धर्म केवल परलोक सुधार की वस्तु नहीं है, वरन् वह इस लोक में व्यवहत की जाने की वस्तु है तथा उस पर चलकर ही व्यक्ति का इहलौकिक व पारलौकिक दोनों प्रकार का कल्याण हो सकता है। धर्म के नाम पर जो कुछ भी कहा जाय, वह ईश्वरीय है, इस अन्धविश्वासपूर्ण धारणा को यह बताया कि धर्म की रूढ़ियों का पालन अविवेकी की तरह नहीं किया जाना चाहिए। उन्होनें स्वयं कहा था कि “हिन्दू धर्म ग्रन्थों में विश्वासी होने के कारण मेरे लिए यह आवश्यक नहीं कि मैं उसके प्रत्येक शब्द व प्रत्येक वाक्य को ईश्वर प्रेरित समझूं। चाहे कितना ही विद्धतापूर्ण क्यों न हो, मैं उनके ऐसे किसी भी अर्थ में अपने को बंधा हुआ नहीं मान सकता। जो विवेक नैतिक भावना के विरूद्ध हो।”

इसी प्रकार गाँधीजी ने धर्म को व्यापक व व्यावहारिक बनाकर उसे सांसारिक बनाया तथा यही कारण है कि गाँधीजी ने राजनीति का आध्यात्मीकरण तथा धर्म का लौकिकीकरण किया तथा जैसा डॉ. राधाकृष्णन ने कहा है, “उस नैतिक व आध्यत्मिक क्रान्ति के महान देवता के रूप में गाँधीजी सदा स्मरण कि, जाएंगे जिसके बिना इस पथभ्रष्ट विश्व को शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती।”

(4) गाँधीजी ने व्यक्ति की महत्ता एवं मानवीय शक्तियों के प्रति विश्वास को पुनर्जागृत किया :- विश्व के लिए गाँधीजी की एक अन्य देन यह है कि उन्होनें व्यक्ति की महत्ता तथा शक्तियों के प्रति विश्वास पुनः जागृत किया। औद्योगीकरण के बाद से समाज व राज्य का जो रूप बना था, उसमें व्यक्ति का व्यक्तित्व नगण्य हो गया था, पश्चिम की औद्योगिक सभ्यता ने जो आघात व्यक्ति के व्यक्तित्व को पहुँचाया है, उसके कारण मनुष्य विशाल व महाकाय सामाजिक व राजनीतिक यन्त्र का एक पुर्जा बनकर रह गया है। व्यक्ति आसुरी अधिक व दैवीकन है तथा उसके लिए क्या हितकर है, इसका निर्णय वह स्वंय नहीं कर सकता। यह तथा ऐसे ही विचार व्यापक रूप से मान्य हो गए हैं। गाँधीजी ने इसके विपरीत यह अमूल्य विचार संसार को दिया कि व्यक्ति समाज व राज्य के लिए नहीं है, वरन् समाज व राज्य व्यक्ति के लिए है। उससे व्यक्तित्व को उचित महत्व प्राप्त होने पर ही सच्चा लोकतन्त्र स्थापित हो सकता है तथा विश्व का कल्याण हो सकता है।

(5) गाँधीजी ने राजनीतिक स्वतन्त्रता के साथ-साथ सामाजिक व आर्थिक स्वतन्त्रता का भी प्रतिपादन किया :- गाँधीजी की एक अन्य महत्वपूर्ण देन यह है कि उन्होंने राजनीतिक स्वतन्त्रता का भी प्रतिपादन किया। उन्होनें विश्व को यह विचार दिया कि सामाजिक व आर्थिक स्वतन्त्रता के बिना केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता का कोई मूल्य नहीं है। इसी प्रसंग में उन्होंने उत्पादन के सिलसिले में 'रोटी का श्रम'के उस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसे आर्थिक स्वतन्त्रता के प्रबल समर्थक साम्यवाद की इस मान्यता का ही एक रूपान्तरण कहा जा सकता है कि 'जो काम नहीं करेगा वह खाएगा भी नहीं' तथा वितरण के सिलसिले में उन्होनें अपरिग्रह व प्रन्यास के ऐसे सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है जिन पर यदि मनुष्य ईमानदारी से चल सके, तो सम्पत्ति के वितरण की समस्या का समाधान बिना किसी पारस्परिक कटुता के हो सकता है।

2.8 सारांश

गाँधीजी की विचारधारा की एक सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि वे साधन की पवित्रता पर बल देते हैं। महात्मा गाँधी के शब्दों में "यदि साधन अपवित्र है, तो पवित्र से पवित्र साध्य को भी सिद्ध नहीं किया जा सकता।" गाँधीवाद के इस सिद्धान्त को ही स्वीकार कर लिया जाय तो इतना निश्चित है कि विश्व का अधिकांश समस्याओं का समाधान हो सकता है। आज के आणविक युग में यदि व्यक्ति जीवित रहना चाहता है तो उसे शस्त्रीकरण की दौड़ समाप्त करके सत्य, प्रेम और अहिंसा के सिद्धान्तों को अपनाना होगा, अन्यथा तृतीय विश्व युद्ध की विभीषिका से न बचा जा सकेगा। यदि राजनीति व्यवहार नैतिक सिद्धान्तों की पवित्रता पर आधारित हो, तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व की अनेक समस्याओं का समाधान सरलता से हो सकता है। अतःश्रीमनारायण के शब्दों में यह कहा जा सकता है "आज के मानव के दुःखों को दूर करने वाली एकमात्र रामबाण औषधि गाँधीवाद है।"

2.9 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी जीवन पर एक लेख लिखिए।
2. गाँधीजी की पृष्ठभूमि पर एक लेख लिखिए।
3. गाँधीवादी प्रविधि की विवेचना कीजिए।

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गाँधी, एम. के., आत्म कथा : सत्य के साथ मेरा प्रयोग, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1966
2. गाँधी, एम. के., हिन्द स्वराज्य, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1990

3. दाधीच, नरेश, गाँधी एंड एक्जेस्टेन्शलिज्म, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 1993

4. धवन, गोपीनाथ, दी पॉलिटिकल फिलॉसॉफी ऑफ महात्मा गाँधी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1990

5. कुमार, बी. अरूण, गाँधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2008

इकाई - 3

गाँधी के जीवन और चिंतन पर प्रभाव

इकाई रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 पारिवारिक पृष्ठभूमि का प्रभाव

3.3 लोक प्रचलित प्रेरक प्रसंगों का प्रभाव

3.4 हिंदु धर्म का प्रभाव

3.5 जैन धर्म का प्रभाव

3.6 बौद्ध धर्म का प्रभाव

3.7 इस्लाम धर्म का प्रभाव

3.8 ईसाई धर्म का प्रभाव

3.9 धर्म निरपेक्ष लेखकों का प्रभाव

3.01 शान्तिवादी विचारकों का प्रभाव

3.11 सारांश

3.12 अभ्यास प्रश्न

3.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

गाँधी के जीवन और चिंतन पर पड़ने वाले विविध प्रभावों से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आपजान पायेंगे :-

- उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि के प्रभाव
- भारत के प्रमुख धर्मों के प्रभाव
- ईसाई धर्म के प्रभाव
- धर्म निरपेक्ष लेखकों के प्रभाव तथा
- विभिन्न शान्तिवादी विचारकों के प्रभाव।

3.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी (1869-1948) एक प्रेरक शिक्षक और पैगम्बर थे। गाँधी सत्य और अहिंसा में विश्वास रखते थे। वे मानव इतिहास में धर्म की सृजनात्मक शक्तिध्ताकत को स्वीकारते थे। उनके लिए धर्म दुनिया के व्यवस्थित नैतिक प्रशासन में विश्वास को दिखाना है। वे स्वयं को हिन्दू कहते थे लेकिन वे संकीर्ण पंथी नहीं थे। वे पंथों सम्प्रदायों रूढ़ियों तथा धार्मिक संस्कारों के बंधों से ऊपर उठे हुए थे। उन्होंने हिन्दुवाद के नैतिक व आध्यात्मिक सार-तत्त्व को स्वीकार किया जो कि उनके अनुसार मानवता के सभी महान धर्मों जैसे यहुदीवाद, ईसाईयत, इस्लाम तथा जरथूष्ट्रियन का सार तत्त्व था।

3.2 पारिवारिक पृष्ठभूमि का प्रभाव

मोहनदास कर्मचन्द गाँधी का जन्म पोरबन्दर के काठियावाड़ में 2 अक्टूबर, 1969 को हुआ था। गाँधी उसकी माता से, जो कि एक संतमयी धार्मिक विचारों वाली महिला थी, और उसके पिता कर्मचन्द गाँधी, जो कि उस राज्य के दिवान पद पर कार्यरत थे, से प्रभावित हुए थे। गाँधी की माता पुतली बाई का धार्मिक आस्था और भक्ति के प्रति बड़ा लगाव था। वह शराब और धूम्रपान के प्रति बहुत कठोर थी। प्रतिदिन प्रार्थना करना और उपवास रखना उसका नैत्यकर्म बन गया था। उनकी धर्म में गहरी आस्था थी और प्रतिदिन बिना पूजा-पाठ के कुछ भी नहीं खाती थी। प्यारेलाल ने महात्मा गाँधी के बारे में लिखा है कि ‘‘उसकी माता उसकी आंतरिक सत्ता का मूल आधार बन गई थी। उसके लगाव ने सम्बन्धों को ऐसी स्वरूप दिया कि वह उसको निरन्तर संरक्षण और प्रभावित करती रही, यहाँ तक कि जब वह शारीरिक रूप से जा चुकी थी और यह भी कि वह मृत्यु को प्राप्त हो चुकी थी।’’

उसकी माता का धार्मिक कार्यों व वचनों के प्रति जुड़ाव की भावना ने गाँधी पर अमिट छाप छोड़ी। गाँधी के पिता कर्मचन्द गाँधी पोरबन्दर के दिवान थे। वे सच्चे, साहसी, ईमानदार और सिद्धान्तवादी व्यक्ति थे। वह कभी भी धन संचयन की तथा उसके परिवार के लिए वसीयत बनाने की कोई अभिलाषा नहीं रखते थे।

3.3 लोक प्रचलित प्रेरक प्रसंगों का प्रभाव

विध्यालय के दिनों में गाँधीजी कभी अपने शिक्षकोंया अन्य लोगों से झूठ नहीं बोलते थे। वह एक प्राचीन नाटक 'श्रवण-पितृभक्ति' से काफी प्रभावित हुए थे जिसमें श्रवण अपने पिता के प्रति असीम प्रेम दिखाता है। इसके बाद मोहन का ध्येय माता-पिता की आज्ञापालन करना हो गया। राजा हरिशचन्द्र से सम्बन्धित एक नाटक ने उसको सच्चा और सादा जीवन जीने के लिए प्रेरित किया। बचपन से ही गाँधीजी के युवा मस्तिश्क ने आध्यात्मिक विस्मयकारी घटना का अनुभव किया और टोह लेना शुरू किया जिसने उसे पढ़ने की कोशिश को बढ़ाया और मनुस्मृति नेए जो उसके पिता के पुस्तक संग्रह में एक थी, उसकी समझा को बढ़ाया। गाँधीजी ने लिखा है "सत्य अपने आकार में प्रतिदिन बढ़ता रहता है और इसके बारे में मेरी परिभाषा भी हमेशा व्यापक से व्यापकतर होती गई।"

3.4 हिन्दू धर्म का प्रभाव

दुनिया के किसी भी देष में अहिंसा की परम्परा उतनी गहरी नहीं है जितनी की भारत में है। अहिंसा सही अर्थों में विष्व के चिंतन को भारत का सबसे बड़ा योगदान है। भारत के सभी महत्त्वपूर्ण धार्मिक उपदेषकों ने अहिंसा को सबसे बड़ा कर्तव्य के रूप में बताया है। भारतीय आरम्भिक समय से ही आध्यात्मिकता में विष्वास करते रहे हैं। उपनिषदों के समय से ही अहिंसा के सद्गुण पर जोर दिया जाता रहा है। अहिंसा का तात्पर्य है - किसी भी जीवित को चोट न पहुँचाए। महान् पण्डित पातंजलि के श्योगशास्त्र' का गाँधीजी ने 1903 में जोहान्सबर्ग में अध्ययन किया जिसमें अहिंसा को पाँच यमों में शामिल किया गया था। गाँधी ने इन यमों की विस्तृत व्याख्या की और उनको सत्याग्रह के अनुशासन का एक एकीकृत भाग बना दिया।

रामायण और महाभारत ने करोड़ों भारतीयों के लिए दिशा सूचक सितारों के समान कार्य किया है। ये प्रकट रूप से युद्धों की कहानियाँ हैं लेकिन इन कवियों ;वाल्मीकि और व्यासद्ध का ध्येय केवल इतिहास वर्णन करना नहीं था। बल्कि गाँधी का इस सम्बन्ध में यह मत है कि ये महाकाव्य आन्तरिक द्वंद्व का वर्णन करते हैं कि जो एक व्यक्ति में अंधकार और प्रकार की शक्तियों के बीच चलता रहा है।

28 जुलाई, 1925 को कलकत्ता में गाँधीजी का इसाई मिषनरियों को दिए प्रसिद्ध एक सम्बोधन में उनका गीता के प्रति लगाव का पता चला कि श्हालांकि मैं इसाईयत की बहुत प्रशंसा करता हूँ, मैं अपने आपको रूढ़िवादी ईसाईयत के साथ पहचान बनाने में अयोग्य हूँ। हिन्दुत्व को जिस रूप में मैं जानता हूँ यह पूर्ण रूप से मेरी आत्मा

को संतुष्ट करता है, मुझे पूर्णतया संतुष्ट करता है और मैं भगवतगीताऔर उपनिषदों में तसल्ली पाता हूँ जो कि ‘सर्मन ऑनद माउण्ट’ में नहीं पाता हूँ। जब भी मुझे संदेह होता है, जब मेरे चेहरे पर असंतोष का भाव आ जाता है और जब मैं कोई भी कोई आशा की किरण को क्षितिज किरण की ओर से नहीं पाता हूँ त्योंही मैं भगवतगीताकी ओर देखता हूँ और आराम पाता हूँ, और तत्काल मेरे चेहरे पर गहन दुःख में भी मुस्कान आ जाती है। मेरा जीवन बाह्य त्रासदियों से भरा हुआ है और यदि वे मेरे ऊपर कोई मूर्त और अमूर्त प्रभाव नहीं छोड़ती है तो इसके लिए मैं भगवतगीताकी शिक्षाओं का ऋणी हूँ।” गीता का मूल विषय स्व-अनुभूतिकरण है और इसके लिए मार्ग भी बताये गये हैं। दूसरा और आठवाँ सर्ग स्व-अनुभूतिकरण और नास्तिक योग या निष्काम कर्मयोग (परिणाम के लिए बिना इच्छा रखे कार्य करना) के बारे में बताते हैं।

3.5 जैन धर्म का प्रभाव

जैन दर्शन की प्रमुख विशेषता है - अहिंसा। जैन दर्शन का विश्वास है कि यह सम्पूर्ण विश्व अक्षरशः असंख्य मात्रा में आकारित आत्माओं से भरा हुआ है। उनके (आत्माओं के) शरीर या तो स्थूलकाय और मूर्त है या सूक्ष्म और अदृश्य है। सभी तत्त्व आत्मा के साथ सक्रिय हैं। भौतिक शरीर में चेतना का मूर्तिकरण होना ही दुःख का कारण बनता है। इसलिए जीवन का अर्थ है – दुःख, यहाँ तक कि आत्मा के साथ अदृश्य शरीरों को भी। मुक्त आत्मा होने के लिए आत्मा का शरीर के बंधनों से मुक्त होना जरूरी है। व्यक्ति को निर्झरा (कर्म से छुटकारा पाना) की प्रक्रिया से अवश्य गुजरना चाहिए। इसके लिए तीन साधन - त्रिरत्न बताये गये हैं - सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चरित्र। सम्यक् चरित्र पाँच व्रतों से मिलकर बना है – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इनका श्रावणों को कठोरता से पालन करना होता है तथा आम आदमी को उसकी क्षमता के अनुसार। श्रवणों के लिए यह पंच महाव्रत कहलाते हैं जबकि सामान्य जनों के लिए अणुव्रत कहलाते हैं।

भारत के किसी भी राज्य ने गुजरात से ज्यादा जैन धर्म को नहीं अपनाया और यहीं गाँधी का जन्म हुआ और पालन पोषण हुआ। बचपन में उसके पिता, हालाँकि वैष्णव थे, हमेशा जैन श्रवणों से जुड़े हुए रहे। गाँधी ने जैन धर्म के रूढ़िवादी दृष्टिकोण को नहीं स्वीकारा, लेकिन उन्होंने उसके सकारात्मक पहलुओं पर बहुत जोर दिया।

3.6 बौद्ध धर्म का प्रभाव

बौद्ध धर्म जैन धर्म द्वारा अहिंसा के प्रति अपनाये उसके उग्र मत से नकारते हैं। बुद्ध की शिक्षाएँ यह कहती है कि शुद्धता से शुरू करे और प्रेम के साथ समाप्त करें और वह नैतिक विचारों पर बल देने के कारण वह अनोखा है बजाय उपनिषदों के नीतिशास्त्र के तत्त्व मीमांसीय अनुप्रयोग के।

जैन धर्म और बौद्ध धर्म दोनों ही अहिंसा पर बल देते हैं, यह (अहिंसा) सावयवी रूप से सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह से सम्बन्धित है। इसलिए जैन और बुद्ध के लेखन ने भी गाँधीजी के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ा।

3.7 इस्लाम धर्म का प्रभाव

गाँधी का मानना है कि ईसाईयत, बौद्ध धर्म और हिन्दू धर्म के समान ही इस्लाम धर्म शान्ति का धर्म है। इस्लाम के अनुयायी कभी-कभी तलवार लिए रहते हैं, लेकिन यह पवित्र कुरान की शिक्षा नहीं है, यह पर्यावरणीय प्रभाव है जिसमें इस्लाम का उद्भव हुआ था। गाँधी के अनुसार इस्लाम का मुख्य योगदान मानव का भाईचारा है। लेकिन इसके पैगम्बर का मूल संदेश दयालुता और शान्ति व प्रेम का था। प्रेम केवल मानव जाति के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण जीवित प्राणी के लिए भी है। पवित्र कुरान हिंसा की बजाय अहिंसा को प्राथमिकता देती है। इस्लाम,शब्द का मूल अर्थ शान्ति, सुरक्षा व मुक्ति है। आम मुसलमान के अभिवादन का अर्थ "आप शान्ति से रहे।"

3.8 ईसाई धर्म का प्रभाव

ईसाई धर्म उद्भव की दृष्टि में यहूदी है और भगवान जीसस ने कहा है कि 'उसका मत कुछ नहीं था बल्कि ओल्ड टेस्टामेंट के पैगम्बर की शिक्षा प्रेम का नियम है।' हालांकि जीसस ने इसे पारस्परिकता के स्तर से उठाते हुए क्रान्तिकारी और रूपान्तरकारी नियम बनाया। भगवान जीसस और उसकी शिक्षाऐं सत्याग्रह के गाँधी दर्शन का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। गाँधी ने एक बार फादर जे.जे. डोक को बताया कि "यह न्यू टेस्टामेंट ही था विशेषकर के पर्वत पर दिया गया प्रवचन (Sermon on the Mount) जिसने वास्तव में मुझे सत्याग्रह के मूल्य और सदाचार के प्रति जाग्रत किया।"

इसी क्रम में गाँधीजी ने युगों पुराने अहिंसा के दर्शन को पुनर्जीवित किया। उनका महान् योगदान उसकी खोजों पर अहिंसा की सम्भाव्यताऐं जीवन के सभी स्तरों पर और बड़े जन आन्दोलनों में व्यावहारिक अनुप्रयोग पर आधारित है। वे मानते हैं कि सत्याग्रह,मानवता की समस्याओं के समाधान का एकमात्र रास्ता है। अहिंसा सभी परिस्थितियों में काम करने वाला सार्वभौमिक नियम है। इसकी अवहेलना निश्चितया विनाश की ओर ले जाती है। सत्याग्रह जीवन के अहिंसक नजरिये से अपृथकनीय है। एक वास्तविक प्रभावी सत्याग्रही होने के लिए व्यक्ति को अवश्य उन तत्व मीमांसीय और नैतिक सिद्धान्तों को प्रसारित करना चाहिए जो नियम सत्याग्रही की जड़े होती है।

3.9 धर्मनिरपेक्ष लेखकों का प्रभाव

गाँधीजी के जीवन को कुछ धर्मनिरपेक्ष लेखकों व चिंतकों ने भी बड़ी मात्रा में प्रभावित किया। जिनमें शामिल हैं - गोपालकृष्ण गोखले, डेविड थोरो, जॉनरस्किन और टालस्टॉय।

गोपालकृष्ण गोखले :- दक्षिण अफ्रीका छोड़ने के अन्तिम निर्णय से पूर्व तक गाँधी का गोखले के साथ लम्बा व लाभप्रद जुड़ाव रहा। वे गोखले के राजनीतिक अनुशासन से पूर्णतया वाकिफ हो गये थे। उन्होंने गोखले को अपना राजनीतिक गुरू माना। गोखले के प्रति गाँधी की छवि, जोकि उसने अपनी आत्मकथा में लिखी है, "सर फिरोजशाह मुझे हिमालय के समान प्रतीत हुए, लोकमान्य समुद्र के समान, लेकिन गोखले गंगा के सामन थे ताकि कोई भी इस पवित्र नदी में स्नान कर तरोताजा महसूस कर सकता था। हिमालय अटल था, समुद्र को कोई भी आसानी से पार नहीं कर सकता था, लेकिन गंगा ने सभी को अपने वक्षःस्थल में आमंत्रित किया।"

हेनरी डेविड थोरो :- गाँधीजी हेनरी डेविड थोरो के विचारों और कार्यों से बहुत प्रभावित हुए थे। थोरो एक सुविख्यात अमेरिकी अराजकतावादी थे जिसने अमेरिका में दासता के विरूद्ध प्रतिरोध के रूप में करों की अदायगी से मना कर दिया था। वह भी पहला व्यक्ति था जिसने अपने एक भाषण में (1849) 'सविनय अवज्ञा' (Civil Disobedience) शब्द का प्रयोग किया था।

जॉन रस्किन के, अनटू दिस लास्ट, जिसका गाँधीजी ने सर्वोदय के नाम से अनुवाद किया, गाँधीजी के विचारों को आकृति देने वाला रूपांतकारी प्रभावों में से एक था। वे रस्किन के 'शारीरिक श्रम'के आदर्श से बहुत ज्यादा प्रभावित हुए थे। गाँधी ने उसकी पुस्तक का दक्षिण अफ्रीका में अध्ययन किया था और इसमें से तीन शिक्षाओं को महत्वपूर्ण माना था। जिनमें प्रथम है - एक व्यक्ति की भलाई सबों की भलाई में निहित है। दूसरी है - एक वकील के कार्य का मूल्य एक हज्जाम के कार्य के बराबर है। इसी प्रकार सबको अपने कार्यों द्वारा जीविकोपार्जन का अधिकार है। तथा तीसरी है - एक श्रमिक का जीवन खेत को जोतने वाले किसान का जीवन और दस्तकारों का जीवन अन्य जीवों के समान ही है।

गाँधी रस्किन से कई मामलों में समान है। दोनों ही चेतना की सर्वोच्चता और मानव प्रकृति की अच्छाई में विश्वास करते हैं। दोनों ही चरित्र को बुद्धिमता से ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानते हैं। दोनों ही राजनीति और अर्थशास्त्र को नैतिकृत करना चाहते हैं। दोनों ही सामाजिक पुनरूत्थान की प्राथमिकता पर बल देते हैं केवल राजनीति पुनरूथान से, दोनों का ही मशीनों में विश्वास नहीं है और निवेदन किया कि यदि कोई काम करने वाला नहीं है, उसका (मशीन का) प्रयोग किया जा सकता है लेकिन वह भी मानव को मुक्त करने के रूप में किया जाए न कि उससे गुलाम आदमी बनाने के लिए। दोनों ही जोर देते हैं कि पूँजीपतियों को अपने कर्मचारियों के प्रति सम्बन्धों में बुद्धिमान पिता का व्यवहार करना चाहिए।

लियो टालस्टॉय :- टालस्टॉय का दर्शन ईसाई-अराजकतावाद के नाम से जाना जाता है। यह आधुनिक युग की सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं के समाधान में 'सर्मन ऑन द माउण्ट' की शिक्षाओं को व्यावहारिक अनुप्रयोग है। टालस्टॉय के अनुसार ईसा मसीह की शिक्षाओं के द्वारा मानवीय समस्याओं की उपयुक्त समाधान - प्रेम है। टालस्टॉय के अनुसार प्रेम अप्रतिरोध और असहयोग के सिद्धान्तों का आधार है। टालस्टॉय का विश्वास है कि ईसाई सभ्यता उसके अजीब अवरोधाभास के बीच व्यस्क हुई है क्योंकि यह ईसाई होने का दावा करती है और शक्ति के साधनों की रक्षा की इजाजत देती है, और इस रूप में प्रेम का नियम लागू नहीं होता है, इसके लिए किसी अपवाद की इजाजत भी नहीं है वहाँ कोई कानून नहीं है लेकिन वहाँ सबसे ताकतवर मौजूद है।

टालस्टॉय राज्य और उसकी मशीनरी, कानून, न्यायालयों, पुलिस, सेना, निजी सम्पत्ति तथा पूँजीवाद और यहाँ तक कि पाठशालाओं की निन्दा करते हैं क्योंकि ये सभी प्रेम के नियम की भावनाओं को ठेस पहुंचाते हैं। टालस्टॉय ने शक्ति या बल के प्रयोग का, करों की अदायगी का तथा अनिवार्य सैन्य सेवा का विरोध किया। वह इस बात का समर्थन करते हैं कि संगठित समाज औपचारिक सहयोग द्वारा बदला जाना चाहिए, हालांकि उसे आदर्शअहिंसक समाज का विस्तृत विवरण देते हुए कोई परेशानी नहीं होती है। ऐसे असहयोग को उत्पन्न करने की पद्धति के संदर्भ में टालस्टॉय हिंसा के विरोध और प्रेम, अ-प्रतिरोध तथा असहयोग के पक्ष में है। वह व्यक्ति पर बहुत अधिक जोर देता है। उसने भूमि लौटाने का आग्रह किया और शारीरिक श्रम की गरिमा का उपदेश दिया। गाँधी ने भी स्वयं को एक निष्ठावान प्रशंसक माना जो कि उसके प्रति बहुत ऋणी हैं। उन्होंने लिखा है कि 'स्व. राजा हरिशचन्द्र के बाद टालस्टॉय उन तीन आधुनिक लोगों में शुमार करते हैं जिसने मेरे जीवन पर अत्यधिक आध्यात्मिक प्रभाव का प्रयास किया तीसरा व्यक्ति जॉनरस्किन है। गाँधी ने 15 वर्ष पूर्व दक्षिण अफ्रीका में 'दी किन्दोम ऑफगाड इस विथइन यू' का अध्ययन किया था। जब वे हिंसा में विश्वास करते थे और संशयवाद के संकट से गुजर रहे थे। वे कहते हैं कि उसका अध्ययन मुझे संशयवादी होने से रोका तथा मुझे अहिंसा के प्रति पक्का विश्वासी बनाया। अहिंसा के इन दो महान् आधुनिक प्रतिपादकों के सिद्धान्तों के बीच जोर देने योग्य समानताऐं हैं। दोनों ने ही सत्य और उसके कठोर व्यवहारों के प्रति बेमिसाल दृढ़ इच्छा के बाद हमेशा सतर्कता पर जोर दिया है। दोनों ने ही बल और शोषण पर आधारित गड़बड़ और अन्तर्निहित रूप से अनैतिक आधुनिक सभ्यता को नकारते हैं। दोनों ही बुराई से लड़ने के हिंसक तरीके के विरोधी हैं। दोनों ही व्यक्तिगत सुधार हेतु आन्तरिक आत्मपूर्णता पर तथा सामाजिक उत्थान की ओर प्रथम कदम के रूप में बल देते हैं। दोनों ही अपने को साधनों की शुद्धता से जोड़ते हैं ना कि आदर्श समाज के विस्तृत विवरण से। पुनः दोनों व्यक्ति के नैतिक उत्थान के लिए अनिवार्य तत्त्व के रूप में ब्रह्मचर्य और श्रम की रोटी पर तथ अति सादा जीवन जीने के लिए सन्यासी-नैतिकता एवं उपदेश की वकालत की है। हालांकि गाँधीजी पूर्णरूपेण टालस्टॉयनहीं हुए। उनके मतों में दो कारणों से विभेद रहा। प्रथम, गाँधीजी जीवन में टालस्टॉय से ज्यादा व्यावहारिक थे। गाँधी मूलतः गैर-महत्वपूर्ण स्थितियों में समझौतावादी रहे हैं। वे सोचते हैं कि समझौते की आवश्यकता सत्य की सापेक्ष प्रवृत्ति के

कारण उत्पन्न हुई है। जैसा कि व्यक्ति द्वारा अनुमान किया गया। हालांकि वह टालस्टॉय से अलग अपने सिद्धान्तों के प्रति बहुत सूक्ष्म धर्मशीलता हेतु हमेशा तैयार रहते हैं। उसके कार्यों को स्वीकारना बदलते विश्व की माँग है। अनुभूतिकरण का यह आदर्श असम्भव है और जहाँ तक सम्भव हो, हमें इसके लिए कोशिश अवश्य करनी चाहिए। द्वितीय, गाँधीजी की अहिंसा की धारणा टालस्टॉयसे हल्की सी भिन्न है। उत्तरवर्ती के लिए अहिंसा का अर्थ है बल या शक्ति के सभी रूपों को नकारना। पूर्ववर्ती ने अहिंसा के उद्देश्य पर जोर देते हुए अहिंसा को किसी भी जीवित प्राणी के प्रति चोट या दुःख को नकारना और स्वार्थ से बचना। हालांकि कुछ निश्चित परिस्थितियों में कृत्य करना हिंसा नहीं मानी जा सकती है। जीवन में कुछ मात्रा में हिंसा तो सम्मिलित रहती है, टालस्टॉय इसको नजर अन्दाज कर जाते हैं। दूसरी तरफ गाँधी जीवन में उत्सुकता पूर्ण सहभागिताओं और जुड़ाव के कर्म के गीता के आदर्श का अनुसरण करते हैं। इसी मूलभूत विभेद के कारण गाँधी की अहिंसक तकनीक में टालस्टॉय से श्रेष्ठ है और सामाजिक बुराईयों, जिनको टालस्टॉय ने बुद्धिमतापूर्वक प्रकट किया और उतने ही आवेग पूर्णता से नकार दिया, को दूर करने का रास्ता खोला।

3.10 शान्तिवादी चिन्तकों का प्रभाव

मेजर-विचमन्न, रोनाल्ड होल्स्ट, चार्ल्स माइन, हक्सले, गेरहार्ड हर्ड, आदि ने साधन और साध्य के बीच समन्वय की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने आधुनिकता की त्रासदियों को बताया। इसका उद्देश्य मूलतः मानवतावादी है - हिंसा के सभी रूपों का निवारण और सामाजिक पुर्नउत्थान करना। लेकिन इस लक्ष्य को प्राप्त करने में युद्ध, हिंसा और तानाशाही काम में ली जाती रही है। इन युक्तियों का प्रयोग विरोधी गुणों को जन्म देती है। उनको समाजवादी व्यवस्था के रूप में देखा जाता है और इस प्रकार यह उद्देश्य असफल हो जाता है।

इस आखिरी लड़ाई और इस समूहीकरण ने पश्चिम में शान्तिवाद को कई बार गहरी चोट पहुँचाई। यहाँ तक कि कुछ प्रभावशाली चिन्तकों ने अपना शुद्ध शान्तिवाद में विश्वास का वापिस ले लिया और आक्रमणकर्ता राज्यों के विरूद्ध शस्त्रों से सुसज्जित राज्यों के सैन्य गठजोड़ का समर्थन किया। इस समूह से सी.ई.एम. जोड, बट्रेन्ड रसेल और रोमां रोलां सम्बन्धित हैं। लेकिन वर्तमान प्रयासों ने जो शान्तिवादियों द्वारा तैयार किये जा रहे हैं उसने इस विश्वास को सकारात्मक और प्रावैगिक स्वरूप प्रदान किया और व्यक्तिगत तथा सामुहिक जीवन को अहिंसा के सिद्धान्तों के अनुसार ढालने का तरीका खोज लिया है।

गाँधीजी ने वर्षों पुरानी अहिंसा के दर्शन को पुनर्जीवित किया है। उनका पूरा ध्यान इन खोजों में लगा रहा कि जीवन के सभी स्तरों पर और बड़े जन आन्दोलनों में अहिंसा अनुप्रयोग की क्या सम्भावना है। सत्याग्रह उनके अनुसार, मानवता की समस्याओं के समाधान का एकमात्र मार्ग है क्योंकि , अहिंसा एक सार्वभौमिक कानून है जो सभी परिस्थितियों में काम करता है। इसका उल्लंघन करना विनाश को न्यौता देना है।,सत्याग्रह जीवन के

अहिंसक दृष्टिकोण से अपृथकनीय है। एक प्रभावी सत्याग्रही होने के लिए व्यक्ति को अवश्य सत्याग्रह के आधारभूत तत्वमीमांसीय और नैतिक सिद्धान्तों को समग्रीकृत किया जाना जरूरी है।

उन्होंने जेल में रहते हुए अपनी आत्मकथा में लिखा है कि उसने उन्होंने ज्यादा पुस्तकें नहीं पढ़ी। यह वास्तविकता है कि बहुत कम लोग ऐसे होते हैं जो ऐसा दावा करे जैसा कि उन्होंने किया। टालस्टॉय के सभी लेखन कार्यों को और विविध शास्त्रीय भारतीय पुस्तकों का उन्होंने ध्यानपूर्वक अध्ययन किया था। उनकी आत्मकथा में उन्होंने केवल टालस्टॉय की 'द किंगडम ऑफ गाड इस विथइन यू'और 'गीता'का ही उल्लेख उन कुछ पुस्तकों के बीच में किया जिनसे उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। इसी प्रकार उन्होंने रस्किन की 'अनटु दिस लास्ट',द्वारा उनके विकास में निभायी महत्त्वपूर्ण भूमिका पर जोर दिया। उनकी आत्मकथा के लेखन के पश्चात् के वर्षों में वे निरन्तर 'फोर्स कलेविगेरा'का अध्ययन करते थे। एक समय उन्होंने कहा कि "हमने उसकी पुस्तक को कई बार पढ़ा और अब भी से उसको पढ़ते वक्त उबाऊ नहीं बल्कि तरोताजा महसूस करता हूँ।"

उन्होंने 19वीं सदी के अन्तिम चरण के लेखकों के साथ बहुत सहज महसूस किया था जैसे अंग्रेजी नीतिकारों कार्लाइल और रस्किन, एडवर्ड कार्पेन्टर, मार्क्स नार्डयू, हेनरी वालेस और अमेरिकी नीतिकार – एमर्सन, थोरो और लाऐड गैरीसन आदि के साथ, बजाय 20वीं सदी के फ्रायड जैसे चिन्तकों के साथ।

सन् 1907 में उनकी प्रथम नजरबन्दी के दौरान गाँधीजी बहुत खुश हुए थे क्योंकि उन्हें तब जेल पुस्तकालय में मुक्त रूप से घूमने का अवसर मिला था। उन्होंने कार्लाइल द्वारा रचित पुस्तकें व बाईबिल को पढ़ने के लिये लिया। उन्होंने एक चीनी व्याख्याकार से कार्लाइल की लाईव्स ऑफ बर्नस, जॉनसन एण्ड स्काट और बेकन के 'एसेज' उधार लिये। उन्होंने भगवतगीताका, कई तमिल भाषा में रचित पुस्तकों का एक नाम रहित उर्दू पुस्तक का और कुछ प्लेटो का सुकरात के साथ संवादों का भी अध्ययन किया। उसने कार्लायल और रस्किन का अनुवाद करने की योजना बनाई और बाद में पश्चाताप व्यक्त किया कि उनके समापन के उपरांत उनका विमोचन रूकवा दिया गया। प्रिन्टोरिया में तीसरी बार नजरबन्दी के दौरान उन्होंने कई संस्कृत, तमिल, हिन्दी और गुजराती में लिखी पुस्तकें पढ़ी जिसमें उपनिषद्, मनुस्मृति, रामायण, पातंजलि का योगशास्त्र, संध्या गुटिका और उसके मित्र कवि राजचन्द्र, जिसने उसके जीवन पर गहरा प्रभाव छोड़ा, की कई पुस्तकों का अध्ययन किया। उन्होंने ईमर्सन को भी पढ़ा। उन्होंने महसूस किया कि टालस्टॉय की लेखनी उसमें ज्यादा विश्वास पैदा करती है क्योंकि टालस्टॉय ने जो उपदेश दिए उनको उन्होंने व्यवहार में जीने की कोशिश की थी। गाँधी नहीं जानते थे कि टालस्टॉय का व्यवहार उसकी शिक्षा से बहुत छोटा रह जायेगा। आगामी जीवन में उन्होंने रेखांकित किया कि टालस्टॉय के विपरीत रस्किन ने कभी अपने विचारों को जीवन में जीने का प्रयास नहीं किया और विचारों की अभिव्यक्ति के साथ शेष स्तर रूप में रह गए। उसकी प्रिंटोरिया जेल में नजरबन्दी के दौरान उन्होंने फ्रांस की क्रांति पर कार्लाइल के लेखन से बहुत अधिक प्रभावित हुए और सोचा कि उन्होंने ही मैजिनी के विचारों की पुष्टि की थी।

गाँधी का अध्ययन बहुत व्यापक और मौलिक था। यह नियोजित नहीं था और वह मुख्यतः घटनाओं से निर्धारित हुआ था क्योंकि उन्होंने अपने जीवन मार्ग में जो भी पुस्तक सामने आयी उसी का अध्ययन किया न कि किसी पूर्व निर्धारित पुस्तकों का अध्ययन किया था। यहाँ तक कि एक छात्र के रूप में लन्दन में बार यठंतद्ध के लिए उत्तीर्ण हुए जिसके तहत उनको कानून की प्रमाणित पुस्तकों जो – इक्विटी, कामन ला, रोमन ला एवं सम्पत्ति कानून के बारे में ध्यानपूर्वक अध्ययन करना था इनमें उसकी बहुत रूचि थी। लेकिन वहाँ पर भी मनु के हिन्दू कानून को छोड़कर किसी भी कानून की पुस्तक के अध्ययन पर उतना जोर नहीं दिया जितना कि 'ओल्ड टेस्टामेंट' और सर एडविन अर्नोल्ड की 'लाईट ऑफ एशिया' आदि के अध्ययन पर बल दिया। उसके जीवन को प्रभावित करने वाली कुछ महत्वपूर्ण रचनाओं में धर्मशास्त्र और हेनरी साल्ट के शाकाहारवाद के बचाव में प्रस्तुत तर्क शामिल है। जब एक मित्र ने उन पर बैथम की 'इन्ट्रोडक्शन टू द थियरी ऑफ मोराल्स एण्ड लेजिस्लेशन' नामक पुस्तक के विचारों को अपनाने का आग्रह किया। गाँधी उस समय 19 वर्षके थे, उन्होंने उन विचारों का अनुसरण करना कठिन पाया। उसने सरल शब्दों में कहा कि श्ये गूढ़ बातें मेरी समझ से परे है। मैं स्वीकारता हूँ कि माँस खाना अनिवार्य है लेकिन मैं मेरे वचनों को नहीं तोड़ सकता। उसका उपयोगितावाद का जन्मजात सन्देह सम्पूर्ण जीवन उसके साथ बना रहा और उसने स्पष्ट रूप से उसकी आलोचना की जब उसने अहिंसा के मत का प्रतिपादन किया।

उसके चुनिन्दा अध्ययनों के स्वाद से अलग रहने की और भारत में उसकी विष्वविद्यालयी शिक्षा के अपूर्ण रहने के अलावा की स्थिति के बावजूद वे निरन्तर स्वयं को शिक्षित करते रहे और जेल में आखिरी समय में कठोर अध्ययन करते रहे। सन् 1923 में यरवदा जेल में, एक आदमी हालांकि उसकी उम्र 54 वर्ष हो गई थी, वह समय का बड़ा ध्यान रखता था उसने महाभारत और गुजराती में लिखे भारतीय दर्शन के छः सम्प्रदायों के अतिरिक्त मनुस्मृति और उपनिषदों का व्यापक अध्ययन किया। उसने गीता पर टिप्पणियाँ भी पढ़ी - प्रायः उसका आरम्भिक बिन्दू नैतिक रहा और यहाँ तक कि आधुनिक भारत में राजनीतिक खोजें भी की। शंकर, ज्ञानेश्वर, तिलक एवं अरबिन्दों का अध्ययन प्लेटों के संवादों और न्यू टेस्टामेंट दोनों का काम करता था। उसने भारत में विभिन्न धर्मों के व्यवहारों के बारे में भी विस्तृत रूप से अध्ययन किया जिस तरह विलियम जेम्स ने धार्मिक अनुभवों की विविधता का किया था। उसने स्वयं को धार्मिक साहित्य की परिधि में नहीं बांधा। उसने गिब्बन, गोथे, बर्कले, हेवल, गुईजोट, बैंजामिन किंडड, लक्की, गिडसन, जे.बी. शा, रूडयार्ड किपलिंग, वेल्स और मोटले की 'राइज ऑफ द डच रिपब्लिक' का अध्ययन किया।

जिन पुस्तकों का गाँधीजी ने ध्यानपूर्वक अध्ययन किया उनके बीच में बटलर की 'एनालोजी' तथा हेनरी ड्रूम्मंड की 'द नेचुरल ला इन दा स्प्रिचुअल वर्ल्ड' शामिल है। जब वे 30 वर्ष से कम के थे उन्होंने दखिण अफ्रीका में सर्वप्रथम ड्रुम्मंड की पुस्तकें पढ़ी और उन्होंने महसूस किया कि यदि वह इस लेखक के समान आरामदायक जीवन जीए तो वह उससे भी बेहतर ढंग से दिखाऐं कि आध्यात्मिक दुनिया में प्राकृतिक कानून था।

1928 में उन्होंने ड्रुम्मंड के सत्, रज्, तम् सम्बन्धी जो प्रकृति के गुणों का तीन रूपीय भाग है, जो मानव के आरोहण को प्रभावित करती है, इसलिए ये पुरुषोत्तम या पूर्ण आदमी की स्थिति की अवस्थाऐं हैं, विवरण के वर्गीकरण को गीता के 14वें अध्याय में सम्पादित किया।

सन् 1934 में गाँधी ने यह भी निर्देशित किया कि वह एडम स्मिथ के 'वेल्थ ऑफ नेशंस' सम्बन्धी चर्चा, जो कि आर्थिक प्रगति में प्रकृति और मानवीय तत्वों के बीच अन्तर्सम्बन्ध से जुड़ी है, से बहुत प्रभावित हुए। सन् 1937 में वे आर्मस्ट्रांग की 'जीवन के लिए शिक्षा' से बहुत प्रभावित हुए विशेषकर 'दस्तकारी की शिक्षा'। सन् 1938 में वे रोथ के 'सभ्यता को से यहुदी योगदान' के अध्ययन से प्रभावित हुए थे।

सन् 1932 में उन्होंने ईशोपनिषद का गहन अध्ययन किया, बहुत सी टिप्पणियों के साथ और उसके छंद उसके अहिंसक समाजवाद की अवधारणा की आधारभूत विशेषताएं बन गयी। गाँधी के तत्वमीमांसीय पूर्वमान्यताओं का व्यापक महत्व उसके राजनैतिक व नैतिक विचारों को समझना है जो उसके चिन्तन में शास्त्रीय रस या स्वाद को सम्मिलित करते हैं। वह स्टोइको की और कुछ हद तक प्लेटो की याद दिलाते हैं, लेकिन ईसाई चिन्तकों जैसे एक्वीनास तथा लार्ड एक्टन और ईसाई समाजवादियों की भी याद दिलाता है। हालांकि उसकी नैतिक सम्बन्ध, जो कि उसके चिन्तन में प्रभुत्वशाली है, उसे टालस्टॉय और रूसो के सदृश्य बनाता हैय यद्यपि उसने रूसो की तुलना में सरकार के कार्यों पर बहुत कम कहा लेकिन उसने टालस्टॉय की तुलना में नागरिकों द्वारा सामना की जा रही राजनीतिक नैतिकता की समस्या के बारे में ज्यादा कहा। इस रूप में वह मैकियावली के पूर्व के पश्चिमी चिन्तकों व लेखकों के करीबी लगते हैं इसलिए उन्हें राजनीति और समाज के प्रति पूर्व-कौटिल्य चिंतन परम्परा युग में शामिल है और ये दोनों निष्कर्ष निश्चिततः प्रमाणित हैं। वह मैकियावली के समान धर्म और राजनीति के वियोजन का विरोध करते हैं लेकिन वह भूतकालीन अशोक है जिसने मोक्ष की बजाय धर्म पर राजनीतिक मुक्ति द्वारा व्यक्तिगत मुक्ति की बजाय नैतिक कानून पर ज्यादा जोर दिया।

चाहे हम गाँधी के धार्मिक दृष्टिकोण पर जोर दें लेकिन उसका उच्चस्तरीय सर्वदर्शनग्राही प्रकृति निश्चित राजनीति परिणाम रखती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उन्होंने स्वयं को एक हिन्दू बताया, लेकिन उसका हिन्दुत्व सभी धर्मों में सर्वश्रेष्ठ है। कोई भी हिन्दू राजाराम मोहन राय के बाद कुरान का उत्सुकता से जवाब देने को नहीं था और यहाँ तक कि राजाराम मोहनराय ने जैन व बुद्ध मतों पर गाँधी जितना जोर नहीं दिया था। एक हिन्दू के रूप में गाँधी अपने अतिन्द्रियक एकवाद में वेदान्ती और वैष्णव थे, अपने विश्वास में भगवान को व्यक्ति रूप में मानता। इसी प्रकार दक्षिणी अफ्रीका में वे दीक्षसीय (Esoteric) ईसाईयत के प्रभाव में आ गये, जिस रूप में मैटलैण्ड और किंग्सफोर्ड के लेखन में व्याख्यायित किया गया था, लेकिन वह दैवी कृपा की धारणा पर प्रोटेस्टेन्ट पादरी द्वारा जोर देने से भी प्रभावित हो गये। सबसे ऊपर, उन्होंने कर्म सिद्धान्त पर जोर दिया जो कि बुद्ध दर्शन और हिन्दुत्व में ज्यादा प्रभुत्वशाली था और उन्होंने स्पष्ट रूप से जीवन के शुरू में और अन्त में थियोसोफिस्ट्स

के सार्वभौतिकतावाद से जोड़ लिया। सन् 1947 में उन्होंने लुई फिशर को बताया कि श्शुरूआत में कांग्रेस के बड़े नेता थियोसोफिस्ट्स ही थे, एन्नीबैसेन्ट ने मुझे बहुत आकर्षित किया। थियोसाफी मैडम ब्लावाट्स्की की शिक्षा है, यह अपने सर्वोत्तम रूप में हिन्दुत्व ही है। थियोसाफी भी मानव के भाईचारे की शिक्षा है।

3.11 सारांश

यह सत्य है कि गाँधी का चिन्तन मौलिकता और ताजगी भरा है लेकिन इस पर कई चिन्तकों, दर्शनों,धर्म, धर्मशास्त्रों आदि का, जिनमें पूर्व और पश्चिम दोनों ही दुनिया के लोग शामिल हैं, प्रभाव पड़ा। सबसे पूर्ववर्ती प्रभावों में एक है - प्राचीन हिन्दु परम्परा का प्रभाव, जिसने उसके चिन्तन को रीढ़ की हड्डी उपलब्ध करायी है। उसका पालन-पोषण एक धार्मिक-पूजापाठ में विश्वास रखने वाले परम्परावादी हिन्दू परिवार की परम्परा में हुआ था। बहुत कम उम्र में ही उसने रामायण और महाभारत का अध्ययन कर लिया था और वैष्णव और जैन साहित्य का भी, इनसे उसकी धार्मिक अन्तर्दृष्टि में नैतिकता व सदाचार की प्रवृत्ति और प्रखर हुई।

अपनी इंग्लैण्ड यात्रा के दौरान उसे कुछ बुद्धिजीवियों के साथ रहने का अवसर मिला उनमें से कुछ बुद्धिजीवी उसके समकालीन और ईसाई धर्म से जुड़े हुए थे। यह कहा जाता है कि जब उसने रोम में सेंट पीटर्स में ईसा मसीह की मूर्ति देखी, त्यों ही उसकी आंखों में आंसू फूट पड़े। वे ईसा मसीह के जीवन और व्यक्तित्व का बहुत सम्मान करते थे और इस प्रकार वे ईसा मसीह की कुछ मौलिक बातों को अपने चिन्तन में समाहित करने में सफल रहे। इसी क्रम में वह टालस्टॉयका भी ऋणी हैं, जिसने अपनी पुस्तक ‘दी किंगडम ऑफ गाड इस विथइन यू’में ईसाईयत की लगभग नई व्याख्या प्रस्तुत की थी। टालस्टॉय ने गाँधी के मस्तिष्क पर कई रूपों में प्रभाव छोड़ा है, विशेषकर उसकी सहने की शक्ति और गरिमा ने गाँधी को सविनय अवज्ञा के विचार को विकसित करने के लिए प्रेरित किया। इसको बड़ी सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं के समाधान में तकनीक के रूप में अहिंसा के प्रयोग की सम्भावना को उद्घाटित किया। इनके अतिरिक्त वे जरथुश्ट्रियन और इस्लाम का भी आंखों देखा ज्ञान रखते थे और रस्किन के कार्यों का भी तथा साथ ही उसके समय के कुछ थियोसोपिटों का भी।

इन सभी प्रभावों का उसने जानबूझ कर और जिम्मेदारी के साथ ग्रहण किया था। गाँधी ने नैतिकता, धार्मिकता और अस्तित्ववादी मुद्दों पर आन्तरिक और बाह्य दोनों अस्तित्व में, एक के बाद एक परीक्षणों को जारी रखा। उनका चिन्तन परीक्षणों के परिणामों के उत्पाद के अलावा कुछ भी नहीं है, जो कि उसने निरन्तर जारी रखे।

3.12 अभ्यास प्रश्न

---

1. गाँधी चिन्तन पर पड़ने वाले भारतीय प्रभावों का वर्णन कीजिए।

2. गाँधी चिन्तन पर पड़ने वाले पाश्चात्य प्रभावों का वर्णन कीजिए।

3. गाँधी चिन्तन पर पड़ने वाले भारतीय एवं पाश्चात्य प्रभावों की समीक्षा कीजिए।

4. गाँधी चिन्तन पर टालस्टॉय के प्रभावों का तथा उनके चिन्तनों में आपसी समानता का भी वर्णन कीजिए।

3.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

---

1. एण्ड्रयू, सी.एफ., महात्मा गाँधीस आइडियास, जार्ज एलन एण्ड अनविन लिमिटेड, लन्दन, 1949

2. धवन, जी.एन., द पॉलिटिकल फिलॉसॉफी ऑफ महात्मा गाँधी, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1962

3. गाँधी, एम.के., सत्य के साथ मेरे प्रयोग : एक आत्मकथा, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1988

4. वर्मा, वी.पी., फिलोसॉफिकल एण्ड सोसियोलॉजिकल फाउण्डेशन्स ऑफ गाँधीस्म, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, अहमदाबाद, 1981

5. वर्मा, वी. पी., द पॉलिटिकल फिलॉसॉफी ऑफ गाँधी एण्ड सर्वोदय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 1986

6. भीखु पारीख, गाँधी : ए शोर्ट इन्ट्रोडक्शन, ओ.यू.पी., लन्दन, 2007

इकाई - 4

दक्षिण अफ्रीका में गाँधी का अभियान

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 अश्वेतों की प्रतिकूल व अन्यायपूर्ण स्थिति

4.3 मारित्जबेर्ग की घटना एवं गाँधी की प्रतिक्रिया

4.4 नेटल में गाँधी की भूमिका

4.5 ट्रान्सवाल में गाँधी की भूमिका

4.6 दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण में गाँधी की भूमिका

4.7 सारांश

4.8 अभ्यास प्रश्न

4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप जान पायेंगे:-

- दक्षिण अफ्रीका में अश्तेव लोगों की अन्यायपूर्ण स्थिति
- अश्वेतों और गाँधी के साथ होने वाले अन्यायपूर्ण व्यवहार की विभिन्न घटनायें
- इन घटनाओं पर गाँधीजी की प्रतिक्रिया
- दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण के बाद गाँधीजी की भूमिका

4.1 प्रस्तावना

गाँधीजी ने अपने जीवनकाल के दक्षिण अफ्रीकी दौर में बिताये गये वर्षों (1893-1914) में विरोध करने के अपने तरीके विकसित किये। अपने विरोध करने के तरीके को उन्होंने सत्याग्रह नाम दिया। बाद में इसका उपयोग न केवल भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में हुआ अपितु विश्व के अनेक हिस्सों में समाज के शोषित व दलित वर्गों द्वारा अपनी वैयक्तिकता व स्वतंत्रता की दृढ़ता से माँग करने के लिये भी किया गया। दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना होने से पूर्व और फिर दक्षिण अफ्रीका में प्रवास के दौरान गाँधीजी को अनेक मुश्किलों का सामना करना पडा। पर उन्होंने इन सत्य,अहिंसा, आदि नैतिक सिद्धांतों पर अडिग रहकर इन मुश्किलों का डटकर सामना किया और आगे बढने में सफल हुए।

4.2 अश्वेतों की प्रतिकूल व अन्यायपूर्ण स्थिति

जब गाँधी दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना हुये थे, उन्हें नयी जगह पर मिलने वाली बाधाओं व अपमान का कोई अंदेशा नहीं था। उस समय दक्षिण अफ्रीका में सामान्य स्थितियाँ अश्वेतव्यक्ति के लिए प्रतिकूल थीं। अश्वेत व्यक्ति पर श्वेत व्यक्ति का प्रभुत्व सामान्य बात समझी जाती थी। अल्पसंख्यक होने के बावजूद श्वेत लोगों के दिमाग में प्रजातीय श्रेष्ठता की भावना भरी थी। उनकी वेरोकटोक राजनीतिक शक्ति व उनके द्वारा की जा रही लूटपात ने उनकी इस भावना को और हवा दी। उनके व्यवहार में घंमड व अश्वेतों के प्रति नफरत झलकती थी। अश्वेतों के प्रति नफरत की भावना तब और बढ गई जब श्वेतों ने सोचा कि संसाधनों से परिपूर्ण दक्षिण अफ्रीका उपमहाद्वीप में अश्वेत अपनी संख्या के बल पर श्वेतों को उनकी लाभदायक स्थिति में हानि पहुंचा सकते है। अपने आप को इस देश से बाहर निकाले जाने की संभावनाओं को ध्वस्त करने के लिये श्वेतों ने अश्वेतों को अपना आज्ञापालक व आश्रित बनाने की योजना बनाई। इसी साधन से वे इस संसाधनों से परिपूर्ण उपमहाद्वीप में अपने शासन को जारी रख सकते थे। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये तथा वहाँ के विधिक अधिकारियों के सहयोग से अनेक ऐसे कानून लागू कर दिये जिससे अश्वेतों पर मुश्किलों का पहाड़ टूट पडा। अधिवास तथा नागरिक जीवन, कानून व प्रशासन, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, व्यापार, स्वास्थ्य, जीवन, आजादी व सम्पत्ति इन सभी मामलों में प्रजातीय पहचान के आधार पर लोगों को अलग-थलग करने की नीति का पालन किया जाने लगा। अश्वेतों को अल्पसंख्यक श्वेतों के पूर्णतः अधीन करने के उद्देश्य से उन्हें किसी भी कानून का उल्लंघन किये जाने पर कडा से कडा दण्ड दिया जाने लगा।

यद्यपि ये कानून मूल अफ्रीकी अश्वेतों के लिये बनाये गये थे तथापि बाद में इनका उपयोग दक्षिण अफ्रीका में रह रहे अन्य अश्वेतों पर भी किया जाने लगा। इन अश्वेतों में भारतीय मूल के अनुबंधित व स्वतन्त्र मजदूर कुछ व्यापारी व उनके सहायक शामिल थे। उद्योग स्थलों व खनन क्षेत्रों में काम करने वाले ये अनुबंधित मजदूर अर्ध-

गुलामी का जीवन जी रहे थे। दुर्व्यवहार के कारण अपना मालिक बदलना इनके लिये बहुत मुश्किल था। अपने अनुबन्ध के निर्धारित वर्षों के बाद अनुबन्ध का नवीनीकरण न कराने पर तो इनकी मुश्किलें और बढ़ जाती थी। कुछ भारतीयों ने जब व्यापार व वाणिज्य में मामूली सफलता हासिल की तो यूरोपीय व्यापारी उनसे ईर्ष्या करने लगे। उन्होंने पुरजोर माँग उठाई कि अपने अनुबन्ध का नवीनीकरण न कराने वाले भारतीयों को वापिस उनके देश भेज दिया जावे। मताधिकार छीनने के प्रयास भी किये गये। लाइसेंस नीति लागू होने से भारतीयों तथा अन्य गैर-यूरोपिय व्यापारियों के लिये व्यापार करना मुश्किल तथा महँगा हो गया। इसी प्रकार यूरोपीय भाषा परीक्षा उत्तीर्ण करने की अनिवार्यता लागू करके दक्षिण अफ्रीका आने की इच्छा रखने वाले अनेक व्यापारियों के रास्ते को प्रबलता से रोक दिया गया।

कानूनी बाधाओं के अतिरिक्त भारतीयों को अनेक सामाजिक अशक्तताओं का सामना भी करना पडा। उनके बारे में अपमानजनक टिप्पणियां की जाने लगी। यहाँ तक कि उन्हें फुटपाथ पर चलने व रात नौ बजे बाद घर से बाहर रहने पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया। रेलगाडियों में उन्हें अलग डिब्बों में यात्रा करनी पडती थी तथा ट्रान्सवाल जैसे राज्यों में उनके लिये प्रथम व द्वितीय दर्जे की रेल्वे टिकिट ही जारी नहीं की जाती थी। श्वेत यात्री द्वारा विरोध किये जाने पर उन्हें बेहद अपमानजनक रूप से बाहर फेंका जा सकता था। यात्री डिब्बों में तो कभी-कभी उन्हें पावदान पर खडे होकर यात्रा करने पर मजबूर किया जाता था। यूरोपीय होटलों में उनके लिये ठहरने व भोजन की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। आरेन्ज फ्री स्टेट के श्वेत उपनिवेशिकों ने भारतीयों को किसी भी प्रकार का व्यापार करने से रोकते हुए उन्हें अपने राज्य से बाहर कर दिया। ट्रान्सवाल जैसे अन्य राज्यों में उनके लिये रहने व व्यापार करने के लिये अलग स्थान (गेटो) निर्धारित कर दिये गये जहाँ न्यूनतम नागरिक सुविधाये उपलब्ध थी।

फिर भी विदेशी धरती पर साधनहीन अल्पसंख्यकों के रूप में रहते हुये जीवनयापन की बाध्यताओं के कारण भारतीयों ने इस अपमान को सहन किया तथा इन सभी बाधाओं पर उदासीन रहने का भाव विकसित किया। अपमान सहते हुए भी उन्होंने केवल अपनी दैनिक आय पर ही ध्यान दिया।

4.3 मारित्जबर्ग की घटना एवं गाँधी की प्रतिक्रिया

दक्षिण अफ्रीका में गाँधी अपने प्रवास के दौरान अनेक प्रकार की अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पडा। डरबन में अपने प्रवास के प्रथम सप्ताह में ही उन्होंने अनुभव कर लिया कि किस प्रकार भारतीयों को अपमानित किया जाता है तथा उनके लिये अनेक प्रकार की बाधायें उत्पन्न की जाती है। किनतु मारित्जबेर्ग की घटना से तो उनका माथा ही ठनक गया। सही टिकिट होते हुए भी ट्रेन के प्रथम दर्जे के डिब्बे से उन्हें सामान सहित बाहर फैंक दिया गया और कडाके की सर्दी में कांपते हुए उन्हें प्रतीक्षालय में रात बितानी पड़ी। उन्होंने उसी रात तय किया कि वे इस अपमानजनक स्थिति के मूक दर्शक बने नहीं रह सकते। उन्होंने निश्चय किया कि न

केवल अपने व्यक्तिगत सम्मान के लिये अपितु अपने अन्य अश्वेत साथियों के लिये भी वे इसका विरोध करेंगें व आंदोलन चलायेगे। बुराई के आगे समर्पण करने के बजाय कष्ट सहते हुए विरोध करने के निर्णय से यह स्पष्ट होता है कि गाँधीजी लोगों को आजादी दिलाने के लिये इस विधि का रचनात्मक उपयोग करने का इरादा रखते थे। प्रेसिडेन्ट स्ट्रीट के फुटपाथ पर लात मार कर भगा दिये जाने की घटना से भी यह स्पष्ट होता था कि वे बदला लेने की भावना रखने के स्थान पर बुराई करने वाले को माफ करने की भावना रखते थे। इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में आगमन के प्रारम्भिक दिनों में ही सत्याग्रह की कुछ मूल आवश्यकताओं को निर्धारित करते हुए उन्होंने व्यवहार में लाना शुरू कर दिया था।

स्वयं व अपने देशवासियों द्वारा बर्दाश्त किये जा रहे इस प्रजातीय कलंक का उन्मूलन करने की ठानने के बाद गाँधीजी ने समय बर्बाद नहीं किया। दक्षिण अफ्रीका में ईसाईयों से तो इनका सम्पर्क था ही, उन्होंने भारतीय समुदाय के लोगों से भी सम्पर्क साधना शुरू किया। प्रिटोरिया में आने के एक सप्ताह के अन्दर ही उन्होंने वहाँ रह रहे समस्त भारतीयों की बैठक आहूत की तथा उन्हें अपनी निःशक्तताओं के प्रति जागरूक किया। इस बैठक में गांधाजी ने अपने जीवन का प्रथम भाषण दिया। उन्होंने व्यापारिक व्यवहार में भी सत्यता की आवश्यकता पर बल दिया, जीवन में स्वच्छता के नियमों की पालना पर बल दिया और जाति, धर्म, क्षेत्रीयता के भेदों को भूलकर तथा संगठित होकर जीवन को बेहतर बनाने का प्रयास करने की बात कही। उन्होंने एक संघ का गठन करने का भी सुझाव दिया ताकि भारतीय समुदाय द्वारा सहन की जा रही मुश्किलों के सम्बन्ध में सम्बन्धित अधिकारियों से प्रभावशाली तरीके से बात की जा सके। यह भी प्रस्तावित किया गया कि संघ के सदस्यों की नियमित बैठकें हों और गाँधीजी ने ऐसे संघ को अधिकतम सहयोग का आश्वासन दिया। ऐसे बैठकों के माध्यम से प्रिटोरिया में रह रहे समस्त भारतीयों से गाँधी का परिचय हुआ और विचारों के आदान-प्रदान से भारतीय समुदाय की स्थिति के बारे में विस्तृत जानकारी लेने के बाद गाँधी ब्रिटिश ऐजेन्ट से मिले जो भारतीय समुदाय के प्रति सहानुभूति रखते थे तथा उन्होंने गाँधी को विश्वास दिलाया कि वह अपने सामथ्र्य के अनुसार यथासंभव मदद करेंगे जिस मुकदमें के सिलसिले में गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका गये थे उसे समाप्त करने के बाद वे भारत के लिये प्रस्थान करने की तैयारी कर रहे थे। विदाई पार्टी के दिन नेटल मक्र्यूरि नाम समाचार पत्र में उनकी नजर एक समाचार पर पडी जिसमें नेटल विधानसभा में भारतीयों से मताधिकार छीनने सम्बन्धी उठाये जा रहे कदमों का जिक्र था। गाँधीजी के अनुसार भारतीयों के पास जो थोडे बहुत अधिकार थे, यह कदम इन अधिकारों के लिए ताबूत की पहली कील के समान था। उन्होंने वहाँ उपस्थित साथियों को इस विधेयक के निहितार्थ को समझाया तथा उन्हें संभावित अन्यायपूर्ण स्थितियों के बारे में जागरूक किया। इस पर साथी लोगों ने गाँधीजी से वहीं रूकने का अग्रह किया तथा सम्बन्धित विधेयक व इसके दुर्भावनापूर्ण इरादों का विरोध करने के लिये उन्हें नेतृत्व प्रदान करने को कहा।

विधेयक का विरोध करने का निर्णय लेने के बाद सुनियोजित विरोध करने के लिये स्वयंसेवकों को नामांकित किया गया। सरकार में शामिल प्रमुख लोगों को तार भेज कर यह निवेदन किया गया कि विधानसभा में विधेयक पर चर्चा स्थागित की जाये। याचिकायें तैयार की गई व उन पर भारतीय समुदाय के लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त किये गये। इसे विधानसभा के लये प्रेषित किया गया तथा एक प्रति प्रेस को भी भेजी गई ताकि विधेयक पर संभावित निर्णय को प्रभावित किया जा सके। इन प्रयासों के बावजूद विधानसभा में विधेयक पारित हो गया। यद्यपि प्रारम्भिक गतिविधयों का कोई अनुकूल प्रभाव नहीं पडा तथापि इस आंदोलन ने भारतीय समुदाय में नई जान फूँक दी, उन्हें अपनी मुश्किलों व अन्यायपूर्ण स्थिति के प्रति जागरूक किया गया। साथ ही वे अपने रानीतिक अधिकारों के लिये लडने के लिये दृढ़तापूर्वक एक जुट हो गये। उपनिवेशी राज्यों के राज्य सचिव लार्ड रिपन के पास एक विस्तृत याचिका प्रस्तुत करने का निश्चिय किया गया। याचिका में गाँधी ने भारतीयों के मताधिकार को सैद्धान्तिक व समीचीन बताते हुए समर्थन किया। तर्क था कि नेटल में रह रहे भारतीयों के लिये नेटल में मताधिकार उतना ही औचित्यपूर्ण है जितना कि भारत में। साथ ही उन्होंने कहा कि नेटल में भारतीय आबादी का केवल एक छोटा सा हिस्सा ही मताधिकार का उपयोग करने में सक्षम है, इसे बनाये रखना समीचीन होगा। याचिका पर लगभग दस हजार हस्ताक्षर लिये गये तथा उसे प्रसारित व वितरित किया गया। इसने भारतीय जनता को नेटल में उनकी स्थिति से पहली बार अवगत कराया। इसकी प्रतियाँ इंग्लैण्ड तथा भारत के समाचार पत्रों व प्रचारकों को भी भेजी गई। इन प्रयासों के माध्यम से गाँधीजी ने भारतीय समुदाय की परिवेदनाओं के प्रति जन सहानुभूति निर्मित करने का प्रयास किया ताकि उनके सम्मिलित प्रयास से नेटल के प्राधिकारियों को प्रभावित किया जा सके कि वे भारतीयों की मांगें स्वीकार कर उनकी परिवेदानाओं को कम कर सकें।

गाँधीजी को इस बात का एहसास होने लगा कि निकट भविष्य में उनके लिये नेटल छोड़ना असम्भव होगा। अतः उन्होंने अपने करीबी मित्रों व भारतीय समुदाय के प्रमुख लोगों से विचार विमर्श कर वहीं बस जाने की योजना बनाई। कुछ मुश्किल जरूर आई किन्तु वह सर्वोच्च न्यायालय में वकील की हैसियत से प्रवेश पाने में सफल हुए।

4.4 नेटल में गाँधी की भूमिका

गाँधीजी ने शीघ्र ही यह समझ लिया कि किसी भी सतत् गतिविधि के लिये एक स्थायी संस्था का होना अपरिहार्य हैं। अतः उन्होंने भारतीय समुदाय के प्रमुख लोगों से विचार विमर्श कर मई 1894 में नेटल इंडियन कांग्रेस का गठन किया। इसकी नियमित बैठकोंमें नेटल सरकार का विरोध करने सम्बन्धी योजनाओं पर चर्चा की जाती थी। साथ ही आन्तरिक सुधार के प्रश्न पर भी चर्चा की जाती थी। बैठकों में धरेलू साफ-सफाई, व्यक्तिगत स्वास्थ्य, घर व दुकानों के अलग-अलग भवन होने की आवश्यकता जैसे विषयों पर व्याख्यान, चर्चायें व सलाह मशविरा होने लगे। युवा भारतीय जो अपनी मातृभूमि के विषय में कम जानकारी रखते थे उनके लिये नेटल

भारतीय शैक्षिक संघ का गठन कियागया। उनमें मातृभूमि के साथ साथ भारतीय समुदाय के विभिन्न वर्गों के प्रति प्रेम की भावना विकसित की गई। यद्यपि सरकार की ओर से कांग्रेस पर अनेक प्रहार किये गये तथापि कांग्रेस ने उनका डट कर सामना किया। गाँधीजी अतिशयोक्ति में विश्वास नहीं रखते थे तथा उन्होंने अपनी हर आलोचना का पूर्वाग्रहमुक्त उनमें सुधार करते थे। विचार की कार्यविधि में गलतियां हो सकती है और नेटल भारतीय कांग्रेस ने आलोचकों के तर्कों को स्वीकार किया। इसमें खुलापन था व आत्म निरीक्षण के लिये तत्परता थी और उन्नति के नये शिखरों को छूने की अपनी क्षमता पर भरोसा था। जहाँ संभव हो समानता व आत्मसम्मान की शर्तों पर यूरिपियन्स का सहयोग किया गया। 1896 में गाँधीजी अपने परिवार को लेने भारत आये। यहाँ उन्होंने दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों में रह रहे भारतीयों की दयनीय स्थिति पर लोगों को अवगत कराया। वे गोखले, फिरोजशाह मेहता, बदरूद्दीन, रानाडे, तिलक जैसे प्रमुख नेताओं से मिले। सभी ने दक्षिण अफ्रीका में उनके कार्यों की प्रशंसा की व हर प्रकार की मदद का आश्वासन दिया।

जनवरी 1897 में नेटल संसद की बैठक होनी थी। इसकी सूचना का तार जब गाँधीजी को मिला तो उन्हें भारत में अपना काम बीच में ही छोड़ना पडा। 1896 में वे दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना हुये। समाचार पत्रों में गाँधीजी द्वारा नेटल के श्वेतों के विरूद्ध कार्यवाही की मिथ्या रिपोर्ट छपी। उन्होंने यह अफवाह फैलाई कि गाँधी दो जहाजों में लोगों को लेकर नेटल आ रहें है ताकि नेटल में भारतीयों की भरमार हो सके। इससे यूरोपियन्स के मन में गाँधी के प्रति नफरत व शत्रुता की भवना में बढोत्तरी हो गई। उन्होंने गाँधी के डरबन पहुंचने से रोकने के हर संभव प्रयास किये और जब वे इसमें सफल नहीं हुए तो उन्होनं उन्हें जान से मारने का प्रयास किया जब वे रूस्तम जी के घर जा रहे थे। बाद में वे उनके घर पर जमा हुये ताकि वे उन्हें मार सकें। लेकिन गाँधीजी ने अपने आक्रमणकारियो के विरूद्ध काई शिकायत मन में नहीं रखी और उनपर मुकदमा चलाने से भी इन्कार कर दिया। बदला न लेने की भावना में उनकी नैतिक परिपक्वता झलकी। पापियों को सजा देने के बजाय उन्हें उनकी अज्ञानता के लिये माफ करना गाँधी जी अधिक श्रेष्ठ समझते थे।

जब बोर युद्ध छिड़ा तब बहस का प्रमुख विषय थी कि दक्षिण अफ्रीका में रह रहा भारतीय समुदाय ब्रिटिश युद्ध प्रयासों में मदद करें अथवा नहीं। प्रारम्भ में भारतीय समुदाय इसके लिये तैयार नहीं था। इस पर उनकी आलोचना भी हुई। उन्हें धन के भूखे, ब्रिटिश लोगों पर बोझ, दीमक, कृतघ्न, आदि कहा गया। गाँधी युद्ध में ब्रिटिश सरकार का सहयोगकरने के पक्ष में थे। इसके लिये उन्होंने अपने साथियों को विश्वास में भी लिया। उनके अनुसार राष्ट्र पर मंडरा रहे खतरों में व्यक्ति उदासीन रहे तो यह कोई सम्मानजनक स्थिति नहीं हैं। विशेषतः युद्ध की स्थिति में तो ऐसा बिल्कुल नहीं होना चाहिये। उनका तर्क था कि ब्रिटिश लोग भारतीयों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं, यह उदासीनता का कोई आधार नहीं है बल्कि ब्रिटिश नागरिकता के बल पर उन्होंने जो कुछ भी हासिल किया है अब ब्रिटिश साम्राज्य की संकट की स्थिति में उसे चुकाने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ है। साथ ही गाँधी का यह

भी मानना था कि इससे उनपर लगाये गये दुर्भावनापूर्ण मिथ्या आरोपों को भी झुठलाया जा सकता है तथा उनके द्वारा अधिक आजादी व खुशहाली के लिये किये जा रहे प्रयासों को भी बल मिलेगा।

तत्पश्चात भारतीय समुदाय ने सेना में अपनी सेवायें देने का प्रस्ताव दिया। गाँधी ने अपनी निष्ठा का प्रमाण देने के लिये ब्रिटिश सेना के लिये इंडियन एम्बूलेंस कोर का गठन किया। यद्यपि प्रारम्भ में भारतीयों के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया गया तथापि जब युद्ध में हानि बढती गई और भारतीयों ने अपना प्रस्ताव दोहराया तो अन्ततः एम्बूलेंस कोर का गठन करने के लिये कहा गया जो घायल व मृत सैनिकों को बेस केम्प ले जा सके। विपरीत व जोखिम भरी स्थितियों के बावजूद भारतीयों ने अच्छी सेवायें दी तथा इसके लिये उनकी प्रशंसा भी की गई। गाँधी को आशा थी कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के सद कार्यों के कारण उनका सम्मान बढेगा और ब्रिटिश भी प्रभावित होकर उनकी परिवेदनाओं को कम करने का प्रयास करेगा। इसी आशा के साथ गाँधीजी ने घर लौटने की योजना बनाई।

वह 1901 में भारत लौटे तथा बम्बई में उच्च न्यायालय में वकालत शुरू की। बम्बई में मुश्किल से तीन या चार माह ही गुजरे थे कि दक्षिण अफ्रीका में रह रहे उनके साथियों ने उन्हें तार भेजकर बुला लिया। गाँधी ने बम्बई में अपना काम समेटा व 1902 के अन्त में दक्षिण अफ्रीका रवाना हो गये।।

दक्षिण अफ्रीका पहुंचने पर गाँधीजी ने महसूस किया कि वहाँ भारतीयों की स्थिति बद से बदतर हो गई थी। बोर युद्ध के दौरान भारतीयों द्वारा ब्रिटिश को दिये गये सहयोग के कारण गाँधीजी ने आशा की थी कि भारतीयों की स्थिति सुधरेगी। किनतु यह आशा धाराशाही हो गई। भारतीयों व्यापरियों से प्रतिस्पर्धा से आक्रांत व जातीय पूर्वाग्रह से ग्रस्त प्राधिकारियों ने दृढ़ निश्चिय कर लिया कि दक्षिण अफ्रीका को श्वेत अल्पसंख्यकों के अधीन ही रखा जायेगा। अतः उन्होंने आनेवाले भारतीयों को तो रोक ही दिया दक्षिण अफ्रीका के उपनिवेशों में रह रहे भारतीयों का जीवन और कष्टकारी बना दिया। उन्हें आशा थी कि इससे भारतीय अपने देश लौटने के लिय मजबूर होगें तथा जो बचे रहेंगे वे गुलामी का जीवन व्यतीत करेंगे। दक्षिण अफ्रीका में रह रहे एशिया के लोगों के लिये एक अलग एशियाटिकविभाग का गठन किया गया। इस विभाग के प्राधिकारी मौका मिलते ही भारतीयों का अपमान करने से नहीं चूंकते थे और तो और इस विभाग में भ्रष्टाचार भी व्यापक स्तर पर फैला हुआ था।

4.5 ट्रान्सवाल में गाँधी की भूमिका

इस दौरान लार्ड चेम्बरलेन ने दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों में आने की योजना बनाई। जब वह नेटल गए तब गाँधीजी भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्वमंडल के साथ उनसे मिले व अपनी परिवेदनायें प्रस्तुत की। लार्ड चेम्बरलेन ने बडे सब्र से उन्हें सुना और नेटल सरकार से बातचीत करके यथासंभव मदद करने का वादा किया। लेकिन नेटल सरकार ने भारतीयों के प्रति वैमनस्य को देखते हुये तथा ब्रिटेन सरकार की दक्षिण अफ्रीकी

उपनिवेशों की सरकारों के प्रति तुष्टीकरण की नीति के रहते गाँधी जी को किसी परिवर्तन की उम्मीद कम ही थी। फिर भी उन्होंने भारतीय समुदाय की परिवेदनाओं को व्यक्त कर उपलब्ध संवैधानिक साधनों से उनका निदान खोजने की मांग की। तत्पश्चात् उन्होनें ट्रांसवाल के भारतीय समुदाय के एक प्रतिनिधिमण्डल को लार्ड चेम्बरलेन से मिलने भेजा। लेकिन ट्रांसवाल सरकार ने न केवल उन्हें लार्ड चेम्बरलेन से मिलने से रोका अपितु उनका अपमान भी किया। गाँधी के अपमान के कारण भारतीय प्रतिनिधित्वमण्डलबिना लार्ड चेम्बरलेन से मिले लौटना चाहता था किन्तु गाँधीजी ने उन्हें किसी अन्य व्यक्ति के नेतृत्व में लार्ड चेम्बरलेन से मिलने के लिये समझाया और अपनी समस्याओं के बारे में ज्ञापन देने को कहा। इसी प्रकार भारतीय समुदाय के प्रतिनिधि मण्डल के प्रतिष्ठित व्यक्तियों व अधिकारियों से मिल इण्डियन ओपिनियन नामक समाचारपत्र भी दक्षिण अफ्रीका में शुरू किया। इस पत्र के माध्यम से उन्होंने भारतीय समुदाय की परिवेदानाये व्यक्त की व भारतीयों के प्रति सहानुभूति का वातावरण निर्मित करने का प्रयास किया।

इसी बीच एक महत्वपूर्ण घटना घटी। ट्रांसवाल जिसे व ओरेन्ज फ्री स्टेट में ब्रिटिश शासन स्थापित होने के बाद एक समिति का गठन किया गया ब्रिटिश सरकार के प्रति पूर्वाग्रह युक्त कानूनों की सूची बनाने का दायित्व दिया गया। भारत विरोधी कानूनों की सूची की बात इसमें नहीं थी। विडम्बना यह हो गई कि ब्रिटिश विरोधी कानूनों की सूची बनाने के लिये गठित समिति ने भारत विरोधी अधिनियमों की सूची भी प्रस्तुत कर दी। इसे एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया जो भारतीय समुदाय के विरूद्ध उपयोग में लाने हेतु एक सुलभ साधन हो गया। तब से एशियाई समुदाय के प्रति अन्यायपूर्ण कानूनों को एशियाटिक विभाग ने अधिक सख्ती से लागू किया। गाँधीजी का भ्रष्ट अधिकारियों से कोई व्यक्तिगत विद्वेष नहीं था। लेकिन उन्हें उनके काम करने का तरीका पंसद नहीं था और उन्होंने उनकी निंदा भी की। फिर भी ये प्राधिकारी अपने पक्ष में जो कुछ भी कहते गाँधी जी उन्हें धैर्य से सुनते थे।

शीघ्र ही ट्रांसवाल सरकार ने एशियाई लोगों के प्रवासन को रोकने की योजना बनाई। भारतीय वाशिंदों के पुनःपंजीकरण की योजना बनी। नये पंजीकरण कार्ड में धारक के हस्तारक्षर या अंगूठे के निशान लिये जाने थे। इसके साथ ही धारक का फोटो भी लगाना था। इस मामलें में भारतीय समुदाय सरकार से सहयोग करने के लिये सहमत ही नहीं हुआ था कि ट्रांसवाल सरकार ने 1906 में विधानसभा में एशियाटिक बिल नामक एक कुख्यात विधेयक पेश किया। यह विधेयक ट्रांसवाल में भारतीयों के अस्तित्व को ही संकट में डालने वाला था तथा कठोर पंजीकरण प्रक्रिया द्वारा उन्हें अपमानित करने का इरादा रखता था। विधेयक के प्रावधानों पर टिप्पणी करते हुए कहा कि यह न केवल भारतीयों का अपितु उनकी मातृभूमि का भी अपमान है। परिणामतः उन्होंने भारतीयों से इस विधेयक का विरोध करने तथा अपना सम्मान बनाये रखने की बात कही। साथ ही उनका विचार था कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीय समुदाय ने ऐसा कोई अपराध नहीं किया था जिसके लिए उनके साथऐसा दुव्र्यवहार

हो। गाँधी के अनुसार भारतीयों के साथ अन्याय हो रहा है और इसलिए उन्हें एशियाटिक बिल का विरोध करना चाहिये।

पुराने एम्पायर थियेटर में एक बैठक आयोजित की गई जिसमेंलगभग तीन हजार प्रतिनिधियों ने भाग लिया। वे सभी ट्रांसवाल के विभिन्न क्षेत्रों से थे। जो थोडे बहुत प्रस्ताव पारित हुए उनमें सबसे प्रमुख वह प्रस्ताव था जिसके अनुसार भारतीयों ने यह निर्णय लिया कि इस विधेयक के कानून बनने पर इसकी अनुपालना नहीं की जायेगी तथा इसका विरोध व अवहेलना करने पर जो भी परिणाम हों उन्हें भुगता जायेगा। एक पुराने साथी सेठ हाजी हबीब ने इस कानून का विरोध करने के लिये ईश्वर के नाम की शपथ लेने की बात कही। इससे प्रेरित होकर गाँधीजी ने उपस्थित सभी साथियों से इस प्रकार की शपथ लेने के लिये कहा। लेकिन इससे पहले उन्होंने इस प्रकार की शपथ का आशय भंलीभांति समझ लेने को कहा। उन्होंने उनसे कहा कि वे आत्मनिरीक्षण करें तथा यदि उनकी अन्तरात्मा उन्हें विधेयक का विरोध करने लायक साहस व बल दे तभी वे ईश्वर के नाम की शपथ लें। नेताओं से भी उन्होंने कहा कि वे भी शपथ लेने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लें कि उनमें भी अडिग रहने की तत्परता व क्षमता है। साथ ही स्थानीय प्राधिकारियों से मिल कर अपनी परिवेदानायें प्रस्तुत कर उनका निदान पाने के प्रयास भी जारी रहे। इंडियन ओपिनियनमें एशियाटिक अध्यादेश के विभिन्न आपत्तिनजक प्रावधानों को उजागर करने सम्बन्धी लेख छापे गये, इसके अन्यायपूर्ण अमानवीय व अनैतिक आधार की निंदा की गई तथा भारतीय समुदाय के विरोध के औचित्य को सिद्ध करने का प्रयास भी किया गया।

प्रारम्भ में इस आंदोलन को निष्क्रिय प्रतिरोध की संज्ञा दी गई किन्तु बाद में इसे अनुपयुक्त समझा गया और इण्डियन ओपिनियन में आंदोलन के लिये उपयुक्त नाम सुझाने के लिये एक खुली प्रतियोगिता रखी गई। मदनलाल गाँधी ने सदाग्रह नाम सुझाया जिसका अर्थ है - अच्छे कार्य के लिये दृढ़ता। गाँधी जी ने इस शब्द में सुधार करते हुए इसे सत्याग्रह कर दिया।

भारतीय समुदाय के विरोध के बावजूद ट्रांसवाल विधानसभा ने विधेयक पारित कर ही दिया। तब भीगाँधीजी व उनके साथी आशान्वित थे कि ब्रिटिश सम्राट इस विधेयक पर अपनी सहमति नहीं देगें। इस आशा के साथ उन्होंने अपना एक प्रतिनिधिमण्डल इंग्लैण्ड भेजा ताकि ब्रिटेन के प्रभावशाली लोगों को आवश्यक जानकारी दी जा सके। इंग्लैण्ड जाने के लिये गाँधी व एच.ओ.अली को चुना गया। गाँधी ने अपनी यात्रा के दो उद्देश्य घोषित किये :-

(1) उपनिवेशों के राज्य सचिव लार्ड एल्गिन से निवेदन करना कि सम्राट पंजीकरण अधिनियम को स्वीकृत न करें।

(2) बडे स्तर पर अवैध भारतीय अप्रवासन के आरोपों की जांच करने हेतु एक आयोग की नियुक्ति की मांग करना। इन्ही आरोपों को बहाना बनाकर पंजीकरण अधिनियम लाया गया था।

एक ज्ञापन तैयार कर लार्ड एल्गिन को दिया गया। गाँधी व अली भारत के लिये राज्य सचिव श्री मोरली से तथा कुछ प्रमुख ब्रिटिश जैसे सर लेपल ग्रिफिन, सर डब्ल्यू डब्ल्यू हंटर, रेडमंड आदि से मिले। दादाभाई नौरोजी से भी सम्पर्क किया गया और उनके माध्यम से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की ब्रिटिश समिति से सम्पर्क किया गया। कुछ निष्पक्ष व विख्यात एंग्लो इण्डियन्स का सहयोग भी मांगा गया। यह भी तय किया गया कि एक स्थायी समिति बनाई जाये जिसमें वे सब जो भारतीय मुद्दों के संदर्भ में सहयोग कर सकें एक ही छतरी के नीचे आ जाये। इस प्रकार दक्षिण अफ्रीकी ब्रिटिश भारतीय समिति का गठन हुआ। इंग्लैण्ड में प्रतिनिधिमण्डल ने लोक जीवन के महत्वपूर्ण लोगों को बडी संख्या में परिपत्र व पर्चे भेजे।

इंग्लैण्ड में छः सप्ताह ठहरने के बाद गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका लौटे। लौटते समय उन्हें समाचार मिला कि लार्ड एल्गिन ने घोषणा की है कि वह ब्रिटिश सम्राट को सलाह देंगे कि वे एशियाटिक अध्यादेश पर जल्दबाजी में हस्ताक्षर न करें। भारतीय खुशी से फूले नहीं समा रहे थे किन्तु यह खुशी एक बुलबुले की तरह थी जो फूट गई। दक्षिण अफ्रीका का एक प्रसिद्ध अधिवक्ता व ट्रांसवाल उपनिवेश का प्रतिनिधि रिचर्ड सोलमन लार्ड एल्गिन से मिले। लार्ड एल्गिन ने उसे बताया कि जब तक ट्रांसवाल ब्रिटेन का उपनिवेश बना रहेगा सम्बन्धित बिल पर सम्राट की सहमति नहीं मिलेगी किन्तु जब ट्रांसवाल को जिम्मेदार सरकार का दर्जा मिल जायेगा और वह सरकार इस विधेयक को पारित कर देता है तो सम्राट उस पर हस्ताक्षर कर देंगे। इस प्रकार लार्ड एल्गिन ने दिखावे के तौर पर भारतीयों से मित्रता व समर्थन का नाटक किया पर वास्तव में उन्होंने ट्रांसवाल सरकार का समर्थन किया और जिस बिल को उसने स्वयं वीटो किया था उसी बिल को पारित करने के लिये प्रोत्साहित किया।गाँधीजी ने इस कार्य को मुंह में राम बगल में छुरी माना। किन्तु इन सभी निराशाजनक स्थितियों के बावजूद गाँधी जी अभी भी ब्रिटिश शासन को न्यायपूर्ण ही मानते थे। जिसमें बातचीत के जरिये परिवेदनाओं का निदान किया जा सकता था।

लार्ड एल्गिन की सर रिचर्ड सोलमोन को दी गई सलाह से प्रोत्साहित होकर ट्रांसवाल की नइ विधानसभा ने एशियाटिक पंजीकरण अधिनियम पारित कर दिया। तारीखों में परिवर्तन के अलावा इसमें सारे प्रावधान पुराने बिल के समान ही थे।नये बिल को 21 मार्च 1907 को आयोजित एक ही बैठक में पारित कर दिया गया और इसे 1 जुलाई 1907 से लागू घोषित किया गया। भारतीयों को पंजीकरण के लिये 31 जुलाई 1907 तक का समय दिया गया।

अब चूंकि परिवेदानाओं का निदान संवैधानिक तरीकों से तो नहीं हो पा रहा था, सत्याग्रह संघर्ष आवश्यक हो गया था। संघर्ष को प्रभावी बनाने के लिये एक अलग एजेन्सी की आवश्यकता महसूस की गई। अतः निष्क्रिय प्रतिरोध संघ की स्थापना की गई। अन्ततः जब पंजीकरण हेतु परमिट दफ्तर खोले गये तो यह निश्चित किया गया

कि इन दफ्तरों में धरना दिया जायेगा। परमिट दफ्तरों की ओर जाने वाली सडकों पर स्वयंसेवक खडे किये गये जो पंजीकरण कराये जाने वाले भारतीयों को पंजीकरण न करवाने के लिये निवेदन करेंगे। साथ ही उन्हें यह भी हिदायत दी गई कि जो भारतीय निवेदन के बावजूद पंजीकरण करवाना ही चाहते हैं उन्हें जोर जबरदस्ती से न रोका जाये। इसके स्थान पर स्वयंसेवक पर्चे बाँटे थे जिनमें काले अधिनियम से होने वाली हानि का वर्णन था।गाँधी ने बल दिया कि वे प्रत्येक व्यक्ति के साथ सम्मानजनक व्यवहार करे चाहे वह सरकारी प्राधिकारी ही क्यों न हो। ऐसे व्यवहार करते वक्त प्राधिकारी यदि उनके साथ दुव्र्यवहार भी करें तो उसे भी गाँधी ने चुपचाप सहने को कहा। इस दौरान इंडियन ओपिनियन के माध्यम से भारतीय समुदाय तथा उसके कठिन संघर्ष के बारे में महत्वपूर्ण समाचार दक्षिण अफ्रीका, इंग्लैण्ड व भारत की जनता तक पहुंचते रहे। सत्याग्रह के संदर्भ में किसी के विचार चाहे जो भी रहे हों इंडियन ओपिनियन एक खुली किताब की तरह था जिससे वह भारतीय समुदाय की कमजोरी व ताकत का आंकलन कर सकता था। आंदोलन में खुलापन को आवश्यक माना गया।

गाँधीजी ने कहा कि आंदोलन में गोपनीयता का कोई स्थान नहीं है और कोई गलत काम नहीं किया जाएगा और इसमें दोहरेपन या धूर्तता का कोई स्थान नहीं होगा। कमजोरी तथा उन्मूलन करना गाँधी ने आवश्यक माना और सही ढंग से पहचानने तथा दूर करने पर बल दिया गया। जब प्राधिकारियों ने देखा कि इण्डियन ओपिनियन की यह नीति हे तो उनके लिये यह पत्र भारतीय समुदाय के तत्कालीन इतिहास का सच्चा दर्पण बन गया।

जैसे ही पंजीकरण की अन्तिम तिथि समीप आ रही थी, जिन्होंने पंजीकरण नहीं करवाया था उनके पास कोर्ट के आदेश आने लगे और उन्हें एक सप्ताह या एक पखवाडे में देश छोडने का आदेश दिया गया। जब इन आदेशों की पालना नहीं हुई तो प्राधिकारियों ने दोषीयों को जेल में डालना शुरू किया। जब जेल सत्याग्रहियों से भरने लगे और सत्याग्रही अपने निश्चय पर अटल रहे कि वे इस अधिनियम को कदापि स्वीकार नही करेंगे तो ऐसी स्थिति में सरकार थोड़ा झुकी और भारतीय समुदाय के साथ बातचीत के जरिये समझौता करने का प्रयास किया गया।

एल्बर्ट कार्टराइट जो ट्रांसवाल लीडरनाम के समाचार पत्र के सम्पादक थे, उन्हें सरकार व भारतीय समुदाय के बीच मध्यस्थ बना दिया गया। अन्ततः गाँधीजी व जनरल स्मट्स मिले तथा एक समझौता फार्मूला पर सहमत हुये जिसके अनुसार स्मट्स ने वादा किया कि जैसे ही अधिकांश भारतीय स्वैच्छिक पंजीकरण करवा लेंगे काले अधिनियम को जनरल बोथा की सरकार वापिस ले लेगी। जनरल स्मट्स ने विश्वास दिलाया कि ऐसे प्रत्येक पंजीकरण को वैघ द्योषित किया जायेगा।

गाँधीजी का तर्क था कि सरकार बिना वहाँ की प्रजा के सहयोग के उन पर नियंत्रण नहीं कर सकती। गाँधीजी का तर्क थाकि एक सत्याग्रही कानून की पालना करके जो सहयोग करता है वह सजा के डर से नहीं अपितु यह सोच कर करता है कि इसमें जनहित निहित है। भारतीयों ने स्वेच्छा से अपना पंजीकरण इस आशा एवं विश्वास से कराया था कि ऐसा करने पर काला अधिनियम वापिस ले लिया जायेगा। लेकिन जनरल स्मट्सकी कार्यवही ने

उनकी आशाओं पर पानी फेर दिया। उसने न केवल काले अधिनियम को संवैधानिक अपितु विधानमण्डल में ऐसे प्रस्ताव भी रखे जिससे ट्रांसवाल में नये आने वाले सभी भारतीयों के लिये अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार पंजीकरण आवश्यक कर दिया गया।

गाँधीजी ने फिर एक बार नई स्थिति पर चर्चा करने के लिये अपने भारतीय साथियों के साथ बैठक आयोजित की। उन्होंने जनरल स्मट्स को पत्र लिखा, कुछ प्रभावशाली अंग्रेजों से चर्चा की, नवीनतम स्थिति पर इंडियन ओपिनियन में धारावाहिक लेख लिखे गए और भारतीयों की ओर से सरकार को याचिकायें पेश की गई। जब इन संवैधानिक साधनों से अपेक्षित परिणाम नहीं निकले तो उन्होंने सरकार को अंतिम चेतावनी दी कि वे सभी भारतीयों के पंजीकरण प्रमाण पत्रों को एकत्रित कर उनकी होली जला देगें यदि अमुक तारीख तक एशियाटिक अधिनियम वापिस नहीं लिया जाता। यह भी घोषित कर दिया गया कि ऐसा करने के जो भी परिणाम होगें वे भुगतने के लिये तैयार है।

जब अंतिम चेतावनी की तिथि निकल गई फिर एक बैठक आयेजित की गई और सभी पंजीकरण प्रमाणपत्र को एकत्रित किया गया तथा बैठक स्थल के एक कोने में उनकी होली जला दी गई। यह बैठक 16 अगस्त 1907 को जान्सबर्ग में स्थित हमीदिया मस्जिद में आयोजित हुई। यह भी निश्चिम हुआ कि सत्याग्रह संघर्ष में ट्रांसवाल अप्रवासी प्रतिबन्ध विधेयक का विरोध भी शामिल किया जायेगा जिसमें उन सभी अप्रवासियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था जो शिक्षा परीक्षा तो उत्तीर्ण कर चुके थे किन्तु एशियाटिक अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकरण के लिये अयोग्य थे। यह अधिनियम भारतीय समुदाय के अधिकारों पर एक नया कुठाराघात था तथा इसे भी उसी मंशा से बनाया गया था जिससे एशियाटिक अधिनियम को बनाया गया। लेकिन गाँधीजी अपने कुछ साथियों के दृष्टिकोण से सहमत नहीं थे जो मांग कर रहे थे कि ट्रांसवाल के सभी भारत विरोधी विधानों के विरूद्ध समान व्यवहार किया जाये। कुछ साथियों का सुझाव था कि दक्षिण अफ्रीका के सभी भारतीयों को संघटित कर सभी उप निवेशों में भारत विरोधी विधानों के विरूद्ध एक साथ सत्याग्रह अभियान चलाया जाये। गाँधीजी इसके भी पक्ष में नहीं थे। गाँधी ने सत्याग्रह संघर्ष में अवसरवादिता की निंदा की और इस बात पर बल दिया कि सत्याग्रह आंदोल जिस मुद्दे को लेकर शुरू किया जाये, उस पर बने रहना चाहिये। फिर भी उन्होंने ऐसे किसी मुद्दे को शामिल करने का रास्ता खुला रखा जो विरोधियों द्वारा संघर्ष के दौरान नई मुश्किलें पैदा करने के प्रयासों से उपजे हों। ट्रांसवाल आप्रवासन प्रतिबन्ध विधेयक करने के लिये, यह तय किया गया कि ट्रांसवाल में भारतीय एक-एक करके या समूह में प्रवेश करेंगे व नये कानून का उल्लंघन करेगें। दाउद सेठ के नेतृत्व वाला समूह जब ट्रांसवाल में प्रवेश कर रहा था तो उसे गिरफ्तार कर लिया गया तथा सभी को मजिस्ट्रेट के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। मजिस्ट्रेट ने सभी को आदेश दिया कि वे एक सप्ताह के अन्दर ट्रांसवाल छोड दें। आदेश की पालना करने के बजाये समूह प्रिटोरिया की ओर बढ़ा जहाँ उनहें फिर गिरफ्तार कर लिया गया। वहाँ उनहें यह सजा सुनाई गई कि या तो वे पचास पाउंड का जुर्माना भरें या तीन माह का कठोर कारावास भुगतें। समूह ने खुशी खुशी जेल जाने का

रास्ता चुना। बिना लाइसेंस के फेरी लगाकर या ट्रांसवाल में प्रवेश करने पर अपना पंजीकरण प्रमाण पत्र न दिखा कर नेटल के भारतीयों ने ट्रांसवाला के साथियों का साथ दिया। जेल भरे जाने लगे और भारतीय कैदियों को परेशान करने के हर संभव प्रयास किये गये। जब सरकार ने देखा कि गिरफ्तारी की धमकी से भारतीय हतोत्साहित नहीं हो रहें है और उनका ट्रांसवाल में आना या बिना लाइसेंस के फेरी लगाना जारी है, तो सरकार ने भारतीयों को अपने देश भेजना शुरू किया। इससे भारत में हंगामें की स्थिति हो गई और भारतीय सरकार ने कानून बनाकर अनुबंधित मजदूरों को नेटल की ओर देशांतरण पर रोक लगा दी। अन्ततः ट्रांसवाल सरकार को मजबूरन सत्याग्रहियों को भेजना बंद करना पडा।यद्यपि जेल में हालात बडे विकटव कठोर हो गये थे, तथापि सत्याग्रहियों ने इनको साहस और दृढ़ निश्चय से सहन किया। किन्तु जैसे ही संघर्ष खिंचता चला गया, सरकार यह जान चुकी थी गिरफ्तारी या निर्वासन से सत्याग्रहियों के उत्साह को भंग नहीं किया जा सकता। भारतीय भी इस स्थिति में नहीं थे कि वे मजबूत लडाई लड़ सकें।सरकार कुछ मामलें अदालत में ले गई थी जो वह हार गई। उधर भारतीय थके हुए थे व उत्साहहीन थे।

4.6 दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण के बाद गाँधी की भूमिका

दक्षिण अफ्रीकी संघ के निर्माण के प्रयास जारी थे। भारतीयों ने एक प्रतिनिधिमण्डल इंग्लैण्ड भेजा ताकि दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीयों के मूल अधिकारों की प्राप्ति व सुरक्षा की मांग की जा सके। जुलाई 1909 में गाँधी एक बार फिर लंदन आये ताकि ट्रांसवाल विधानमण्डल के सम्बन में शाही दबाव डलवाया जा सके। लेकिन इस बार वे पूर्व की तरह आशावादी नहीं थे। प्रतिनिधिमण्डल की असफलता के अंदेशे के कारण उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में चल रहे सत्याग्रह संघर्ष पर ही भरोसा किया। लंदन में प्रतिनिधिमण्डल ने लार्ड एम्प्ट्हिल समिति के निर्देशन में कार्य किया।

गाँधी के लिये राहें आसान नहीं थी। एक तरफ तो उच्च्च प्राधिकारियों को प्रभावित करना टेढी खीर था। दूसरी तरफ उनपर ऐसे आरोप भी लग रहे थे कि दक्षिण अफ्रीकी आंदोलन को भारत में काम कर रही क्रांतिकारी व राजद्रोही आर्थिक सहयोग दे रहे हैं। अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिये बुलाये जाने पर गाँधी ने कहा, “माफ करें, मै यहाँ ऐसे किसी भारतीय को नहीं जानता हूँ, न तो दक्षिण अफ्रीका में न भारत में, जो मुझसे अधिक सतत् व निर्भीक रूप से राजद्रोह के विरूद्ध हो।मेरा धर्म यह कहता है कि मेरा राजद्रोह से कोई वास्ता नहीं, चाहे इसके लिये मेरी जान ही क्यो न चली जाये। अधिकांश भारतीयों व एंग्लो इण्डियन्स ने बम फैकने और हिंसक गतिविधियों की निन्दा की है। ट्रांसवाल का आंदोलन जिससे मैने अपना नाम जोड़ रखा है, ऐसे किसी भी तरीके के स्पष्ट रूप से खिलाफ है। निष्क्रिय प्रतिरोध का परीक्षण ही यही है कि स्वयं कष्ट सह लें पर दूसरों को कष्ट न दें। अतः भारत में या अन्य कहीं से किसी राजद्रोह वाले दल से एक पैसा भी लेने का प्रश्न ही नहीं है। अगर लेने का प्रस्ताव भी होता तो सिद्धान्ततः हम उसे अस्वीकृत कर देते।” भारत मे हिंसा करने वाले दल को दक्षिण अफ्रीकी

भारतीय आंदोलन के माध्यम से गाँधी दिखलाना चाहते थे कि ऐसे दल गलत राह पर हैं। हिंसा पर भरोसा रख कर उन्हें कुछ भी हासिल नहीं होने वाला । इन सभी कठिन प्रयासों के बावजूद गाँधी की प्रतिनिधिमण्डल की लंदन में सफलता के सम्बन्ध में निराशा सही साबित हुई।

भारतीय प्रतिनिधिमण्डल की असफलता के बारे में गाँधी द्वारा की गई भविष्यवाणी आधारहीन नहीं थी। ब्रिटेन में उनके कटु अनुभव, बढती मोहभंग की स्थिति व स्वयं के आध्यात्मिक विकास के कारण उन्हें आधुनिक सभ्यता की बुराईयां स्पष्ट नजर आने लगी थी। वे मानते थे कि ब्रिटेन आधुनिक सभ्यता के कुचक्र में फंस चुका है। अब वह अपने ओपनिवेशक हितों को नहीं छोड़ सकता । उससे खुलेपन, रचनात्मक व मानवीयता की अपेक्षा करना बेकार है।

गाँधी द्वारा आधुनिक सभ्यता पर प्रहार उनकी पुस्तक ष्हिन्द स्वराज या इण्डियन होम रूल के रूप में सामने आया। यह पुस्तक उन्होंने 1909 में लंदन से दक्षिण अफ्रीका जाते समय जहाज में लिखी। इसमें उनका निष्कर्ष था कि भारत अंग्रेजों के पैरों के नीचे नहीं अपितु आधुनिक सभ्यता के पैरो के नीचे कुचला जा रहा है। इस प्रकार यह मानते हुये कि भारतीय स्वतंत्रता का वास्तविक शत्रु आधुनिक सभ्यता है, गाँधी ने आधुनिक सभ्यता से जुडी समस्त वस्तुओं को त्यागने की वकालत की। उनका मानना था कि भारत से ब्रिटिश को भगा देने मात्र से तत्कालीन भारत की बीमारियों से निजात नहीं मिलेगी। गाँधी ने माना कि आधुनिक सभ्यता के सांस्कृतिक खतरे से प्रभावपूर्ण तरीके से निपटने के लिये एक ही तरीका हैं - भारतीयों में व्यक्तिगत नवजीवन का संचार जिसका अर्थ हे भारतीय परम्परा के आध्यात्मिक मूल्यों को आत्मसात करना। ऐसी विधि से ही भारत अपनी खोई हुई आभा व वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता है। ब्रिटिश दासता से भारत को मुक्त कराने का हिंसा या ऐसा कोई और रास्ता नहीं हो सकता।

इस दौरान दक्षिण अफ्रीकी संघ अस्तित्व में आया और 1913 में एक नया संकट उत्पन्न हो गया। दक्षिण अफ्रीका के सर्वोच्च न्यायालय ने सर्ल केस में निर्णय देते हुए केवल ईसाई विवाह को ही दक्षिण अफ्रीका मेंवैध करार दिया। किसी भी अन्य पारम्परिक पद्धति से हुए विवाह को दक्षिण अफ्रीका में अमान्य कर दिया गया। परिणामस्वरूप, गैर ईसाई परम्परा से विवाहित महिलायों को अवैध पत्नी का दर्जा दे दिया गया। जिससे उनके बच्चों का पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार समाप्त कर दिया गया। गाँधी ने सरकार को पत्र लिखकर पूछा कि क्या वह सर्ल के फैसले के अनुसार ही चलेगी या कानून में संशोधन करके भारत में वैधानिक माने जाने वाले

वैधानिक पद्धतियों को भी मान्यता प्रदान करने का इरादा रखती है। शीघ्र ही भारतीय समुदाय ने एक बैठक आयोजित की जिसमें यह चर्चा रखी कि फैसले के विरूद्ध अपील की जाये अथवा नहीं। यह तय हुआ कि दावा करने का विचार फिलहाल छोड दिया जाये। क्योंकि स्पष्ट प्रतीत होता था कि सरकार ऐसे अपमानजनक मामलें में पीडित पक्ष का साथ नहीं देगी। सत्याग्रह अभियान ने एक बार फिर जोर पकडा। अब महिलायें भी इस सघर्ष में

शमिल हुई। उन्होंने बिना अनुमति ट्रांसवाल में प्रवेश किया। लेकिन सरकार ने भी जानबूझ कर उन्हें गिरफ्तार नहीं किया। तब उन्होंने नारेबाजी शुरू की। तब भी सरकार ने उनकी उपेक्षा की। उसे आशा थी कि इससे आंदोलन कमजोर पड जायेगा। इस चुनौती का सामना करने के लिये यह तय किया गया कि फिनिक्स में बचे हुये सदस्य जिनमें अधिकांश महिलायें थी, ट्रांसवाल में प्रवेश करेगें व गिरफ्तारी देगें। साथ ही वे महिलायें जो ट्रांसवाल प्रवेश कर चुकी है पर गिरफ्तार नहीं हुई, वे अब नेटल में प्रवेश करेगी और न्यूकासल कोयला खदान में जायेंगी और यदि तब भी गिरफ्तार नहीं होती है तो वे अनुबंधित भारतीय मजदूरों को हडताल पर जाने के लिये निवेदन करेंगी। जब फिनिक्स सदस्य सीमा पार कर रहे थे और उन्होंने पुलिस को अपनी पहचान बताने से मना कर दिया तब उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और अदालत ने उन्हें तीन माह का कठोर कारावास की सजा सुनाई। इस दोरान महिला दल ने नेटल में प्रवेश किया और न्यूकासल जाकर मजदूरों से हडताल पर जाने की अपील की। जैसे ही महिलाओं ने सरकार की ज्यादतियों की करूण गाथा सुनाई, मजदूर प्रभावित हो गये व उन्होंने हडताल पर जाने का निश्चय कर लिया। महिलाओं की गिरफ्तारी व बाद में जेल में उनके साथ हुये जुल्मों की खबरों ने दक्षिण अफ्रीका व भारत में रह रहे भारतीयों के दिलों में आहत कर दिया।

न्यूकासल कोयला खान मजदूरों ने अपना काम छोडा व सत्याग्रह संघर्ष में शामिल होने का निश्चय किया। उन्होंने अपने मालिकों के जुल्मों को भी बहादुरी से सहा। गाँधी न्यूकासल पहुंचे और उन्हें सलाह दी की वे अपनी बेडियों से मुक्त हों और सत्याग्रह संघर्ष में भाग लें। यह योजना बनी कि सत्याग्रहियों की सेना जिसमें लगभग पाँच हजार कार्यकर्ता होगेंय ट्रांसवाल सीमा को पार करेगी। जब इस कूच की तैयारी चल रही थी, गाँधी को खदान मालिकों की ओर से मामला सुलझाने के लिये मिलने का निमंत्रण मिला। अतः वे डरबन के लिये रवाना हुये। उन्होंने उनसे कहा कि वे अपने प्रभाव का इस्तेमाल करके सरकार से कहे कि तीन पाउंड टैक्स वापिस ले लें। लेकिन इस मुलाकात के कोई उल्लेखनीय लाभ नहीं मिलें। अन्ततः सैनिकों की कूच शुरू हुई। गाँधी ने समस्या हल करने के बहुत प्रयास किये किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। उन्हें दो बार गिरफ्तार किया गया लेकिन दोनों बार उन्हें जमानत पर छोड़ दिया गया। गाँधी जैसे व्यक्ति की गिरफ्तारी से भी सत्याग्रहियों का उत्साह कम नहीं हुआ। उनके अहिंसा व दृढ़ निश्चय ने सरकार को मजबूर किया कि वह उन्हें रोकने क लिये कार्यवाही करें अन्यथा अपना असफलता के लिये अंग्रेज जनता के सामने अपमानित होना पडेगा। छत्तीस मील की आठ दिन लम्बी चलने वाली कूच के चैथे दिन गाँधी को तीसरी बार गिरफ्तार कर लिया गया।

इस दौरान कूच कर रहे सत्याग्रहियों को गिरफ्तार करने की तैयारियां भी चल रही थी। उन पर मुकदमें चलाये गये व उन्हें जेल भेजा गया। कोयला खदान क्षेत्रों को बाहरी जेल घोषित कर दिया गया। और गिरफ्तार सत्याग्रहियों को उनमें काम करने के लिये मजबूर किया गया। काम करने से मना करने वालों पर जुल्म ढाये गये। इन जुल्मों के समाचार प्रेस व जेल के बाहर लोगों द्वारा दूर दूर तक पहुंचाये गये। भारत में दक्षिण अफ्रीका की समस्या सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया। वायसराय लार्ड हार्डिन्ज ने सरकार की कार्यविधि की कडी आलोचना

की और सत्याग्रहियों को उचित ठहराया। अन्य अनुबन्धित भारतीय मजदूरों ने जब आपने भाई-बन्धुओं के साथ अमानवीय व्यवहार की बातें सुनी तो उन्होंने भी सत्याग्रह संघर्ष में कूद पड़ने का निश्चय किया। अब सरकार ने भारतीयों को काम पर लौटने के लिये मजबूर करने के लिये बल प्रयोग करने की ठान ली।

इससे सरकार के विरूद्ध जनमत और प्रबल हो गया। हर तरफ से दबाव पडने पर अन्ततः यह निश्चित हुआ कि तीन सदस्य आयोग नियुक्त होगा जो भारतीय मांगों पर विचार करेगा औरगतिरोध समाप्त करने के लिये उपयुक्त सुझाव देगा। इस समिति में भारतीय तो एक भी नहीं था पर साथ ही तीन में से दो व्यक्ति तो भारत विरोधी विचार रखने के लिये कुख्यात थे। अतः भारतीय समिति ने सरकार के सम्मुख अपना विरोध दर्ज कराया और तो और अधिकांश सत्याग्रही तो अभी भी जेल में थे और उनकी रिहाई की भी मांग की गई। लेकिन जब सरकार ने इन मामलों पर ध्यान नहीं दिया तो गाँधी अपनी योजनानुसार आगे बढ़े।

गाँधी ने एक बार फिर सत्याग्रह कूच की तैयारियां शुरू की। इस दौरान संघीय रेल्वे के यूरोपियन कर्मचारियों ने हडताल पर जाने की योजना बनाई। जब गाँधी से कहा गया कि भारत कूच उसी समय शुरू करें जब रेल्वे की हडताल हो, उन्होंने इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया। उन्होंने कहा कि सत्याग्रह आंदोलन सरकार को परेशान करने वाले किसी समूह के साथ नहीं हैं ऐसी विनम्रता व अहिंसा से युक्त श्रेष्ठ कार्यों के कारण तथा अन्य दबावों के रहते अन्ततः गतिरोध निवारण के लिये अनुकूल वातावरण तैयार हो गया। जनरल स्मट्स व गाँधी के बीच चली वार्ताओं के दौर में एक अन्तरिम समझौता हुआ जिसमें यह सहमति हुई कि सरकार केद सत्याग्रहियों के विरूद्ध मामलें समाप्त कर देगी और भारतीयों की समस्याओं के सम्बन्ध में गठित आयोग के सुझावों के मामलें में आवश्यक कार्यवाही करेगी जिससे भारतीय समुदाय की परिवेदानाओं के निराकरण के सम्बन्ध में कुछ किया जाये। इधर सत्याग्रही अपना आंदोलन स्थगित करेगें और आयोग के मूल प्रस्तावित सदस्यों को स्वीकार करेगें तथा उसके कार्य में कोई रूकावट पैदा नहीं करेगें।

आयोग ने अपनी जाँच पूरी की। अन्य बातों के अतिरिक्त उसने तीन पाऊंड टैक्स समाप्त करने, भारतीय परम्परा से हुये विवाह को मान्यता देने व कुछ अन्य लाभ देने की बात कही। इस रिपोर्ट के जारी होने के कुछ समय बाद ही, संसद में इंडियन रिलीफ बिल प्रस्तुत हुआ। इसमें तीन पाऊंड टैक्स, विवाह, मूल निवास आदि के सम्बन्ध में भारतीय समुदाय की परिवेदनाओं को कम करने की बात थी। प्रशासनिक मामलें, जो इंडियन रिलीफ बिल के अन्तर्गत नहीं आये उनका निराकरण जनरल स्मट्स व गाँधी के बीच हुये पत्र व्यवहार से कर लिया गया। इस प्रकार सत्याग्रह का महान संघर्ष आठ वर्षों में समाप्त हुआ और गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका छोडकर भारत आने का निश्चय किया। वे 18 जुलाई 1914 को दक्षिण अफ्रीका से रवाना हुये तथा लंदन होते हुये 9 जनवरी 1915 को भारत पहुंचे।

इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में गाँधी की सक्रियता यह बतलाती है कि किस प्रकार गाँधी ने सुव्यवस्थित तरीके से भारतीय समुदाय की समस्याओं का हल खोजा। उन्होंने भारतीय समुदाय से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया तथा नेटल भारतीय कांग्रेस का गठन कर इसकी नियमित बैठकें आयोजित की। इससे भारतीय समुदाय में यह जागृति आई कि किस प्रकार जन प्राधिकारी उनके साथ अन्यायपूर्ण, अमानवनीय व उपेक्षापूर्ण व्यवहार करते है। साथ ही हम यह भी देखते है कि किस प्रकार गाँधी ने एक मंच बनाने में मदद की जहाँ से दक्षिण अफ्रीका के उपनिवेशों की सरकारों द्वारा अपनाई जा रही प्रजातीय नीतियों के विरोध व असंतोष के स्वर दिया जा सके। इन प्रयासों से दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीय समुदाय के भिन्न-भिन्न तत्वों को एकीकृत करने में भी मदद मिली। भारतीय समुदाय के बाहर के व्यक्तियों से सम्पर्क का उपयोग उन्होंने इस प्रकार किया कि प्राधिकारियों से भारतीय समुदाय की शिकायतों को कम करने हेतु कुछ अनुकूल निर्णय करवायें। साथ ही उन्होंने भारतीय समुदाय के विरोध को औचित्यपूर्ण सिद्ध करते हुये उनके लिये सहानुभूति बटोरने का प्रयास भी किया। उनके ऐसे निकटस्थ व दीर्घकालीन सम्पर्कों में सफलता के दो कारण थे - उनका व्यक्तिगत चरित्र व वकालत के व्यवसाय में उनके द्वारा सीखे गये सबक। प्यारेलाल लिखतेहैं,"वकालत करते हुए गाँधीजी ने मानव स्वभाव के बेहतर पक्ष को जाना और लोगों के दिलों में प्रवेश करने की कला सीखी। इसने उन्हें सच्चे समझौते के अर्थ और श्रेष्ठता के बारे में सिखाया। गाँधी के हाथों में यह व्यवसाय पारस्परिक तालमेल का एक शक्तिशाली हथियार बन गया और इसका सामुदायिक सेवा के लिये श्रेष्ठ उपयोग हुआ। उन्होंने कभी भी अपने कानूनी ज्ञान का विजय हासिल करने के लिये उपयोग नहीं किया अपितु वे तो समानता व न्याय के आधार पर दोनों पक्षों को साथ मिलाने का प्रयास करते थे।"

इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका जाने से पूर्व गाँधीजी को अश्वेत व्यक्ति के जीवन से जुडे प्रजातीय कलंक के बारें में जानकारी नहीं थी। अपने आगमन के कुछ ही दिनों के अन्दर उन्हें अनेक अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पड़ा। इन अपमानजनक स्थितियों के अनुभवों से उनका दृढ़निश्चय बढ़ा कि उन्हें हटाना है। यह काम उन्हें स्वयं के लिये नहीं अपितु पूरे भारतीय समुदाय के हित में करना था जो इन अपमानों का शिकार था। अच्छी वकालत चल रही थी, स्वयं के भौतिक उन्नयन के प्रयास चल रहे थे किन्तु गाँधी इनसे उपर उठ कर जन सक्रियता के क्षेत्र में आ गये जहाँ उन्होंने सामान्य व्यक्तिव व भारतीयों के सम्मान की रक्षा कार्य के लिये कार्य किया। बाद में उन्होंने परहितार्थ कार्य किये जिनमें कई वर्गों के लोग उनके साथ जुड़े। उनका मानना था कि जनसक्रियता के साथ-साथ होगा। भारतीयों को स्वयं भी पूर्णतः दोषमुक्त बनना होगा - आत्मा व शारीर की चिनताओं से ऊपर उठकर उन्हें सामाजिक हित व आध्यात्मिकता के बारे में सोचना होगा।

4.7 सारांश

जैसे गाँधी आध्यामिक उद्विकास की दिशा में आगे बढे और प्रजातीवाद के विरूद्ध संघर्ष में शामिल होते गये, उनके राजनीतिक दर्शन का क्षेत्र भी परिपक्व होता गया। अन्होंने प्रजातिय पूर्वाग्रह की नैतिक आाधार पर निंदा की ओर जनकार्यकर्ता के रूप में दक्षिण अफ्रीका की स्थानीय सरकारों के विषय में खुल कर अपने विचार प्रकट किये। उन्होंने उनकी भेदवावपूर्ण व अन्यायपूर्ण नीतियों की आलोचना की और उन्होंने इस बुराई के विरूद्ध भारतीय समुदाय को इकट्ठा करने का प्रयास किया। उन्होंने परिवेदनायें व्यक्त करने व उनके निराकरण मांगने के लिये उपलब्ध साधनों का भरपूर प्रयोग किया। चूंकि स्थानीय सरकारें अडियल थी, गाँधी के नेतृत्व में भारतीय समुदाय व स्थानीय सरकारों के बीच आमना सामना अपरिहार्य था। इस झगडे का परिणाम सत्याग्रह के जन्म के रूप में हुआ। सत्याग्रह का दर्शन व सक्रियता महात्मा गाँधी का इस संसार को एक महत्वपूर्ण योगदान है।

4.8 अभ्यास प्रश्न

1. दक्षिण अफ्रीका में अश्वेतों द्वारा झेली गई अन्यायपूर्ण स्थितियों के बारे में लिखें।
2. गाँधीजी के साथ हुये अन्यायपूर्ण व्यवहार की विभिन्न घटनायें लिखें।
3. दुव्र्यवहार की घटनाओं पर गाँधीजी ने किस प्रकार प्रतिक्रिया व्यक्त की।
4. दक्षिण अफ्रीकी संघ के गठन के बाद गाँधीजी की भूमिका व सक्रियता के बारे में चर्चा कीजिये।

4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. एम.के.गाँधी, सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, अनु. वी.जी. देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1972
2. क्लैक्टिड वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, पब्लिकेशन विभाग सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1961
3. प्यारेलाल, महात्मा गाँधी, दी अर्ली फेस, भाग-1, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1965

इकाई - 5

भारत में गाँधी: चम्पारण सत्याग्रह से भारत छोडो आन्दोलन तक

इकाईरूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 चम्पारण सत्याग्रह

5.2.1 चम्पारण समस्या की प्रकृति

5.2.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

5.2.3 चम्पारण सत्याग्रह का महत्व

5.3 खेड़ा सत्याग्रह

5.3.1 कारण

5.3.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

5.3.3 महत्त्व

5.4 अहमदाबाद मिल सत्याग्रह

5.4.1 कारण

5.4.2 गाँधी का योगदान

5.4.3 महत्त्व

5.5 रॉलत सत्याग्रह

5.5.1 सत्याग्रह के कारण व प्रगति

5.5.2 महत्व

5.6 असहयोग आंदोलन

5.6.1 आंदोलन के कारण व प्रगति

5.6.2 असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम

5.6.3 आंदोलन में गाँधी की भूमिका व कार्ययोजना

5.6.4 आंदोलन का महत्व

5.7 बारदोली सत्याग्रह

5.7.1 बारदोली सत्याग्रह के लिये उत्तरदायी कारण

5.7.2 बारदोली सत्याग्रह की प्रगति

5.7.3 गाँधी की कार्ययोजना

5.7.4 सत्याग्रह की प्रगति

5.7.5 सत्याग्रह की महत्व

5.8 सविनय अवज्ञा आंदोलन

5.8.1 सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण

5.8.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति

5.8.3 आंदोलन का महत्व

5.8.4 सविनय अवज्ञा आंदोलन का पुनत्र्थान व प्रगति

5.9 वाइकोम सत्याग्रह

5.9.1 वाइकोम सत्याग्रह के उद्देश्य

5.9.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति

5.9.3 वाइकोम सत्याग्रह में गाँधी का नेतृत्व

5.9.4 सत्याग्रह का महत्व

5.10 भारत छोड़ो आंदोलन

5.10.1 भारत छोड़ो आंदोलन के कारण

5.10.2 आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गाँधी की भूमिका

5.10.3 आंदोलन का महत्व

5.11 सारांश

5.12 अभ्यास प्रश्न

5.13 संदर्भ ग्रंथ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात गाँधी द्वारा भारत में सम्पन्न किये गये विभिन्न सत्याग्रह के बारे में निम्नलिखित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे :-

- चम्पारण सत्याग्रह के कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- खेडा सत्याग्रह के कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- अहमदाबाद सत्याग्रह कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- रॉलत सत्याग्रह के कारण, प्रगति, महत्व व उसमें गाँधी की भूमिका
- असहयोग आन्दोलन कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- बारदोली सत्याग्रह कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कारण गाँधी के विचार एवं कार्य

- वाइकोम सत्याग्रह कारण गाँधी के विचार एवं कार्य
- भारत छोड़ो आन्दोलन के कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य

5.1 प्रस्तावना

दक्षिण अफ्रीका में भारतीय मूल के लोगों की समस्याओं का समाधान करके गाँधी 9 जनवरी 1915 को भारत लौटे। पहुँचने के पष्चात् जब वे अपने राजनीतिक गुरू गोखले से मिले तो उन्होंने गाँधी को कहा कि वे सक्रिय भारतीय राजनीति में आने से पूर्व अपने आप को भारतीय समस्याओं और परिस्थितियों से भली-भाँति परिचित कर लें। गाँधी ने अतः एक साल के लिए अपने आप को इस ध्येय के लिए समर्पित कर दिया। उन्होंने भारत का भ्रमण किया और अनेक लोग, जनप्रतिनिधि तथा विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं में कार्यरत लोगों से मिले। उन्होंने अहमदाबाद में सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की तथा अनेक समारोह में भाग लिया परन्तु गोखले को दिए हुए वचनानुसार विवादास्पद राजनीक विचारों पर चुप्पी साधी। एक साल का समय जैसे-जैसे समाप्त होने को आया तो गाँधी ने भी अपनी चुप्पी तोड़ी और राजनीतिक विषयों पर अपना मत सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करने लगे। अपने आप को सार्वजनिक कार्य के लिए समर्पित करने का मौका गाँधी को 1916 में चम्पारन समस्या ने प्रदान किया।

5.2 चम्पारण सत्याग्रह

5.2.1 चम्पारण समस्या की प्रकृति

बिहार स्थित चम्पारन जिला में कृषकों को नील की खेती से सम्बन्धित अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में चम्पारन में नील की खेती तथा उद्योग का प्रारम्भ हुआ। यूरोपीय उत्पादक जो नील उद्योग से जुड़े थे उनके दबाव में आकर वहाँ 'तीन कथिया' व्यवस्थाअपनाया गया जिसमें कृषकों को अनिवार्य रूप से अपने खेत में कम से कम 20 प्रतिशत कृषि नील उत्पादन के लिए रखना था। नील उद्योग से जुड़े यूरोपीय लोग अथवा उनके प्रतिनिधि कृषकों द्वारा उत्पादित नील को बहुत सस्ते दाम में खरीदते थे और भारतीय कृषकों का अनेक तरीके से शोषण करते थे जिसमें उन्हें अक्सर सरकार की मदद भी मिलती थी। जैसे-जैसे प्राकृतिक नील को अप्राकृतिक नील ने हटाना प्रारम्भ किया तो यूरोपीय लोग जो इस उद्योग से जुड़े हुए थे उन्होंने इस तरह की परिस्थिति में भी अपने स्वार्थपूर्ति हेतु भारतीय कृषकों का नए-नए प्रकार से शोषण करना प्रारम्भ किया। कुल मिलाकर भारतीय कृषकों की स्थिति बहुत ही खराब थी।

तभी राजकुमार शुक्ला नाम के एक अमीर ब्राह्मण कृषक जो चम्पारण निवासी थे गाँधी के पास आए और उनसे चम्पारन चलकर दक्षिण अफ्रीका की तरज पर चम्पारण के कृषकों की समस्याओं को दूर करने की गुहार की। इस

तरह गाँधी ने बिहार के चम्पारण जिले में भारत लौटने के बाद अपना सर्वप्रथम सक्रिय सार्वजनिक कार्य प्रारम्भ किया।

5.2.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

बिहार पहुँचते ही गाँधी तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने में जुट गए। पटना से मुज़फरपुर पहुँचक गाँधी संभागीय आयुक्त मार्शीद से मिले और चम्पारण आने का अपना मकसद बताकर सहयोग की अपेक्षा की। परन्तु मार्शीद का मानना था कि गाँधी नील समस्या के हल में कोई सकारात्मक योगदान दे सकते हैं अपितु उन्होंने तो गाँधी के नेक इरादों को भी शक किया और जिला मजिस्ट्रेट हेकाक को पत्र लिखकर अनुरोध किया कि गाँधी को चम्पारण छोड़ने के न्यायिक आदेश जारी किया गया। गाँधी ने सत्याग्रह करके ऐसे आदेश का पालन करने से इनकार किया और वायसराय महोदय के निजी सचिव को पत्र लिखकर चम्पारण समस्याए इसमें उनके स्वयं के कार्य और अधिकारियों का नाकारात्मक दृष्टिकोण के बारे में स्पष्ट किया। चम्पारण छोड़ने के आदेश से इनकार करने से गाँधी को पता था कि उन्हें गिरफ्तार किया जा सकता है या फिर उन्हें वहाँ से दूर किया जा सकते हैं। मजिस्ट्रेट के सामने गाँधी ने चम्पारण छोड़ने के सरकारी आदेश की अवहेलना करने का कारण स्पष्ट किया और मजिस्ट्रेट ने अपना निर्णय सरकार से वार्ता करने के पश्चात् सुनाने की बात कही।

बिहार के सरकार को इस दौरान यह आभास हुआ कि जिला स्तर पर शासन ने गाँधी के संदर्भ में गलत निर्णय लिए हैं। अतः उसने गाँधी के खिलाफ किए जाने वाले उक्त कार्यवाही को समाप्त करने तथा उनके उपयुक्त सहयोग प्रदान करने के आदेश दिए। गाँधी को भी चेतावनी दी गई कि वे सावधानीपूर्वक कृषकों एवं जनता को उक्साए बिना तथा शाँति को भंग किए बिना अपना कार्य करें।

गाँधी ने पुनः जाँच कार्य प्रारम्भ किया और शीघ्र ही वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि चम्पारण कृषकों का शोषण किया जा रहा है और उनकी स्थिति काफी दयनीय है। नील उत्पादकों के साथ किसी प्रकार का समझौता कर चम्पारण समस्या का निराकरण करने के गाँधी का प्रयास साकार नहीं हो सका। क्रमशः उन्हें यह आभास हुआ कि नील उत्पादक गरीब कृषकों के आधारभूत माँगों को भी स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं और इस कारण कोई भी व्यक्तिगत प्रयास चम्पारण समस्या का निदान करने में सफल नहीं हो सकता। इसलिए गाँधी ने सरकार के हस्तक्षेप से इस समस्या का निराकरण करने के लिए प्रयास प्रारम्भ किया। उन्होंने सम्भागीय, भारत सरकार का भी उन्होंने पत्र लिखकर चम्पारण समस्या की जानकारी दी। सरकार से उन्होंने जाँच आयोग भारत सरकार ने बिहार सरकार को जाँच समिति गठित करने के आदेश दिए तथा गाँधी को भी समिति में सदस्य बनने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। बिहार सरकार ने क्रमशः चम्पारण जाँच समिति का गठन किया।

समिति के जाँच के दौरान गाँधी ने चम्पारण के कृषकों की समस्याओं तथा उनके अधिकारों के हनन तथा नील उत्पादकों के अन्यायपूर्ण और शोषणात्मक व्यवहार के तथ्यात्मक प्रस्तुति कर आग्रह किया कि कृषकों को उनके आधारभूत अधिकार और सुविधाएँ वापिस मिलने चाहिए और इसके लिए न्यायोचित कार्यवाही की जानी चाहिए। समिति ने अन्त में निर्णय लिया कि चम्पारण में अपनष्ट जाने वाले ष्तीन काथिया,व्यवस्था को तुरन्त समाप्त कर देना चाहिए और गरीब किसानों से जो गैर कानूनी वसूली नील उत्पादकों द्वारा किया जा रहा था उसे भी समाप्त कर दिया जाए और किए गए वसूली का 25 प्रतिशत पुनः कृषकों को लौटाया जाए। समिति की सिफारिश को कानून के माध्यम से लागू करने का प्रयास किया गया।

चम्पारण सत्याग्रह का महत्व

इस सत्याग्रह में भारत में सार्वजनिक जीवन के क्षेत्र में गाँधी के सत्याग्रह का प्रारम्भ हुआ। भारत में नेता के प्रति ब्रिटिश सरकार की उदासीनता देख उन्हें काफी दुख हुआ। उनके इस कार्य से भारत में उनकी लोकप्रियता को और बढ़ावा मिला तथा अनेक शुभ सम्बोधन उन्हें प्राप्त हुआ। कांग्रेस के पटल पर भी उनके इस प्रयासों को सराया गया और तालियों से स्वागत किया गया। एक महत्वपूर्ण बात यह भी थी कि इस कार्य में गाँधी ने बिना किसी संस्थागत मदद से समस्या का निराकरण अपने ही ढंग से करने में सफलता प्राप्त की। इसने उनका आत्मविश्वास बढ़ाने का कार्य किया और आने वाले सार्वजनिक जीवन में सत्याग्रह का प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया। स्वतंत्रता आन्दोलन के चलते सत्याग्रह और गाँधी ने नए प्रयोग द्वारा प्राप्त के लिए क्रमशः निषप्रभावी होते हुए उदारवादी और उग्रवादी तरीकों का विकल्प प्रस्तुत कर भारतीयों की उम्मीद जगाने का भी कार्य किया। ब्रिटिश सरकार का गाँधी के साथ सम्बन्ध को प्रभावित करने में भी इस सत्याग्रह ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। सरकार ने ततपश्चात् काफी सोच समझकर सावधानीपूर्वक ही गाँधी के विरूद्ध कार्य करने के लिए कदम बढ़ाने का निर्णय किया। इस सत्याग्रह के माध्यम से गाँधी अपने अन्तरंग अनुयायी और साथी बनाने में सफल हुए जिनके सहयोग एवं समर्थन ने उन्हें स्वतंत्रता आन्दोलन में काफी सम्बल प्रदान किया।

5.3 खेडा सत्याग्रह

5.3.1 कारण

इस सत्याग्रह का केन्द्रीय विषय 1917-18 में फसल की स्थिति कृषि उत्पादन से सम्बन्धित था। अत्यधिक वर्षा ने खरीफ फसलों को काफी नुकसान पहुँचाया था। यद्यपि रबि खेती ने किसानों से इस नुकसान की भरपाई करने में काफी मदद पहुँचाई थी। गुजरात के खेड़ा जिले में रबि फसल में से बहुत कम लाभ प्राप्त हुआ। महामारियों के फैलने से लोगों की परेशानियाँ और बढ़ी। मुसीबतों से झूझते हुए खेड़ा के लोगों ने स्थानीय अधिकारियों में कर अदायगी में रियायत देने का आग्रह किया।

5.3.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

गाँधी के अनुसार स्थानीय अधिकारियों ने कर आँकलन गलत किया था। उन्होंने यह भी कहा कि जनता को जब विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है तो ऐसी अवस्था में यह उनका कानूनी अधिकार है कि उन्हें इस प्रकार की रियायत मिल सके। जब स्थानीय सरकार उनके तथा खेड़ा की जनता की बात मानने के लिए तैयार नहीं हुए तो उन्होंने सरकार को कर नहीं देने के लिए जनता को प्रेरित किया और कहा कि यदि ऐसे सभ्य तरीके से किया जाए तो यह कार्य गैर कानूनी नहीं माना जा सकता है।

4 फरवरी, 1918 को मुम्बई के एक सार्वजनिक मीटिंग में उन्होंने सत्याग्रह प्रारम्भ करने का संकेत दिया। सरकार से उन्होंने सत्याग्रह प्रारम्भ करने से पूर्व इस विवाद के निस्तारण के लिए सरकार से आग्रह किया परन्तु असफल हुए। स्वयं उन्होंने तथ्यों को जानने का प्रयास किया और जब वे आश्वस्त हुए कि खेड़ा कृषकों के समस्या वास्तव में सही है तो उन्होंने सरकार से आग्रह किया कि वह कर वसूली को फिलहाल स्थगित कर दे और एक स्वतंत्रता जाँच आयोग गठित कर तथ्यों को जानने का प्रयास करे। परन्तु सरकार ने गाँधी के इस सुझाव को भी अस्वीकार किया। तभी गाँधी ने 22 मार्च 1918 से सत्याग्रह प्रारम्भ करने का निर्णय किया।

सत्याग्रह का प्रारम्भ इस शपथ से हुआ कि खेड़ा के कृषक निर्धारित कर की अदायगी नहीं करेंगे और शान्तिपूर्वक सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्यवाही को सहेंगे। गाँधी ने खेड़ा कृषकों के लिए जनसमर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया। अखबारों विभिन्न मंचों एवं भ्रमण के माध्यम से गाँधी ने इस सत्याग्रह को प्रभावी बनाने का प्रयास किया। आन्तरिक स्तर पर उन्होंने सत्याग्रह के विभिन्न सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष पर अपने वक्तव्यों और कार्यों से सम्बल प्रदान करने का प्रयास किया। प्रथम विश्वयुद्ध की समस्याओं से प्रभावित ब्रिटिश सरकार भारत की जनता के विरूद्ध टकराव की स्थिति को त्याग कर युद्ध में उनका सहयोग प्राप्त करने का इच्छुक था। इसलिए उसने प्रान्तीय सरकार को आदेश दिया कि वह इस सम्बन्ध में राज्य के हितों को ध्यान में रखते हुए समस्या का निदान करने के लिए आवश्यक कार्यवाही करे। क्रमानुसार यह निर्देश जिला प्रशासन तक पहुँचा और जिला कलक्टर महोदय ने कुछ रियायतों की घोषणा की तथा अधिकारियों को निर्देश दिया कि कर वसूली करते वक्त कृषकों के साथ सहानुभूतिपूर्वक कार्य करें।

5.4 अहमदाबाद सत्याग्रह

5.4.1 कारण

अहमदाबाद के मिलों में काम करने वाले मजदूरों को दिए जाने वाला महंगाई भत्ता इस विवाद का केन्द्रीय विषय था। अगस्त 1917 में प्लेग जैसे महामारी के दौरान मजदूरों को मिलों में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए मिलों के मालिकों ने मजदूरों को बोनस प्रदान किया था। जनवरी 1918 में स्थिति के सामान्य होने

पर मालिकों ने यह बोनस बन्द करने का निर्णय किया। मजदूरों का कहना था कि विश्वयुद्ध की बढ़ती सम्भावनाओं के कारण सभी आवश्यक वस्तुओं की कीमत दुगनी से भी ज्यादा हो गई है और इसलिए जो बोनस उन्हें मिल रहा था उसका 50 प्रतिशत राशि श्रमिकों को महंगाई भत्ता के रूप में दिया जाए।

5.4.1 गाँधी का योगदान

गाँधी अब तक न केवल गुजरात में अपितु सम्पूर्ण भारत के महत्वपूर्ण सार्वजनिक कार्यकर्ता के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुके थे। अम्बालाल साराबाई नाम के प्रसिद्ध उद्योगपति गाँधी से मिले और उनसे अनुरोध किया कि वे मजदूरों और अहमदाबाद मिल मालिकों के मध्य उत्पन्न विवाद को समाप्त करने में मदद करें। गाँधी ने सहमति व्यक्त करते हुए जाँच कार्य प्रारम्भ किया। वह मिल मालिक एवं मिलों में कार्य करने वाले श्रमिकों के प्रतिनिधियों से मिले और दोनों पक्ष के लोगों को अधिग्रहण समिति को विवाद सौंपने और निस्तारण करने के लिए तैयार किया। जहाँ गाँधी शंकरलाल बेंकर एवं वल्लबभाई पटेल मजदूरों का प्रतिनिधित्व इस बोर्ड में कर रहे थे वहीं अम्बालाल साराबाई, जगाभाई दलपतभाई और चन्दूलाल मालिकों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे।

अधिग्रहण समिति का कार्य प्रारम्भ ही हुआ था कि कुछ मिलों के मजदूरों ने हड़ताल पर जाने का निर्णय लिया। मिल मालिक ऐसे निर्णय से बहुत नाराज हुए और उन्होंने यह निर्णय लिया कि वे अधिग्रहण समिति के निर्णय को स्वीकार नहीं करेंगे। 22 फरवरी 1918 से मिल मालिकों ने मिलों की तालाबन्दी करना प्रारम्भ किया। उन्होंने यह भी निर्णय लिया कि वे उन सभी श्रमिकों की सेवाएँ समाप्त कर देंगे जो 20 प्रतिशत अतिरिक्त वेतनभत्ता लेकर काम पर पुनः नोट कर नहीं आते हैं। 12 मार्च 1918 को जब मिल मालिकों ने तालाबन्दी समाप्त कर मिलों को चालू करने का प्रयास किया तो मजदूरों ने उसी दिन से अपना असन्तोष व्यक्त करने के लिए हड़ताल पर जाने का निर्णय किया।

गाँधी ने जाँच के पश्चात् पाया कि 35 प्रतिशत वेतन वृद्धि श्रमिकों के लिए न्याय सम्मत मांगा है, और उन्हें इस न्यूनतम न्याय सम्मत वृद्धि के लिए ही मांग करना चाहिए। यहा मांग श्रमिकों को गाँधी द्वारा दिलाए गए शपथ का मूल तत्व बन गया। जब मिल मालिकों ने इस मांग को अस्वीकार किया तो गाँधी श्रमिकों का नेतृत्व करते हुए उनसे सत्याग्रह करने को कहा। गाँधी श्रमिकों के घर-घर जाकर उन्हें सत्याग्रह के लिए तैयार किया। सार्वजनिक मंच एवं अपने लेखन के माध्यम से भी गाँधी ने श्रमिकों को इस संदर्भ के लिए जागृत किया। अहमदाबाद की सड़कों में श्रमिकों का जुलूस निकाला गया। सत्याग्रह का शपथ प्रत्येक दिन के बैठकों में दोहराया गया और संघर्ष की प्रगति सम्बन्धित सूचनाओं को प्रसारित किया गया। बैठकों में उत्पन्न होने वाले समस्याओं के बारे में भी विचार-विमर्श किया गया। गाँधी ने श्रमिकों को हड़ताल के दौरान कोई वैकल्पिक काम ढूँढ कर रोजी-रोटी कमाने का परामर्श दिया। श्रमिकों को स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के बारे में भी गाँधी ने उपदेश दिए।

कुछ समय बाद जब कुछ श्रमिकों ने अपने आप को हड़ताल में सहयोग करने के लिए असमर्थ पाया तो उन्होंने 20 प्रतिशत महंगाई भत्ता पर ही मिलों में लौटकर कार्य करना चाहा तो गाँधी काफी क्षुब्ध हुए। उन्होंने श्रमिकों से पुनः अपील करते हुए कहा कि वे अपने मूल मांगों पर अड़े रहे और सत्याग्रह जारी रखें।

15 मार्च, 1918 को गाँधी ने एलान किया कि वे तब तक उपवास रखेंगे जब तक कि सभी श्रमिक मिलों में जाना बन्द नहीं करते। उनके उपवास के तीसरे दिन मिल मालिकों का नेतृत्व कर रहे अम्बालाल साराबाई ने मालिकों की तरफ से श्रमिकों को 35 प्रतिशत वेतन वृद्धि देने का प्रस्ताव रखा और गाँधी को उनकी मदद करने के लिए आग्रह किया।

समस्या के निदान के लिए अधिग्रहण समिति स्थापित करने के लिए गाँधी ने अपनी स्वीकृति प्रदान की। गुजरात महाविद्यालय के उपप्राचार्य प्रोफेसर आनन्दशंकर ध्रुव को अधिग्रहण अधिकारी के रूप में दोनों पक्ष द्वारा स्वीकार किया गया और तीन महीने के अन्दर अपने निर्णय सुनाने का आग्रह किया। गाँधी ने अपना उपवास समाप्त करने की घोषणा की और श्रमिकों ने गाँधी को क्रतज्ञता ज्ञापित करते हुए मिठाईयाँ बाँटी।

5.4.3 महत्त्व

अहमदाबाद सत्याग्रह से गाँधी को गुजरात में और अधिक सम्बल प्राप्त हुआ। जहाँ खेड़ा ने उन्हें एक सशक्त देहाती और कृषक आधार प्रदान किया वहीं अहमदाबाद ने उन्हें एक सशक्त शहरी और श्रमिक आधार प्रदान किया। मिल मालिकों को भी समस्या से संतोषजनक निदान प्राप्त हुआ और उनके तथा गाँधी के सम्बन्धों में किसी प्रकार की कड़वाहट भी उत्पन्न नहीं हुई। श्रमिकों एवं उद्योगों के क्षेत्र में भी सत्याग्रह के माध्यम से समस्याओं का निराकरण हो सकता है यह इस सत्याग्रह द्वारा सिद्ध हो गया। अहमदाबाद सत्याग्रह में उनके द्वारा अपनाया गया उपवास भविष्य में सार्वजनिक राजनीतिक आन्दोलन में भूख हड़ताल का द्योतक था।

5.5 रॉलत सत्याग्रह

ब्रिटेन पर प्रथम विश्व युद्ध का दबाव व भारत के प्रति उसकी नीति ने गाँधी को राष्ट्रीय स्तर का नेता बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। युद्ध मे उलझा ब्रिटेन भारत पर अपनी पकड मजबूत करने का मार्ग खोज रहा था क्योंकि यह उसका सर्वाधिक सम्पन्न उपनिवेश था। अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिये उन्होंने दमनात्मक समझौते की नीति का पालन किया। इस प्रकार एक तरफ तो वे भारतीयों के बढ़ते असंतोष के कारण सत्ता हस्तांतरण की योजना बना रहे थे व साथ ही इस तरीके से भारतीयों मे अपने ऐसे समर्थको को आकर्षित कर रहे थे जो उनके शासन को स्थायित्व दे सके। दूसरी तरफ वे उन भारतीयों के विरूद्व दमनात्मक नीति अपना रहे थे जो उनकी सत्ता को चुनौती दे रहे थे।

5.5.1 सत्याग्रह के कारण व प्रगति

दमनात्मक तरीकों के माध्यम से रॉलत अधिनियम ने भारत में ब्रिटिश शासन के सुदृढ़ीकरण की दिशा मे एक कदम और आगे बढाया। रॉलत विधेयक के माध्यम से सरकार अपराध व विद्रोह पर नियन्त्रण करना चाहती थी। सरकार ने इस विधेयक का यह कहते हुए पक्ष लिया कि यह तो एक निरोधात्मक कार्यवाही है जिसका उपयोग तभी होगा जब गवर्नर जनरल यह समझेंगे कि भारत के अमुक भाग में क्रान्तिकारी गतिविधियों से प्रशासन को खतरा है। अंग्रेजो ने यह भी दावा किया कि इस अधिनियम का दुरूपयोग रोकने के लिये एक जाँच अधिकारी नियुक्त किया जायेगा जो लोगों के विरूद्ध इस प्रकार के आदेशों की जाँच करेगा। तथापि भारतीय इसे स्वतन्त्रता, न्याय व नागरिको के मूलभूत अधिकारों के सिद्वान्तों के विरूद्ध मानतें थे। वे यह भी मानते थे कि ब्रिटिश सरकार युद्ध से पूर्व किये गये वादों से पीछे हट रही है तथा वह भारत को वास्तव में स्व-शासन देने की इच्छा नहीं रखती है।

सभी तत्कालीन राजनेताओं ने सरकार के इस कार्य की सर्वसम्मति से निंदा की। लेकिन विरोध करने के पारम्परिक तरीकों की सीमाओ के कारण वे ब्रिटिश सरकार की दमनात्मक कार्यवाही का प्रभावपूर्ण तरीके से सामना करने की रणनीति नहीं बना सके। इस राजनीतिक गतिरोध को दूर करने के लिये गाँधी ने सत्याग्रह को अपनाने की बात कही।

रॉलत विधेयक के सम्बन्ध में सरकार की कार्यवाही से गाँधी जी बेहद आहत थे। उन्होंने माना कि यह विधेयक न केवल न्यायविरूद्ध है अपितु ब्रिटिश प्रशासन की दमनात्मक नीति का प्रमाण है। ऐसे स्वेच्छाचारी व तानाशाह शासन का विरोध करना भारतीयो के लिये खुली चुनौती है। ऐसा कहते हुए उन्होंने सरकार को चेतावनी दी कि यदि वह इस क्रूर विधेयक की दिशा में आगे बढ़ी तो एक बडा आंदोलन किया जायेगा।

24 फरवरी 1991 को 'सत्याग्रह प्रतिज्ञा' तैयार की गई। इसमें रॉलत विधेयक को अनुचित व स्वतन्त्रता व न्याय के सिद्वान्तों के विरूद्ध मानते हुए इसे व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों को छीनने वाला माना गया। अतः गाँधी ने कहा कि यदि यह विधेयक कानून बन जाता है तो इसका सविनय उल्लंघन किया जायेगा और ऐसा तब तक किया जायेगा जब तक कि इसे वापिस नहीं ले लिया जाता। इस प्रतिज्ञा में यह भी कहा गया कि विरोधकत्र्ता सत्य और अहिंसा का पालन करेंगे। यह विधेयक यदि अधिनियम बन जाता है तो गाँधी ने सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करने का इरादा भी व्यक्त किया।

उन्होंने सरकार से रॉलत विधेयक पर पुनर्विचार करने की अपील की। मार्च के महीने में प्रेस, बैठकों, पर्चो आदि के माध्यम से रॉलत विधेयक व इसके अनुचित पक्षों के बारे में विस्तृत प्रचार प्रसार किया गया। एक सत्याग्रह सभा की स्थापना की गई और आंदोलन चलाने के लिये इसका मुख्यालय बम्बई रखा गया। एक सत्याग्रह

समिति भी नियुक्त की गई जिसका कार्य सविनय अवज्ञा हेतु कानूनों का चयन करना था। 30 मार्च 1991को एक हडताल का आव्हान किया गया। बाद में इसे 6 अप्रेल 1919 के लिये स्थगित कार दिया गया। गाँधी ने इस दिवस को, अपमान व प्रार्थना दिवस, के रूप में मनाने की अपील की। साथ ही प्रत्येक सत्याग्रही के लिये आवश्यक था कि वह 24 घंटे का उपवास रखकर सविनय अवज्ञा के लिये अनुशासन बनाये। वे जो इस प्रतिज्ञा या उपवास के लिये तैयार नहीं थे उन्हे भी इसमें भाग लेने की अनुमति इस शर्त पर दी गई कि वे सत्य-पालन की शपथ लेगें तथा किसी भी परिस्थिति में हिंसा का सहारा नही लेगें।

दुर्भाग्य से सूचना के प्रभावी प्रसार की कमी के कारण दिल्ली के कुछ इलाकों में 30 मार्च को ही हडताल कर दी गई। सडकों पर प्रदर्शन हुए व दुकानें बंद करा दी गई। हिंसा व उपद्रव की घटनायें हुई। पुलिस ने गोलीबारी की व कुछ लोगों की जानें गई। गाँधी ने सरकारी कार्यवाही की निदां की और सत्याग्रहियों को यह निर्देश दिए कि वे हर स्थिति में सत्य का पालन करेगे व शान्ति और व्यवस्था बनाये रखेगें। भारत के अन्य इलाकों में 6 अप्रेल को हडताल की गई। बम्बई में गाँधी ने एक बड़ी सभा को सम्बोधित किया और सत्याग्रह के अनेक पक्ष पर विस्तार से चर्चा की। अनेक पत्र पत्रिकाओं, जन सम्बोधनों व प्रेस विज्ञप्तियों के माध्यम से गाँधी ने सत्याग्रहियों को अनेक दिशा निर्देश दिये।

बम्बई की सत्याग्रह सभा ने प्रतिबन्धित साहित्य व समाचार पत्रों के पंजीकरण से संम्बन्धित कानूनों का उल्लंघन करने सम्बन्धी निर्देश जारी किये। प्रचार के लिये गाँधी के 'हिन्द स्वराज' 'सर्वोदय या यूनिवर्सल डॉवन, 'स्टोरी ऑफ ए सत्याग्रही' तथा 'लाईफ एंड ड्रेस ऑफ मुस्तफा कमाल पाशा' को चुना गया। गाँधी के 'सत्याग्रह'का प्रथम संस्करण बिना पंजीकरण के ही जारी हुआ। गाँधी जी ने पत्रिकाओं में अपने लेख की एक श्रृंखला के माध्यम से लोगों को स्वदेशी की अवधारणा के बारे में बताया तथा साम्प्रदायिक सौहार्द बनाये रखने पर बल दिया। उनहोने यह भी बतलाया कि चुनिंदा कानूनों को किस प्रकार सविनय, साहसपूर्वक व अहिसंक रूप से उल्लंघन किया जाये।

गाँधी ने दिल्ली जाने का निश्चय किया ताकि वे वहाँ जाकर 30 मार्च की घटना के शिकार लोगों को शांत कर सकें व उनके प्रति सहानुभूति व्यक्त कर सके। अप्रेल 1919 को दिल्ली जाते समय ही उन्हे आदेश मिला जिसमें उनके पंजाब व दिल्ली जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। जब गाँधी ने आदेश मानने से इंकार किया तो उन्हे गिरफ्तार कर बम्बई भेज दिया गया जहाँ उन्हे छोड़ दिया गया।

गाँधी की गिरफ्तारी का समाचार आग की तरह फैला। उनकी गिरफ्तारी का विरोध करने के लिये 10 अप्रेल को पूरे भरत में हड़ताल करने की योजना बनाई गई। लेकिन इस हड़ताल में अहमदाबाद, अमृतसर जैसे कुछ स्थानो पर आगजनी, उपद्रव व हिंसा की घटनायें हुई। कुछ यूरोपिय लोगों को मार दिया गया तथा सरकारी सम्पत्ति को क्षति पहुंचायी। पुलिस ने जब गोलीबारी की तो कुछ भारतीयों को जान गवांनी पड़ी। पंजाब में गाँधी की

गिरफ्तारी व पंजाब के दो प्रमुख नेताओं डॉ. सत्यपाल व डॉ. किचलु की गिरफ्तारी व निर्वासन की कार्यवाही एक साथ हुई। इन गिरफ्तारियों का व मिकेल ओ डायर के सैनिक शासन की दमनकारी कार्यवाहियों का विरोध करने के लिये लोगों ने प्रदर्शन किये व जुलूस निकाले। जन विद्रोह, पुलिस गोलाबारी व कई यूरोपियन्स के मारे जाने की घटनायें हुई। अमृतसर के जलियांवाला बाग में लगभग दस हजार लोग एकत्रित हुए। वे अपने नेताओं की गिरफ्तारी व ओ डायर के निरंकुश शासन का विरोध कर रहे थे। ब्रिगेडियर जनरल डायर, जिसकी कमाण्ड में सेना की टुकडी ने जनहिंसा को सफलतापूर्वक कुचला था, ने सभा को तितर बितर करने की ठानी। वह अपने सेना के साथ बाग तक गया और बिना चेतावनी के उसने गोलाबारी शुरू कर दी। इस भयावह कार्यवाही के परिणामों ने भारतीयों को हिला कर रख दिया। इसी प्रकार बम्बई, वीरम्गाम व नदियाड़ मे भी उपद्रव हुए। पत्थरबाजी, सार्वजनिक भवनों को जलाने व टेलीफोन की लाईने काटने की घटनाये भी हुई।

सत्याग्रह की हिंसात्मक घटनाओं से आहत गाँधी ने 18 अप्रेल 1919 को सत्याग्रह स्थगित कर दिया। उन्होंने सत्याग्रह के प्रयास को एक बड़ी गलती माना व तीन दिन के प्रायश्चित उपवास की घोषणा की । उन्होंने सत्याग्रहियो को भी उपवास रखने व अपना अपराध स्वीकार कारने की सलाह दी। उन्होंने महसूस किया कि लोग सत्याग्रह के लिये अभी उचित रूप से तैयार नहीं है। उन्होंने निश्चय किया कि भविष्य में ऐसा आंदोलन चलाने के पूर्व वे एक ऐसे स्वयंसेवकों का दल बनायेंगे जो सुप्रशिक्षित होगें, निर्मल मन के होगें तथा सत्याग्रह के मूल भाव को समझते होगें। इस प्रर उन्होंने स्वयंसेवकों का दल बनाया और लोगों को सत्याग्रह का अर्थ और उसके प्रयोग के बारे में प्रशिक्षित किया।

रॉलत सत्याग्रह बीच में ही समाप्त कर दिये जाने के कारण अपने स्वाभाविक परिणाम तक नहीं पहुँच सका व अपने उद्धेश्यो को प्राप्त नही कर सका। किन्तु सत्याग्रह के माध्यम से लोगों की तीव्र प्रतिक्रिया को देखते हुए सरकार ने दूसरे रॉलत विधेयक का विचार त्याग दिया व सामान्य अपराधिक कानून में स्थायी परिवर्तन लाना चाहा। रॉलत सत्याग्रह गाँधी के सत्याग्रह के आदर्श सिद्वान्तों से अत्यधिक विचलित हो गया। इन घटनाक्रमों से गाँधी बेहद आहत हुए तथा उन्होंने रॉलत सत्याग्रह चलाने में अपनी गलती स्वीकार की।

5.5.2 महत्व

रॉलत सत्याग्रह ने भारत में गाँधी की राजनीतिक प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने स्वयं को अखिल भारतीय स्तर के एक सशक्त नेता के रूप में स्थापित किया। उन्होंने सत्याग्रह के माध्यम से राजनीतिक स्तर पर बने गतिरोध को दूर करने का एक अलग तरीका बतलाया जो भारतीयों की आकांक्षाओं व ब्रिटिश सरकार के अडियलपन को देखते हुए यथोचित था। निरकंश सत्ता के विरोध की तकनीक के रूप में गाँधी के निर्देशन में सत्याग्रह अनेक स्थानीय परिवेदनाओं को व्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम बन गया तथा साम्राज्यवादी सरकार से सभ्य व्यवहार की अपेक्षा के साथ एक साथ जुड़ गये।

सत्याग्रह के दौरान घटी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं ने गाँधी के अखिल भारतीय नेतृत्व की खामियों को उजागर किया। अपनी शक्ति व कमजोरियों के प्रति सजग रहते हुए गाँधी ने राजनीति में सक्रिय व प्रत्यक्ष भूमिका निभाने का निश्चय किया ताकि वे भारत को अपने आदर्शो के अनुरूप लक्ष्यों की ओर ले जा सकें। अमृतसर में आयोजित कांग्रेस में गाँधी की मनः स्थिति स्पष्ट हुई। उन्होंने स्वयं माना कि अमृतसर में कांग्रेस में उनकी भागीदारी कांग्रेस राजनीति में उनका वास्तविक प्रवेश है। इस प्रकार वे न केवल कांग्रेस के मंच पर अपितु भारत के नेतृत्व के स्पष्ट भागीदार बन गये।

5.6 असहयोग आन्दोलन

5.6.1 आंदोलन के कारण व प्रगति

रॉलत सत्याग्रह के बाद गाँधी ने भारतीय राजनीति में प्रत्यक्ष व सक्रिय भूमिका निभाई 1 दिसम्बर 1919 के शाही घोषणा व सुधार अधिनियम को शासन व शासित के बीच एक नये युग का सूत्रपात माना गया। रॉलत सत्याग्रह को समाप्त करने में यह भी गाँधी के लिये एक प्रेरक कारक था। इससे गाँधी के मन में आशा की किरण जगी और उन्होंने माना कि भारत में ब्रिटिश शासक ब्रिटेन की व्यवस्था के स्वाभाविक आदर्शो के अनुरूप कार्य करेगें। यही आशा उनके ब्रिटिश शासन के प्रति निष्ठा के मूल मे थी। इसीलिये उन्होंने शाही घोषणा व सुधारो को ब्रिटिश आदर्शो के अनुरूप माना और उन्होंने अपेक्षा की कि भारतीय संदर्भ में ब्रिटिश शासक भारतीयों के साथ न्याय करेंगे। उन्होंने भारतीयोंसे कहा कि वे सुधारों को सफल बनाने में सरकार का सहयोग करें और साथ साथ अपनी अपूर्त आकांक्षाओ को प्राप्त करने की दिशा में कठोर परिश्रम भी करें।

लेकिन अंग्रेजो ने गाँधी की आशाओं को फिर से झूठा साबित किया। वे मुसलमानों को किया गया वादा भी न निभा सके जिसमें उन्होंने तुर्की साम्राज्य के संदर्भ में व वहाँ के शासक जिसे खलीफा या मुसलमानों के धार्मिक नेता के रूप में मान्यता के संदर्भ में था। साथ ही हण्टर आयोग की रिपोर्ट जिसमें पंजाब में अपराध के दोषी प्राधिकारियों को बरी किया गया था तथा भारतीयो को स्वराज देने की माँग के संदर्भ मे की गई प्रार्थनाओ व विरोधो को मानते हुए भारतीय आकांक्षाओ के अनुरूप एक जिम्मेदार सरकार की भूमिका निभाने मे असफल होने पर गाँधी की आशाये धूमिल हो गई। इन घटनाओ ने अंग्रेजो के लोकतान्त्रिक आदर्शो में विश्वास होने के दावो को खोखला साबित किया। साथ ही न्यायोचित्त व्यवहार व व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सिद्वान्तो का घोर उल्लंघन परिलक्षित हुआ। वे केवल ब्रिटिश के निजि औपनिवेशिक हितो को स्थायी रखना चाहते थे व भारत मे अपना एकछत्र राज्य बनाये रखना चाहते थे क्योंकि यह उनके औपनिवेशिक हितो की रक्षा के लिये अपरिहार्य बन चुका था।

भारत मे खिलाफत समस्या अंग्रेजों द्वारा भारतीय मुसलमानों से किये गये वादे से पीछे हटने के कारण हुई। मुसलमानों ने विश्व युद्व में ब्रिटेन का साथ इस वादे के साथ किया था कि मुसलमान धार्मिक प्रमुख या खलीफा, जो तुर्की शासक भी था, के साथ अच्छा व्यवहार होगा। किन्तु हस्ताक्षरित युद्व विराम की शर्तो के अनुसार खलीफा की शक्तियों को काफी कम कर दिया गया और तुर्की साम्राज्य में भारी कटौती भी की गई।

तुर्की मामले में की गई कार्यवाही को मुस्लिम समुदाय ने वादाखिलाफी तो माना ही पर साथ ही यह लार्ड एक्विथ व लियोर्ड जार्ज जैसे जिम्मेदार ब्रिटिश राजनेताओं की पूर्व में की गई खुली घोषणाओं और वादों को भी झूठा साबित करती है। एक साथी नागरिक के रूप में गाँधी ने भी मुसलमानों के विचारों से सहमति व्यक्त की। उन्होंने अंग्रेजो द्वारा खिलाफत मामले में की गई कार्यवाही को अनुचित माना और सरकार से कहा कि खिलाफत के संदर्भ में मुसलमानों की परिवेदनाओं का उचित समाधान निकालें।

खिलाफत मामले के संदर्भ में परिवेदनाओं के निराकरण के प्रयासों को संस्थागत करते हुए केन्द्रीय खिलाफत समिति का गठन किया गया जिसका मुख्यालय बम्बई रखा गया। प्रारम्भिक अवस्था में इसकी गतिविधियाँ सुविचारित व नरम रही। मुसलमानों की आकांक्षाओं व खतरों को व्यक्त करने के लिये यदा-कदा सभायें हुई। 19 मार्च 1919 को बम्बई खिलाफत समिति ने संकेन्द्रित कार्ययोजना के अनुसार कार्य करने का प्रस्ताव पारित किया। इसने पूरे भारत में बड़े आंदोलन चलाये। इसके लिये उसने उत्तर भारत के अतिवादी सर्व-इस्लामिस्ट से सहयोग प्राप्त किया। 21 सितम्बर को लखनउ में अखिल भारतीय खिलाफत सम्मेलन का आयोजन हुआ। इस सम्मेलन में सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह हुआ कि 17 अक्टूबर 1919 को खिलाफत दिवस के रूप में मनाया जायेगा।

इस दौरान गाँधी ने खिलाफत मामले में हिन्दुओ व मुसलमानों को संघटित करने का प्रयास किया। उन्होंने कुछ हिन्दु व मुसलमान नेताओं से निकट सम्पर्क बनाने का प्रयास किया, बम्बई में खिलाफत सभा कोसम्बोधित किया और लखनऊ सभा में 17 अक्टूबर 1919 को खिलाफत दिवस मनाने की घोषणा का स्वागत किया। उन्होंने इस सुझाव को विस्तार देते हुए हिन्दुओं व मुसलमानों से कहा कि इस दिवस पर वे प्रार्थना, उपवास व हड़ताल का आयोजन करें। केन्द्रीय प्रान्त व बम्बई, मद्रास तथा बंगाल की प्रेसिडेन्सी में बड़ी संख्या में हिन्दु व मुसलमान संघटित हुए ताकि इस दिवस को सफल बनाया जा सके। दिल्ली जैसे कुछ स्थानो पर हिन्दु मुस्लिम भाईचारे के अद्भुत दृश्य देखने को मिले।

नवम्बर में दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय खिलाफत सम्मेलन में खिलाफत आंदोलन को विशेष बल मिला। सम्मेलन में उग्र खिलाफत समर्थको का नियन्त्रण था। सम्मेलन में पारित एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव के अनुसार यदि सरकार खिलाफत मामले में उपेक्षा का व्यवहार जारी रखती है तो वे सरकार के साथ असहयोग करेगें। असहयोग के प्रश्न पर विचार करने के लिये एक उपसमिति का गठन किया गया। अपने भाषण में गाँधी ने

इस विचार का समर्थन किया। दिसम्बर 1919 के अन्त में दोनों अलि बन्धुओ व मौलाना अब्दुल कलाम आजाद को रिहा कर दिया गया। खिलाफत मामले में अपने उग्र विचारों के कारण वे यू.पी. व बंगाल जैसे प्रान्तो के उग्र खिलाफत समर्थकों के नजदीक आये। उदारवादियों ने खिलाफत आंदोलन पर धीरे-धीरे अपना नियन्त्रण खो दिया। यू.पी. के उग्र प्रतिनिधि, उलेमा व पत्रकार अब नेतृत्व करने लगे। इस परिवर्तन के साथ आंदोलन प्रादेशिक केन्द्र से बढ़कर छोटे कस्बों व गाँवों तक फैल गया।

दिसम्बर 1919 के अन्त में दूसरा खिलाफत सम्मेलन अमृतसर में आयोजित हुआ। इसमें कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग दोनों ने भाग लिया। यहाँ यह प्रस्ताव पारित हुआ कि वायसराय के सम्मुख एक प्रतिनिधिमण्डल भेजा जायेगा जो खिलाफत संबंधित मांग उनके समक्ष प्रस्तुत करेगा। वायसराय ने मुस्लिम भावनाओं के प्रति सहानुभूति व्यक्त की। यद्यपि उन्होंने इस मामले में अपनी ओर से प्रयास करने का आश्वासन दिया तथापि उन्होंने शान्ति सम्मेलन के बारे में संकेत दिया कि यह खिलाफत आंदोलनकारियों की सभी मांगो को स्वीकार करने में समर्थ नहीं है। गाँधी ने ऐसे अस्पष्ट आश्वासनों की निंदा की। उन्होंने कहा कि भारतीय केवल सर्वोत्तम प्रयासों के आश्वासन मात्र नहीं चाहते। वे चाहते है कि उनके शासक उनकी भावनाओं को समझे और उनकी परिवेदनाओ के निराकरण व उनकी आकांक्षाओ को पूरा करने के पूरे पूरे प्रयास किए जाए।

खिलाफत पर अगला अखिल भारतीय सम्मेलन बम्बई में 15 से 17 फरवरी 1920 तक हुआ। उग्र वर्ग की ओर से दबाव था कि ब्रिटिश माल का बहिष्कार किया जाये व सरकार से सहयोग वापिस लिया जाये। कुछ उग्रवादी तो इतने हताश हो गये कि उन्हे लगा कि खिलाफत समस्या का हल नरम विरोध से सम्भव नहीं है। उन्होंने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध कठोर कदम उठाने की माँग की। इस प्रकार बंगाल खिलाफत समिति ने एक और खिलाफत दिवस मनाने का प्रस्ताव पारित किया। कुछ ने मुसलमानों से अंग्रेजो के प्रति निष्ठा त्यागने की बात कही, दूसरों ने अंग्रेजो के विरूद्ध जिहाद या धर्मयुद्ध छेडने की बात कही। 7 मार्च 1920 को गाँधी ने खिलाफत परिवेदनाओ के निराकरण के सम्बन्ध में अपनी योजना प्रस्तुत की। उन्होंने 19 मार्च 1920 को खिलाफत दिवस मनाने का सुझाव दिया और उस दिन हड़ताल करने की वकालत की। उन्होंने उस दिन हिंसा से दूर रहने पर विशेष बल दिया। उन्होंने बहिष्कार करने या मिश्र जैसे अन्य प्रश्नो को इस आंदोलन में मिलाने से बचने की बात कही। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि उन्होंने कहा कि यदि दूसरे खिलाफत दिवस के बाद भी यदि उनकी मांगे नहीं मानी जाती है तब वे असहयोग का सहारा ले। उन्होंने क्रमिक असहयोग का सुझाव दिया यह सुझाव भी दिया गया कि भारतीय पहले अपनी उपाधियां व पुरस्कार लौटायेंगे तत्पश्चात् कोर्ट की सदस्यता व राजकीय सेवा से त्याग पत्र दे और अन्ततः कर चुकाने से मना करें।

14 मई 1920 को शान्ति समझौते के प्रकाशन ने उग्रवादी खिलाफत आंदोलनकारियो की इस आशंका को सही साबित किया कि खिलाफत मामले में नरम विरोध निष्फल ही साबित होगा और खिलाफत परिवेदनाओंके

निराकरण के लिये कठोर कदम उठाना अत्यावश्यक है। शान्ति शर्तो को गाँधी ने भारतीय मुसलमानों पर कुठराघात बताया। साथ ही न्याय पाने के लिये उन्होंने असहयोग की वकालत की। केन्द्रीय खिलाफत समिति ने वायसराय के पास फिर एक प्रतिनिधिमण्डल भेजा जिसने यह संदेश दिया कि शान्ति शर्ते भारतीय मुसलमानों को स्वीकार्य नही है और यह चेतावनी भी दी कि यदि शान्ति शर्तो में संशोधन नहीं किया गया तो मुसलमान हिन्दुओ के साथ मिलाकर 1 अगस्त 1920 से असहयोग आंदोलन चलायेगे।

जून 1920 में पंजाब में आम असन्तोष व जलियाँवाला बाग नरसंहार के कारणों की जाँच से सम्बधिकअधिकारिक रिपोर्ट साम्राज्यवादी सरकार ने प्रकाशित की। अब तक गाँधी पंजाब मामले को खिलाफत मामले में मिलाने के पक्ष में नही था। उन्होंने अन्य नेताओं को भी ऐसे मामलों को खिलाफत के साथ जोडने से रोका था। अन्य नेताओ के समान मैंकल ओ डायर के नेतृत्व में दमनकारी सैनिक शासन व पंजाब में हिंसात्मक घटनाओ को देखकर गाँधी भी द्रवित थे। लेकिन अन्य राष्ट्रीय नेताओं के विपरीत गाँधी ने सैनिक शासन में की जा रही कार्यवाहियो पर कभी टिप्पणी नहीं की। बिना प्रमाण राजकीय कार्यो की आलोचना करने के स्थान पर गाँधी ने पंजाब में दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं की अधिकारिक जाँच की मांग करते हुए बार-बार अभियान चलाये। जब सरकार ने पंजाब की घटनाओं की जांच के लिये हण्टर समिति की नियुक्ती की घोषणा की तो गाँधी उत्साहित हुए। कुछ भारतीयो में असंतोष था क्योंकि वे इसके सदस्यगण से असंतुष्ट थे और कुछ भारतीयों की मांग थी कि यह आयोग राजशाही कमीशन होना चाहिये। गाँधी ने उन्हे सलाह दी कि इस पर भरोसा रखे और इसके सम्मुख प्रमाण प्रस्तुत करें ताकि यह हो चुके अन्य का निराकरण कर सके।

पंजाब में हुई घटनाओं की जांच के लिये नियुक्त कांग्रेस उप समिति के गाँधी भी एक सदस्य थे। इस समिति के माध्यम से गाँधी को पूरे मामले का प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त हुई। अन्ततः जब साम्राज्यवादी सरकार ने हण्टर आयोग की रिपोर्ट प्रकाशित की तो उसे पढकर गाँधी बहुत द्रवित हुए। आयोग ने पंजाब की घटनाओ पर लीपापोती कर पाश्विक अपराध के दोषी प्राधिकारियों को दोषमुक्त कर दिया था। इससे उनकी यह मान्यता, कि अंग्रेज न्यायपंसद है, भंग हो गई और उन्होंने घोषणा की कि भारतीय इस प्रकार की निन्दात्मक कार्यवाहियां सहन नहीं करेगे। उन्होंने कहा किउनके विचार से अब समय आ गया है कि भारतीय प्रभावपूर्ण कार्यवाही के लिये संसद में पेश याचिकाओं पर ही निर्भर रहना छोड़ दें। आवश्यक हो तो संसद मे अपील करे किन्तु यदि संसद उन्हें निराश करे और यदि उन्हें स्वयं को राष्ट्र कहलाने में सक्षम समझते है तो उन्हें सरकार से समर्थन वापिस ले लेना चाहिये। इस प्रकार जब गाँधी ने देखा कि अंग्रेज शासकीय अराजकता की अनदेखी कर रहे है और बाग में हुए भयंकर नरसंहार की लीपापोती कर रहे है तो उन्होंने जून 1920 में पंजाब व खिलाफत मामलों को जोड़ दिया और ब्रिटिश सरकार के साथ असहयोग करने के लिये इन्हे मुख्य आधार बना दिया। सितम्बर 1920 मे कलकत्ता में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस के विशेष सत्र में खिलाफत व पंजाब के मामलों को तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा स्वराज की मांग की उपेक्षा को असहयोग आंदोलन के मुख्य कारण घोषित कर दिया। इस सम्बन्ध में

प्रस्ताव भी पारित किया गया। कलकत्ता में आयोजित कांग्रेस के विशेष सत्र में पारित प्रस्तावों को बाद में दिसम्बर 1920 में नागपुर में आयोजित वार्षिक सत्र में पुष्ट कर दिया गया।

5.6.2 असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम

असहयोग आंदोलन का एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया तथा लोगो को इस बारे में शिक्षित करने के प्रयास किये गये। असहयोग आंदोलन में कुछ नकारात्मक व कुछ सकारात्मक कार्यक्रम थे तथा अंतिम हथियार के रूप में सविनय अवज्ञा की चेतावनी थी। गाँधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सात सूत्री असहयोग आंदालन कार्यक्रम बनाया जिसे हम नकारात्मक असहयोग कार्यक्रम कह सकते है। ये सात सूत्री कार्यक्रम थेः-

1. सरकार द्वारा प्रदत्त उपाधियों व सम्मानजनक पदों को लौटाना व राकीय सेवाओं से त्यागपत्र देना।
2. सरकारी या अनुदानित विध्यालय एवं महाविध्यालयों का बहिष्कार।
3. 1919 के अधिनियम में प्रस्तावित चुनावों का बहिष्कार।
4. ब्रिटिश द्वारा भारत में स्थापित अदालतों का बहिष्कार।
5. विदेशी माल व व्यापार का बहिष्कार।
6. सरकारी कार्यक्रमों का बहिष्कार।
7. ब्रिटेन की अन्तर्राष्ट्री गतिविधियों के प्रति असहयोग।

असहयोग आंदोलन के सकारात्मक असहयोग कार्यक्रम कुछ इस प्रकार थे:-

1. सूत कातना व खादी का प्रचार।
2. छुआछुत उन्मूलन।
3. अन्तरवैयक्तिक विवादों को सुलझाने के लिये पारम्परिक पंच सस्थांओं की स्थापना।
4. राष्ट्रीय विध्यालय व महाविध्यालयों की स्थापना।

यदि असहयोग आंदोलन के उद्धेश्य इन कार्यक्रमों से प्राप्त नहीं होते हैं तो अन्तिम हथियार के रूप में सविनय अवज्ञा को अपनाने की बात कही गई। गाँधी ने नये वाइसराय लार्ड रीडिंग को लिखे पत्र में सारी स्थिति को स्पष्ट कर दिया।

5.6.3 आंदोलन में गाँधी की भूमिका व कार्ययोजना

गाँधी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इस प्रकार पुनर्गठित करने का प्रयास किया कि इसमें सभी का अधिक से अधिक प्रतिनिधित्व हो। गांवो व छोटे कस्बों से भी कांग्रेस के सदस्य जोडे गये तथा वार्षिक सत्रों के बीच में भी सतत रूप से ठीक ढंग से कार्य हुए।

गाँधी ने भारतीय जनता को 'एक वर्ष में स्वराज'का वादा किया यदि वे असहयोग आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेते है। लेकिन उन्हे शान्तिपूर्ण व वैधानिक तरीके अपनाते हुए बडे से बड़े बलिदान के लिये साहस व तत्परता दिखाने पर भी बल दिया गया।

गाँधी ने अनेक राष्ट्रीय नेताओं के साथ पूरे भारत का दौरा किया और लोगों को असहयोग आंदोलन के बारे में बतलाते हुए उन्हे इसमें भाग लेने के लिये प्रेरित किया। गाँधी ने स्वयं को प्राप्त दक्षिण अफ्रीकी युद्व पदक व केसर-ए-हिंद स्वर्ण पदक लौटा दिये और कहा कि वे ब्रिटिश सरकार के प्रति सम्मान भाव अब नहीं रखते है क्योंकि वह अपनी अनैतिका के पक्ष में गलती पर गलती किये जा रही है। गाँधी का अनुसरण करते हुए अनेक नेताओ व अन्य भारतीय व्यक्तियों ने ब्रिटिश उपाधियां लौटा दी और अहिसंक असहयोग आंदोलन के विभिन्न कार्यक्रमों में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया। इस मामले में सरकार की प्रतिक्रियायें असफल रही चाहे प्रारम्भ में हस्तक्षेप न करने की नीति हो या बाद में आंदोलन बंद करने के लिये प्रमुख नेताओं का तुष्टिकरण के प्रयास हो। अन्ततः सरकार बलप्रयोगके लिये मजबूर हुई। इसके अन्तर्गत अहिंसक असहयोगी आन्दोलनकारीयों के विरूद्ध हिंसा व उनकी गिरफ्तारी की गई। स्वैच्छिक संगठनो को अवैध धोषित कर दिया गया। जन सभाओं व जुलूसों को बलपूर्वक तितर बितर किया गया। सामूहिक गिरफ्तारियां की गई व गिरफ्तार लोगों के साथ बर्बरता अत्याचार किये गये।

दिसम्बर 1920 में आयोजित कांग्रेस के नागपुर सत्र से दिसम्बर 1921 में आयोजित अहमदाबाद सत्र तक कुल एक वर्ष बीत चुका था और गाँधी के 'एक वर्ष में स्वराज'के वादे के पूर्ण होने के कोई संकेत नहीं थे। कांग्रेस के सदस्यों में असन्तोष था, लोगों में बैचेनी थी तथा वे गाँधी की आलोचना कर रहे थे। कुछ राष्ट्रवादी विद्रोह करना चाहते थे। लेकिन गाँधी स्वराज प्राप्ति के लिये हिंसात्मक साधनों के पक्ष में नहीं थे। वह अपनी पूर्व मान्यता पर अडिग थे कि स्वराज प्राप्ति के लिये हिंसा का रास्ता नहीं हो सकता। उन्होंने बार-बार सत्याग्रह संघर्ष के आत्मशुद्धि पक्ष पर ध्यान आकर्षित किया था। सरकारी हिंसा व दमन के बीच अहिंसा पर अडे रहकर उन्होंने अपने ऊपर लगे कायरता के आरोपो को भी झुठलाया। उन्होनें स्पष्ट किया कि यदि असहयोग आंदोलन हिंसक हो जाता है तो वे इसको बंद करने का पूरा प्रयास करेगें और इसे पूरे राष्ट्र में फैलने से रोकेगें। बम्बई के गेट वे ऑफ इंडिया पर प्रिंस ऑफवेल्स के आगमन पर 17 नवम्बर 1921 को आयोजित सरकारी समारोह में यूरोपिय लोग, पारसियों व अन्य पर हुए हमलों की भी उन्होंने निंदा की। गाँधी ने भारतीयों से व्यक्तिगत अपील करते हुए

ऐसे हिंसात्मक कार्यो से दूर रहने को कहा और जब तक ये उपद्रव समाप्त नहीं हो गये तब तक उपवास रखा जो पाँच दिन तक चला।

यद्यपि भड़की हिंसा के कारण गाँधी ने सविनय अवज्ञा कार्यक्रम स्थगित कर दिया तथापि कांग्रेसी कार्यकत्त्ताओं व दिसम्बर 1921 व जनवरी 1922 में स्वयंसेवकों की गिरफ्तारी व मुकदमेबाजी के कारण गाँधी को सविनय अवज्ञा पर अपने पक्ष पर पुनर्विचार करना पड़ा। लेकिन राष्ट्रव्यापी सविनय अवज्ञा के स्थान पर बारदोली, गुजरात में एक सीमित अवज्ञा आंदोलन चलाने का निश्चय किया ताकि वे कार्यकत्ताओं की गतिविधियोंपर व्यक्तिगत निगरानी रख सकें। 1 फरवरी 1922 को वाइसराय को लिखे अपने पत्र में गाँधी ने इस निर्णय से अवगत कराया और उन्हे भारतीयों के विरूद्ध सरकार द्वारा की जा रही दमनात्मक कार्यवाही को सात दिन में रोकने का समय दिया।

दुर्भाग्य से 5 फरवरी 1922 को चोरी चैरा में असहयोग आंदोलनकारियों व पुलिस के बीच हिंसक मुठभेड़ हुई। यह संयुक्त प्रांत के गोरखपुर जिले का एक छोटा सा गांव था। इस हिंसात्मक घटना का समाचार गाँधी के पास तीन दिन बाद पहुँचा तो वे बेहद आहत हुए। उन्होंने कहा कि भारत अभी सविनय अवज्ञा के लिये तैयार नही है और बारदोली में सविनय अवज्ञा का विचार त्याग दिया। 24 फरवरी 1922 को दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की सभा में गाँधी के कहने पर एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें चैरी चैरा घटना की निंदा की गई, भारत मे हर जगह पर चल रहे जन सविनय अवज्ञा आंदोलन को स्थगित कर दिया गया और रचनात्मक कार्यक्रमों पर जोर दिया गया। इस प्रकार 24 फरवरी 1922 को असहयोग आंदोलन औपचारिक रूप से समाप्त हुआ।

5.6.4 आंदोलन का महत्व

यद्यपि असहयोग आंदोलन अपने उद्धेश्यों को प्राप्त नहीं कर सका तथापि यह आंदोलन गाँधी व भारत दोनों के लिये महत्वपूर्ण था। गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस वास्तव में राष्ट्रीय व जन आंदोलन बन गया। कांग्रेस पर गाँधी का नियन्त्रण हुआ तथा और स्वतन्त्रता आंदोलन को गति मिली। गाँधी ने लोगो में राष्ट्रीयता की भावना जागृत की। उन्होंने माना कि गाँधी का स्वराज का वादा पूरा हो सकता है और उन्होंने गाँधी के आव्हान पर राष्ट्रीय आंदोलन में उत्साह से भाग लिया। सरकारी आदेशो की आलोचना या अवहेलना करने पर होने वाली सरकारी दमनात्मक कार्यवाही का डर लोगों के दिमाग से निकल गया। साधारण व गरीब लोग भी बडे से बडे बलिदान के लिये साहस व तत्परता का परिचय देने लगे। इस आंदोलन ने इस तथ्य को फिर से पुष्ट किया कि विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सत्याग्रह का माध्यम महान् सम्भावनाओं से परिपूर्ण है तथा सत्याग्रह की सक्रियता व भावना को सरकारी पारम्पारिक तरीकों से नही दबाया जा सकता। स्वराज प्राप्ति के लिये गाँधी द्वारा शुरू किये गये अहिंसक सत्याग्रह आंदोलन का भारत की ब्रिटिश सरकार के पास कोई जवाब नही था।

5.7 बारडोली सत्याग्रह

भारत में ब्रिटिश शासन के औपनिविशिक हितो के कारण सरकार का मुख्य ध्यान राजस्व पर था और वह भारतीय लोगो की आवश्यकता पर बहुत कम ध्यान देती थी। भारतीय किसानों के भूमि सम्बन्धी हितो की भी यही स्थिति थी। परिणामतः भारत के अनेक हिस्सों में भूमि सम्बन्धी असन्तोष उभर रहा था। गुजरात के सूरत जिले में बारडोली तालुक में किसानो द्वारा यह असन्तोष खुल कर व्यक्त किया गया और गाँधी के सत्याग्रह तकनीक से इसको हल करने की मांग की गई।

5.7.1 बारडोली सत्याग्रह के लिये उत्तरदायी कारण

1927 में सरकार ने बारडोली तालुक में राजस्व निर्धारण 22 प्रतिशत बढ़ाने का निश्चय किया। बारदोली में किसान असन्तोष का यह प्रमुख व प्रारम्भिक कारण था। बारडोली के किसानों का कहना था कि यह बढोतरी अनुचित है क्योंकि टैक्स अधिकारी बिना ढंग से जांच किये गलत रिपोर्ट तैयार किया गया है जिससे सरकार टैक्स बढा सके। किसानो ने बढे हुए टैक्स देने में असमर्थता व्यक्त की।

5.7.2 बारडोली सत्याग्रह का कार्यक्रम

1920-22 के असहयोग आंदोलन के दौरान गाँधी ने बारदोली को एक आदर्श स्थान के रूप में चयनित किया था जहाँ प्रथमतः सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाया जायेगा। तत्पश्चात् अन्य स्थानो पर असहयोग आंदोलन के उद्धेश्यों की प्राप्ति के लिये ऐसे ही कार्य किये जायेगें किन्तु चैरी चैरा की हिंसात्मक घटना के कारण फरवरी 1922 में यह निर्णय रद्द कर दिया और असहयोग आंदोलन ही स्थगित कर दिया। 1927 में बारडोली में किसान आंदोलन के कारण गाँधी फिर परिदृश्य में आये और 12 फरवरी 1928 को उन्होंने बारडोली में सत्याग्रह शुरू करने के संकेत दिये। यद्यपि उन्होंने बारडोली सत्याग्रहियों का प्रत्यक्ष नेतृत्व नहीं किया तथापि वे यंग इंडिया में लेख लिखकर अपने विचार व्यक्त करते रहे तथा अभियान का समर्थन करते रहे। वे अभियान की पूरी सूचना रखते थे। यद्यपि गाँधी जी अभियान को निर्देशित व प्रेरित करते रहते थे तथापि वल्लभ भाई पटेल ने अब्बास तैयब जैसे साथियों के साथ प्रत्यक्ष नेतृत्व सम्भाला। अब्बास तैयब गाँधी के साथ दक्षिण अफ्रीका में काम कर चुके थे। बारडोली तालुक व आस पास के लोगो ने इस आंदोलन में उत्साह से भाग लिया। न केवल पुरूषों ने अपितु महिलाओं ने भी आंदोलन मे भाग लिया व अलग अलग स्थानो पर नेतृत्व किया। अनेक गांवो के मुखिया व प्राधिकारियों ने भी अपने सरकारी पद त्याग कर अभियान में भाग लिया। सत्याग्रह कैम्प स्थापित किये गये, प्रतिदिन समाचार बुलेटिन जारी किये गये, सूत कातना व अन्य रचनात्मक गतिविधियां शुरू की गई, जनसभायें की गई, गीतो की रचना कर उन्हे गाया गया, प्रार्थनायें की गई, गाँधी की आत्मकथा में से चुनिंदा अनुच्छेदो को सभाओं में पढा गया। ग्रामीण बुजुर्गो व प्राधिकारियों को सत्याग्रहियो का साथ देने को कहा गया

राजस्व अधिकारियों से कर जमा न करने के लिये कहा गया। ग्रामीणों ने अपने औजारों को खोल कर छिपा दिया और जब प्राधिकारी या पुलिस उनकी सम्पत्ति जब्त करने व उसे बेचने का प्रयास करती तो ग्रामीण हिंसा का सहारा कदापि नहीं लेते थे। समझाइश वाले तरीको के साथ-साथ सामाजिक बहिष्कार के माध्यम से भी लोगों को सत्याग्रह के साथ जुडने के लिये प्रेरित किया गया।

5.7.3 गाँधी की कार्ययोजना

गाँधी ने बारडोली के किसानों का समर्थन किया व माना कि उनकी मांगे न्यायोचित है। इसके समर्थन में उन्होंने कुँजरू, वजी व अमृतलाल ठक्कर द्वारा की गई बारडोली जांच की ओर इशारा किया। उन्होंने सत्याग्रहियों को सदा सर्तक रहने की पूर्व चेतावनी दी और बारडोली सत्याग्रह के प्रति निष्ठा बनाये रखें। सत्याग्रह की तकनीक का गुणगान करते हुए उन्होंने सत्याग्रह कर रहे किसानों का मनोबल बढाया। साथ ही उन्होंने सत्याग्रह के आधारभूत नैतिक मूल्यों के साथ सतत रूप से जुडे रहने को कहा। उन्होंने लोगों से बारदोली अभियान का समर्थन करने की अपील की और सत्याग्रह आंदोलन का समर्थन करने बाहर से आये लोगों के प्रयासों को भी सराहा। आंदोलन के बारे में फैलाई जा रही दुर्भावनापूर्ण अफवाहों को भी उनहोने दूर करने का प्रयास किया और खुली चुनौती दी कि कोई भी बारडोली सत्याग्रह आंदोलनसे सम्बन्धित हिसाब किताब का लेखा परीक्षण कर अपने संदेहों का दूर कर सकता है।

विरोध कर रहे सत्याग्रहियों पर सरकारी कार्यवाही की धमकी पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए गाँधी ने कहा कि सैकड़ो-हजारों लोग सत्याग्रही बन रहे है। करो या मरो का भाव लेकर आने वाले इन सत्याग्रहियों पर सरकारी धमकियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला। ये वो लोग है जो मृत्यु के भय से मुक्त है, धन-सम्पत्ति का मोह त्याग चुके है और आत्म सम्मान को सर्वोपरि मानते है। साथ ही उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि सरकार के रोष से नाराज न हों और सदा सत्य के मार्ग पर चलें। उन्होनें आंदोलन का समर्थन किया व कहा कि सत्याग्रहियों की शिकायतों को सुनने के लिये एक स्वतन्त्र व निष्पक्ष समिति बने व उनके साथ न्याय करे तथा संघर्ष के संदर्भ में गिरफ्तार हुए सत्याग्रहियों को रिहा करने सम्बन्धी शर्तो को लागू करें, संघर्ष के दौरान जब्त भूमि लौटाई जाये और लोगो को हुए नुकसान का पुर्नभरण करे। उन्होंने कहा कि यदि सरकार ये मांगे मान लेती है तो लोग अपना बकाया राजस्व नियमपूर्वक जमा करायें। उन्होंने कहा कि सरकार इस आंदोलन से सबक ले की वह सत्य व अंहिसा पर टिके लोगो के विरूद्ध नहीं जा सकती। ऐसी स्थिति में उसे लोगों के साथ सहयोग करके उनकी सद्भावना प्राप्त करे व अपना जनाधार मजबूत करें। इसी प्रकार बारडोली के लोग भी आंदोलन से सबक लें कि जब तक वे अहिंसा पर अडिग रहेंगे प्राधिकारियों या किसी से भी डरने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार संगठित हो अहिंसा पर अडिग रहने की भावना संयुक्त प्रयास से रचनात्मक कार्यक्रमों में संलग्न रहकर विकसित की जा सकती है।

5.7.4 सत्याग्रह की प्रगति

सरदार पटेल के नेतृत्व में सत्याग्रह आंदोलन अपनी मूल मांगो पर अडा था कि जांच समिति का गठन हो। बाद में मांग थी कि सत्याग्रह में भाग लेने वाले लोगों की जब्त भूमि व सम्पत्ति छोडी जाये और कैद सत्याग्रहियों को रिहा किया जाये। ऐसे में सरकार ने बल प्रयोग का मानस बनाया। सूरत में अडियल प्राधिकारियों को नियुक्त करने, पटेल जैसे प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार करने, सत्याग्रह कैम्पों को जब्त करने व सेना की मदद माँगने जैसे कार्यो का सरकार ने विचार बनाया।

ऐसी परिस्थितियों में, विशेषतः जब सरदार पटेल के गिरफ्तार होने की आशंका थी, गाँधी 2 अगस्त 1928 को बारडोली आ गये ताकि सरदार पटेल के गिरफ्तार होने की स्थिति में वे नेतृत्व सम्भाल सकें। सत्याग्रह आंदोलन के समर्थन में बम्बई विधान परिषद, सेन्ट्रल असेम्बली व ब्रिटिश संसद में स्वर सुनाई दिये। यद्यपि वाइसराय इरविन व गवर्नर विल्सन जाँच कराने या टैक्स के पुराने दरों को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे तथापि 6 अगस्त 1928 को सरकार अन्ततः झुक गई। उसने विज्ञप्ति जारी कर बताया कि बढ़े हुए करों के मामले की जांचके लिये कमेटी बनाई जायेगी जिसे ब्रूमफील्ड समिति कहा गया। सरकार जब्त भूमि को छोडने, सत्याग्रही कैदियों को रिहा करने वाले राजस्व अधिकारियों को बहाल करने के लिये सहमत हो गई। बदले में सरदार पटेल ने वादा किया कि किसान पुरानी दरो पर निर्धारित कर जमा करायेगें। इस प्रकार बारडोली सत्याग्रह का अन्त हुआ। इधर किसानों ने पुरानी दरो पर भू राजस्व चुकाना शुरू किया उधर आर.एस. ब्रूमफील्ड और आर.एम. मैक्सेल की ब्रूमफील्ड समिति बारडोली के किसानों की अधिकतर मांगे मान ली और नयी भू राजस्व दरें प्रस्तावित की जिससे किसान सरदार पटेल व गाँधी सभी सन्तुष्ट हुए।

5.7.5 सत्याग्रह का महत्व

सत्याग्रह की सफलता ने भारत के लोगों मे उत्साह भर दिया। पहली बार सत्याग्रह को इतने बडे स्तर पर परखा गया। बारदोली के पूरे तालुक ने इस आंदोलन मे प्रत्यक्ष भाग लिया और उन्हे समर्थन देश के अन्य हिस्सों तथा दक्षिण अफ्रीका से भी मिला। इसकी सफलता ने सिद्ध किया कि यदि लोग अडिग हो तथा हिंसा या उपद्रव के मार्ग पर न चलें तो अन्ततः ब्रिटिश सरकार भारतीयों की मांगो के आगे झुकेगी। इससे न केवल बारडोली अपितु पूरे भारत के किसानो का मनोबल बडा तथा आशा की किरण जगी। यह आंदोलन पूर्णरूप से गाँधी सत्याग्रह के मूलभूत नियमो के अनुसार चला। इस आंदोलन ने यह बात पुष्ट की कि गाँधी ने 1922 में असहयोग आंदोलन के दौरान बारडोली का ही चुनाव करके सही ही किया। बारदोली अभियान उनकी अपेक्षाओं पर खरा उतरा और इसकी सफलता से गाँधी व कांग्रेस निश्चित रूप से प्रभावित हुए कि सविनय अवज्ञा को राष्ट्रीय स्तर पर परखा जाये और इसके शीघ्र बाद ही गाँधी ने 1930 में सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू कर दिया।

5.8 सविनय अवज्ञा आंदोलन

गाँधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन 1930 में नमक कानून का विरोध करने के लिये शुरू किया था। यह कानून भारत में ब्रिटिश शासन की अनेक बुराईयों में से एक था। इस आंदोलन की औपचारिक शुरूआत 12 मार्च 1930 को गाँधी द्वारा नमक सत्याग्रह के प्रारम्भ के साथ ही हुई।

5.8.1 सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण

अपने शोषक औपनिविशिक हितों की रक्षा की नीति पर चलते हुए ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों के दमन व उपेक्षा का भाव जारी रखा। अतः भारत में असन्तोष व्यापक था जबकि 1920 का दशक समाप्ति की ओर था। ऐसी सरकार पर नकेल डालने के लिये कोई भी राजनीतिक दल सक्षम नही था और न ही कोई दल भारतीय आम जनो में पनप रहे असन्तोष को रोक सकती थी। सरकार ने 1919 के सुधारों की प्रगति के बार में रिपोर्ट तैयार करने व सवैधानिक सुधारों के बारे मे सुझाव देने के लिये साइमन कमीशन को नियुक्त किया। इस नियुक्ति को लेकर भी आम तौर पर रोष था। 1928 की नेहरू रिपोर्ट में भारत को स्वतंत्र उपनिवेश बनाने की माँग का समर्थन अंग्रेजों ने नहीं किया। कांग्रेस के अन्दर युवा वर्ग भारतीय आवश्यकताओ के आगे सरकार को झुकाने व दबाव बढाने के लिये अधिक कारगर उपाय करने की माँग करने लगा। वे स्वतन्त्र उपनिवेश के स्थान पर भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता के पक्ष में थे।

1929 की लाहौर कांग्रेस ने अपनी कार्यकारी समिति को अधिकृत कर दिया कि पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लक्ष्य के लिये सविनय अवज्ञा आंदोलन चला सकती है। गाँधी ने लार्ड इरविन को लिखे अपने पत्र में ग्यारह सूत्री न्यूनतम मांगो को पूरा करने की माँग की ताकि कांग्रेस को पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये शुरू किये जा रहे सविनय अवज्ञा आंदोलन को रोका जा सके। 14-16 फरवरी 1930 को कांग्रेस की कार्यकारी समिति ने अहमदाबाद के साबरमती आश्रम में सभी की व गाँधी को सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने के लिये पूर्णतः अधिकृत कर दिया। नमक सत्याग्रह का तात्कालिक लक्ष्य नमक अधिनियम की अवज्ञा कर ऐसे कानून को हटाने की मांग थी जो समस्त भारतीयों, विशेषतः गरीबों के लिये मुश्किलों से भरा था।

सरकार द्वारा पारित नमक अधिनियम भारत में तैयार नमक पर कर लगाने के बारे में था। इसक माध्यम से सरकार भारत में उत्पादित नमक पर पूर्ण नियन्त्रण व एकाधिकार करना चाहती थी। बिना लाइसेन्स प्राप्त किये नमक उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। इस कानून का उल्लंघन करने पर उत्पादित नमक जब्त करने व छः माह की कैद का प्रावधान था।

गाँधी ने कहा कि सरकार का ऐसा अधिनियम प्रत्येक भारतीय पर प्रतिकूल असर डालेगा। गरीबों पर तो यह कुठराघात था। उन्होंने कहा कि इन कानूनों के कारण गांव बरबाद हो चुके है और बेरोजगारी बढने से गरीबों की दुर्दशा बढ़ी है। उनके अनुसार यह एक घोर अमानवीय कर है।

आंदोलन के दीर्घकालीन उद्देश्यों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि गाँधी जी ने भारत में ब्रिटिश की बुराईयों पर वार करके इन बुराईयों को तत्काल हटाने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि औपनिवेशिक शासन के शोषण के कारण भारतीय गरीबी की ओर बढ रहे है। इसने उन्हे राजनीतिक दासता के स्तर पर ला कर खड़ा कर दिया है। इसने भारतीय संस्कृति की जड़ों को हिला दिया है तथा भारतीय आध्यात्मिकता का भी अपमान किया है। अब और इन्तजार करना और सरकारी की बुराईयों का मूक दर्शक बने रहना पाप होगा। अहिंसक सविनय अवज्ञा चलाते हुए गाँधी को आशा थी कि सरकार को बुराई के रास्ते से हटाने में वे सफल होगें। उन्हे आशा थी कि सरकार उनकी अपील पर सकारात्मक प्रतिक्रिया करेगी। उन्होंने सरकार को चेतावनी दी कि ऐसा न होने पर उनके पास नमक कानून तोडने के रूप में सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं होगा। नमक कानून तोडने की कार्ययोजना व प्रस्तावित तिथि सरकार को प्रेषित कर दी गई।

5.8.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति

गाँधी जी की पहल पर सरकार ने सकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। बल्कि उन्होंने तो खेद व्यक्त करते हुए दावा किया कि इससे कानून का उल्लंघन होगा व आम शान्ति भंग होगी।

परिणामतः गाँधी ने अपनी योजनानुसार आगे बढने का निश्चय किया कि अहमदाबाद का साबरमती आश्रम प्रारम्भ बिन्दु होगा जहाँ से वह 240 मील दूर दाण्डी समुद्र तट की और बढेगा। अपने चुनिंदा सत्याग्रहियों के साथ वे वहाँ नमक का उत्पादन करेंगे और इस प्रकार नमक कानून का उल्लंघन करेगें। चुने हुए सत्याग्रहियों को उन्होंने भावी रणनीति के बारे में दिशा निर्देश दिये। लोगो को उन्होंने समझाया कि किस प्रकार नमक कानून तोड़ा जा सकता है। इस कार्यवाही के साथ साथ वे शराब व विदेशी कपडों की दुकान के आगे धरना दे सकते हैं, कर जमा कराने से मना कर सकते है, अदालतों का बहिष्कार कर सकते है, मुकदमेबाजी से दूर रहे व अन्ततः सरकारी पदों से त्यागपत्र दे सकते है। उनका विशेष आग्रह सत्य और अहिंसा के रास्ते पर चलने का था। उन्होंने लोगों को सावधान किया कि वे गुस्से मे आकर कुछ न करें। उन्होंने संकेत दिया कि ऐसे उल्लंघन वाले कार्यो पर सरकार दमनात्मक कार्यवाही तो करेगी ही किन्तु लोग न तो डरें और न ही प्रतिकार करें। उनका तर्क था कि सत्य और अहिंसा मे जो शक्ति है उससे सरकार पशोपेश मे पड़ जायेगी और अन्ततः उसे अपने बुरे कार्य छोडनें पडेगें। उन्होंने कहा कि सरकार द्वारा गिरफ्तारी किये जाने पर लोग कांग्रेस कार्यसमिति से दिशा निर्देश ले सकते है। चुने हुए सत्याग्रही स्वयंसेवकों को गाँधी ने निर्देश देते हुए बताया कि उन्हे सत्याग्रह प्रयाण के दौरान क्या करना है।

उन्होंने स्वास्थ्य एवं भोजन सम्बन्धी निर्देश दिये। उन्होंने केवल उन स्वयंसेवकों को चुना जो शारीरिक श्रम व मानसिक सहनशक्ति में श्रेष्ठ है।

इस दौरान कांग्रेस कार्यकारीं समिति ने सभी कांग्रेसियों व लोगों से कहा कि सत्याग्रह संघर्ष में हर सम्भव सहयोग करें। साथ ही अहिंसा व्रत के पालन पर भी बल दिया गया। गाँधी द्वारा नमक कानून तोडने के बाद कांग्रेस ने सदस्यों व जनता से कहा कि गाँधी जी का अनुकरण करें। राष्ट्रीय, प्रान्तीय व स्थानीय स्तरों पर नेतृत्व की वैकल्पिक व्यवस्था की गई। पटेल को प्रयाण कर रहे सत्याग्रहियों के आगे चलने के लिये चुना गया। मिलने वाले लोगों को उन्होंने आंदोलन के लक्ष्यों के सम्बन्ध मे शिक्षित किया। उन्होंने उनसे शराब से दूर रहने, छुआछूत छोडने और रचनात्मक कार्य करने का निवेदन किया।

12 मार्च 1930 को प्रातः लगभग 6:30 बजे गाँधी ने रामधुन के साथ प्रसिद्व डांडी मार्च शुरू की। गाँधी आगे आगे और सत्याग्रही उनके पीछे थे। मार्ग में पड़ रहे गांवो के लोगों से गाँधी ने बात की और सैंकडो-हजारो लोगों को स्वराज के लिये भारतीय आंदोलन में साहस और अहिंसा के साथ भाग लेने के लिये प्रेरित किया।

5 अप्रेल 1930 को गाँधी डांडी पहुँचे। अगले दिन 6 अप्रेल 1930 को प्रातः 6:30 बजे दाण्डी के समुद्रतट पर पहुँचे, एक मुट्ठी नमक उठाया और प्रतीकात्मक रूप से नमक कानून का उल्लंघन किया। कुछ देर बाद अन्य स्वयंसेवकों को निर्देश दिया गया कि गाँधी का अनुसरण करें। फिर क्या था, संकेत मिलते ही देश भर में नमक कानून तोड़ा गया।

शुरू में सरकार ने दमनात्मक नीति नहीं अपनाई और हस्तक्षेप नहीं किया। उन्हे आशा थी कि गाँधी जी लोगों को संघटित करने में सफल नहीं होगें। नमक कानून का उल्लंघन करते ही उन्होंने गाँधी को गिरफ्तार नहीं किया। भारतीय सरकार ने अपने अधीनस्थ अधिकारियों को सलाह दी कि आम गिरफ्तारियों से बचें, न्यूनतम बल प्रयोग करें, यदि आवश्यक हो तो नेताओं की गिरफ्तारी प्राथमिकता से की जाये ताकि आंदोलन कमजोर पड़े। किन्तु सरकार ने जैसा सोचा था वैसा कुछ नहीं हुआ। अन्ततः उसने गिरफ्तारी और बल प्रयोग के पारम्परिक तरीके अपनाये। गाँधी जी ने घोषणा की कि वे नमक कानून का उल्लंधन जारी रखेगे और घरसाना नमक उद्योग पर धावे का नेतृत्व करेगें। आंदोलन के तेजी से बढते कदम, प्राधिकारियों, गवर्नरों, सैन्य अधिकारियों के दबाव के कारण अन्ततः वायसराय इरविन ने 4 मई 1930 का गाँधी को गिरफ्तार करने का आदेश दिया। 4 व 5 मई 1930 के बीच के रात को 12:45 बजे हथियार बन्द पुलिसकर्मियों के साथ सूरत के ब्रिटिश जिला मजिस्ट्रेट ने गाँधी को गिरफ्तार कर लिया व उन्हे बम्बई के येरावदा सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया।

वैकल्पिक नेताओं ने घरसाना नमक उद्योग की ओर अहिंसक मार्च किया। इस बार सरकार नहीं चूकी व उसने बल प्रयोग कर गिरफ्तारियां की। समझौता वार्ता के लिये सरकार का एक प्रतिनिधि गाँधी से जेल मे मिलने गया।

समझौता अन्ततः 5 मार्च 1931 को गाँधी इरविन समझौता के रूप में हुआ। अन्य बातो के अलावा इस समझौते में सविनय अवज्ञा आंदोलन स्थगित करने पर भी सहमति व्यक्त की।

5.8.3 आंदोलन का महत्व

जहाँ तक सविनय अवज्ञा आंदोलन की उपलब्धियों का प्रश्न है, इसके अन्तर्गत शुरू किया गया नमक सत्याग्रह ने अपने तात्कालिक लक्ष्य काफी हद तक प्राप्त कर लिये। यद्यपि सरकार ने नमक कानून निरस्त नहीं किये किन्तु कानून की व्याख्या कुछ इस प्रकार की गई कि गरीब भारतीयों को राहत मिली। नमक उत्पादन योग्य क्षेत्रों के आस-पास रहने वाले लोगों को घरेलू उपयोग हेतु नमक इकट्ठा करने या उत्पादन करने की छूट दी गई। ऐसी व्यवस्था की गई कि गांव के गांव में नमक बेचा जा सकता है बाहर नहीं । सरकार ने कुछ अन्य रियायतें भी दी जैसे अहिंसक आंदोलनकारियों को माफी, जब्त सम्पत्ति को उदारतापूर्वक लौटाना व विशेष नियन्त्रक अध्यादेशों को वापिस लेना। सरकार ने यह भी सहमति व्यक्त की कि भारत में संवैधानिक सुधारों पर होने वाली चर्चाओ में कांग्रेस के प्रतिनिधियों को भी आमन्त्रित किया जायेगा। सविनय अवज्ञा आंदोलन ने कई दिशाओं में प्रगतिशील कदम बढाये। साम्राज्यवाद विरोधी व राष्ट्रीय संघर्ष पहले की अपेक्षा बडे स्तर पर चलाये गये। प्रभावशाली नेतृत्व केवल राष्ट्रीय स्तर तक ही सीमित नहीं था, प्रान्तीय व स्थानीय स्तर पर भी अच्छी संख्या में प्रभावशाली नेता उपलब्ध थे। सरकार आगे बढ़कर आन्दोलनकारियों से वार्ता कर रही है, इससे आन्दोलनकारियों का मनोबल बड़ा। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। समाज के विभिन्न वर्गो के लोगों को इस अभियान के लिये संघटित किया गया - गरीब, निरक्षर, स्त्री-पुरूष, धार्मिक अल्पसंख्यक, ग्रामीण, शहरी, उच्चवर्ग, निम्नवर्ग, छात्र, जनजातियां, व्यापारी आदि। भारत में ही नहीं अपितु विदेशो मे प्रेस रिपोर्टो के माध्यम से लोगों को आंदोलन के समाचार मिल रहे थै।

गाँधी के नेतृत्व में प्रथम अभियान व बाद में घरसाना नमक अभियान पूर्ण रूप से सत्याग्रह संघर्ष के मूलभूत सिद्वान्तो के अनुसार चलाया गया। आंदोलन का तात्कालिक उद्वेश्य था नमक कानून के परिणामस्वरुप गरीब जनता पर आई विपदा से उन्हे मुक्ति दिलाना। ये कानून ब्रिटिश शासन के अन्याय के प्रतीक थे और सत्याग्रहियों का यह कत्तव्य था कि इन कानूनों की अवज्ञा करते हुए दृढ़तापूर्वक सत्य और न्याय की मांग करे। सत्याग्रहियों ने अहिंसा व्रत का कड़ाई से पालन किया। सत्याग्रहियों की खास विशेषता थी - आत्मनिर्भरता। सविनय अवज्ञा के दौरान उन्हे स्वयं के लिये अथवा परिवार के लिये किसी भी प्रकार की भौतिक सहायता लेने से इन्कार करने को। जन समर्थन प्राप्त करने के लिये पर्चे बांटे गये, प्रेस रिपोर्टे छपवाई गई। शुरू से अन्त तक सरकार से बातचीत के माध्यम से सौहार्दपूर्ण समझौते तक पहुँचने के प्रयास किये गये। अभियान की विभिन्न योजनाओं के संदर्भ में सरकार को अवगत कराया जाता रहा।

सविनय अवज्ञा आंदोलन ने यह भी साबित किया कि सत्याग्रह सरकार के जुल्मों का प्रभावपूर्ण तरीके से सामना कर सकता है। इसने दुनियाँ को दिखा दिया कि राज्य की हिंसा व बुराई का उसी रूप में सामना करना आवश्यक नही है। हमारे पास अहिंसा के रास्ते का विकल्प उपलब्ध है और यह हिंसा व बुराई का सामना बेहतर ढंग से कर सकता है।

5.8.4 सविनय अवज्ञा का पुनरोत्थान व अन्त

1931 के गाँधी इरविन समझौते के अनुसार गाँधी इंग्लैण्ड में आयोजनीय दूसरे गोल मेज सम्मेलन में भाग लेने के लिये सहमत हो गए जिसमें भारत में भावी संवैधानिक संशोधनों पर विचार विमर्श किया जाना था। लंदन प्रस्थान करने से पूर्व उन्होंने कहा कि गोल मेज सम्मेलन के कोई सार्थक परिणाम निकलने की सम्भावना उन्हे दिख नहीं रही है। उन्हे आभास था कि इग्लैंड के नेताओं की राजनैतिक मंशा भारतीयों के सवैधानिक संशोधनो के बारे मे अपेक्षाओ के विपरीत है। गोल मेज सम्मेलन में वही हुआ जिसका गाँधी को डर था और वह इग्लैण्ड से निराश ही लौटे।

इस दौरान भारत में लार्ड इरविन के स्थान पर लार्ड वैलिंग्टन वायसराय बने। वैलिंग्टन के नेतृत्व में सरकार ने कांग्रेस, उसके नेताओं, राष्ट्रीय आकांक्षाओ व लोगों की गतिविधियों के प्रति किए जाने वाले कार्यवाही को पूरी ही उलट दिया। गाँधी-इरविन समझौते का खुला उल्लंघन हुआ। सरकार ने हर तरफ हिंसा व आतंक का माहौल बना दिया।

लगभग चार माह तक अनुपस्थित रहने के बाद गाँधी इग्लैण्ड से भारत 28 दिसम्बर 1931 को पहुँचे। कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक 29 दिसम्बर 1931 को हुई। गाँधी ने वैलिंग्टन से मिलने का निवेदन भेजा और सविनय अवज्ञा आंदोलन उस मुलाकात तक के लिये स्थगित ही रखने का प्रस्ताव दिया। वायसराय ने मिलने से इन्कार कर दिया और गाँधी को चेतावनी दी कि आंदोलन यदि पुनः शुरू किया जाता है तो गाँधी व कांग्रेस को इसके परिणाम भुगतने होगें। 3 जनवरी 1932 को गाँधी ने राष्ट्र का आव्हान किया और कहा कि लोग एक और लम्बे व कठिन संघर्ष के लिये तैयार रहें। सरकार ने गाँधी को पहले ही 4 जनवरी 1932 को गिरफ्तार कर लिया। सविनय अवज्ञा के दौरान आकस्मिक स्थितियों से निपटने के लिये प्राधिकारियों को असीमित शक्तियाँ देने सम्बन्धी अध्यादेश जारी किये गये। यद्यपि तैयारी पूरी नहीं थी तथापि आंदोलन में लोगों की सहभागिता विशाल थी। शराब व विदेशी कपड़ो की दुकानों पर धरने दिये गये, विभिन्न राष्ट्रीय दिवस मनाये गये, प्रदर्शन किये गये सरकारी अध्यादेशों का उल्लंघन किया गया। बाद में उन्होंने गिरफ्तारियां भी दी।

भारतीयों से निपटने में सरकार ने कोई कसर नहीं छोड़ी। सविनय अवज्ञा को कुचलने के लिये कठोर और दमनकारी कार्यवाही की गई। कांग्रेस जैसे संगठनो को अवैध घोषित किया गया और उनकी जमा राशि अब्त कर

ली गई। आंदोलन मे भाग लेने वालों पर हिंसात्मक कार्यवाही की गई। जेलों में उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया गया। अपराधी घोषित प्रतिभागियों से कर व जुर्माना वसूल करने के लिये उनकी सम्पत्ति या तो जब्त कर ली गई या सस्ते दामों में बेच दी गई। महिलाओं के साथ भी दुव्र्यवहार किया गया। प्रेस पर कठोर प्रतिबन्ध लगा दिये गये।

सरकार की इस प्रकार की कार्यवाही ने पुनः शुरू किये गये सविनय अवज्ञा आंदोलन पर बेहद असर डाला। धीरे-धीरे लोगों की कम होती गई और उत्साह में भी कमी आती गई। कई स्थानो पर प्रतिभागियोंने अहिसंक संघर्ष के मूल सिद्धान्तो का पालन भी नहीं किया।

अन्ततः 19 मई 1933 को गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन बारह सप्ताह के लिये स्थगित कर दिया। 14 जुलाई 1933 को उन्होंने जनता सविनय अवज्ञा आंदोलनो को समाप्त करने का आव्हान किया और अलग-अलग चल रहे सत्याग्रहों का समर्थन किया। यह लगभग एक वर्ष तक चला और अन्ततः 7 अप्रेल 1934 को गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन को पूर्णतः बंद करने का निश्चय किया।

5.9 वाइकोम सत्याग्रह

ब्रिटिश शासन में टे्वेनकूर राज्य का एक बड़ा गांव और भारत के केरल राज्य का एक भाग, वाइकोम, हिन्दुओं के लिये एक प्रमुख धार्मिक स्थल है। भगवान शंकर के भक्त यहाँ बड़ी संख्या मे पहुँचते है। ब्रिटिश शासन के दौरान भगवान शंकर के मंदिर के आस-पास की सड़के सार्वजनिक थी। किन्तु मंदिर मे काम करने वाले और वहीं आस-पास रहने वाले रूढ़िवादी पुजारियों व ब्राहमणों ने उन सड़को पर अछूतो का आवागमन यह कहकर था बंद करवा दिया कि इससे मंदिर या वे स्वयं अपवित्र हो जाते है। कुछ प्रगतिशील व उत्साही सुधारक इन सड़कों को सभी जाति, धर्म और सम्प्रदायों के लिये सार्वजनिक करना चाहते थे। इसके लिये उन्होंने गाँधीवादी सत्याग्रह का रास्ता चुनने का निश्चय किया। सीरिया के एक इसाई जार्ज जोसफ ने इसकी शुरूआत की। प्रारम्भ में इसमें पचास स्वयंसेवक थे। धीरे-धीरे इनकी संख्या सैकडों फिर हजारों मे बढ़ गई। इन स्वयं सेवकों में निम्न व उच्च सभी जातियों के लोग थे।

इस प्रकार वाइकोम सत्याग्रह को गाँधी ने प्रत्यक्षतः शुरू नहीं किया। तथापि उनका आशीर्वाद व उनका दिशानिर्देश सत्याग्रहियों को मिलता रहा। गाँधी ने ‘यंग इण्डिया’में छुआछूत, धर्म और सत्याग्रह के बारे में खूब लिखा। सत्याग्रहियों ने यह आंदोलन 1924-25 तक जारी रखा। अप्रेल 1925 से गाँधी ने इस सत्याग्रह में प्रत्यक्षतः भाग लिया।

5.9.1 वाइकोम सत्याग्रह के उद्धेश्य

वाइकोम सत्याग्रह का तात्कालिक लक्ष्य मंदिर के आस-पास की सड़के सभी के लिये खोलना था। लेकिन इस आंदोलन का मूल तत्व यह था कि मानव को मूलभूत अधिकार दिलाना था जिससे छूत-अछूत का भेद न रहे और सभी को सम्मान से जीने का अवसर मिले। इस प्रकार इसका लक्ष्य हिन्दु धर्म में कतिपय मूलभूत सुधार करना था। ट्रेवन्कूर राज्य व विधानसभा के कई सदस्य इन सुधारों का समर्थन करने के पक्ष मे नहीं थे। उन्होंने इसका विरोध किया व सत्याग्रहियों के विरूद्व पुलिस बल प्रयोग का समर्थन किया। इस प्रकार सभी इनके विरोधी हो गये।

5.9.2 आंदोलन की प्रगति व कार्ययोजना

सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की गई। हथकरधा और विधालय भवन निमार्ण व पर्यावरण को स्वच्छ रखने जैसे रचनात्मक कार्य शुरू किये गये। रूढ़िवादी ब्राहमणों को समझाने के लिये बैठके हुई ताकि वे अपने भेदभावपूर्ण व्यवहार छोड़ सके।

प्रारम्भ में ट्रेवन्कूर के महाराजा के रीजेन्ट को अपीलें व याचिकायें प्रेषित की गई। साथ ही ब्राहमणों व मंदिर के पुजारियों से भी प्रार्थना की गई। जब वांछनीय परिणाम नही निकले तो प्रतिबन्धित सड़कों पर उच्च जाति के लोगों का सवर्ण जत्था व अछूतो का जुलूस निकाला गया। जब ब्राहमणों ने अभियान में भाग लेने वालों पर आक्रमण किये और उन्हे पीटा तो उन्होंने कोई प्रतिरोध नहीं किया। जब नेताओ के एक समूह को गिरफ्तार कर लिया गया तो वैकल्पिक नेता तैयार हो गये और आंदोलन शान्तिपूर्वक व अहिंसक रूप से चलता रहा। जब पुलिस ने मोर्चाबन्दी की और सत्याग्रहियों को सड़को व मंदिर में प्रवेश करने से रोका तो सत्याग्रहियों ने प्रार्थना और सूत कातना जैसे अहिंसक कार्य शुरू कर दिया। यह नित्यप्रति दिन चलता रहा। मानसून में जब सड़के पानी से भर जाती, पुलिस तो नावों में सवार हो जाती पर सत्याग्रही बारी-बारी से वहीं डटे रहे। पानी कंधो तक ऊपर आने के बावजूद उन्होंने अपनी प्रार्थनायें जारी रखी। मोर्चेबन्दी को हटाना या उस पर चढ़ने का तो उन्होंने प्रयास ही नहीं किया।

5.9.3 वाइकोम सत्याग्रह में गाँधी का नेतृत्व

अप्रेल 1925 में ट्रेवन्कूर राज्य पहुँचने पर गाँधी ने सत्याग्रह में प्रत्यक्षतः भाग लिया। वह राज्य केप्राधिकारियों से मिले और उन्हे विरोध कर रहे सत्याग्रहियों का पक्ष समझाने का प्रयास किया। गाँधी ने इस आंदोलन का शुरू से ही समर्थन किया था। उन्होंने ष्यंग इण्डिया,के विभिन्न अंको में वाइकोम सत्याग्रह से जुडे विभिन्न मामलों पर अत्यधिक संख्या मे लेख लिखे।

उन्होंने कहा कि वाइकोम सत्याग्रह यदि सत्य और अहिंसा के मार्ग पर टिका रहता है तो यह पूर्णतः औचित्यपूर्ण है तथा इसे पूर्ण जनसमर्थन मिलना चाहिये। उन्होंने वाइकोम अभियान के संचालन पर सन्तोष व्यक्त किया और कहा कि भविष्य में इस मार्ग पर चलने वाले कार्यकत्ताओं के लिये यह एक आदर्श बन सकता है। उन्होंने सत्याग्रहियों को सलाह दी कि वे अपना अभियान जारी रखे और साथ ही राज्य तथा लोगों का समर्थन पाने का प्रयास भी करते रहें। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि वे स्वावलम्बी बनें। उन्होनें उनका मनोबल बढाते हुए कहा कि वे एक अच्छे कार्य के लिये विरोध कर रहे है, उन्हे अपने साधन और साध्य में भरोसा होना चाहिये, अन्त में जीत उन्ही की होगी।

जातिवादी हिन्दुओ द्वारा छुआछूत व्यवहार की प्रथा की उन्होंने घोर आलोचना की। उन्होंने इस सत्याग्रह को स्वराज की लड़ाई से कम महत्वपूर्ण नही माना। यह युगो से चली आ रही कुप्रथा व पूर्वाग्रह के विरूद्ध लडाई है। रूढ़िवाद, अंधविश्वास झूठे रीति रिवाज ऐसी प्रथाओं का समर्थन करते है। यह धर्म के नाम पर अधर्म है, ज्ञान के नाम पर अज्ञानता है। छुआछूत पाप है और हिन्दु इस पाप के भागीदार बन रहे है। उन्हे स्वयं इस प्रथा को अपने जीवन से हटा देना चाहिये। उनके लिये शर्मनाक है और जब तक वे इससे छुटकारा नहीं पा लेते, उन्हे स्वयं को शुद्ध नहीं मानना चाहिये। इसके लिये कष्ट भी झेलना पड़े तो झेले और इस प्रकार अपने भाई बहनो के प्रति अपना कर्ज चुकायें।

गाँधी जी ने सत्याग्रह अभियान मूल सिद्धान्तों पर टिके रहने की आवश्यकता पर भी बल दिया। उन्होंने हमेशा कहा कि वाइकोम अभियान के कार्यकत्ता हमेशा सत्य और अहिंसा के मार्ग पर डटे रहें। उन्होंने कहा कि सत्याग्रहियों को यह प्रयास करना चाहिये कि वे अपने विरोधियों द्वारा किये जा रहे भेदभावपूर्ण व्यवहार त्याग देने के लिए बौद्धिक रूप से समझायें। उनके विरोध के कारण यदि विरोधी उन पर वार भी करें तो भी वे प्रतिकार ने करें। वाइकोम सत्याग्रही किसी भी प्रकार की सजा को चुपचाप सहें और अपने विरोधियों के प्रति कोई दुर्भावना न रखें। वाइकोम सत्याग्रह के सुधारमूलक लक्ष्य जोर जबरदस्ती से प्राप्त नही किये जा सकते। उन्होंने कहा कि सत्याग्रही के लिये साधन की शुद्धता साध्य से अधिक महत्वपूर्ण है। अगर वे धैर्य बनाये रखते है और कष्ट सहने के लिये सदैव तत्पर रहते हैं तो उनकी सफलता निश्चित है। उन्होंने सत्याग्रहियों को सलाह दी कि यदि वे ऐसा ही करेगें तो रूढिवादी ब्राहमण स्वेच्छा से भेदभावपूर्ण व्यवहार त्याग देंगे और उनमें ‘हृदय परिवर्तन’होगा। उन्होंने सत्याग्रहियों से स्वावलम्बी बने रहने पर भी बल दिया और कहा कि उन्हे जन समर्थन के अतिरिक्त किसी और समर्थन की आवश्यकता नही है। सत्याग्रही अपने लक्ष्य और गतिविधियों के बारे मे अपने विरोधियों को भी भयमुक्त रखे और उनके प्रति प्रेम प्रदर्शित करें।

गाँधी जी का अनुमान सही था। सत्याग्रह सफल हुआ। जब गाँधी जी ट्रेवन्कूर राज्य गये और राज्य अधिकारियो से कहा कि वे मोर्चाबन्दी हटायें तो वे मान गये। लेकिन जब पुलिस ने मोर्चाबन्दी हटा दी तो भी सत्याग्रहियों ने

कहा कि वे इसका अनुचित लाभ नहीं लेगें। जब तक मंदिर के आस-पास की सड़क के सार्वजनिक उपयोग के बारे में ब्राहमण सन्तुष्ट व तत्पर नहीं हो जाते तब तक वे इस सड़क पर प्रवेश नहीं करेंगे । 1925 की हेमन्त ऋतु में ब्राहमणों ने घोषणा की कि वे अछूतों की स्वीकार करने के लिये तैयार है। 1937 में ट्रेवन्कूर के महाराज ने एक शाही फरमान जारी कर राज्य के सभी मंदिरो के दरवाजे सभी हिन्दू नागरिकों के लिये खोल दिये। मंदिर के दरवाजों के साथ-साथ केवल ट्रेवन्कूर राज्य मे ही नही अपितु भारत के अन्य हिस्सो में भी कई अन्य सार्वजनिक संस्थाओ के दरवाजे भी सभी के लिए क्रमशतः खुल गये।

5.9.4 सत्याग्रह का महत्व

इस प्रकार वाइकोम सत्याग्रह शिव मंदिर के आस-पास की सड़के सभी जाति बन्धुओं के लिये खुलवाने के अपने तात्कालिक लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुआ। इस आंदोलन ने अछूत कहलाने वाले भारतीयों द्वारा झेली जा रही अन्य कई समस्याओं को हल करने में प्रेरक का काम किया। इसने उच्च वर्ग के लोगों को कमजोर वर्ग के लोगो के प्रति अपनी नैतिक जिम्मेदारी का भी एहसास कराया। इसने अछूत कहलाने वाले भारतीयों को सम्मान व न्याय प्राप्त करने का रास्ता बताया। गाँधी का यह मानना कि यह सत्याग्रह स्वराज के सत्याग्रह से कम महत्वपूर्ण नही है, इस बात का संकेत था कि ब्रिटिश राज के विरूद्ध चलाये जा रहे राजनीतिक स्वतन्त्रता आंदोलन के साथ-साथ भारत में विद्यमान सामाजिक आर्थिक बुराईयों से लड़ना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। वाइकोम सत्याग्रह इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था कि यह इस बात का प्रतीक था कि धार्मिक अज्ञानता और मूढ़ता से लडना भी आवश्यक है। अन्त में अपने मूल सिद्धान्तो पर चले इस सत्याग्रह ने यह भी दिखाया कि समाज में पनप रही विभिन्न तनावपूर्ण स्थितियों से लडने के लिये यह बेहद उपयोगी है।

5.10 भारत छोडो आन्दोलन

1942 का भारत छोड़ो आंदोलन भारत की स्वतन्त्रता के लिये गाँधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा चलाया गया अंतिम जन आंदोलन था। अंग्रेजो को ष्भारत छोड़ो,का आव्हान करते हुए उन्होंने उनसे कहा कि भारत की स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित करते हुए वे इग्लैण्ड लौट जायें। भारत की स्वतन्त्रता राष्ट्रीय आंदोलन की तात्कालिक व न्यूनतम माँग है और गाँधी के अनुसार इस मांग के साथ कोई समझौता या सौदेबाजी नही हो सकती। लोगों ने इस आंदोलन में साहस और उत्साह से भाग लिया। औपनिवेशिक आकांक्षाओ व विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप उपजी स्थिति के कारण सरकार ने इस आंदोन को कुचलने के लिये अनेक जुल्म किये।

5.10.1 आंदोलन के कारण

1930 का दशक समाप्ति की ओर था और भारतीयों मे गहरा असन्तोष था। भारत में संवैधानिक सुधारो के लिये गठित क्रिप्स मिशन कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं प्राप्त कर सका। इससे स्पष्ट था कि ब्रिटेन भारतीयों की

आकांक्षाओ के अनुरूप कार्य करने के लिये तत्पर नहीं है। उसने भारत पर द्वितीय विश्व युद्ध में उसका साथ देने का दबाव भी डाला था। ब्रिटिश के इस प्रकार के अधिकार पूर्वक नियन्त्रण के व्यवहार के आगे झुकने के लिये कई राष्ट्रवादी नेता तैयार नहीं थे। वे चाहते थे कि भारत को स्वतन्त्रता प्रदान करने के संदर्भ में वे अपना इरादा स्पष्ट करें। लेकिन सरकार ने ऐसी कोई घोषणा नहीं की। इसके विपरीत उसने किसी भी प्रकार के विरोध को कुचलने की तैयारी की और द्वितीय विश्व युद्ध के कारण उपजी स्थितियों से निपटने की तैयारी की।

ब्रिटेन द्वारा भारतीयों को सत्ता हस्तांतरणतरण की अन्च्छिा के साथ एक कारण और था जिससे आम जनता में असंतोष था। विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप आवश्यक वस्तुओ के दाम आसमान छू रहे थे। बंगाल व उड़ीसा में सरकार ने आक्रमणकारी जापानियों को रोकने के उद्धेश्य से मछुआरों की नावें अपने कब्जे में ले ली थी। इससे भी लोग नाराज हो गये। भारतीयों में सरकार के प्रति यह भरोसा भी नही था कि भारत पर जापानी आक्रमण की स्थिति मे सरकार उनकी जान-माल की सुरक्षा कर सकेगी। उन्हे लगता था कि ब्रिटेन शीघ्र ही साम्राज्यवादी राष्ट्र के रूप मे अपना स्तर खो देगा। अतः नेताओ के साथ-साथ जनता भी चाहती थी कि भारत औपनिवेशिक शासन से जल्दी से जल्दी मुक्त हो।

5.10.2 आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गाँधी की भूमिका

गाँधी जी भारतीयों की मनोभावना समझ चुके थे। उन्होंने अपने कुछ विश्वसनीय साथियों को देश भर का दौरा कर लोगों के मनोभाव को पढ़ने के लिये भेजा। जब वे आश्वस्त हो गये कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये चलाये जाने वाले एक और आंदोलन के लिये भारतीय तैयार है, गाँधी ने सरकार के विरूद्ध एक अहिंसक असहयोग आंदोलन की परिकल्पना की। गाँधी की योजना के अनुसार यह एक खुला जन आंदोलन था जिससे सरकारी कामकाज ठप्प हो जाये। इसका अर्थ यह कदापि नहीं था कि उनकी योजना सत्ता हथियाना या ब्रिटिश सरकार को उखाड़ फैकना हो। उन्होंने दावा किया कि यह सम्बंधो के पुनर्निर्धारण का कार्यक्रम है जिसके अन्त में शान्तिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण होगा।

आंदोलन का कार्यक्रम बनाने में गाँधी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने 12 सूत्रीय कार्यक्रम बनाया जिसमें अहिंसा व्रत के पालन पर बल दिया गया था। गाँधी के कार्यक्रम का विवरण इस प्रकार है :-

1. देशभर में 24 घंटे की हड़ताल
2 . गांवो में जनसभा करके आंदोलन चलाने के कांग्रेस के लक्ष्यो से लोगो को अवगत कराना
3 . युद्ध के लिये ब्रिटेन द्वारा चलाये गये भर्ती अभियान के प्रति भारत का असहयोग व्यक्त करने के लिये विरोध मार्च करना

4 . राजकीय सेवाओं से त्यागपत्र

5 . नमक कानून का उल्लंघन

6 . छात्रों द्वारा विध्यालय व महाविध्यालय की पढ़ाई छोडना

7 . विदेशी कपड़ो व शराब की दुकानो पर धरना देना

8 . रेल व सड़क यातायात मे अवरोध डालना

9. शहरी औद्योगिक मजदूरो को हडताल पर जाने के लिये प्रेरित करना

10. सैन्य बल कर्मियों को विद्रोह करने के लिये प्रेरित करना

11. कर जमा करने से मना करना

12. समानान्तर सरकार का गठन

उन्होंने कहा कि इस कार्ययोजना में जो भी विषय अहिंसक आंदोलन के दायरे में आयेगें उन्हे शामिल किया जा सकता है।

गाँधी जी ने भारत छोडो आंदोलन की योजना बनाने में सक्रिय हिस्सा लिया। समाचार पत्र में अपने लेखों तथा कांग्रेस व अन्य संगठनो द्वारा उपलब्ध मंचो से दिये अपने भाषणो मे गाँधी ने आंदोलन के पक्ष में जनमत तैयार करने काप्रयास किया। उन्होंने कहा कि भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता का मजबूत दावा करना चाहिये और इससे कम किसी कीमत पर समझौता नहीं करना चाहिये। उन्होंने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये लोगों को ष्करो यो मरो,का नारा दिया। इस नारे का अर्थ था कि भारतीय साहस का परिचय देते हुए भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने के लिये बड़े से बड़े बलिदान के लिये तैयार रहना चाहिये। उन्होंने कहा कि ब्रिटिश शासन से पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग करने का कांग्रेस व जनता को पूरा हक है। उन्हे आशा थी कि अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय भारतीयों का समर्थन करेगा। कांग्रेस के अन्दर उन्होंने प्रमुख नेताओं से विचार विमर्श कर आंदोलन के संदर्भ में उनके विचार जानें। उनहोने शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक दौरे कर लोगों को आंदोलन में भाग लेने के लिये प्रेरित किया। उन्हे पूरा भरोसा था कि भारत के लिये पूर्ण स्वतन्त्रता का लक्ष्य औचित्यपूर्ण है। इस मामले में यदि कोई उनका विरोध भी करता है तो शीघ्र ही उसे अपनी गलती का एहसास होगा तथा शीघ्र ही दृढ़ता से साथ हो जाएगा।

उन्होंने पे्रस से भी आग्रह किया कि वह स्वतन्त्र व साहसपूर्वक अपना कत्तव्य निभायें। उन्होंने स्थानीय शासको से भी आग्रह किया कि वे भी पूर्ण स्वतन्त्रता की मांगा का समर्थन करें। उन्होंने छात्रों वशिक्षको से भी

कहा कि वे अपने दिलों में स्वतन्त्रता की ज्योति जलाये रखें और साहसपूर्वक कांग्रेस का समर्थन करें तथा भारत की आजादी के लिये अपना केरियर भी त्यागना पड़े तो तैयार रहें। राज्य कर्मियों से भी उन्होंने ऐसा ही आग्रह किया।

14 जुलाई 1942 को वर्धा में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई। इसमें गाँधी का जनसंघर्ष का सुझाव स्वीकार कर लिया गया। इसका अनुमोदन करने के लिये बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक प्रस्तावित की गई। 7 अगस्त 1942 को बम्बई में आयोजित बैठक में कई कांग्रेसी एकत्रित हुए। 8 अगस्त 1942 को मध्यरात्रि के कुछ देर बाद ही गाँधी ने लोगो को सम्बोधित किया। ये लोग बम्बई के गोवालिया टैंक पर जमा हुए थे। अपने प्रभावपूर्ण भाषण में उन्होंने कहा कि भारत के लिये पूर्ण स्वराज्य आंदोलन का न्यूनतम व तात्कालिक लक्ष्य है और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये वे 'करने या मरने'के लिये तैयार रहें। उन्होंने कहा कि आंदोलन शुरू करने से पूर्व वाइसराय से कांग्रेस की मांगे मानने के लिये निवेदन किया जायेगा। इस दौरान उन्होंने कांग्रेसियों व जनता को निर्देश दिया कि वे रचनात्मक कार्यो में लगें और स्वतन्त्र स्त्री-पुरूषों की तरफ व्यवहार करें।

सम्भागियों के विसर्जित होने के कुछ घंटो बाद ही सरकार ने गाँधी व कांग्रेस के कुछ प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया। गाँधी और प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी के समाचार ने चिंगारी का काम किया और गाँधी व अन्य प्रमुख नेताओं के नेतृत्व के बिना ही 'भारत छोड़ो आंदोलन' शुरू हो गया। सरकार ने आंदोलन को कुचलने के लिये बल प्रयोग करने का निश्चय किया। जेल में पड़े गाँधी को भी राष्ट्रीय नेताओं से मिलने की अनुमति नहीं दी गई। आंदोलन की प्रगति के समाचार भी उन तक नहीं पहुँच पाये। इस प्रकार आंदोलन के संचालन में गाँधी कोई भूमिका अदा नहीं कर पाये। बल प्रयोग व दमन से सरकार ने आंदोलन में जनसहभागिता को कुछ ही समय में कम कर दिया।

5.10.3 आंदोलन का महत्व

यद्यपि भारत छोड़ो आंदोलन गाँधी के स्पष्ट लक्ष्य भारत के लिये ष्स्वतन्त्रता से कम कुछ नही,को प्राप्त नहीं कर सका तथापि कई दृष्टि से यह महत्वपूर्ण था। भारत के लिये 'स्वतन्त्रता से कम कुछ नहीं'के लक्ष्य का अर्थ था कि अब भारतीयों की ब्रिटिश शासन से न्यूनतम मांग ही यह है कि भारत को औपनिवेशिक शासन से स्वतन्त्रता मिले। साथ ही यह भी कहा गया कि इस लक्ष्य को और अधिक स्थगित नहीं किया जा सकता। उत्साह व साहस के साथ जनसहभागिता भी उल्लेखनीय थी। थोडे समय के लिये ही सही, भारत के कुछ हिस्सो में समानान्तर सरकार की स्थापना भी इस आंदोलन की एक उल्लेखनीय विशेषता थी।

5.11 सारांश

राष्ट्रीय परिदृश्य में गाँधी अभी भी प्रमुख सितारे थे। जब कभी भी जन आंदोलन का विचार बनता अधिकांश राजनीतिज्ञ, कार्यकर्ता व जनता उन्हे ही नेता चुनने की मंशा व्यक्त करते। गाँधी ने आंदोलन की कार्य योजना बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उनकी मान्यता थी कि सत्याग्रह के सिद्धान्तों के अनुरूप अहिंसक आंदोलन के माध्यम से राष्ट्रीय स्वतन्त्रता जैसे लक्ष्य भी प्राप्त किये जा सकते है। उन्हे अपनी इस मान्यता पर अभी भी भरोसा था। उनकी यह भी मान्यता थी की भारत को स्वतन्त्रता शीघ्र तथा किसी प्रकार का समझौता किये बिना प्राप्त हो जानी चाहिये। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आवश्यकता पडने पर अकेले भी जाने को तैयार थे। इससे लक्ष्य के प्रति उनका दृढ़ निश्चय और समर्पण भाव स्पष्ट होता है। दुर्भाग्य से वे भारत छोडो आंदोलन में प्रत्यक्ष रूप से भूमिका नहीं निभा सके क्योंकि उन्हे जेल में डाल दिया गया व अनेक प्रतिबन्ध लगा दिये गये।

5.12 अभ्यास प्रश्न

1. असहयोग आंदोलन के कारणों, कार्यक्रम व महत्व पर प्रकाश डालिये।
2. सविनय अवज्ञा आंदोलन के क्या कारण थे? इसमें गाँधी की भूमिका व इस आंदोलन के महत्व पर प्रकाश डालिये।
3. 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के कारणों पर प्रकाश डालिये। आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गाँधी की क्या भूमिका थी।
4. वाइकोम सत्याग्रह के उद्धेश्यों व महत्व पर चर्चा करें।
5. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में गाँधी की भूमिका की चर्चा करें।

5.1 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भट्टाचार्य, बुद्धदेव, एवोल्यूशन ऑफ द पॉलिटिकल फिलॉसॉफी ऑफ गाँधी, कलकत्ता बुक हाऊस, कलकत्ता 1969
2. ब्राउन जूडिथ, गाँधीज राईज टू पावर : इण्डियन पोलिटिक्स 1915-1922, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1977
3. ब्राउन जूडिथ, गाँधी एंड सिविल डिसोबिडिएंस : द महात्मा इन इण्डियन पोलिटिक्स 1928-34, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1972
4. कुमार, बी. अरूण, गाँधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008

इकाई - 6

चम्पारण आन्दोलन और महात्मा गाँधी

इकाई रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 गाँधी का चम्पारण समस्या से परिचय

6.3 गाँधी की चम्पारण यात्रा

6.4 चम्पारण समस्या पर गाँधी की कार्य योजना

6.5 गाँधी के प्रति चम्पारण की रैयतों का विश्वास

6.6 गाँधी की कार्य योजना

6.7 जांच समिति

6.7.1 समिति की अनुशंसाएँ

6.7.2 चम्पारण कृषि कानून

6.8 सारांश

6.9 अभ्यास प्रश्न

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान पाएँगे :-

- चम्पारण की समस्या की प्रकृति
- चम्पारण समस्या के निवारण हेतु गाँधी की कार्य योजना
- चम्पारण समस्या के समाधान में गाँधी का योगदान
- चम्पारण समझौते की प्रकृति

6.1 प्रस्तावना

विदेश से भारत आगमन के उपरान्त गाँधीजी ने भारतीयों की शोषण की स्थिति को देखने के पश्चात् उनकी मुक्ति के लिए अनेक सत्याग्रह आन्दोलन संचालित किया। इन आन्दोलनों में चम्पारण किसान आन्दोलन भारत में उनका सर्वप्रथम आन्दोलन था। गाँधीजी ने चम्पारण के किसानों पर अंग्रेजों द्वारा लागू किए गए करों एवं उनके द्वारा किए जाने वाले शोषण का विरोध किया एवं उन्होंने सत्याग्रह आन्दोलन चलाया। इस आन्दोलन के फलस्वरूप एक स्वीकार्य समझौता हुआ जिसके कारण चम्पारण के किसानों को राहत मिली। गाँधी जी ने चम्पारण के कृशकों की समस्या का वर्णन करते हुए कहा कि इस जिले के जमींदारों ने अपनी जांगीरों को अंग्रेज, जिन्हे नीले साहब के नाम से सम्बोधन किया जाता है, को ठेके पर जुतवाने अधिकार प्रदान किया उपनिवेशवादी उद्देश्य से प्रेरित इन साहबों ने गरीब भारतीय कृषकों का अनेक प्रकार से शोषण किया। 20 वीं शताब्दी के प्रारंभ में सिन्थेटिक नील के आगमन के पश्चात् प्राकृतिक नील की खेती ऐसे साहबों के लिये अधिक फायदें मंद सिद्ध नही हुआ और इसलिए वे प्राकृतिक नील की खेती में अपनी रुचि समाप्त करने के लिये तत्पर थे। इन नई परिस्थियों का फायदा भी उठाने का प्रयास इन नील साहबों ने किया। किसानों की भूमि पर से नील खेती के अपने नियंत्रण के अधिकार छोड़ने के लिये उनसे मुआवजा के तौर पर कर मांगा गया। ठेका पद्धति से जो धनराशि एकत्रित किया जा रहा था उसे बढ़ाने के लिये इन साहबों ने किराया मनमाने ढ़ग से बढ़ाने का भी प्रयास किया। इस प्रकार की कार्यवाही को कृषकों ने स्वयं की आजादी एवं अधिकार के खिलाफ माना और मुक्ति पाना चाहा। उन्होंने चम्पारण के किसानों के साथ हो रहे जुल्मों की ओर तत्काल सरकार को ध्यान देने के लिये आग्रह किया और कहा कि सरकार के ऐसे प्रयास किसानों में ऐसा विश्वास उत्पन्न करने का कार्य करेगा जो उन्हे आभास दिलायेगा कि जमींदार उनके साथ मनमानी नही कर सकते और उन पर जुल्म ढाह नही सकते। उन्होंने आश्वासन दिया कि इसके लिए जब भी सरकार उनकी उपस्थिति आवश्यक समझे वह सूचना पाते ही हाजिर हो जायेगे।

चम्पारण आन्दोलन के सम्बंध में गाँधीजी ने कहा कि भारत के किसान बहुत ही गरीब स्थिति में हैं। हजारों की तादाद् में किसानों को भरपेट खाना भी नहीं मिल पाता हैं। दिन में एक वक्त का खाना ही नसीब होता हैं। जांच के दौरान अपने अनुभवों के बारे में गाँधी जी ने बयान करते हुए लिखा है कि चम्पारण किसान के अत्यन्त विकट

परिस्थिति में अपना जीवन व्यापन कर रहे है। जहाँ एक तरफ वे भारतीय जमींदारों तथा फैक्ट्री के मालिको से अनेक प्रकार से शोषित हो रहे है वहीं सरकार की तरफ से भी उन्हे उपेक्षा पूर्ण रवैया ही अनुभव हुआ है। संसाधनों से हीन ये गरीब किसान एवं मजदूर शोषण और अन्याय की ऐसी स्थिति का सशक्त विरोध करने में असमर्थ है। गाँधी ने नील उत्पादकों तथा जमींदारों तथा फैक्ट्री मालिको से बात करके चम्पारण के गरीब भारतीयों के उपरोक्त समस्याओं का निराकरण करना चाहाए परन्तु उन्हे कोई सफलता प्राप्त नही हुई। उन्हे जब ये आभास हुआ कि इस समस्या को सरकार के हस्तक्षेप के बिना दूर नही किया जा सकता तो उन्होंने सरकार से भी सहयोग की अपेक्षा की।

6.2 गाँधीजी का चम्पारण समस्या से परिचय

गाँधीजी के दक्षिण अफ्रिका में किए कार्यो से प्रभावित होकर ही चम्पारण के राजकुमार शुक्ल ने गाँधीजी को चम्पारण की स्थिति से परिचित करवाया और उन्हें कांग्रेस अधिवेशन के दौरान चम्पारण आकर वहाँ के दुख-दर्द दूर करने को कहा, जिसे गाँधीजी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 31वाँ अधिवेशन दिसम्बर 1916 में लखनऊ में हुआ था, जिसमें देशभर के लगभग 2300 प्रतिनिधियों ने भाग लिया था, इसमें बिहार के राजनीतिक एवं किसान नेता राजकुमार शुक्ल ने भी भाग लिया। अधिवेशन में दो महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये जाने वाले थे। प्रथम, पटना विश्वविद्यालय के विधेयक पर एवं द्वितीय, चम्पारण के नीलहे साहब एवं उनके किसानों से सम्बंध पर। राजकुमार शुक्ल, जिन्हें व्यक्तिगत तौर पर निलहे साहबों के अत्याचारों का अनुभव था, इस अधिवेशन में भाग लेने गये थे। अधिनियम में बाबू बृजकिशोर प्रसाद ने अपने विचारों में यूरोपीय कोठीवालों एवं नील रैयतों के बीच तनावपूर्ण संबंधों और कृषि समस्याओं के कारणों की जाँच तथा उन्हें दूर करने के उपाय करने के लिये अधिकारियों एवं गैर सरकारी व्यक्तियों की, एक संयुक्त समिति नियुक्त करने का अनुरोध किया। वहीं श्री शुक्ल ने गाँधीजी से भी इस समस्या पर अपने विचार रखने को कहा, किन्तु गाँधीजी ने यह कहकर मना कर दिया कि स्वयं ही स्थिति का निरीक्षण किए बिना वे कुछ राय नहीं दे सकते।

कांग्रेस ने जब यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित कर दिया तो बिहारी प्रतिनिधियों ने गाँधीजी से चम्पारण आने का अनुरोध किया एवं गाँधीजी ने भी आगामी मार्च या अप्रेल में उन्हें चम्पारण की यात्रा का वचन दिया।

6.3 गाँधीजी की चम्पारण यात्रा

गाँधीजी ने एक पत्र से श्री शुक्ल को सूचित किया कि वे 7 मार्च को कलकत्ता पहुँचेंगे और जानना चाहा कि क्या वहाँ राजकुमार शुक्ल उनसे मिल सकेंगे किन्तु डाकखाना की गड़बड़ी से राजकुमार शुक्ल को यह पत्र 7 मार्च तक नहीं मिला। तथापि श्री शुक्ल कलकत्ता गये, किन्तु वहाँ उनको मालूम हुआ कि गाँधीजी दिल्ली चले

गये है। तदोपरान्त श्री शुक्ल ने फिर गाँधीजी को याद दिलाई। तत्पश्चात् गाँधीजी ने 16 मार्च को अपने पत्र में यथाशीघ्र चम्पारण पहुँचने का आश्वासन दिया। फिर 7 अप्रेल 1917 को गाँधीजी ने राजकुमार शुक्ल को कलकत्ता श्री भूपेन्द्रनाथ बसु के घर आने को लिखा। इस बैठक में बिहार के वे प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं थे, जो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में भी थे। यहाँ यह कहना भी अनुपयुक्त नहीं होगा किए इसके पीछे गाँधीजी की यह सोच अवश्य रही होगी, कि कहीं सरकार से तंग आकर चम्पारण के कुछ प्रभावशाली लोग राष्ट्रीय कांग्रेस का सहारा लेकर अपना मतलब तो सिद्ध नहीं कर रहे, इसीलिए उन्होंने श्री राजकुमार शुक्ल को अकेले ही कलकत्ता में चम्पारण की समस्या को समझने के लिये बुलाया। राजकुमार शुक्ल के साथ गाँधीजी 9 अप्रेल 1917 को प्रस्थान कर पटना पहुँच गये वहाँ उन्हें पटना स्थित राजेन्द्र बाबू के आवास पर ठहरा दिया गया किन्तु उन दिनो राजेन्द्र बाबू स्वयं पुरी गये हुए थे। राजकुमार शुक्ल ने उन्हें वही ठहरा दिया किन्तु गाँधीजी को वहाँ रहना जयादा रास नहीं आया।

जैसे ही मजहरूलहक को गाँधी के पटना आने की बात मालूम हुई, वे उन्हें अपने यहाँ ले गये। मजहरूलहक गाँधीजी को लंदन से ही जानते थे। 1915 में बम्बई कांग्रेस के अवसर पर दोनों की भेंट हुई थी। हक साहब से गाँधीजी ने पहली गाड़ी से चम्पारण जाने की व्यवस्था करने को कहा। उसी दिन गाँधीजी ने राजकुमार शुक्ल के साथ मुजफ्फरपुर के लिये गाड़ी पकड़ी और वहाँ रात 10.00 बजे पहुँच गये। वहाँ पर गाँधीजी से मिलने स्थानीय वकील भी आये। शीघ्र ही दरभंगा से ब्रजकिशोर बाबू तथा पुरी से राजेन्द्र प्रसाद भी मुजफ्फरपुर आ गये और सभी लोगों की गाँधीजी से चम्पारण की समस्या पर विस्तार से चर्चा हुई। शुरू में गाँधीजी को लग रहा था कि चम्पारण के कृषकों की स्थिति की जाँच तथा नीलहे साहबों से उनकी शिकायत का अध्ययन कर दो-तीन दिन में ही इस समस्या का निस्तारण हो जायेगा किन्तु मुजफ्फरपुर में अपने दोस्त वकीलों की बातों से उनको लगा कि इस समस्या में तो दो वर्ष भी लग सकते हैं।

6.4 चम्पारण समस्या पर गाँधीजी की कार्ययोजना

गाँधीजी ने यहाँ से अपनी कार्ययोजना का प्रारम्भ कुछ इस प्रकार किया। सबसे पहले उन्होंने अपने लिए कुछ लिपिक एवं द्विभाषियों की मांग रखी तथा यहाँ तक कहा कि इस कार्य में जेल भी जाना पड़ सकता है। इसलिए लोग जहाँ तक उचित समझें वहीं तक उनका साथ दें।यह बात गाँधीजी की कार्य करने की विशेष शैली का परिचय था।

गाँधीजी को वहाँ की स्थानीय हिन्दी भाषा को समझने में कठिनाई होती थी एवं कैफि व उर्दू कागजात वे पढ़ नहीं पाते थे। इसलिए उन्होंने द्विभाषीये की मांग रखी। उनका यह कहना भी था कि इस कार्य के लिये उनके पास पैसा नहीं है इसलिए यह कार्य सेवाभाव के आधार पर ही संभव है।

गाँधीजी ने अपनी कार्ययोजना को मूर्त रूप देते हुए सर्वप्रथम 11 अप्रेल 1917 को प्लान्टर्स एसोसियेशन के सचिव को अपने चम्पारण आने का कारण बताया किन्तु विल्सन (सचिव) ने जवाब दिया कि वह संघ की ओर से उनकी कोई मदद नहीं कर सकते। अलबत्ता व्यक्तिगत जहाँ तक संभव हो मदद का भरोसा दिलाया। गाँधीजी ने फिर एक पत्र तिरहूत के प्रमंडल आयुक्त एल.एफ. मार्सहेड को अपने आने व अपने उद्देश्य के बारे में एक पत्र 12 अप्रेल 1917 को लिखा कि नील की खेती से संबंधित काम करने वाले भारतीयों की अवस्था के बारे में उन्होंने बहुत कुछ सुना है, इसकी वास्तविक स्थिति की जानकारी स्वयं ही प्राप्त करने के लिए वह वहाँ आये है उन्होंने लिखा कि वह अपना काम स्थानीय प्रशासन की जानकारी में और संभव हो तो उसके सहयोग से करना चाहते हैं। यदि मार्स हेड उन्हें मिलने का कोई मौका देने की कृपा करें तो वे स्वयं को कृतज्ञ मानेंगे। उन्होन इच्छा प्रक्ट की कि वह अपनी जाँच का उद्देश्य उनके सामने रख सके और यह जान सके कि उन्हे अपने कार्य के सम्पादन में स्थानीय प्रशासन से कुछ सहायता मिल सकती है, या नहीं।

उक्त पत्र में गाँधीजी ने यह स्पष्ट कर दिया था कि वे इस समस्या के तह में जाकर ही रहेंगे चाहे स्थानीय प्रशासन उनका सहयोग करें या न करें और उनका आन्दोलन पूर्णतया पारदर्शी रहेगा। इसके साथ ही गाँधीजी ने 13 अप्रेल 1917 को भी मार्सहेड को इसी तरह का एक और पत्र लिख भेजा।

तदोपरान्त जे.एम. विल्सन ने गाँधीजी को सूचित किया कि उन्हें श्प्लान्टरो एवं उनकी रैयतों के बीच टांग नहीं अड़ाना चाहिए। गाँधीजी ने विनम्रतापूर्वक जवाब दिया कि वे अपने आपको बाहर का आदमी नहीं समझते और यदि रैयत चाहती हैं तो उनकी स्थिति की जाँच करने का उनको पूरा अधिकार है। 13 अप्रेल को ही जब गाँधीजी आयुक्त से मिलने गये तो उनसे पूछा गया कि उनको किसने तिरूहत बुलाया है और वापस जाने को कहा। गाँधीजी ने जवाब में कहा कि वह बिहार के लोगों के आमन्त्रण पर वहाँ आये है और चम्पारण की सरजमीन पर जाकर अध्ययन करने के लिए आये है।

अब गाँधीजी को चम्पारण की रैयतों पर होने वाली अत्याचारों की सत्यता पर विश्वास और गहराता चला गया था और उन्हें इसका यह अहसास हो चला था कि वहाँ प्रशासन भी उन्हें रैयतों पर होने वाले अन्यायों से राहत नहीं दिलवा सकता और सरकार उनके कार्यों में भी अड़चन लगाने में कोई कसर नहीं छोड़ेगी। गाँधीजी ने चम्पारण की गंभीर स्थिति को समझा।

तदोपरान्त 15 अप्रेल 1917 को ही गाँधीजी बापू धरणीधर एवं रामनौजी दोनों ही द्विभाषिये को साथ लेकर मुजफ्फरपुर से मोतिहारी के लिए रवाना हो गये। मोतिहारी एक ऐसा स्थान था, जहाँ इस समस्या से सबसे अधिक ग्रस्त लोग थे। मोतिहारी में उपस्थित ग्रामीणों को अगले दिन 16 अप्रेल को अपना बयान गाँधीजी को बताने के लिए बुलाया गया और गाँधीजी अपने साथ गये दोनों द्विभाषियों की सहायता से ग्रामीण के बयान लिपिबद्ध करवाते रहे एवं जसौली पट्टी नामक स्थान पर एक रैयत के साथ एक निलहे द्वारा किए गए अत्याचार को स्वयं

अपनी आँखों से देखने के लिए गाँधीजी भरी धूप व धूल में चल दिये। गाँधीजी जब उस निवासी से बात कर रहे थे उसी समय एक दरोगा ने गाँधीजी को सूचना दी कि कलेक्टर साहब ने उन्हें बुलाया है। गाँधीजी ने अपने सहकर्मी से जसोली पट्टी जाने को कहा और वहाँ का काम पूरा करने को कहा एवं स्वयं दरोगा के साथ रवाना हो गये लेकिन रास्ते में ही गाँधीजी की एक आरक्षी उपाधीक्षक ने गाँधीजी को अपने टमटम पर बैठाया और कुछ दूरी पर उन्हें चम्पारण के जिला कलेक्टर डब्ल्यूएबी.आईकार्क की अधिसूचना दी जिसका आशय गाँधीजी को तुरन्त चम्पारण छोड़ने का था।

यहाँ यह बताना भी आवश्यक है कि गाँधीजी अपने कार्य को प्रशासन से चोरी छिपे करने वाले इन्सान नहीं थे। इसलिए उन्होंने मुजफ्फरपुर से ही 13 अप्रेल 1917 को एक पत्र तिरहुत डिविजन के कमिश्नर श्री एल.एफ. मार्सहेड को उनके वहाँ आने का कारण लिख दिया था एवं लिखा था कि वे वहाँ अपने मित्रों के बुलाने पर आये हैं। गाँधीजी के इस पत्र से जो बात निकलकर आती है वह यह है कि गाँधी किसी समस्या को जब तक स्वयं नहीं समझ लेते कि वास्तव में वहाँ कोई समस्या है या नहीं वह अपना दृष्टिकोण उसके बारे उन्होंने उक्त पत्र में उसे मामला करार दिया साथ ही अन्त में लिखा कि वे वहाँ एक सम्मानपूर्ण समझौता कराने आये है। स्पष्ट है कि वे अपने निर्णय को सार्वभौमिकता वाला या दोनों पक्षों को सर्वमान्य हो ऐसा रास्ता उस समस्या के समाधान के तौर पर निकालना चाहते थे।

किन्तु गाँधीजी की इस मानसिकता को भला वहाँ विराजमान अंग्रेज अधिकारी नहीं समझ सकें एवं उन्हें जिला कलेक्टर का चम्पारण छोड़ने का आदेश थमा दिया गया। गाँधीजी इससे बिल्कुल विचलित नहीं हुए और उन्होंने 16 अप्रेल 1917 को मोतिहारी से ही अपना प्रत्युत्तर जिला मजिस्ट्रेट को भिजवा दिया जिसमें उन्होंने लिखा कि उनका उद्देश्य कोई आन्दोलन खड़ा करने का नहीं अपितु उनकी विशुद्ध और एक मात्र इच्छा जानकारी प्राप्त करने का वास्तविक प्रयत्न करना है। गाँधीजी के इस पत्र से हम यह जान सकते हैं कि गाँधीजी तब तक प्रशासन से किसी तरह का कोई झगड़ा मोल लेना नहीं चाहते थे जब तक कि वे चम्पारण क्षेत्र की जनता का समर्थन पूरी तरह से प्राप्त न कर लें। अन्यथा, उन्हें यह आवष्य पता था कि आन्दोलन प्रारम्भिक अवस्था में ही दम तोड़ सकता था।

गाँधीजी के साथ मोतिहारी में जो कुछ हुआ था या हो रहा था, उसकी सूचना गाँधीजी ने तार द्वारा मदनमोहन मालवीय, एच. एस. पोलक, राजेन्द्र प्रसाद और अन्य प्रमुख लोगों को दे दी थी। उस रात गाँधीजी रात भर चिट्ठियाँ लिखते रहे एवं बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद को आवश्यक आदेश देते रहे। गाँधीजी को यह आभास हो चुका था कि उनका चम्पारण में रहना अंग्रेज अधिकारियों के आँखों के लिए किरकिरी पैदा कर रही है। इसीलिए उनके जेल जाने की स्थिति में चम्पारण आन्दोलन को कैसे आगे बढ़ाया जाये, इसके लिए गाँधीजी ने एक योजना बना दी जिसमें निम्नलिखित बातें कही गई:-

1. कार्यकर्तागण नियमित रूप से गाँवों में जाये और जिन लोगों से पूछताछ की जाये उन सबकी गवाहियाँ लिख ली जाये।

2. जहाँ गवाही देने वाले लोग अपने बयानों पर दस्तखत या अंगूठा-निशानी देने के लिए राजी हो वहाँ उनके दस्तखत या अंगूठा निशानी ले ली जाये।

3. जहाँ लोग दस्तखत करने से इन्कार कर दें वहाँ भी उनकी गवाहियाँ ले ली जाये। दस्तखत देने से इन्कार का कारण लिख दिया जाये।

4. जिन वकीलों का काश्तकारों के मुकदमों से थोड़ा सा भी वास्ता था उनसे गवाही देने की प्रार्थना की जाये। इसी तरह के कुछ अन्य निर्देश भी गाँधीजी ने लिख दिये थे।

6.5 गाँधी के प्रति चम्पारण की रैयतों का विश्वास

---

17 अप्रेल का दिन एक अद्भुत दिन था जिसने यह दर्शा दिया था कि वहाँ के किसानों में गाँधीजी के प्रति एक जबरदस्त विश्वास उमड़ पड़ा था, जो अपनी समस्या को बयान के रूप में गाँधीजी के साथियों को लिपिबद्ध करवा रहे थे। गाँधीजी में भी वहाँ की समस्या को समाप्त करने के लिए उस जन-समूह को देख आत्मविश्वास में निश्चित ही वृद्धि हुई होगी।

17 अप्रेल को दिन भर रैयतों के बयान दर्ज करने का कार्य चलता रहा। इस दिन गाँधीजी मोतिहारी के समीप के गाँव जाना चाहते थे जिसके बारे में उन्होंने एक पत्र द्वारा सरकारी अधिकारियों को भी अवगत करा दिया था एवं उसमें उन्होंने साफ लिखा था कि वे बिना अधिकारियों को अवगत कराये कुछ नहीं करना चाहते हैं।

17 अप्रेल को ही गाँधीजी को 18 अप्रेल को 12 बजे दिन में मोतीहारी के अनुमंडलाधिकारी के समक्ष उपस्थित होने का सम्मन मिला। फलतः गाँधीजी ने अपनी यात्रा रद्द कर दी एवं अपने सहकर्मियों के साथ उनके जेल जाने के पश्चात की स्थिति पर चर्चा की, जिस पर धरनी बाबू ने गाँधीजी को अपनी ओर से आश्वस्त किया कि उनके जेल जाने की स्थिति में वे उनकी जगह काम जारी रखेंगे।

18 अप्रेल 1917 इतिहास का वो दिन था जिस दिन गाँधीजी चम्पारण के दीन एवं दुखी लोगों के लिये जेल जाना स्वीकार कर रहे थे। यह एक अति महत्वपूर्ण दिन था किन्तु अदालत में गाँधीजी के द्वारा दिये गये बयान जिसमें उन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि उन्होंने धारा 144 के विरूद्ध जो कार्य किया है वह कार्य अपने लिये नहीं अपितु मानव जाति एवं राष्ट्र की सेवा करने की मंशा से किया हैं एवं उनका प्रयास सरकारी आदेश की अवहेलना करने का बिल्कुल नहीं है। गाँधी ने कहा कि मामलें को समझे बिना उनकी (रैयतों) किसी प्रकार की सहायता करना उनके लिए संभव नहीं था। इसी कारण इस प्रश्न का अध्ययन, यदि संभव हो तो सरकार एवं

बागान मालिकों की सहायता लेकर, करने के लिये वहाँ के लोगों के आग्रह पर वे वहाँ आये हैं एवं वह कार्य वे अपनी मर्जी से नहीं, अपितु अपनी अन्तरात्मा के आदेश पर कर रहे हैं। इसलिए अपनी मर्जी से उस जगह को छोड़कर जाना उनके लिए संभव नहीं है।

इस प्रकार गाँधीजी ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। मजिस्ट्रेट ने अदालत को 21 अप्रेल तक स्थगित रखा और गाँधीजी को पाबंद किया कि वे इस बीच सुपरिन्टेडेन्ट व जिला मजिस्ट्रेट से मिले और गाँवों में घूमना बन्द करें। इस आदेष को गाँधीजी ने स्वीकार कर लिया।

गाँधीजी के द्वारा अदालत में दिये बयान से जिसमें उन्होंने अपराध स्वीकार कर जेल जाने में कोई आपत्ति प्रकट नहीं की सरकारी वकील, मजिस्ट्रेट और दूसरे अधिकारी को किंकत्र्तव्यविमूढ़ कर दिया। वे नहीं समझ पा रहे थे कि उन्हें क्या करना चाहिये। सरकारी वकील की राय थी कि मुकदमा मुल्तवी किया जावे, किन्तु गाँधीजी ने हस्तक्षेप करते हुए क्योंकि वे चम्पारण छोड़ने के आदेश का उल्लघंन करने का अपराध स्वीकार करना चाहते थे, मुकदमा मुल्तवी नहीं करने का आग्रह किया। गाँधीजी ने इस बीच अपने मित्रों को पत्र लिखना जारी रखा था जिसमें उन्होंने चम्पारण की समस्या को जिस प्रकार समझा था, उसका वर्णन उन्होंने अपने पत्रों में किया। अप्रेल 1917 को गाँधीजी अदालत में उपस्थित हुए एवं उनके यह कहने पर कि उनके पास कोई जमानती नहीं है, मजिस्ट्रेट ने उन्हें अपनी जमानत पर रिहा कर दिया। इसे गाँधीजी को चम्पारण में पहली जीत के रूप में देखा जा सकता है, किन्तु जब तक सरकारी आदेश प्राप्त नहीं हो जाते तब तक गाँधीजी ने समाचार पत्रों से कोई आन्दोलन नहीं करने का अनुरोध किया।

6.6 गाँधी कार्य योजना

21 अप्रेल 1917 को गाँधीजी के अदालत में उपस्थित होने एवं उनके यह कहने पर कि उनके पास कोई जमानती नहीं है, मजिस्ट्रेट द्वारा उन्हें अपनी जमानत पर रिहा कर देने की घटना को गाँधीजी को चम्पारण में पहली जीत के रूप में देखा जा सकता है। किन्तु चम्पारण समस्या का हल अभी काफी दूर था। जब तक सरकारी सहयोग प्राप्त नहीं होता तब तक इसका कारगार निदान सम्भव नही था।

तत्पश्चात् गाँधीजी ने 21 अप्रेल को ही बाँकीपुर, मोतीहारी से समाचारपत्रों में एक वक्तव्य जारी किया, जिसने सरकार को उसके द्वारा किए जाने वाले मदद के लिए धन्यवाद दिया गया। साथ ही गाँधीजी ने अपने वक्तव्य के अन्त में समाचारपत्रों को एक सन्देश भी दिया जिसमें समाचार पत्रों द्वारा कोई सार्वजनिक आन्दोलन खड़ा न करने का आग्रह किया गया क्योंकि गाँधीजी को लगा कि इससे चम्पारण विशेष की समस्या राष्ट्रीय स्तर पर उद्दृत होकर उभर सकती थी और जिससे राष्ट्रीय स्तर के स्वतंत्रता आन्दोलन को तो बल मिल सकता था किन्तु उससे चम्पारण के किसानों का शीघ्र भला होना संभव नहीं था।

22 अप्रेल को गाँधीजी ने मोतीहारी से बेतियां के लिए प्रस्थान किया। वे तृतीय श्रेणी के डिब्बे में यात्रा कर रहे थे। रास्ते में हर स्टेशन पर लोग उनका अभिवादन करते। बेतिया शाम 5 बजे पहुँचे तो बड़ी संख्या में लोगों ने स्टेशन पर उन पर फूल बरसाये। जाहिर था कि गाँधीजी की प्रतिष्ठा चम्पारण के हर क्षेत्र में फैल चुकी थी। तत्पश्चात् गाँधीजी अपने उक्त वर्णित साथियों में से किसी ना किसी के साथ आसपास के गाँव जाने लगे। अप्रेल को वे बाबू ब्रजकिशोर को लेकर लौकरिया गाँव गये, वहाँ की रैयतों ने अपने दुखदर्द गाँधीजी को खुलकर सुनाये। 26 अप्रेल को वे कूरिया कोठी के अन्तर्गत ग्राम छपरा गये। इस इलाके के रैयतों के घर के चारों ओर नील उपजाए जाने एवं उनकी घोर दरिद्रता देख गाँधीजी का हृदय पिघल गया। 27 अप्रेल को गाँधीजी बेलवा कोठी के अन्तर्गत कुछ गाँव देखने गये।

इस प्रकार गाँधीजी ने कई गाँवों का दौरा किया और वहाँ की समस्याओं, जो कि लगभग एक जैसी ही हुआ करती थी, लिपिबद्ध कर संबंधित पक्षकार से उनके बयान पर दस्तखत या अंगूठा निशानदेही के तौर पर ले लिया करते थे। साथ ही गाँधीजी द्वारा बहुत से प्लान्टरों के पक्षों को भी सुनते एवं उनके बयान लिखवा लिया करते थे, ताकि समस्या का सार्वभौमिक हल निकालना संभव हो सके। इसमें कुछ प्लान्टरों ने अपने पक्ष में बयान देने के लिये रैयतों में से ही कुछ को लालच या प्रलोभन देकर अपने पक्ष में बयान देने को उकसाने का कार्य भी किया और उन्होंने गाँधीजी की जाँच को बन्द करवाने की मुहिम छेड़ी, जिसमें उनके पक्ष में अधिकारियों ने अपनी रिपोर्ट जाँच को बन्द करने के लिए लिखा।

इसी तरह की एक रिपोर्ट बिहार प्लान्टर्स संघ के सचिव, एम.ई. कोक्स ने तिरहूत प्रमंडल के आयुक्त, एल.एफ. मोर्सेड को 28 अप्रेल को एक पत्र में लिखा। जिसका अभिप्रायः यह था कि, 'गाँधीजी का यह कार्य रैयतों एवं कृषि श्रमिकों (खेत मजदूरों) को प्लान्टरों तथा जमींदारों के विरूद्ध उत्तेजित करना है और यह आन्दोलन का रूप ले रहा है।

इसके अलावा कोक्स ने अपने पक्ष में यह भी लिखा कि ओल्हा कोठी का एक घर जलाया जा चुका है। बोकराहा कोठी के मैनेजर के कार्यालय में आग लगा दी गई है। मेनाटानों के दरोगा के ग्राम खम्भिया में आग लगी है। टीकरी या पकरी कोठी के इलाके में ग्राम मझरिया के लोगों ने मैनेजर के प्यादे को पीटा है। गाँधीजी का इन सब में प्रत्यक्ष हाथ नहीं है, किन्तु उनकी उपस्थिति में लोगों ने यह सब किया है। साथ ही उसने अपनी बात में वजन देने के लिए लिखा, कि हिन्दूस्तान में अर्द्धशताब्दी से ऐसा नहीं हुआ है, इसलिए इस समस्या से निकलने का एक मात्र रास्ता गाँधीजी की जाँच कार्य तुरन्त बन्द करवाकर एक आयोग की नियुक्ति कर दी जावे।

तत्पश्चात् कलकत्ता के यूरोपीय डीफेंस एसोसियेशन ने अपनी मुजफ्फरपुर शाखा के कहने पर भारत सरकार को गाँधीजी का जाँच कार्य बन्द कराने के हेतु एक प्रार्थना पत्र दिया। इस स्थिति में बिहार सरकार के सचिव ने 6 मई 1917 को गाँधीजी के पास एक तार भेजकर उनसे श्री विलियम मौड़ (वाइसराय के एक्जक्यूटिव कौंसिल का

उपाध्यक्ष) को मिलने को कहा। तत्पश्चात् गाँधीजी अपने उक्त लिखित साथियों में से किसी ना किसी के साथ आसपास के गाँव जाने लगे। अप्रेल को वे बाबू ब्रजकिशोर को लेकर लौकरिया गाँव गये, वहाँ की रैयतों ने अपने दुखदर्द गाँधीजी को खुलकर सुनाये। 26 अप्रेल को वे कूरिया कोठी के अन्तर्गत ग्राम छपरा गये। इस इलाके के रैयतों के घर के चारों ओर नील उपजाए जाने एवं उनकी घोर दरिद्रता देख गाँधीजी का हृदय पिघल गया। 27 अप्रेल को गाँधीजी बेलवा कोठी के अन्तर्गत कुछ गाँव देखने गये।

10 मई को गाँधीजी ने मौड से मुलाकात की एवं मौड ने गाँधीजी से उनके सहकर्मी वकीलों को जाँच से अलग रखने की बात कही, जिसे गाँधीजी ने यह कहते हुए अस्वीकार कर दी कि वे अपना जाँच कार्य सरकारी नियमों की अनदेखी करते हुए नहीं करेंगे। साथ ही गाँधीजी ने अपनी जाँच कार्य की एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने श्री मौड को यह अवश्य कहा कि जाँच कार्य में कुछ परिवर्तन किया जाना संभव है, किन्तु इसे बन्द किया जाना संभव नहीं है।

तत्पश्चात् गाँधीजी ने चम्पारण के किसानों की हालत संबंधी अपनी जाँच रिपोर्ट 13 मई को बिहार-उड़ीसा के मुख्य सचिव को भिजवाई जिसमे उन्होंने कहा कि मौड द्वारा चाहा गया आश्वासन कि जो वकील मित्र गाँधी को सहायता पहुँचा रहे हैं उन्हें इस काम से हटा लिया जाये संभव नही है। गाँधी ने कहा कि उन्हें छोड़ देना स्वयं के कामों को छोड़ देने के बराबर होगा। तर्क देते हुए उन्होंने कहा कि सज्जनोचित व्यवहार का तकाजा है कि वे उनकी सहायता का त्याग तब तक न करेंगे जब तक यह सिद्ध न हो जाये कि उन्होंने कोई अनुचित कार्य किया हैं। उन्होंने कहा कि उन्हे ऐसी कोई आशंका नहीं है कि उनकी अथवा उनके मित्रों की उपस्थिति में कोई श्खतरनाक स्थिति पैदा हो सकती है। खतरा अगर कहीं है, तो वह उन कारणों में हैं, जो गोरे जमींदारों और किसानों के बीच आज के तनावपूर्ण संबंधों के लिए जिम्मेदार हैं। अगर यह कारण दूर कर दिये जाते हैं तो जहाँ तक किसानों का सवाल हैं चम्पारण में किसी खतरनाक स्थिति के पैदा होने का डर रखने का कोई कारण नहीं है।

उन्होंने कहा कि चम्पारन जिले मे किसान अनेक प्रकार से पीडित एवं शोषित किए जा रहे हैं। तिन-काठियाँ की पद्धति ने किसानों को सबसे ज्यादा तकलीफ पहुंचायी है। उसका स्वरूप समय के साथ बदलता रहा है। आरम्भ नील से हुआ था, किन्तु धीरे-धीरे उसने सभी फसलों को अपनी लपेट में ले लिया है। वे किसान की जमीन से संबद्ध, ऐसी बाध्यता है, जिसके कारण किसानों को जमींदार की मर्जी के अनुसार अपने जमीन के 3/20 हिस्से पर कोई खास फसल उगानी पड़ती है और उसके एवज में उसे एक निर्दिष्ट मुआवजा दिया जाता है। गाँधी ने कहा कि इस प्रथा का कोई कानूनी औचित्य नहीं है और यद्यपि किसानों ने इसका सदा विरोध किया है उन्हें बल प्रयोग के आगे झुकना पड़ा हैं। गाँधी ने कहा कि किसानों को अपनी सेवाओं के लिए पर्याप्त मुआवजा भी नहीं मिलाता है। कृत्रिम नील के आने के बाद जमींदारों ने नील ने अपना नुकसान किसानों के सर थोपने की तरकीब ढूंढ निकाली। नील की खेती कराने का अपना अधिकार छोड़ने की एवज में पट्टेदार किसानों से तावान वसूल

किया, जो प्रति बीघा रूपये 100 तक था जिसकी वसूली जबरदस्ती की जाती है। जहाँ किसान नकद पैसा नहीं दे सके, वहाँ उन्होंने रकम किश्तों में चुकाने के लिए हैड-नोट या रहनामा लिख कर 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज देने को मजबूर किया जाता है। गाँधी ने (शरहबेशी) यानी नील की खेती का हक छोड़ने की एवज में लगान में की गई बढ़ोतरी की भी घोर आलोचना की । गाँधी ने कहा कि, तीन-कठिया पद्धति के तहत किसान जमींदारों की बताई हुई फसलें उगाने के लिए अपनी सर्वोत्तम जमीन देने के लिए बाध्य हुए हैं और कई बार तो इसके लिए उन्हें अपने घर के ठीक सामने की जमीन देना पड़ा है तथा इसके लिए उन्हें अपने समय और शक्ति का सर्वोत्तम अंश भी देना पड़ा है। परिणामस्वरुप उन्हे अपनी फसल उगाने के लिए बहुत ही कम समय मिल पाता है। गाँधी ने कहा कि किसानों के साथ फेक्ट्रियों मे किराये पर गाड़िया देने के लिए भी जबरदस्ती साटे किया जाता है और इस काम के लिए किसानों को जो पैसा खर्च करना पड़ता है वह भी उससे पूरा वसूल नहीं होता। किसानों से जबरदस्ती काम लिया जाता हैं और उन्हें पर्याप्त मजदूरी भी नहीं दी जाती। अल्पवयस्क लड़कों तक से उनकी इच्छा के विरूद्ध काम कराया जाता हैं। फेक्ट्रियों के मालिक किसानों के हल उठवा लेती हैं और उन्हें अपनी जमीन जोतने के लिए लगातार कई दिनों तक इस्तमाल करते हैं और उसे अपने पास रखते हैं, जबकि किसानों को भी अपनी जमीन जोतने के लिए उनकी जरूरत होती है। फेक्ट्रियों के मालिक उन्हें इसका बहुत ही कम पैसा देते हैं।

फैक्ट्रियों मे काम करने वाले मजदूरों की दयनीय स्थिति के बारे मे गाँधी ने कहा कि वहाँ पर नौकरी करने वालों को बहुत ही कम वेतन मिलता है और यह नौकर मजदूरों की मजदूरी से दस्तूरी वसूल करते हैं जो अक्सर उनकी दैनिक मजदूरी का पाँचवा हिस्सा होती हैं। वे गाड़ियों और हलों के किराये में से भी हिस्सा वसूल करते हैं। विरोध करने वाले किसानों पर गैर-कानूनी व भारी-भरकम जुर्माना लगाए जाते हैं।

किसानों को झुकाने के लिए जमींदार द्वारा जो अन्य नये उपाय काम में लिए जाते हैं, उनका हवाला भी गाँधी ने दियो है। इनमे किसानों के गाय-बैल आदि पकड़वाकर कांजी हौज में डाल देना, उनके घरों पर चपरासी बिठा देना, उनके नाई, धोबी, बढ़ई और लुहार बन्द कर देना, गाँव के कुंए बन्द कर देना, उनके घरों के सामने या पिछवाड़े की जमीन और रास्ते जोतकर कुओं और चरागाहों पर उनका जाना मुश्किल कर देना, उनके खिलाफ दिवानी मुकदमें चलाना या चलवाना, उनके खिलाफ फौजदारी की शिकायतें करना, उन पर शारीरिक बल का प्रयोग करना और उन्हें बन्द कर रखना, इत्यादि का उल्लेख गाँधी ने किया है। जमींदारों ने किसानों को अपनी मर्जी मुताबिक चलाने के लिए उन पर कई प्रकार के जुल्म किए हैं। वे सड़कों का जो किराया देते हैं, उसका आधा आना प्रति रूपया किसान भी देते हैं, किन्तु उन्हें सड़क का उपयोग शायद ही करने दिया जाता हैं। उनकी गाड़ियों और बैलों को, जिन्हें सड़कों की शायद सबसे ज्यादा जरूरत है, उनका उपयोग किंचित ही करने दिया जाता है। गाँधी ने कहा कि चम्पारण मे किसानों की जितनी खराब स्थिति है वैसी स्थिति भारत मे कहीं और नही है। वे जमींदारों की शक्ति, अधिकार और सामर्थ्य की स्थिति से आतंकित हैं। गाँधी ने सरकार से आग्रह किया कि चम्पारण के किसानों और मजदूरों के साथ किये जाने वाले जुल्म को दूर करने में सार्थक प्रयास करे। उन्होंने यह

आष्वासन दिया कि चम्पारण में उनकी मौजूदगी किसानों और मजदूरों की इन समस्याओं को दूर करने हेतु किये जाने वाले प्रयास से प्रेरित है। उनका कहना था कि सरकार उनके इस प्रयास में मदद करें।

6.7 जाँच समिति

4 जून 1917 को लेफ्टिनेंट गर्वनर और एक्जिक्यूटिव कौंसिल के सदस्यों के साथ बैठक के उपरान्त भारत सरकार की अनुमति से एक जाँच समिति का गठन किया गया, जिसका सदस्य बनने के लिये गाँधीजी तब तैयार हुए जब जाँच के सम्बंध में उन्हें अपने सहयोगियों से परामर्श करने के लिए स्वतन्त्र होंन के बात कही गई। समिति के अध्यक्ष एफ.जी. स्लाई, कमिश्नर, मध्यप्रदेश को बनाया गया। अन्य सदस्य के रुप मे एल.सी. ऐडमी, डी.जे. रीड, श्री जीर्नैनी और गाँधी को रखा गया। गाँधीजी को उक्त समिति का सदस्य बनाने पर ऐंग्लो-इण्डियन अखबारों यथा 22 जून 1917 को प्रकाशित स्टेट्समेन में जेण्डब्ल्यूण्जेक्सन ने आलोचना की।

जाँच समिति के निम्नलिखित कार्य निर्धारित थे :-

1. चम्पारन जिले के जमींदारों और किसानों के संबंधों की जाँच करना, इसमें नील की खेती और नील तैयार करने से संबंधित समस्त विवाद आ जाता है।

2. इन विषयों में प्राप्त प्रमाणों की जाँच करना और स्थानीय रूप से और अन्यथा, जैसा समिति उचित समझे, आगे जाँच करके अन्य प्रमाणों को इकट्ठा करना और

3. अपने निष्कर्षों से सरकार को अवगत कराना और साथ ही जिन अनुचित प्रथाओं एवं शिकायतों का उसे पता चले, उनको दूर करने के उपाय सुझाना।

साथ ही सपरिषद लेफ्टिनेंट गर्वनर चाहते थे कि जाँच समिति तथ्यों का पता लगाने के लिए जो कार्यविधि ठीक समझे उसे अपनाने के लिये स्वतन्त्र रहे। साथ ही यह भी आशा की गई थी कि उक्त समिति लगभग तीन माह में अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत करेगी जिसकी पहली बैठक 15 जुलाई 1917 के आस-पास होगी। तत्पश्चात् जाँच समिति ने अपनी कार्यप्रणाली प्रारम्भ की। जाँच समिति ने प्रान्त के अखबारों में एक सूचना छपवाई थी और वह मोतिहारी में कलेक्टर की कचहरी और बेतिया की तहसील में भी चस्पा की गई थी। इसमें कहा गया था कि जिन व्यक्तियों, संघों और सार्वजनिक संस्थाओं को लिखित गवाही देनी हो, वे अपनी गवाहियाँ समिति के मन्त्री को भेज दें। उसमें यह भी कहा गया था कि बेतिया, मोतिहारी और अन्य केन्द्रों में, जहाँ बैठकें करना आवश्यक समझा जाये, 15 जुलाई से प्रारम्भ होगी।

समिति की प्रारम्भिक बैठक अपनी कार्यविधि और जाँच का क्षेत्र निश्चित करने के लिए 11जुलाई को राँची में हुई और उसकी खुली बैठकें 17 जुलाई को बेतिया में आरम्भ हुई थी। बेतिया और मोतिहारी में 8 बैठकें हुई

जिनमें 19 व्यक्तियों की गवाहियाँ दर्ज की गई, इनमें से 4 सरकारी अधिकारी (बन्दोबस्त अधिकारी, बेतियां का सब-डिविजन अधिकारी, चम्पारण जिले का कलेक्टर और बेतियां राज का मैनेजर) किसानों के तीन प्रतिनिधि बिहार बागान मालिक संघ का प्रतिनिधि और 12 संस्थाओं के मैनेजर थें। 8 संस्थाओं में स्थायी जाँच भी की, जिसमें मैनेजरों से विस्तृत पूछताछ की गई। संबंधित नील की कोठियों के रजिस्टर और हिसाब किताब देखें गये। उन किसानों से पूछताछ की गई, जिन्होंने लिखित वक्तव्य दिये थे और किसानों के बड़े-बड़े समूदायों से जो समिति के सदस्यों से मिलने के लिए इकट्ठे हुए थे बहुत सी बातें पूछी गई। स्थानीय सरकार ने अपने सरकारी कागजात उपलब्ध करके कुछ सहायता की और संस्थानों के मैनेजरों ने समिति को चाही गई जानकारी दी एवं अपने कागजात एवं रजिस्टर जाँचने की सुविधाऐं दी। समिति द्वारा उनकी सहायता के लिए कृतज्ञता ज्ञापित की गई।

6.7.1 समिति की अनुशंसाऐं

3 अक्टूबर 1917 को समिति ने सर्वसम्मति से एक रिपोर्ट पर अन्तिम सहमति दे दी और अगले दिन बिहार सरकार के समक्ष उसे प्रस्तुत कर दिया गया। सरकार ने प्रायः सभी अनुशंसाऐं स्वीकार कर ली। 18 अक्टूबर 1917 को इस आशय की अधिसूचना प्रकाशित कर दी गई। लेफ्टिनेंट गर्वनर ने समिति के सभी सदस्यों को सभी पक्षों को स्वीकारणीय समझौता की शर्ते अभिस्तावित करने तथा उसके हेतु उन्होंने जो परिश्रम किया था, उसके लिए धन्यवाद ज्ञापित किया था। अनुशंसाऐं मुख्यतः इस प्रकार थी :-

1. तीनकठिया प्रथा नील या कोई भी अन्य फसल उपजाने के हेतु पूर्णतया समाप्त कर दी जानी चाहिए।

2. यदि नील उपजाने के लिए किसी तरह की बंदोबस्ती की आवश्यकता हो तो वह निम्नलिखित शर्तो पर की जा :-

(क) बन्दोबस्ती स्वेच्छा से हो।

(ख) उसकी अवधि तीन वर्ष से अधिक की नहीं हो।

(ग) किस खेत में नील उपजाया जाएगा, इसका निर्णय रैयत के हाथों में होना चाहिए।

(घ) नील के पौधों की विक्रय-दर रैयत अपनी इच्छानुसार तय करें।

(ङ) नील के पौधों का मूल्य वजन के अनुसार भुगतान किया जाए। यदि रैयत सहमत हो तो पौधों को तराजू पर तौलने के बदले कनकूत किया जा सकता है।

3. मोतिहारी और पिपरा संस्थानों में परिवर्तित मालगुजारी दरें 26 प्रतिशत कम कर दी जाएं और तुरकोलिया कोठी में 20 प्रतिशत।

(क) जलहा और सीरनी कोठियों में मोतिहारी और पिपरा की तरह ही कमी की जाए।

(ख) जिन रैयतों के कागजों पर तीनकठिया लगान का उल्लेख हो, उन्हें उपर्युक्त अनुपात में बढ़ी हुई मालगुजारी देनी होगी।

(ग) बेतिया राज की घाट कोठी ने नील लगान का दावा नहीं किया है। इस कोठी के रैयतों ने इस शर्त पर नील उपजाने का सट्टा किया है कि उनकी मालगुजारी दरों में वृद्धि नहीं की जाएगी। अतः कोठी ने बन्दोबस्ती पदाधिकारियो के समक्ष वृद्धि के लिए आवेदन नहीं किया। उस इलाके के रैयत अब नील की खेती छोड़ना चाहते हैं। अतः उस कोठी को मालगुजारी बढ़ाने का अवसर मिलना चाहिए।

4. जिन रैयतों ने नकदी या हैंडनोट के द्वारा तावान की चुकती की है, उन्हें कोठियों से उसका 1/4 वापस मिल जाएगा। ऐसी बस्तियों में, जो कोठी को मोकररी के रूप में दी गई है, तावान की सम्पूर्ण रकम रैयतों को लौटा दी जाएगी। बेतिया कोर्ट ऑफ वार्डस उनसे 7 वर्षो तक अपनी जमाबन्दी की वृद्धि नहीं करेगी।

5. अबवाब की वसूली सर्वथा गैरकानूनी है। भविष्य में उनके खलिहान में लिखित मालगुजारी सरह सेअधिक जमींदारों को भुगतान नहीं करना है।

6. रैयत के वारिसों के नाम दर्ज कराने के लिए किसी तरह की फीस की वसूली गैरकानूनी है। अन्य मामलों में ऐसी फीस एक निश्चित दर से ली जानी चाहिए। बोर्ड ऑफ रेवेन्यू से कहा जाएगा कि बेतिया राज में वारिस का नाम चढ़ाने के लिए ऐसी कोई फीस की दर निश्चित करें और मोकररीदारों को उसी दर के अनुसार फीस वसूली का अधिकार होगा।

7. बेतिया राज में चरसा महाल समाप्त कर दिया जाना चाहिए, किन्तु जब तक रामनगर राज में इस मामले में पूरी तहकीकात नहीं कर ली जाती, तब तक अन्तिम आदेश नहीं दिए जाऐं।

8. किरासन तेल बेचने के लिए लाइसेंस जारी करना गैरकानूनी है और उसे एकदम समाप्त कर देना चाहिए।

9. बेतिया राज में रैयत मालिक को उपयुक्त दाम देकर सैरात में आधा हिस्सा खरीद सकता हैं किन्तु अगर किसी इलाके में इसकी आशंका हो कि बड़ी संख्या में पेड़ काट दिए जाएँगें तो बेतिया राज के मैनेजर को अधिकार होगा कि वह इस सम्बंध में रैयतों को दरखास्तों की संख्या वह परिसीमित कर सकता है।

10. जमींदारों, मोकररीदारों, ठीकेदारों को अधिसूचित कर दिया जाना चाहिए कि अपने इलाके में मवेशियों के लिए पर्याप्त परती और चारागाह वे छोड़ दें।

11. इनके लिए रैयतों पर जुर्माना करना और उसकी वसूली करना गैरकानूनी है। इसकी जानकारी रैयतों को अच्छी तरह दिया जाना चाहिए और जमींदारों, मोकरीरदारों और ठेकेदारों को इसकी वसूली करने से रोक दिया जाना चाहिए।

12. गाड़ी के सट्टा की अवधि 5 वर्ष से ज्यादा की न हो और इस सम्बंध में स्वेच्छा से लोग सट्टा करें।

13. मजदूरी स्वेच्छा पर आधारित होगी (किसी से जबरन मजदूरी नहीं कराई जायेगी)।

14. मालगुजारी की प्रत्येक किस्त का भुगतान करने पर उपयुक्त किस्ते देने के सम्बंध में समिति की अनुशंसा के संदर्भ में सरकार यदि संभव हो तो एक फारम निश्चित कर दे।

15. जिला पार्षदों से कहा जाए कि प्रायोगिक तौर पर ढाठों का प्रबन्ध वह स्वयं करें। उसे कोठी या दूसरे ठीकेदारों के हाथ में नहीं सौंपे।

राँची से गाँधीजी चम्पारण लौटे और वहाँ 12 अक्टूबर तक रहे। इस बीच रैयत उनके समक्ष आते रहते थे और वे समिति की अनुशंसाओं की मुख्य बातें उन्हें समझाते। इस दरमियान बिहार के छात्रों ने गाँधीजी को बिहार छात्र सम्मेलन के 15 अक्टूबर को भागलपुर में होने वाले अधिवेशन का अध्यक्ष मनोनीत किया था। अतः बम्बई जाने के पहले गाँधीजी भागलपुर गए। चम्पारण का काम मुजफ्फरपुर के एक वकील बाबू जनकधारी प्रसाद के हाथों में देकर भागलपुर गए। जनकधारी बाबू इस काम के लिए मोतिहारी में ही रहने लगे थे।

जाँच समिति की अनुशंसाऐं चम्पारण जिला में शीघ्र ही सरकार की ओर से एक अधिसूचना द्वारा जारी करके प्रचारित कर दी गई। इसके लिए ‘चम्पारण का उद्धार’ नामक पुस्तिका भी प्रकाशित की गई। जिला के कोने-कोने में रैयतों को भारी राहत मिली। एक ऐसी व्यवस्था से मुक्त होने की आशा का उनमें संचार हुआ, जो उनके जीवनरस का ही शोषण कर लेती थी तथा अभिशप्त जिन्दगी बिताने को उन्हें बाध्य करती थी।

6.7.2 चम्पारण कृषि कानून

प्लान्टरों द्वारा समिति की रिपोर्ट पर असंतोष जारी किया गया व सरकार की अधिसूचना पर भी इंगलिशमैन और स्टेट्समैन जैसे अखबारों के जरिये प्रश्नचिन्ह लगाये किन्तु सरकार ठस से मस नहीं हुई। हालांकि जाँच समिति के सदस्य पी. कैनेडी एवं श्री जे.बी. जेम्सन (दोनों की प्लान्टर्स की तरफ से समिति के सदस्य थे) ने जाँच समिति की रिपोर्ट पर असंतोष प्रकट किया किन्तु 29 नवम्बर 1917 में चम्पारण कृषि विधेयक प्रस्तुत किया गया जिस पर काफी चर्चा होने के पश्चात 4 मार्च 1917 को विधेयक चम्पारण कृषि कानून के नाम से अभिज्ञात हुआ। अन्ततः चम्पारण कृषि कानून के अस्तित्व में आ जाने से चम्पारण के किसान शोषित जीवन से मुक्त हुए।

6.8 सारांश

निष्कर्ष के रूप में हम देखें तो पायेंगे कि गाँधीजी के द्वारा चम्पारण के किसानों की इस वृहद समस्या से मुक्ति दिलवाने में उनके जिस व्यक्तित्व की झलक दिखाई देती है उसके बारे में राजेन्द्र बाबू के यह शब्द स्मरण आते है, जो उन्होंने गाँधीजी के बारे में उनके जाँच समिति के सदस्य के नाते किये कार्य पर कहे थे, हमने गाँधीजी को पहली बार एक वार्ताकार एवं शान्तिदूत के रूप में देखा। सैद्धान्तिक प्रश्नों पर वे टस से मस नहीं होते थे, किन्तु विस्तार की बातों में प्लान्टरों की बात काफी हद तक मान लिया करते थे। इस प्रकार यह बात बिल्कुल स्पष्ट रूप से उभर कर आती है कि वे अपनी बात उस हद तक मनवाने में सफल रहते थे जिस हद तक कि वार्ता के दौरान कोई कटुता उत्पन्न नहीं हो।

गाँधीजी के व्यक्तित्व के बारे में लिखना, कोई छोटी-मोटी बात नहीं है। बहुत से विद्वानों द्वारा उनके व्यक्तित्व, दृष्टिकोण, सिद्धान्त, कार्य-कलाप के बारे में बहुत कुछ लिखा गया है किन्तु यदि यह कहा जाये कि चम्पारण के किसानों के लिए वे किसी अवतार से कम नहीं थे, तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। इस आन्दोलन के सफल इतिहास में एक ऐसे अंग्रेज अधिकारी मार्डोक को नहीं भुलाया जाना चाहिए, जिसने सही नीति का अनुसरण करते हुए सरकार द्वारा गठित जाँच समिति की रिपोर्ट को रैयतों के पक्ष में चम्पारण कृषि कानून के नाम से पारित करवाने में अपना विशेष योगदान दिया तथा अपने ही बिरादरी के लोगों, चाहे वे अंग्रेजी अखबार, जो कि निहले साहबों के पक्ष में फैसला चाहते थे, हो या जाँच समिति के अंग्रेज सदस्य, सबकी बातों को दरकिनार करते हुए एक निष्पक्ष शासक की भूमिका प्रस्तुत कर एक सही नीतिकार की भूमिका निभाई।

6.9 अभ्यास प्रश्न

1. चम्पारण की समस्या से आप क्या समझते हैं?
2. चम्पारण समस्या पर गाँधी की कार्य योजना का वर्णन कीजिए।
3. चम्पारण समस्याओं में गाँधी की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए।

4. चम्पारण समझौते की प्रमुख अनुशंसाएँ क्या थी?

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डेविड हार्डीमन, पीजेन्ट नेशनालिटिज ऑफ गुजरात, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1981

2. भट्टाचार्य, बुद्धदेव, एवोल्यूशन ऑफ द पॉलिटिकल फिलॉसॉफी ऑफ गाँधी, कलकत्ता बुक हाऊस, कलकत्ता 1969

3. ब्राउन जूडिथ, गाँधीज राईज टू पावर : इण्डियन पोलिटिक्स 1915-1922, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1977

4. कुमार, बी. अरूण, गाँधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008

5. कालिकिंकर दत्त, बिहार में स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना

इकाई - 7

खेड़ा सत्याग्रह एवं गाँधी

इकाई रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 खेड़ा आन्दोलन

7.3 खेड़ा के किसानों को न्याय दिलाने में गाँधीजी के प्रयास

7.3.1 खेड़ा सत्याग्रह

7.3.2 खेड़ा सत्याग्रह में समाचार-पत्रों की भूमिका

7.3.3 पारेख जाँच रिपोर्ट

7.3.4 खेड़ा की स्थिति से अंग्रेज पदाधिकारियों को अवगत करवाना

7.4 आन्दोलन की समाप्ति

7.5 खेड़ा सत्याग्रह के अन्त पर गाँधी के विचार

7.6 सारांश

7.7 अभ्यास प्रश्न

7.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप जान पाएँगे :-

- खेड़ा किसान आन्दोलन की प्रकृति
- खेड़ा सत्याग्रह की कार्ययोजना
- खेड़ा के किसानों को न्याय दिलाने में गाँधीजी की भूमिका
- खेड़ा आन्दोलन के बारे में गाँधीजी के विचार

7.1 प्रस्तावना

गुजरात जो कि ब्रिटिश शासन के अधीन बम्बई सरकार के अन्तर्गत आता था, वहाँ सरकार सीधे ही अपने द्वारा नियुक्त अधिकारियों के जरियेकिसानों से हर वर्ष कर लया करती थी। वृहत्तर बम्बई प्रान्त में फसल रूपये में बारह आने हो, तो उसे सामान्य माना जाता था। 'कर' से तात्पर्य एक ऐसे अनिवार्य भुगतान से है जो सरकार को सार्वजनिक हितों से संबंधित खर्चों की पूर्ति के लिए चुकाया जाता है और उस भुगतान के बदले करदाता को कोई भी हित या लाभ मिले, यह आवश्यक नहीं है। डाल्टन के शब्दों में देखें तो आर्थिक दृष्टि से सबसे आदर्श कर प्रणाली वह है, जिसके कम से कम बुरे आर्थिक प्रभाव हो तथा अधिक से अधिक अच्छे आर्थिक प्रभाव हो। कर का अर्थ एवं परिभाषा से यह तथ्य स्पष्ट उभर कर आता है कि कर से प्राप्त आय का उपयोग सार्वजनिक हित के लिए किया जाना चाहिए एवं उसकी मात्रा इतनी ही होनी चाहिये, जिससे कि उसके कोई दुष्परिणाम नहीं आने लगे। खेड़ा आन्दोलन में कर की मात्रा में कोई वृद्धि नहीं की गई थी, फिर खेड़ा का किसान आन्दोलन के लिए क्यों विवश हुआ, उसका क्या औचित्य था, सरकार का क्या दृष्टिकोण था, इत्यादि पक्ष खेड़ा सत्याग्रह और गाँधी द्वारा सम्पन्न सत्याग्रह को समझने के लिये महत्वपूर्ण हैं।

7.2 खेड़ा आन्दोलन

खेड़ा आन्दोलखेड़ा आन्दोलन को समझने के लिये यह ध्यान में रखना जरूरी है कि भारत में ब्रिटिश शासन में कई वर्षों की अवधि के लिये लगान नियत करने की प्रणाली जान-बूझकर अपनाई गई थी। समय-समय पर लगान नियत करने के पीछे सिद्धान्त यह था कि उसे इस प्रकार निश्चित किया जाए कि सामान्य रूप से उतने परिवर्तन की गुंजाइश, मौसम के परिवर्तनों का जितना अनुमानित लगान निर्धारक अधिकारी लगा सकते है, रख ली जाए किन्तु चाहे फसल बुरी हो या अच्छी, सिद्धान्ततः लगान हर साल चुकता होना चाहिये। इसलिये भारत सरकार ने यह स्वीकार करते हुए भी कि व्यवहार के समय लगान वसूली में हेरफेर की गुंजाइश होना जरूरी है, यह भी कहा कि इस प्रस्ताव में जिस प्रणाली का अनुमोदन किया गया है, उसमें लगान वसूली करते समय किसी प्रकार की ढील-ढाल या असावधानी नहीं होना चाहिए। वह यह भी नहीं चाहती कि लगान को मुल्तवी और माफ करने की

प्रस्तावित प्रणाली राजस्व प्रशासन का नित्य अंग ही बन जाये।वास्तव में इसे किसानों को छूट के रूप में मान्यता दी गई थी, ना कि अधिकार के रूप में। यह छूट केवल अपवादस्वरूप ऐसे कठिन संकटों के लिये थी, जिनमें बन्दोबस्त के अनुसार किये गये समझौते में ढिलाई करना सरल और जरूरी लगे। यह भी कहा गया कि किसान से यह उम्मीद करना कि वह बुरी और अच्छी फसलों के साधारण उतार-चढ़ाव को बरदाश्त कर लेगा, ठीक और उचित ही है तथा बम्बई प्रान्त की सरकार ने कलेक्टरों को यह अधिकार दिया कि जब स्थानीय जाँच पड़ताल से उसे निश्चय हो जाये कि किसी इलाके में वर्षा के अभाव या किसी अन्य कारण से फसल पूरी तरह या अशंतः खराब हो गई हो और इसीलिये वहाँ लगान वसूली मुल्तवी करना जरूरी हो तो वह वैयक्तिक परिस्थितियों पर विचार किये बिना सब किसानों का लगान मुल्तवी कर सकता है। किन्तु उस समय सरकार ने आँख मूँदकर इस फार्मूले का पालन करना ठीक नहीं माना, लेकिन यह राय व्यक्त की कि राहत देने के बारे में सामान्य मार्गदर्शन के लिये गणित के आधार पर कोई प्रमाणित तालिका बनाई जानी चाहिये।

सन् 1907 से पहले सरकार फसल खराब होने पर भी काश्तकार को लगान में बिल्कुल छूट नहीं देती थी और ना ही उसे स्थगित करती थी। अकाल से संबंधित 1909 के आयोग के बाद ही सरकार ने लगान स्थगित रखने और छूट देने के नियम निर्धारित किये। इतना न्याय भी लोगों द्वारा आन्दोलन किये जाने पर ही मिल सका था।

श्री गोकुलदास कहानदास पारेख, सदस्य, बम्बई विधान परिषद में बम्बई सरकार के एक सरकारी रिपोर्ट के उत्तर में अपनी एक टिप्पणी में खेड़ा के किसानों की दुर्दशा के बारे में जानकारी देते हुए निम्नलिखित बातें उजागर की।

पंचमहल (ब्रिटिशकालीन गुजरात का एक जिला) के अतिरिक्त सब जिलों में लगान के आँकड़े अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँच गये हैं अर्थात सरकार प्रतिवर्ष की औसत उपज का बीस प्रतिशत ले लेती है।

इसी टिप्पणी में श्री पारेख ने यह भी दर्शाया है, कि सन् 1899 ई. में जब अकाल पड़ा था, तब भड़ौच और सूरत जिलों में अधिकारियों द्वारा किये गये अत्याचारों के विरूद्ध बहुत शिकायतें की गई थीं। बम्बई विधान मण्डल के सदस्यों ने विधानसभा में भी यह सवाल उठाया था। सरकार ने शिकायतों को गलत बताया। अन्त में शिकायत करने वाले एक सज्जन ने इन जिलों का दौरा किया, उन्होंने निजी तौर पर इन शिकायतों की जाँच की तथा गवाहियाँ इक्कठी करके उन्हें प्रकाशित किया। इससे सरकार को जाँच करवाने के लिये विवश होना पड़ा। श्री मैकानिकी (एक अंग्रेज अधिकारी) को जाँच करने के लिये नियुक्त किया गया और उन्हें बहुत सी शिकायतें उचित मालूम हुई। अन्ततः सरकार को 1907 में लगान माफ और स्थगित करने के सम्बंध में नियम बनाने पड़े, किन्तु श्री पारेख ने अपनी इसी टिप्पणी में यह बताया है कि खेड़ा में 1911 से लेकर 1916 तक इस जिले के किसान कम या ज्यादा नुकसान उठाते रहे, और लगान अदा ना करने पर सरकारी अधिकारी, लोगों के ढोर-डंगर बेचने आदि दमनकारी उपायों का सहारा लेते रहे है। खेड़ा जिले में 1911 की जनगणना के हिसाब से कुल

7,16,932 में से 4,37,750 किसान परिवार से यानि लगभग 61प्रतिशत लोग कृषि पर आधारित जीवन जी रहे थे।

किन्तु सन् 1917 वह वर्ष था जब खेड़ा जिले के किसान अब तक के सबसे बुरे दौर से गुजर रहे थे, जिसके निम्न कारण रहे :-

(क) सन् 1917 में देर से हुई भारी वर्षा (अतिवृष्टि) के कारण बाजरे की फसल नष्ट हो गई। कुछ अन्य फसलों को भी नुकसान हुआ। इन मुख्य फसलों के अलावा गौण फसलों को भी नुकसान हुआ, और कहीं-कहीं धान को भी चुहों से हानि पहुँची थी।

(ख) साथ ही वहाँ के किसानों की प्लेग जैसे भयंकर रोग से भी उसी वर्ष काफी जानमाल की हानि हुई थी। परिणामस्वरूप वहाँ के किसान लगान देने की स्थिति में बिल्कुल नहीं थे, लेकिन दूसरी ओर चावल की फसल और बाद में बोई जाने वाली दूसरी फसलें असाधारण रूप से अच्छी हुई थी।

यहाँ यह बात बताना भी आवश्यक है कि भारत सरकार ने 1907 में लगान स्थगित या माफ करने के बारे में, जो बम्बई प्रान्त के नियम स्वीकृत किये थे, उसके मूलभूत सिद्धान्त निम्न थेः-

(क) बड़े संकटों में एक-दूसरे से लगे क्षेत्रों को एक मानकर कार्रवाही की जाये।

(ख) निपटारे के लिये अलग-अलग क्षेत्र की हालातों की जाँच पड़ताल न की जाये।

(ग) राहत देने के लिये हमेशा पहले लगान मुल्तवी किया जावे, माफ न किया जाये और लगान वसूली निम्नलिखित अनुपात से मुल्तवी की जाये :-

यदि फसल सामान्य फसल की एक-तिहाई से ज्यादा या आधी से कम हुई हो तो आधा लगान मुल्तवी किया जावे।

यदि फसल सामान्य फसल की तिहाई से ज्यादा और आधी से कम हुई हो तो आधा लगान मुल्तवी किया जावे और दूसरी हालात में लगान वसूली मुल्तवी न की जावे। (उक्त लगान वसूली के लिए सामान्य फसल से तात्पर्य वृहत्तर बम्बई प्रान्त में फसल रूपये में बारह आने हो तो उसे सामान्य माना जाता था।)

उक्त नियमों के अनुसार कलेक्टर ने (जो हिन्दूस्तानी था) स्थानीय जांच-पड़ताल के बाद खेड़ा जिले के तीन ताल्लुकों के 104 गांव में विभिन्न मात्रा में लगान की वसूली स्थगित की, जितने लगान की वसूली स्थगित की गई, वह उन ताल्लुकों के लगान का 20 प्रतिशत और पूरे जिले का 7.4 प्रतिशत था।

उक्त लगान वसूली स्थगित का प्रतिशत देखने पर ज्ञात होता है कि यह छूट ऊँट के मुँह में जीरे के समान थी और इसमें भी लगान वसूली स्थगित के सरकार के औपचारिक आदेश के पूर्व भी बम्बई के दो वकीलों के नेतृत्व में एक शिष्ट मण्डल ने 15 दिसम्बर 1917 को कलेक्टर से मुलाकात की थी। शिष्टमण्डल ने उनसे यह कहते हुए कि सभी फसले प्रायः पूरी तरहाखराब हो गई है माँग की कि

(1) अधिकांश मामलों में लगान तत्काल माफ कर दिया जावे और

(2) बाकी मामलों में पूरी लगान की वसूली स्थगित कर दी जावे। इस पर कलेक्टर ने बताया कि उनकी पहली मांग तो नियम विरूद्ध है, लेकिन वचन दिया कि वसूली स्थगित करने के मामले में विचार किया जावेगा। इसी के परिणामस्वरूप उन्होंने उपयुक्त आदेश निकाले थे।

तदोपरान्त यह मामला गुजरात सभा ने अपने हाथ में ले लिया, जिनका कि प्रधान कार्यालय अहमदाबाद में था, जो कि खेड़ा जिले के बिल्कुल बाहर था। उन्होंने स्थानीय अधिकारियों की उपेक्षा करके प्रार्थनाऐं और तार सीधे स्थानीय सरकार को भेजे और फसल की स्वतन्त्र जाँच करने की मांग की। जब बम्बई सरकार से कोई प्रत्युत्तर प्राप्त नहीं हुआ, तो उन्होंने खेड़ा जिले के किसानों को एक गश्ती पत्र भेजा जिसमें कहा गया था कि बम्बई सरकार से कोई जवाब नहीं मिला। इसलिए जिन किसानों की फसल पूरी की पूरी मारी गई है या जिनकी फसल सामान्य फसल से तिहाई से ज्यादा नहीं हुई हैं वे लगान अदा न करें। इस पर स्थानीय सरकार ने 16 जनवरी 1918 को अपनी पहली प्रेस विज्ञप्ति जारी की और उसमें तथ्य सामने रखते हुए लगान अदा करने के विधिवत् आदेश को मानकर लगान चुकाने से इन्कार करने के किसी भी प्रयत्न के विरूद्ध किसानों को चेतावनी दी गई।

इससे साफ यह पता चलता है कि खेड़ा जिलो के किसानों को गुजरात सभा के अपूर्ण एवं त्रुटीपूर्ण प्रयासों का कोई लाभ नहीं मिल सका था।

7.3 खेड़ा के किसानों को न्याय दिलाने में गाँधीजी के प्रयास

जनवरी तक खेड़ा जिले का किसान पहले प्राकृतिक आपदा और फिर सरकार की बेपरवाह लाठी की मार को झेलता रहा। ऐसे में उन्हें अपने गुजरात राज्य के उस सपूत का साथ मिलने जा रहा था जिसने ना सिर्फ दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की दुर्दशा दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। बल्कि भारत के बिहार प्रान्त के चम्पारण जिले में सीधा अंग्रेज निलहे साहबों से अपनी कलम व कागज के जोर पर वहाँ की रैयतों को मुक्त करवाकर अपना लोहा मनवा चुके थे। वह शख्स कोई और नहीं, स्वयं मोहन दास करमचंद गाँधी थे, जो कि गुजरात में अहमदाबाद के पास कोचरब नामक स्थान पर मई 1915 में एक आश्रम बनाकर अपना स्थायी आवास बना चुके थे। ऐसे में जबकि गुजरात प्रान्त के ही एक जिले के किसान अपने को ठगा हुआ महसूस कर

रहे थे फरवरी 1918 में गाँधीजी का उनके कष्टों में साथ आना स्वाभाविक था। गाँधीजी ने खेड़ा के किसानों की माँग को फरवरी 1918 को अपने हाथ में ले लिया।

खेड़ा जिला के किसानों की दुर्दशा दूर करने के लिए गाँधीजी ने 5 फरवरी 1918 को बम्बई प्रान्त के गर्वनर के निजी सचिव को एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने खेड़ा जिले के किसानों पर लगान के लिए स्थानीय अधिकारियों द्वारा अनुचित दबाव डाले जाने का जिक्र किया। उन्होंने एक पाँच सदस्यीय स्वतंत्र जाँच समिति बनाने का भी सुझाव दिया, जिसमें उन्होंने श्री पारेख एवं पटेल के नाम सुझाये, जिनके बारे में उनका तर्क था कि ये लोग इस समस्या के बारे में पहले भी दिलचस्पी लेते रहे हैं, इसलिए कोई भी व्यक्ति उनकी जाँच का विरोध नहीं करेगा। समिति के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने डॉ. हेरल्ड मैन का नाम सुझाया।

गाँधीजी का जाँच समिति बनाने का उद्देश्य यह था कि उस वर्ष जितनी फसल हुई हो, और साधारण वर्ष में जितनी फसल होती हो, किसानों से यह पूछकर विश्वसनीय तथ्य प्राप्त किए जा सकते है। उनका यह भी विचार था कि किसी गाँव की औसत फसल का निर्धारण करने के लिए रबी का ही नहीं, कपास की फसल को भी नहीं गिनना चाहिए।

इसके साथ ही गाँधीजी ने एक पत्र उत्तरी क्षेत्र के कमिश्नर श्री एफ. जी. प्रैट को भी लिखा, जिसमें उन्होंने लिखा कि उन्हे कपड़गंज ताल्लुक के मामलातदार के हस्ताक्षर से जारी किये गये कुछ नोटिस दिखाये गये है, जिनमें लिखा गया है कि यदि अधिसूचित लोग 11 फरवरी या उससे पूर्व नोटिस में बताई गई बकाया राशि का भुगतान नहीं कर देते, तो सरकार नोटिस में उल्लेखित जमीनों के प्लाट जब्त कर लेगी। गाँधी ने कहा कि इनमें से अधिकाँश इज्जतदार लोग हैं और जिसे वह अपना अधिकार समझते हैं, उसी के लिए लड़ रहे हैं।

इस पत्र में जो बात निकलकर आती है वह स्पष्ट है कि सरकार लगान के बदले जो जमीन जब्त करने के बारे में सोच रही थी वो बकाया लगान से निश्चित रूप से बहुत अधिक कीमत की थी एवं किसान हर वर्ष बराबर लगान देते आ रहे थे। उस वर्ष वास्तव में उनकी फसल नष्ट हो गई थी ऐसे में उनकी कोई आमदनी नहीं हुई थी। साथ ही बीज आदि का नुकसान भी किसानों ने झेला था। ऐसे में लगान का कोई आधार नही बनता था। साथ ही गाँधीजी ने जिस प्रकार नोटिसों में किसानों को दुष्ट व अवारा लिखकर सम्बोधित किया गया था उस पर भी अपनी नाराजगी प्रकट की।

इसी बीच गाँधीजी को सरकार द्वारा उनके द्वारा सुझाई गई स्वतन्त्र जाँच आयोग नियुक्त करने से इन्कार करने का पता चला। अतः गाँधीजी ने फसल नष्ट होने के बारे में स्वयं जाँच करने का निर्णय लिया जिनका खुलासा उनके द्वारा श्री प्रैट को किया गया। 16 फरवरी 1918 के पत्र में उन्होंने श्री प्रेट को बताया कि खेड़ा के एक बड़े

भू-भाग में फसल खराब होने की खबर की जांच व्यक्तिगत रूप से तसल्ली किए बिना वे गुजरात से बाहर नहीं जाऐंगे।

गाँधीजी 16 फरवरी 1918 को एक बजे की गाड़ी से अपने सहयोगी दल के साथ नडियाद रवाना हो गये। गाँधीजी को गुजरात सभा का अध्यक्ष भी बनाया गया था। इस बात का जिक्र भी उन्होंने इस पत्र में किया था। एक बात और जो गाँधीजी के इस पत्र से निकलकर आती है वह यह है कि गाँधीजी जब खेड़ा के शिष्ट मण्डल के साथ 5 फरवरी 1918 को बम्बई के गर्वनर से मिले थे तो गर्वनर ने उन्हें कहा था कि वे फसल खराब होने के बारे में जो लोगों का ख्याल है, उसे स्वयं (गाँधी) जाँच करके देख ले और उसे दूर कर दे। बात स्पष्ट है कि अब तक जो लोग इस आन्दोलन में किसानों का साथ दे रहे थे वे फसल खराब होने के कोई स्पष्ट या मान्य प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर पाये थे। इसी पत्र में गाँधीजी ने लिखा कि जब तक प्रस्तुत किए गए प्रमाण ऐसे पुष्ट नहीं है तब तक राजस्व नियमों के अनुसार मालगुजारी की वसूली रोक दी जाये।

गाँधीजी अपनी जाँच के तरीके या उससे निकलने वाले परिणाम को किसी तरह से गोपनीय रखने के पक्षधर नहीं थे। इसलिए उन्होंने इसी पत्र में प्रेट को लिखा किउनकी जाँच के समय यदि कोई सरकारी प्रतिनिधि भी उपस्थित रहे तो उसमें उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। इस बात की पुष्टि गाँधीजी द्वारा खेड़ा जिले के कलेक्टर श्री घोषाल को 17 फरवरी 1918 के लिखे पत्र से भी होती है जिसमें उन्होंने कलेक्टर को अपने द्वारा उनके जिले में जाँच पड़ताल करने के फैसले से अवगत कराया।

वडयाल गाँव में लगान नहीं चुकाने पर तीन नोटिस निकाले जा चुके थे जिसमें सम्पति के जब्त करने की बात लिखी गई थी और वसूली के लिये 2 भैसें भी पकड़ ली गई थी जिनकी नीलामी की तारीक भी निश्चित की गयी थी। संयोगवश गाँधीजी 17 फरवरी को ही उस गाँव में पहुँच गये और उन्होंने उसी दिन श्री घोषाल को बिक्री स्थगित करने के बारे में पत्र लिखा तथा यह भी लिखा कि जिन लोगों की सम्पति लगान के बदले जब्त करने की बात कही गई है वह सम्पति लगान की तुलना में कहीं ज्यादा है। साथ ही उन्होंने वडयाल की फसल के मूल्यांकन के जो ठोस प्रमाण इकट्ठे किये थे उनको श्री घोषाल के पास उपलब्ध आँकड़ों से मिलान कर देखने की बात लिखी।

21 फरवरी को गाँधीजी स्वयं खेड़ा जिला के जिलाधीश श्री घोषाल से मिले। 22 फरवरी को गाँधीजी नडियाल ताल्लुक के दो गाँवों नैका और नवगाँव में गये और इन दोनों गाँवों के किसानों की दयनीय हालत देखकर गाँधीजी ने श्री घोषाल को उसी दिन एक पत्र लिखा जिसमें उन्होनें वहाँ के किसानों को लगान में पूरी छूट दिये जाने की वकालात की। अपने मूल्यांकन में उन्होंने इन दोनों गाँवों के बारे में जो तथ्य रखे वे इस प्रकार थे :-

(क) उन्होंने बताया कि इन गाँवों में एक के बाद एक लगातार तीन मौसम की फसलें खराब रही हैं जिनका कारण वहाँ की जमीन पर नहर का खारा पानी चढ़ जाना है। यह बात उन्होंने नेका गाँव से अधिक नवगाँव के बारे में सही बताया।

(ख) फसल बरबाद होने का मूल्यांकन उन्होंने रूपये में चार आने से भी कम होना बताया (ज्ञातव्य रहे कि ब्रितानिया सरकार के राज में रूपये में बारह आने हुई फसल को सामान्य फसल माना जाता था।)

साथ ही उन्होंने श्री घोषाल को उन गाँवों में लगान अदा न करने के एवज में सरकार की ओर से दिये गये 15 नोटिसों को वापस लेने का अनुरोध किया।

इस प्रकार श्री गाँधीजी ने दसकोई तालुक सहित लगभग सभी तालुकों की जाँच कर एक अन्य पत्र सत्याग्रह आश्रम साबरमती से 26 फरवरी 1918 को श्री घोषाल को लिखा, जिसके साथ उन्होंने अब तक के जाँच के दौरान गाँवों के नामों की सूची तथा अपने कार्यकत्र्ताओं के साथ तैयार फसल के अनुमान की जानकारी श्री घोषाल के पास भिजवा दी।

साथ ही उन्होंने अपने द्वारा की गई जाँच में उन तथ्यों को एक बार फिर उजागर किया, जिससे लगान स्थगित के कारण बनते थे :-

(क) खेड़ा जिले में प्लेग फैलने से बहुत से परिवार में आजीविका कमाने वाला मर चुका था और लोग प्लेग के डर से काफी खर्च उठाकर छप्परों में रह रहे हैं, जिससे उन पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ बढ़ गया था।

(ख) साथ ही कई गाँवों में किसान सरकार के डर से इतने सहमे हुए थे कि उन्होंने लगान देने के लिए अपने मवेशी और सम्पत्ति तक बेच दी और सैकड़ों ग्रामीण लगान की पहली किशत भी दे चुके थे।

गाँधीजी ने यह भी लिखा कि कुछ मामलों में सरकार ने आधे लगान की वसूली स्थगित की है पर उन्होंने लगान वसूली पूरी तरह स्थगित करने का आग्रह किया। साथ ही गाँधीजी ने अपनी बात की पुष्टि में एक और तथ्य प्रस्तुउजागर किया कि क्योंकि चूहों के कारण गाँव में अनाज की उपलब्धता बहुत कम हैं ऐसे में ग्रामीण लोग फलों के वृक्षों पर आधारित रहते हैं। इसलिए सरकार जो महुआ एक्ट के तहत महुआ के पेड़ काटने में लगी है, उसे न काटे और इसी पत्र में गाँधीजी ने एक बार फिर एक संयुक्त जाँच समिति बनाने का सुझाव दिया तथा अपने आपको भी अगर सरकार चाहे तो उपलब्ध रहने की बात लिखी।

गाँधीजी के उक्त पत्र के संदर्भ में घोषाल ने अवगत कराया कि महुआ के पेड़ों को काटने का मामला विधान परिषद के सामने विचार के लिये रखा जायेगा तथा साथ ही फिर से सरकारी जाँच की बात भी स्वीकार की।

इसी बीच गाँधीजी ने बड़थाल गाँव के सम्बंध में एक पत्र 6 मार्च 1918 को फिर से श्री घोषाल से कहाँ निर्धारित किए गए कर के सम्बंध में कुछ प्रश्न पूछे।

गाँधीजी के पत्र में पूछे गये प्रश्न के सम्बंध में श्री घोषाल ने उत्तर दिया था कि सरकार द्वारा खेतों के हिसाब से नहीं बल्कि सारे गाँव के लिए आनावारी का हिसाब किया जाता हैं। सरकार का उद्देश्य गाँव की पूरी पैदावार जानकर उसे उस क्षेत्र से, जिसमें वह पैदा की गई, विभाजित करना है। साथ ही श्री घोषाल ने गाँधीजी द्वारा आनावारी के सम्बंध में दिए गए तर्क को इस हिसाब से खारिज कर दिया।

श्री घोषाल के उक्त उत्तर से साफ झलकता है कि प्रशासन गाँधीजी की किसी बात को पूरी गंभीरता से न लेता हुए सिर्फ अपनी बात पर अडिग थे। साथ ही प्रशासन ने कुछ गाँव में लगान अदा न करने पर चैथाई वसूली के लिए नोटिस जारी कर दिये थे। चैथाई से तात्पर्य था जो किसान लगान नही चुकाते थे उनसे लगान का चैथाई भाग जुर्माने के तौर पर ली जाने वाली वसुली।

प्रशासन के इस रवैये से दुःखी होकर गाँधीजी ने 9 मार्च 1918 को एक और पत्र घोषाल को लिखा जिसमें उन्होंने चैथाई वसूल वाले नोटिसों को तुरन्त रोकने के बारे में लिखा तथा इस सम्बंध में एक तार भी उन्होंने बम्बई सचिवालय को भेजा। इससे साफ स्पष्ट है कि गाँधीजी खेड़ा के किसानों की दुर्दशा को दूर करने के लिए बेहद प्रयासरत थे।

साथ ही गाँधीजी ने अपने इसी पत्र में उनके द्वारा 6 मार्च को श्री घोषाल को लिखे पत्र में आनावारी ठहराने की जिस दोषपूर्ण नीति का विरोध किया था और जिसके जवाब में श्री घोषाल ने उनका तर्क निरस्त किया था, उसका जवाब भी विस्तार से अपने इस पत्र में दिया।

गाँधी ने लिखा कि बडथाल के दोहरी फसल वाले क्षेत्र को अलग करने के उनके सवाल के जवाब में घोषाल ने जो पत्र लिखा है उसके लिए वह आभारी हैं। उन्होंने लिखा कि एक खेत में जहाँ खरीफ और रबी की फसलें बोई जाती हैं वहाँ आनावारी का निर्धारण इस तथ्य पर आधारित होना चाहिए कि यदि एक खेत में खरीफ और रबी दोनों की फसलें रूपये में सोलह आनें हुई हो तो उस खेत की अथवा किसी गाँव के उसी तरह खेतों की फसल सिर्फ सोलह आने होगी। दोहरी फसल वाले क्षेत्र को अलग करने की बात तभी सही कही जा सकती है जब यह माना जाए कि यदि किसी खेत में खरीफ की फसल सोलह आने हुई हैं तो कर निर्धारण के लिए वह उस हद तक सोलह आने से अधिक मानी जायेगी जिस हद तक उसमें रबी की फसल भी हुई है।

गाँधी ने स्वीकार किया कि खेतों के अनुसार आनावारी निकालने में खेतों के अनुसार गणना केवल नमूनों के रूप में किया जा सकता है। इस आधार पर गाँधी का यह सुझाव था कि रबी की फसल पर विचार न किया जाये क्योंकि यह कोई सामान्य फसल नहीं था। यदि हर 100 में से 90 खेत में सिर्फ खरीफ की फसल बोई जाती है,

तथा रबी की फसल नहीं बोई जाती और यदि रबी की फसल जहाँ बोई गई हो, वहाँ सोलह आने होती है, साथ ही यदि आनावारी के लिए रबी की फसल बहुत थोड़ी मात्रा में हुई हो तो 100 खेतों की यह आनावारी गलत होगी। मुख्य फसल निःसन्देह खरीफ की फसल है। गाँधी ने कहा कि उनकी राय मे लगान वसूली निर्धारित करने के लिए रबी की फसल को ध्यान में रखकर किसानों पर आनावारी थोपी जाती है तो उनके साथ न्याय नहीं किया जाता। गाँधी ने कहा कि उन्होंने अपने साथी कार्यकर्ताओं के सहयोग से करीब 350 ग्रामों का अवलोकन किया और इस नतीजे पर पहुँचे कि किसान अपना लगान खरीफ की फसल से अदा करते हैं न की रबी की फसल से। गाँधी ने कहा कि कोई भी जानकार प्रेक्षक एक खेत से दूसरे खेत में जाते हुए यह बात नजरअन्दाज नहीं कर सकता है कि रबी की फसल एक बड़े विशाल रेगिस्तान में हरित भूमि की तरह है।

उन्होंने यह भी कहा कि कोई किसान सभी खेतों में रबी की फसल नहीं लगा सकता। सन् 1914-15 का मौसम और फसलों की रिपोर्ट बताती है कि रबी की फसल पूरी फसल का केवल 12वां भाग था और सन् 1915-16 में 20वां भाग। गाँधी ने सुझाव दिया कि मसाले, सब्जी व अन्य फसलें, जिन्हें कुछ ही काश्तकार बोते हैं, उनकी गणना नहीं की जानी चाहिए। जब तक काश्तकार आमतौर पर कपास की फसल नहीं लगाते, तब तक कपास को भी उसी श्रेणी में रखना चाहिए। यदि गाँव का एक बड़ा जमींदार खास किस्म की फसलें उगाने के बड़े प्रयोग में सफल हुआ है तो पूरे गाँव की आनावारी बढ़ा दी जाये यह स्पष्टतः अनुचित होगा। इस गणना में घास की पट्टी को शामिल करने के खिलाफ भी गाँधी ने अपना विरोध जाहिर करना चाहा। उन्होंने कहा कि उनको यह बताया गया है कि यह घास आम तौर पर बेची नहीं जाती और लोगों को अपने मवेशियों को एक ओर से दूसरी ओर लाने लेजाने की जरूरत के मुताबिक किनारे छोड़ने पड़ते हैं। यदि आनावारी निकालने का उद्देश्य यानि औसत काश्तकार को यदि उसकी फसल की पैदावार नहीं हुई हैं, राहत प्रदान करना है तो यह बात बराबर ध्यान में रखा जाये।

गाँधी ने यह भी कहा की वे अपने इस सुझाव पर कायम हैं कि रबी की फसल जिसमें अन्य खरीफ फसलें भी शामिल हैं, उनके सम्बंध में काश्तकारों ने जो आँकड़े दिये हैं, उनकी यर्थाथता की जाँच के लिए आसानी से इस्तमाल किया जा सकता हैं। गाँधी ने बताया कि उन्होंने बड़थाल के लोगों को सुझाव दिया है कि उन्हें इस वक्त खड़ी फसलों को स्वतन्त्र गवाही की उपस्थिति में ठीक से तुलवाये बगैर खलिहानों से नहीं उठने देना चाहिए। गाँधी ने बताया कि उन्होंने निवेदन किया इस तरीके से बड़थाल की फसलों की जाँच करना कलक्टर घोषल के लिए उचित होगा। इसके साथ ही गाँधीजी के द्वारा करीब 350 गाँवों की जाँच पड़ताल की जा चुकी थी, जिसमें उनके द्वारा निकाले गए चार आने या उससे कम आनादारी का निष्कर्ष अन्य दो स्वतंत्र समितियों द्वारा निकाले निष्कर्ष से भी मेल खाती थी। इसी आधार पर गाँधीजी इन सभी गाँवों में लगान मुल्तवी रखने के पक्के पक्षधर थे।

हालाँकि गाँधीजी के कहने पर खेड़ा जिला के कलेक्टर ने जिन गाँवों की जाँच पड़तालकी गाँधीजी ने उन्हीं गाँवों के आस-पास की फसलों की भी फिर से जाँच करवाई थी। इसमें गाँधीजी को भी बुलाया गया था और वे एक बार फिर सम्मिलित हुए थे।

किन्तु जैसा कि गाँधीजी के घोषाल को लिखे 9 मार्च 1918 के पत्र से पता चलता है कि कलेक्टर की जाँच की रिपोर्ट मूलतः मामलातदार के आँकड़ों पर आधारित होने के कारण यह रिपोर्ट किसानों को उचित न्याय नहीं दिला सकने वाली एक त्रुटिपूर्ण रिपोर्ट थी किन्तु सरकार अपनी ही रिपोर्ट को सही दर्शा रही थी। हालाँकि इसमें कई गाँवों में आधा लगान अवश्य मुल्तवी करने की बात कही गई थी किन्तु गरीब किसानों को इससे कुछ खास राहत मिलने की संभावना नहीं थी।

इस बीच गाँधीजी ने श्री घोषाल से भेंट की तो उन्हें बताया गया कि जिन किसानों ने रबी की फसल भी बोई है उनका लगान मुल्तवी करना संभव नहीं है। इस पर आपत्ति करते हुए गाँधीजी ने लिखा कि उन्होंने रबी की फसल का निरीक्षण किया है। जो हरियाली भरे भूखण्ड आँखों से बड़े लुभावने लगते हैं वास्तव में पास से देखने पर पता चलता है कि उस फसल में बीमारी लग चुकी हैं और पैदावार कम होने के संकेत है। इस प्रकार गाँधीजी ने लिखा कि खेत में मूंडेरों पर जो फसल दिखाई देती है दरअसल वह मवेशियों के चारे के रूप में काम आती है। अतः उसे रबी की फसल के रूप में न देखा जाये।

जब घोषाल द्वारा गाँधीजी के 9 मार्च को लिखे पत्र में कोई आश्वासन मिलने की संभावना नजर नहीं आयी, तो उन्होंने खेड़ा आन्दोलन के प्रारम्भ करने के पूर्व एक पत्र बम्बई के गर्वनर क्रिस को 10 मार्च 1918 को प्रेषित किया जिसमें उन्होंने उन्हीं सब बातों का जिक्र किया जो कि उन्होंने अपनी रिपोर्ट के साथ श्री घोषाल को लिखे पत्र में किया था। इस पत्र के अन्त में गाँधीजी ने अपने इन शब्दों के साथ पत्र को समाप्त किया कि यदि फिर भी उनका अनुरोध ठुकरा दिया जाता है, तो उनके पास सिवाय इसके अन्य कोई चारा न रह जायेगा कि वे काश्तकार को सलाह दें कि वे बकाया लगान देने से इन्कार कर दें और अपनी सम्पत्ति की बिक्री अथवा जब्ती होने दें तथा अपने इस कदम के समर्थन में अपील जारी करें। गाँधीजी नेविनम्र राय दी कि यह बेहतर होगा कि लोग शालीनतापूर्वक सम्मानजनक ढंग से सरकारी आदेशों की अवज्ञा करें और अपनी अवज्ञा का परिणाम जानते हुए खुश होकर भुगतें।

गाँधीजी ने गर्वनर को लिखे इस पत्र में मांगें न माने जाने पर उनके नेतृत्व में किया जाने वाले आन्दोलन की एक हल्की सी रूपरेखा को भी उद्दृत कर दिया था। लेकिन इसके साथ ही गाँधीजी नेजाँच करने से पूर्व जो वचन दिया था, पहले स्थिति के बारे में स्वयं विनम्रतापूर्वक गर्वनर क्रिस को बताने की, उसका पालन भी किया।

इसके करीब 10 दिनों तक भी जब गाँधीजी को कोई प्रतिउत्तर प्राप्त नहीं हुआ तो उन्होंने 20 मार्च 1918 को उत्तरी क्षेत्र के कमिश्नर श्री एफ. जी. प्रैट को एक और पत्र लिखा जिसमें उन्हें आन्दोलन को तब तक स्थगित करने का आश्वासन दिया जब तक कि सरकार दूसरी किश्त की वसूली सारे जिले के लिये आम तौर पर स्थगित ना कर दें।

यहाँ यह भी बताना उचित होगा कि गाँधीजी ने तब तक समाचार पत्रों को भी खेड़ा समस्या से दूर रखा हुआ था तथा अपने दोस्तों को भी इसके लिए मना कर रखा था। 20 मार्च 1918 को गाँधीजी को पूर्व के सरकारी आदेशों में किसी प्रकार के हेर-फेर करने का कोई आधार न होने की सूचना दे दी गई। दूसरे दिन गुजरात सभा में गाँधीजी की अध्यक्षता में एक प्रस्ताव पारित करा कि सत्याग्रह का सहारा लिया जावे।

7.3.1 खेड़ा सत्याग्रह

आखिर वो दिन आ ही गया जिस दिन गाँधीजी ने खेड़ा की जनता को राहत दिलाने के लिए खेड़ा सत्याग्रह की घोषणा करने को विवश थे। गाँधीजी ने 22 मार्च 1918 को नडियाद की एक आम-सभा में इस खेड़ा सत्याग्रह के आरम्भ करने की घोषणा की।

उन्होंने किसानों को सम्बोधित करते हुए सलाह दी कि यदि उनको पक्का विश्वास है कि फसल सामान्य फसल के मुकाबले एक तिहाई से कम हुई है तो उन्हें लगान देने से इन्कार करके सत्याग्रह करने का प्रयास करे और सरकार जिस तरह चाहे उससे लगान वसूल करने दे। सभा में इस आशय की एक प्रतिज्ञा पर छोटे-बड़े कोई 200 किसानों ने हस्ताक्षर किये। यह अभियान मार्च से अप्रेल तक जारी रखा गया और लोगों ने यह शपथ ली कि वे उस वर्ष का लगान पूरा या आधा भी नहीं देंगे और इसके बदले में जो भी संकट उठाने पड़े, उठायेंगे। यदि इसके बदले उन्हे अपनी जमीन भी छोड़नी पड़े या जो भी हो, वे सब कुछ सहने को तैयार रहेंगे। उनमें ऐसे भी लोग थे, जो लगान दे सकते थे पर ऐसा नही कर रहे थे क्योंकि ऐसी स्थिति मे गरीब किसान अपने जानवर और जमीन को बेचकर लगान चुकाने के लिए विवश किए जायेंगे। इसलिये ऐसे लोगो ने अपना कत्र्तव्य माना कि जो लगान चुका भी सकते हों, नही चुकता करेंगे। सत्याग्रह का अर्थ समझाते हुए गाँधीजी ने उन्हें सविनय अवज्ञा करने को कहा।

इधर गाँधीजी अपने तरीके से सत्याग्रह की सफलता में लग चुके थे। जिस आन्दोलन को उन्होंने तथा उनके कहने पर ही उनके मित्रों ने समाचार पत्रों से बचाये रखा था, अब स्वयं गाँधीजी ने समाचार पत्रों के जरिये खेड़ा के फसलों की दुर्दशा के बारे में ऐलान करना प्रारम्भ कर दिया। इसी तरह की एक खबर डाईरेक्टर जनरल इन्टेलीजेन्स की माह अप्रेल की वीकली रिपोर्ट में समाचार पत्र में गाँधीजी द्वारा भेजी गई अपील को स्थान दिया गया। इस अपील में गाँधीजी ने बताया कि खेड़ा जिले में खराब फसल हुई है, जो कि चार आने से भी कम है।

सरकारी नियम यह है कि ऐसे में राजस्व प्राप्ति को स्थगित रखा जाए। बार-बार सरकार से रैयतों की तरफ से इसे स्थगित करने हेतु अपील की जाती रही हैं। लोगों की तरफ से गुजरात सभा के माननीय सदस्य जी. के. पारेख तथा वीण्जेण्पटेल देवधर, अमृतलाल ठक्कर और जोशी ने भारतीय समाज सेवक की हैसियत से जाँच कर पाया कि खरीफ की फसल नहीं के बराबर हुई है। गाँधी ने भी कुछ उत्तरदायी एवं आदर योग्य कार्यकत्र्ताओं के साथ करीब 400 गाँव की जाँच पड़ताल की और वहीं स्थिति पाई। अधिकतर गाँवों में चार आने से भी कम फसल हुई थी और उन्होंने यह भी देखा कि अधिकतर रैयतों के पास पैसें नहीं थे और बहुत से खलिहान खाली पड़े थे। बहुत से गरीब किसान जिले के बाहर से अनाज बेचकर उसकी जगह मक्का ला रहे थे और उसी से गुजारा चला रहे थे। उन्होंने यह भी देखा कि कुछ स्थानों पर लोग स्थानीय अधिकारियों के डर से ही लगान अदा कर चुके थे और बहुत सी जगह लोग अपने पेड़ इत्यादि बेचकर लगान चुका रहे थे।

गाँधीजी द्वारा समाचार पत्रों में भेजी गई उक्त टिप्पणी से साफ झलकता है कि लोगों ने लगान देना पूरी तरह बन्द नहीं किया था, चाहे उसके लिए उन्हें अपनी सम्पति का कुछ भाग ही क्यों न बेचना पड़े। गाँधीजी ने इसी टिप्पणी में आगे लिखा कि लोग अपनी जरूरी चीजों के बढ़ते बोझ से पीड़ित थे और प्लेग के भय सेछप्परों में रह रहे थे। गाँधीजी ने आगे लिखा कि यह सब बातें कलेक्टर और कमिश्नर को अवगत करा दी गई है। उन्होंने कुछ जगह रियायत भी की, लेकिन वे पर्याप्त नही है। गाँधीजी ने अपनी इसी टिप्पणी में आगे बताया कि इन परिस्थितियों में केवल लोगों को एक ही चीज की सलाह दी गई है कि यदि उन्हें लगता है कि वे अपनी सच्चाई को साबित कर सकते हैं तो वे सरकार को लगान देने से मना कर दें, लेकिन सरकार उनसे उनकी सम्पति बेचकर लगान वसूल करने में लगी है। लोगों को यह सलाह दी गई है कि वे अपना सबकुछ खोकर भी राजस्व का भुगतान न करें, चाहे उसके लिए उन्हें कोई भी जुल्म सहना पड़े। यदि लोग इस तरह चलते हैं, जैसा कि उन्हें बताया गया है, तो सरकार को इससे सबक लेकर एक आदर्श समझौतें के लिए बाध्य किया जा सकता है।

गाँधीजी ने आन्दोलन के लिए अपना मुख्यालय हिन्दू अनाथाश्रम नाडियाद को बनाया जहाँ गुजरात सभा के कर्मठ नेता जी. वी. नोवलकर ने गाँधीजी को लम्बे समय तक आन्दोलन को आयोजित करने में एवं समाचार पत्रों में टिप्पणी व रिपोर्ट आदि भेजने में मदद की। इसके अलावा पूरे गुजरात एवं बॉम्बे सिटी से भी कई नेता उनकी सहायता करने स्वतंत्रता से आते-जाते रहते थे।

7.3.2 खेड़ा सत्याग्रह में समाचार-पत्रों की भूमिका

गाँधीजी द्वारा समाचारों के जरिये पूरे भारतवर्ष में यह बात फैलाई जा रही थी कि सत्याग्रह करने में लोगों को कितना सहना पड़ सकता है, किन्तु यदि वे इसमें सफल होते हैं तो निश्चित रूप से सरकार को झुकने के लिए विवश किया जा सकता है। समाचार पत्रों को भेजी एक अन्य टिप्पणी में गाँधीजी ने यह भी लिखा कि बहुत से

समृद्ध सज्जन लोगों की सहायता करने के लिए तत्पर है, और यदि किसी को उनके घर से बेघर किया जाता है, तो वह उसके खाने व रहने के लिए घर का बन्दोबस्त भी करने के लिए तैयार है।

गाँधीजी की यह बात लिखने का सीधा सा अर्थ यह था कि भारत में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो अपने देशवासियों के दुख-दर्द में साथ देने को तैयार रहते हैं। अर्थात सरकार से सत्याग्रह करने पर डरने की आवश्यकता नहीं है। साथ ही गाँधीजी ने लिखा कि ऐसे काश्तकार जो निर्धारित राजस्व नहीं दे रहे हैं उनसे एक फार्म जमानत के तौर पर सरकार द्वारा हस्ताक्षरित करवाया जा रहा है। ऐसे में गाँधी ने लोगों को सलाह दी कि वे ऐसे हस्ताक्षर करने से पहले सोच लें। एक बार हस्ताक्षर करने के बाद दुबारा पलट नहीं सकेंगे।

गाँधीजी को लगा था कि सरकार की तरफ से फार्म हस्ताक्षर करने के लिए उन काश्तकारों को दिया जा रहा है, जो लगान देने के पक्षधर नहीं थे। गाँधीजी का यह मानना था कि ऐसे फार्म पर किसानों से हस्ताक्षर करवाकर सरकार उनसे यह मनवा लेना चाहती है कि लगान देने के लिए पर्याप्त फसल हुई है।

लेकिन गाँधीजी को उस फार्म के बारे में श्री घोषाल, जिला कलेक्टर खेड़ा, ने अवगत कराया कि फार्म रियायत देने के लिए आवेदन पत्र था, जिसके जरिये किसान बकाया लगान स्थगित करने के लिये आवेदन कर सकता है और उस पर हस्ताक्षर करना अनिवार्य नहीं है।

7.3.3 पारेख जाँच रिपोर्ट

समाचार पत्रों के अनुसार 4 अप्रेल 1918 तक 1200 किसानों ने राजस्व नहीं देने पर अपने हस्ताक्षर कर दिये थे।इधर गाँधीजी अपने बम्बई स्थित मित्रों को सहायता के लिये पत्र लिख रहे थे। श्री जी. के. पारेख, बम्बई प्रधान परिषद के सदस्य, ने खेड़ा के सम्बंध में जो स्वतन्त्र जाँच की थी, उनकी रिपोर्ट को गाँधीजी ने अपनी जाँच में सही ठहराया था। कमिश्नर ऑफ पुलिस, बोम्बे ने 1 अप्रेल 1918 को अपनी रिपोर्ट के हवाले से बताया कि खेड़ा में जो बेकार का आन्दोलन खड़ा हुआ है, उसने वहाँ के शिक्षित व विचारशील व्यक्ति जागृत हो गये हैं और वे खेड़ा के प्रशासन से नाराज होकर यह कह रहे हैं कि युद्ध के समय ही ऐसे नियम बनाने चाहिए। यह सरकार की विश्वसनीयता पर आघात है। इस तरह के आन्दोलन से लोगों की नजर में कानून की विश्वसनीयता कम हो जायेगी। रिपोर्ट में यह भी लिखा गया कि भारत, दक्षिण अफ्रीका नहीं है जहाँ इस तरह के आन्दोलन को सही ठहराया जाए और असफल हो जाए। जिस तरह की परिस्थितियाँ भारत में है ऐसे में इस आन्दोलन को शीघ्र हटाना आवश्यक है, अन्यथा इसके दूसरे जिलों में फैलने का डर और इससे सरकार अजीब स्थिति में आ सकती है। उसने बॉम्बे क्रोनिकल नामक समाचार पत्र का हवाला देते हुए बताया कि समाचार पत्र में भी इस तरह की हलचल को आपत्तिजनक और आश्चर्य कर देने वाला बताया है।

बॉम्बे कमिश्नर ऑफ पुलिस के द्वारा अपनी रिपोर्ट में जिस तरह से अपने उद्गार व्यक्त किए उससे साफ झलकता है कि बम्बई सरकार इस आन्दोलन को हलके तरीके से नहीं ले रही थी एवं गाँधीजी द्वारा चलाये जा रहा खेड़ा आन्दोलन निश्चित रूप से अपनी सही दिशा की ओर जा रहा था।

7.3.4 खेड़ा की स्थिति में अंग्रेज पदाधिकारियों को अवगत करवाना

गाँधीजी द्वारा अपने आन्दोलन में कुछ अंग्रेज पदाधिकारियों, जैसे स्टेनली रीड एवं सर जेक्स हुबले, जो कि सीधे तौर पर राजस्व विभाग से संबंधित भी ना होकर कार्यकारिणी परिषद के सदस्य थे लिखकर खेड़ा के किसानों का साथ देने एवं खेड़ा के स्थानीय प्रशासन द्वारा वहाँ की जा रही ज्यादतियों के बारे में लिख कर खबर कर रहे थे।

इधर खेड़ा के किसानों पर जुल्म बढ़ता जा रहा था। जैसा कि गाँधीजी ने खेड़ा के जिला कलेक्टर श्री घोषाल को अपने पत्र दिनांक 5 अप्रेल से अवगत कराया, उन्होंने लिखा कि ग्राम अगरपुरा ओद और नासर में मवेशियों की कुर्की की गई हैं। ऐसे स्थान से दूधारू भैंसें उठा ली गई हैं तथा अधिकारी उनके घरों में रसोई घर में बिना जूते उतारे घुस गये। यह खेड़ा पर स्थानीय प्रशासन द्वारा लगान वसूली का अनुचित तरीका था।

इधर डाइरेक्टर जनरल इन्टेलीजेन्स की रिपोर्ट में कहा जा रहा था कि गाँधीजी द्वारा जो प्रांत के महत्वपूर्ण अखबारों को, खेड़ा समस्या के बारे में लेख भेज रहे हैं। रिपोर्ट में यह भी लिखा कि खेड़ा की घटना प्रांत की कोई बड़ी घटना नहीं है यह उन राजनैतिज्ञों के द्वारा उत्पन्न ऐसी घटनाऐं हैं जिससें यह सिद्ध हो सके कि सरकार लोगों की दुश्मन है।

डाईरेक्टर जनरल की यह रिपोर्ट सिद्ध करती है कि सरकार किस प्रकार इस आन्दोलन को ले रही है। हालाँकि आगे उसने यह भी स्वीकार किया कि कुछ भारतीय समाचार पत्र यह मानकर चल रहे हैं कि गाँधीजी जिस प्रकार चन्दाख एवं अहमदाबाद के मिल मजदूर की समस्या को सुलझाकर सरकार व उनकी (गाँधीजी) शक्ति लोगों कोबता चुके थे, अगर उसी प्रकार वे खेड़ा में सफल रहते है तो वह उनको (किसानों को) और अधिक भयानक और धर्मान्ध बना सकते हैं।

डायरेक्टर जनरल ऑफ इन्टेलीजेन्स की उक्त टिप्पणी जो कि समाचार पत्रों में प्रकाशित खबरों पर केन्द्रित थी, निश्चित रूप से उसे विचलित करने वाली थी। तभी अन्त में गाँधीजी के सफल होने की दशा में, उसने अपनी रिपोर्ट में उन्हें (किसानों को) भयानक और धर्मान्ध जैसे शब्दों से सम्बोधित किया। आखिर सरकार ने बिना देर किए वहाँ खेड़ा के जिला मजिस्ट्रेट से अपनी स्थिति स्पष्ट करने को कहा, जिस पर 6 अप्रेल 1918 को खेड़ा के जिला मजिस्ट्रेट ने वहाँ की स्थिति के बारे में अपनी रिपोर्ट बॉम्बे के स्पेशल डिपार्टमेन्ट को भेजी, जिसका सार यह था कि खेड़ा की स्थिति इतनी खराब नहीं है, जितना कि उसको प्रचारित किया जा रहा है। लगान का कार्य

जारी है। उसने यह भी लिखा कि इस मामले में समझौता करना चाहते हैं। वे चाहते थे कि सरकार ने जिन लोगों पर लगान चुकता न करने पर एक चैथाई जुर्मानें के आदेश किए है, उसे वापस ले लिया जाये, ऐसे लोग वाकई लगान अदा करने की स्थिति में नही हैं। उनकी सरकार जाँच कर लगान स्थगित करें। उसने यह भी लिखा कि लोग सम्पत्ति के कुर्की के डर से लगान चुका रहे हैं। अगर सरकार इसमें कुछ नरमी दिखाएगी तो यह उनकी हार मानी जाऐगी।

जिला मजिस्ट्रेट ने अपनी रिपोर्ट में उन दो ताल्लुकों, काकाना और कपड़गंज, का उल्लेख भी किया जहाँ किसान गाँधीजी के लगान न देने के प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करने के बावजूद लगान दे रहे थे। इसके आगे जिला मजिस्ट्रेट ने लिखा कि गाँधीजी ने उसे यह भी आश्वासन दिया कि जो लोग स्वेच्छा से लगान दे रहे है उन्हें लगान देने में गाँधी के कार्यकर्ता रोड़ा नहीं अटकायेंगे। उसने यह भी बताया कि गाँधीजी इस बात से भी सहमत हैं कि कृषक अगर जरूरी समझें तो अपनी फसल का कुछ हिस्सा सरकारी बकाया के एवज में देंगे एवं उन्होंने इस बात पर भी सहमति प्रकट की हैं कि जो लोग लगान चुका नहीं रहे हैं, उनका माल-असबाब वहीं का वहीं पूरी कीमत चुका कर खरीद लेंगे एवं लगान चुकाने के बाद शेष राशि यदि बचती है, तो काश्तकारों को दे दी जायेगी। जिला मजिस्ट्रेट ने अपनी इस रिपोर्ट में यह भी सन्देह प्रकट किया है कि अगर जनता ऐसा नहीं चाहेगी तो गाँधीजी अपने पूर्व के रास्ते पर वापिस जा सकते है।

जिला मजिस्ट्रेट की उक्त रिपोर्ट से ऐसा प्रतीत होता है कि जिला मजिस्ट्रेट के मत में खेड़ा आन्दोलन एक बेकार का अड़ंगा मात्र था और गाँधीजी इस आन्दोलन से पीछे हट गये थे क्योंकि लोगों ने उनकी बात को ना मानते हुए लगान चुकाने का कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु यदि वास्तव में ऐसा होता, तो 7 अप्रेल 1918 को उत्तरी क्षेत्र के कमिश्नर एफ. जी. प्रेट गाँधीजी को खेड़ा मामले पर बातचीत करने के लिये नहीं बुलाते। गाँधीजी ने कमिश्नर प्रैट के उत्तर में उन्हें 9 अप्रेल को पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने लिखा कि वे, 11 अप्रेल, 9 बजे उनसे मिलने के लिए उपस्थित होना चाहते है। यह तथ्य इस बात को उजागर करता है कि कलेक्टर व कमिश्नर के बीच निश्चित रूप से कुछ विरोधाभास अवश्य था जिसका पता इस बात से भी लगता है कि कमिश्नर ने अपने 7 अप्रेल के ही पत्र में गाँधीजी को यह भी लिखा था कि वह यह अपेक्षा नहीं करते कि सुलह वार्ता के लिए आने से पहले गाँधी अपने हथियार डाल देंगे। 12 अप्रेल को कमिश्नर ने घोषित किया कि कम से कम 80 प्रतिशत लोगों ने लगान पहले ही चुका दिया है।

प्रैट के साथ गाँधीजी की जो बातचीत हुई उसके अनुसार प्रैट ने गाँधीजी को साफ कर दिया था कि लगान को स्थगित रखना संभव नहीं है लेकिन चैथाई (जुर्माना) की कार्यवाही को बन्द किया जा सकता है यदि किसान लगान की पूरी किश्त अदा कर दें। साथ ही कमिश्नर ने गाँधीजी को यह भी बताया कि किसान उनके मना करने के बाद भी लगान अदा कर रहे हैं। इसका उत्तर गाँधीजी ने अपने कमिश्नर को लिखे 15 अप्रेल के पत्र से इस प्रकार

दिया कि खेड़ा की जनता उनके आदेशों की पालना आँखें मूँदकर नहीं करती। उन्हें ऐसा करने भी नहीं दिया जाता।

यह कहना कि गाँधीजी के इस आन्दोलन का असर नहीं के बराबर था, ठीक नहीं होगा, क्योंकि बम्बई प्रांत के वायसराय इस आदेश, जो कि कमिश्नर ने 24 अप्रेल को कलेक्टर को दिये, जिसमें बताया था कि राष्ट्रीय संकट की इस घड़ी में (प्रथम विश्व युद्ध के चलते जर्मनी का आक्रमण अपनी चरम सीमा पर था) घरेलू मतभेद खत्म करने और राजनैतिक प्रचार बन्द करने के जो-जो प्रयत्न संभव हो, सब किए जाने चाहिए। उनके लिखे पत्र ने इस परिस्थिति में सरकार पर यह दबाव अवश्य बना कि वह ऐसी रियायतें, जिनमें राज्य के आवश्यक अधिकार भंग न होते हो, लोगों को दें। कमिश्नर ने अपने पूर्व के सब आदेशों को निरस्त करते हुए यह निर्देश दिये।

1) बम्बई भूमि-लगान कानून के अनुच्छेद 150 (ख) के अन्तर्गत जमीन कुर्क करके बकाया लगान वसूल करना बन्द किया जाये।

2) यदि किसान पूरा लगान दे देता है तो उससे चौथाई जुर्माना लेने के लिए जोर न दिया जाये।

3) सभी हालात में यदि हो सकें तो चुकता न करने वाले की चल सम्पत्ति कुर्क करके लगान वसूल किया जाये।

4) यदि जमीन कुर्क की जा चुकी है और किसान ने बकाया चुका दिया हो तो चालू राजस्व वर्ष में वह जमीन उसे किसी भी समय लौटा दी जानी चाहिए।

5) उसने यह भी कहा कि जो लोग वास्तव में लगान चुकाने की स्थिति में नहीं है, उन पर लगान चुकाने के लिए दबाव न डाला जाए, बल्कि बकाया को अगले वर्ष के हिसाब में शामिल कर दिया जाये।

अगले दिन (25 अप्रेल) को बम्बई सरकार की दूसरी प्रेस विज्ञप्ति जारी हुई, उसमें कहा गया था कि लगान का अधिकाँश भाग चुकाया जा चुका है, जो बचा है, वह ऐसे लोगों पर बकाया है जो लगान तो दे सकते हैं लेकिन उन्हें लगान न देने के लिए बरगलाया जा रहा है तथा इन हालात में बम्बई सरकार गाँधीजी की स्वतन्त्र जाँच कराने की प्रार्थना को स्वीकार नहीं कर सकती। उसने इस बात पर जोर दिया कि कर को स्थगित, मुल्तवी और माफी की माँग अधिकार के रूप में नहीं दी जा सकती। यह तो राहत देने के लिए रियायत के तौर पर किया जाता है। उसने यह भी घोषणा की कि उसके सारे तखमीनें और आकड़ें, जिन पर लगान वसूली का निर्णय आधारित है, निरीक्षण के लिये खुले हैं। कलेक्टर ने उक्त आदेश यथासमय मामलातदारों को भेज दिये थे, लेकिन लगता है, कि जो लगान नहीं दे सकते थे उन पर दबाव डालना बन्द करने में मामलातदारों को कुछ हिचक हुई, जिसका

परिणाम यह हुआ कि कलेक्टर ने 22 मई 1918 को उन्हें वहीं आदेश भेजा, लेकिन तब तक कुल लगान का 93 प्रतिशत वसूल हो चुका था।

इधर खेड़ा के जिला कलेक्टर जे. घोषाल को गाँधीजी द्वारा यह वचन दे दिया गया था कि लिम्बासी के जिन लोगों ने लगान नहीं दिया है, वे सभी बकाया रकम चुकाने के लिए पर्याप्त गेहूँअथवा अन्य फसलें प्रदान करेंगे। फसल कुर्की के आदेश वापस ले लिए गए थे। मगर कपास व अन्य फसल पैदा करने वाले काश्तकार लगान अदा करने से इन्कार कर रहे थे। नडियाद के मामलातदार ने श्री गाँधीजी से भेंट करने के बाद 3 जून को उत्तरखेड़ा गाँव के लोगों को सूचित करने के लिए गाँव के कार्यकर्ताओं को यह आदेश भेजा कि जो दे सकते हैं, वे लोग तत्काल लगान अदा कर दें। लेकिन उन लोगों पर, जो दरअसल गरीब है और जिनकी गरीबी साबित हो चुकी है, लगान की वसूली के लिए दबाव नहीं डाला जाये और उनका लगान अगले साल के लिए मुल्तवी कर दिया जाये।

7.4 आन्दोलन की समाप्ति

तब गाँधीजी ने लोगों को लगान अदा करने का अनुरोध किया। इसके बाद आन्दोलन खत्म हो गया। हालाँकि गाँधीजी और खेड़ा के जिला कलेक्टर अप्रेल 1918 के अन्त में श्री जे. घोषाल की जगह श्री केर को बना दिया गया था, से गाँधीजी का अन्य शेष रहे मामलों में पत्र व्यवहार होता रहा, जो कि विशेष तौर पर चौथाई जुर्मानें जिन लोगों पर किया था, के बारे में था एवं इस सवाल के बारे में कि जिन लोगों को इस वर्ष लगान चुकता करने के लिए अंततः गरीब करार दिया गया है, उनका लगान मुल्तवी माना जायेगा या अनाधिकृत बकाया। इस प्रश्न पर कलेक्टर का ख्याल था कि इस बारे में सचमुच गलतफहमी हुई है और उनकी सिफारिश पर सरकार अनमने होकर बकाया लगान को मुल्तवी मान लिया। जुलाई के अन्त तक कुल लगान 98.5 प्रतिशत सरकारी आकड़ों के हिसाब से वसूल हो चुका था।

अब सवाल यह उठता है कि क्या यह आन्दोलन सिर्फ बकाया रहे 1.5 प्रतिशत लगान जिन लोगों से लेना शेष रह गया था, सिर्फ उन्हीं के लिए लड़ा गया। इसका कारण यह था कि गाँधीजी द्वारा यह आन्दोलन फरवरी 1918 में शुरू किया गया था और गाँधीजी ने मई के आरम्भ में यह स्वीकार किया कि लगान रियायत के रूप में मुल्तवी किया जाता है, कानून द्वारा प्रदत्त अधिकार के रूप में नहीं। लेकिन उन्होंने स्पष्ट रूप से यह नहीं माना कि दोनों में यह मूलभूत अन्तर इस कारण नहीं है कि सरकार निरंकुशतापूर्वक लोगों को अधिकार देने से इंकार करती है, बल्कि इसका कारण यह सीधी सादी बात है कि निश्चित लगान की तत्कालीन प्रणाली के अन्तर्गत किसान एक अवधि के लिए किए गए बन्दोबस्त को मानकर कुछ वर्षो तक बुरी फसल होने पर भी उतना ही लगान देने का वादा करता है, जितना वह अच्छी फसल होने पर देता है। इस प्रकार आन्दोलन का समर्थन इस आधार पर किया जा सकता है कि प्रशासनिक आदेशों के बारे में जहाँ कहीं स्थानीय अधिकारियों और किसानों में तीव्र मतभेद होते है वहाँ मतभेदों के मुद्दे पर एक निष्पक्ष जाँच समिति बनाकर ऐसे मुद्दे उसे सौंपे जाने चाहिए।

7.5 खेड़ा सत्याग्रह के अन्त पर गाँधी के विचार

महात्मा गाँधी ने यह अवश्य माना कि इस आन्दोलन से गुजरात के किसानों को राजनैतिक शिक्षा मिली है और पाटीदारों में नई चेतना का विकास हुआ हैं। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि सत्याग्रह का शुद्ध अन्त तभी माना जाता है जब जनता में आरम्भ की अपेक्षा अन्त में अधिक तेज और शक्ति पाई जाये। लेकिन फिर भी उन्होंने इस आन्दोलन में कुछ अच्छाई अवश्य नजर आई। उन्होंने माना कि भविष्य में राज्य की ओर से होने वाले कष्टों के निवारण का मार्ग जनता के हाथ लग गया था। उसके उत्साह के लिए इतना ज्ञान पर्याप्त था।

7.6 सारांश

इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रारम्भ में कम से कम गाँधीजी के हस्तक्षेप से पहले आन्दोलन कोई बहुत अधिक प्रभावोत्पादक नहीं था। इसके अलावा घरेलू मतभेद समाप्त करने के लिए वायसराय महोदय की अपील निकलने तक स्थानीय सरकार तथा उसके स्थानीय अधिकारियों ने तब तक अपनाये गये अपने कड़े रूख में किसी तरह की नरमी नहीं दिखाई। जिस सीमा तक नरमी दिखाई गई, मुख्यतः इतनी ही नरमी दिखाई गई कि लगान वसूली के लिए स्वीकार्य कठोर तरीकों की जगह नरम तरीके अपनाए गए। यह किसी भी तरह श्री गाँधीजी की माँगों के सामने झुकना नहीं था जब कमिश्नर ने यह निर्देश दिए कि उन किसानों पर, जो वास्तव में लगान चुकाने की स्थिति में नहीं हैं, कोई दबाव न डाला जाये। सामान्य संकट के समय लगान स्थगित करने के किसी खास नियम के अन्तर्गत नहीं आता, तथापि यह बम्बई अहाते में की जाने वाली लगान वसूली की परम्परा के अनुसार था, बाद में बकाये को इस ‘अनाधिकृत बकाया’ से ‘मुल्तवी लगान’ में तब्दील करना, केवल एक साधारण छूट थी, फिर भी आन्दोलन जिस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कृत संकल्प था, यह छूट उसका एक छोटा सा अंश मात्र था। आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य यह था कि या तो फसल के नुकसान का अनुमान लगाने के लिए निष्पक्ष जाँच करायी जाये, या सरकार किसानों द्वारा लगाये गये अनुमान को ठीक मान ले और उसके आधार पर लगान स्थगित किया जाये। इनमें से कोई भी माँग स्वीकार नहीं की गई, यहाँ तक कि उपयुक्त छूट जिन खास मामलों में दी गई उनके बारे में भी यह निर्णय सरकारी अधिकारियों ने ही किया कि कौन किसान कितने गरीब हैं, कि लगान चुकता नहीं कर सकते या कौन ऐसे हैं कि कर दे सकते हैं और इसका पता लगाने के लिए कदम उठाने से पहले ही कि कौन चुकता करने योग्य हैं, कौन नहीं, श्री गाँधी अपना आन्दोलन समाप्त करने के लिए राजी हो गये और उन्होंने कानून मानने से इन्कार करने वाले अल्पसँख्यकों से लगान जमा करवाने में सक्रिय भाग लिया। यह सच है कि गाँधीजी पहले गलतफहमी के शिकार हो गये थे क्योंकि 3 जून को उत्तरसंडा की सभा में आन्दोलन खत्म करने की घोषणा करते हुए उन्होंने किसानों से कहा कि ‘सरकार ने यह फैसला उन पर छोड़ दिया हैं कि कौन किसान लगान न दे’, लेकिन यह व्यक्तव्य अधिकृत नहीं था और 1 जुलाई 1918 को कमिश्नर ने निश्चित रूप से यह घोषणा की कि जिन लोगों को यह रियायत मिलेगीए वह अत्यन्त गरीब किसान होंगे और वह

कलक्टर और उनके मातहत अधिकारियों द्वारा निर्दिष्ठ व्यक्ति होंगे, किसी बाहरी व्यक्ति या संस्था द्वारा निर्दिष्ट नहीं।

अन्त में खेड़ा के सम्बंध में स्वयं गाँधीजी द्वारा जो संदेश खेड़ा के लोगों को उन्होंने 6 जून 1918 को दिया, जिसमें स्वयं उन्होंने खेड़ा के समझौते को एक अशोभनीय समझौता करार दिया, निश्चित रूप से उनके निराशाजनक भाव को प्रकट करता है। कारण स्पष्ट है, इससे पूर्व के जितने भी आन्दोलनों से गाँधी जुड़े, चाहे वे दक्षिण अफ्रीका से संबद्ध रहे हो या बिहार का चम्पारण आन्दोलन, सभी में गाँधीजी का अहिंसात्मक झण्डे का जोर अवश्य दिखाई दिया है, किन्तु खेड़ा के आन्दोलन ने इस झण्डे का रंग कुछ सीमा तक अवश्य फीका कर दिया था।

अब प्रश्न यह भी पैदा होता है कि आखिर इस आन्दोलन में ऐसी कौनसी कमी रही जिसने ब्रिटिश प्रशासन को इस आन्दोलन को समाप्त करने में सहायता की। वो यह कि खेड़ा के लोगों में आपसी विश्वास एवं दृढ़ इच्छा शक्ति की कमी थी, जो गाँधीजी उनमें उत्पन्न नहीं कर सके किन्तु इस आन्दोलन ने वहाँ के लोगों को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने का एक तरीका अवश्य स्थापित कर दिया था। साथ ही जन-जागृति का रास्ता भी बता दिया।

7.7 अभ्यास प्रश्न

1. खेड़ा किसान आन्दोलन से आप क्या समझते हैं।
2. खेड़ा सत्याग्रह में समाचार-पत्रों की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए।
3. खेड़ा किसान आन्दोलन में गाँधीजी की भूमिका की समीक्षा कीजिए।

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डेविड हार्डिमन, पीजेन्ट नेशनालिटिज ऑफ गुजरात, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, 1981
2. अबानी लहीरी, द पीजेन्ट एण्ड इण्डियास् फ्रिडम मूवमेंट, वी.वी. गिरी, नेशनल लेबर इन्स्टीट्यूट, नोएडा, 2001
3. वीकली रिपोर्ट ऑफ डाइरेक्टर जनरल, इन्टेलीजेन्स, होम डिपार्टमेन्ट (पॉलिटीकल) मई 1917, राष्ट्रीय अभिलेखागार, भारत सरकार, नई दिल्ली

4. ब्राउन जूडिथ, गाँधीज राईज टू पावर : इण्डियन पोलिटिक्स 1915-1922, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1977

5. कुमार, बी. अरूण, गाँधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008

इकाई - 8

बारदोली सत्याग्रह और महात्मा गाँधी

इकाई रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 बारदोली किसान आन्दोलन

8.2.1 बारदोली किसान आन्दोलन 1922 का स्थगन

8.2.2 बारदोली किसान आन्दोलन का पुर्नउद्भव

8.3 1928 में प्रारम्भ हुए बारदोली आन्दोलन की पृष्ठभूमि

8.3.1 सत्याग्रह का मूर्तरूप

8.3.2 बारदोली सत्याग्रह की तीव्रता

8.3.3 बारदोली दिवस

8.4 आन्दोलन के दौरान गाँधीजी के विचार

8.5 बारदोली में गाँधीजी का आगमन

8.6 बारदोली समझौता

8.7 सारांश

8.8 अभ्यास प्रश्न

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप जान पायेंगे :-

- बारदोली किसान आन्दोलन की प्रकृति।
- बारदोली सत्याग्रह की कार्य योजना।
- बारदोली के किसानों को न्याय दिलाने में गाँधीजी की भूमिका।
- बारदोली आन्दोलन के बारे में गाँधीजी के विचार

8.1 प्रस्तावना

गुजरात के सूरत जिले में स्थित बारदोली ताल्लुक में सरकार द्वारा राजस्व की बढ़ोतरी के विरूद्ध किसान आन्दोलन हुआ था। गाँधीजी द्वारा चलाये जा रहे ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध सविनय अवज्ञा आन्दोलन की लड़ी में एक और कड़ी के तौर पर चलाया गया था। सरकार के विरूद्ध आन्दोलन चलाने के लिए किसी न किसी कारण की आवश्यकता होती है और बारदोली में वो कारण बन चुका था।

8.2 बारदोली किसान आन्दोलन

सन् 1922 में गाँधीजी व्यक्तिगत रूप से बारदोली गये और वहाँ उन्होंने किसानों से सरकार को राजस्व नहीं देने को कहा। बारदोली में स्थित किसान पाटीदार खाते-पीते लोग थे जिनमें अधिकतर वे लोग थे जो कि विदेशों में रह रहे थे किन्तु बारदोली की उपजाऊ भूमि को देखते हुए उसमें बढ़िया किस्म के कपास उपजाकर अपनी सम्पति में अधिकाधिक वृद्धि की पुष्टि से विदेश में अपनी सम्पत्ति विक्रय कर यहाँ आकर बस गये थे। पाटीदारों की इसी सोच के कारण गाँधीजी को वहाँ सविनय अवज्ञा आन्दोलन की सफलता पर एक सन्देह था कि वे (पाटीदार) उनके सिद्धान्त प्रेम, सत्य और अंहिसा पर विश्वास और अमल करेंगे अथवा नही। उनको यह भी जानकारी थी कि खेड़ा में भी पाटीदारों ने जब सरकार को राजस्व नहीं चुकाया था तब सरकार द्वारा उनकी सम्पत्ति को जब्त कर नीलाम किया तो वहाँ के पाटीदारों ने गाँधीजी के अंहिसात्मक सिद्धान्त का पालन न करते हुए उन्होंने अपना आपा खो दिया था। ऐसे में जबकि बारदोली के पाटीदार पहले से ही समृद्ध हैं तो क्या वे गाँधीजी के सुझाये मार्ग पर चलेंगेघ् गाँधीजी इस बात को भी भली-भाँति जानते थे कि लगभग पूरे गुजरात में

ग्रामीण जनसंख्या दो भागों में विभक्त थी जिनमें से गौरवर्ण लोग, जो कि उच्च जाति से थे, जिनमें पाटीदार, बनिया और ब्राह्मण थे और दूसरे वर्ग में कालीपराज (काली त्वचा) जिसमें अन्य जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग आदि के लोग थे। वास्तव में गाँधीजीइस बात के लिए चिन्तित थे कि एक बड़े स्तर के राजनीतिक हलचल के लिए उजला लुक ;साफ सुथरे लोगद्ध और कालीपराज (श्याम वर्ण) लोगों के बीच इस सामाजिक रूकावट या खाई को कैसे पाटा जाए।

बारदोली में प्रथम सविनय अवज्ञा आन्दोलन के दौरान गाँधीजी ने कुछ सभाओं को सम्बोधित किया। गाँधीजी ने कहा कि पाटीदार युवक मण्डल के लोग इस रचनात्मक कार्य के लिये जोश के साथ आगे आऐ। इसके साथ ही पूरे बारदोली तालुक में बैठकें आयोजित हुई और सरकार को राजस्व न देने से संबंधित चेतावनी प्रेषित कर दी गई लेकिन इससे पहले कि आन्दोलन अपना कार्य करता गोरखपुर जिले के चोरी-चोरा स्थान पर हुए खून-खराबे से आहत गाँधीजी ने इस आन्दोलन को स्थगित कर दिया।

8.2.1 बारदोली किसान आन्दोलन (1922) का स्थगन

बारदोली सत्याग्रह रोकने का उक्त कारण के अतिरिक्त अन्य कारण भी थे। इसके लिए 12 फरवरी, 1922 को कांग्रेस कार्यसमिति द्वारा लिए गए 3 प्रस्ताव ऐसे थे जिनके अध्ययन सेये कारण भी स्पष्ट होते हैं। इन्हे निम्न रुप में अभियक्त किया जा सकता है :-

देश अभी पर्याप्त रूप से अहिंसक नहीं हुआ था। इसीलिए कांग्रेस कार्यसमिति ने फैसला किया कि व्यापक सविनय अवज्ञा आन्दोलन फिलहाल स्थगित कर दिया जाये और हर तरह की आक्रामक कार्यवाहियाँ बन्द कर दिया जाये।

कार्यकर्ताओं और संगठनों को सलाह दी गई कि वे किसानों को सूचित कर दें कि जमींदारों को लगान न देना कांग्रेस के प्रस्तावों और देश के हितों के खिलाफ है।

जमींदारों को इस बात का आश्वासन दिया गया कि कांग्रेस के आन्दोलन का उद्देश्य किसी भी रूप में उनके कानूनी अधिकारों पर चोट पहुँचाना नहीं है और जहाँ किसानों को किसी तरह की शिकायत है वहाँ कार्यसमिति यही चाहती है कि आपसी सलाह-मशविरे से और समझौता वार्ता से मामले को निपटा लिया जाऐ।

उक्त तीनों प्रस्ताव बारदोली आन्दोलन को स्थगित करने के साथ ही लिए गए थे। इससे बारदोली आन्दोलन स्थगित का एक कारण यह भी बनता है किबारदोली आन्दोलन में जहाँ किसान सीधे सरकार को कर अदा नहीं करना चाहते थे वहीं उसका असर जमींदार से किसानों द्वारा लिए ऋण न पड़ जाए और किसान उन स्थानों पर भी

कर देने से इन्कार न कर दे, इसीलिए कांग्रेस ने जमींदारों के साथ घनिष्ठ संबंधों के चलते बारदोली आन्दोलन को स्थगित करना ही ठीक समझा।

बारदोली किसान आन्दोलन राष्ट्रव्यापी असहयोग आन्दोलन का अभिन्न अंग बन गया था। असहयोग आन्दोलन राष्ट्रव्यापी था किन्तु इसका सर्वाधिक प्रभाव संयुक्त प्रांत, बम्बई प्रांत, पंजाब, दिल्ली इत्यादि क्षेत्रों में था। सरकारी दमनचक्र भी इन्हीं क्षेत्रों में अधिक था। 1922 के आरम्भ में कांग्रेस एवं गाँधीजी इस आन्दोलन को चलाने में असमर्थ दिखाई दिये। इसका एक कारण और था। पेरिस के शाँति सम्मेलन के साथ ही तुर्की के खलीफा का पतन हो चुका था। अतः असहयोग आन्दोलन के साथ सम्मिलित खिलाफत आन्दोलन कमजोर पड़ गया।

इसके साथ ही यहाँ यह बताना भी उपयुक्त होगा कि 10मार्च, 1922 को गाँधीजी द्वारा यंग इण्डिया’में लिखे उनके तीन लेखों के कारण गाँधीजी पर राजद्रोह का मुकद्मा चला और उन्हें 6 वर्ष कैद की सजा दी गई। हालाँकि रोगग्रस्त होने के कारण उन्हें 5 फरवरी, 1924 को रिहा कर दिया गया। इस दौरान बारदोली किसान आन्दोलन के बारे में गाँधीजी कोई विचार या कार्ययोजना को मूर्तरूप नहीं दे सके। अंततः बारदोली किसान आन्दोलन में एक लम्बा ठहराव आ गया।

8.2.1 बारदोली किसान आन्दोलन का पुर्नउद्भव

बारदोली आन्दोलन स्थगित होने से सरकार के हौंसले बढ़ गये और उसने दो अलग-अलग समितियों को गठित कर लगान में वृद्धि का प्रस्ताव पारित कर दिया। परिणामस्वरूप समिति की अनुशंषाऐं लागू होते ही बारदोली में एक बार पुनः विरोध के स्वर प्रकट हुए।

अतः सन् 1928 में बारदोली सत्याग्रह एक बार फिर मुखर हुआ, जिसका नेतृत्व श्री बल्लभभाई पटेल ने किया। उसका मार्गदर्शन अप्रत्यक्ष रूप से गाँधीजी ही कर रहे थे।

बारदोली सत्याग्रह का मुख्य मुद्दा, बम्बई सरकार द्वारा बढ़ाया गया कर निर्धारण रहा, जो कि 22 प्रतिशत कर दिया था जिसको किसान पूर्व निर्धारित दर पर ही देना चाहते थे। अतः उन्होंने राजस्व नहीं देने का फैसला किया।

फरवरी 1928 की खुफिया पुलिस की गोपनीय रिपोर्ट में यह बताया गाया किए सूरत जिले के बारदोली तालुका के गाँवों में 1922 के शुरू में जिस नाटक की कोशिश ष्जनता की अवज्ञा आन्दोलन,गाँधीजी ने प्रारम्भ किया था, वहाँ बल्लभभाई पटेल किसानों के नेता के रूप में दिखाई दिये, जो कि किसानों से बढ़े हुए भूमि कर का भुगतान नहीं कराना चाहते थे। उसने 4 तारीख को बारदोली स्वराज आश्रम में एक औपचारिक सभा की और पूरे बारदोली तालुक की सभा 12 तारीख को बुलाई। उनके भाषण में उन्होंने किसानों को आव्हान किया कि वे कर

नहीं देने की लड़ाई प्रारम्भ करें। इसके साथ ही इसी रिपोर्ट में समाचार पत्रों से प्राप्त सूचना के आधार पर यह बताया गया कि सभा में एक निर्णय पारित किया कि अगर सरकार अपने बढ़ाये हुए भूमि कर का फैसला वापिस ले लेती है और अपने पुराने कर निर्धारण को ही लागू कर देती है तो किसान राजस्व देने को तैयार हैं। रिपोर्ट में यह भी कहा गयाकि इस आन्दोलन में राजनीतिज्ञों का साथ नहीं लिया जायेगा।

उक्त रिपोर्ट से स्पष्ट होता है कि इस आन्दोलन की हलचल फरवरी, 1928 में हो गई थी, लेकिन बारदोली आन्दोलन को समझने के लिए उसकी पृष्ठभूमि को जानना उचित होगा।

8.3 1928 में प्रारम्भ हुए बारदोली आन्दोलन की पृष्ठभूमि

बम्बई की विधान परिषद ने मार्च 1924 में संयुक्त संसदीय समिति की सलाह मानते हुए कि 'भूमिकर के निर्धारण में संशोधन करने की प्रक्रिया अधिनियम द्वारा विनिमय के और करीब लाई जानी चाहिए' भारी बहुमत से इस आशय से पारित किया गया कि भूमि-कर का संशोधन विधान द्वारा विनियमित करने के प्रश्न पर गौर करने के लिए, एक समिति नियुक्त की जाए और जब तक उक्त कानून अमल में नहीं लाया जाता तब तक नये सिरे से कोई तखमीना न बनाया जाये और संशोधित समझौता भी लागू न किया जाये।

जबकि वास्तव में हुआ यह कि सरकार ने प्रस्ताव का पहला भाग भूमिकर तखमीना समिति नियुक्त करके कार्यान्वित कर दिया परन्तु दूसरे हिस्से की उपेक्षा कर दी गई और प्रस्ताव का विरोध करते हुए एक के बाद एक ताल्लुक का फिर से जल्द निरूपण किया जाने लगा। इसी बीच भूमि कर की समिति की बैठक हो चुकी थी और उसने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित कर दी थी। बम्बई विधानसभा परिषद ने मार्च 1927 में भारी बहुमत से एक और प्रस्ताव पारित किया जिसमें सपरिषद गर्वनर से सिफारिश की गई थी कि भूमि-कर तखमीना समिति की रिपोर्ट को ध्यान में रखते हुए जरूरी कानून बनाकर मार्च 1924 के प्रस्ताव को तत्काल अमल में लाया जाये और जब तक ऐसा कानून न बने, सम्बद्ध भूमि-कर अधिकारियों को आदेश जारी किए जाये कि 15 मार्च 1924 के बाद बढ़े हुए कर की उगाही न करें। भूमि-कर तखमीना समिति द्वारा सुझाया गया कानून विधान परिषद के सामने था लेकिन अन्ततोगत्वा कानून बन जाने पर उसका उद्देश्य ही विफल हो गया। इस उद्देश्य से लगभग जानबूझकर संशोधन की व्यवस्था की गई। बारदोली ऐसे कई ताल्लुकों में से एक था, जहाँ इन प्रस्तावों के अनुसार करों में कोई संशोधन नहीं होना चाहिए था, और करों के कोई नई दर लागू नहीं किये जाने चाहिए थे। इस मामले के गुण-दोष पर ध्यान न दिया जाये तो भी यह आपत्ति बारदोली में भूमि-कर संशोधन व्यवस्था पर सैद्धान्तिक मूल आपत्ति थी।

बारदोली की नई भूमि कर संशोधन व्यवस्था श्री जयकर द्वारा तैयार की गई जिन्होंने नवम्बर 1925 में अपनी सिफारिशें पेश कर दी थी। उन्होंने 30 प्रतिशत बढ़ोतरी की सिफारिश की थी। बन्दोबस्त आयुक्त श्री एन्डरसन उस

आधार से असहमत थे जिस पर श्री जयकर ने अपनी अनुशंषा प्रस्तुत की थी और उन्होंने एक नयाआधार अपनाकर 29 प्रतिशत बढ़ोतरी की अनुशंसा की। सरकार दोनों ही व्यक्तियों की अनुशंसाओं से असहमत थी और उसने लगान की 22 प्रतिशत बढ़ोतरी तय की। ताल्लुक का पहले का लगान जो 5,14,762 रूपये था वह नये कर निर्धारण के अन्तर्गत 6,20,000 रूपये से कुछ ऊपर हो गया था।

इसके विरोध में बारदोली के किसानों का कहना था किए ताल्लुक का पूरी हद तक कर निर्धारण हो चुका है तथा उसमें उस हद से आगे और बढ़ोतरी की कतई कोई बात नहीं है। ताल्लुके के किसान अपनी भूमि के मानक के अनुसार इस प्रकार विभाजित थे :-

1 से 5 एकड़ तक	10,379
6 से 25 एकड़ तक	5,936
26 से 100 एकड़ तक	829
101 से 500 एकड़ तक	40

निरापद रूप से ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि वे सभी किसान जिनके पास कुल 25 एकड़ से ज्यादा जमीन नहीं थी स्वयं काश्त करते थे और जिनके पास ज्यादा जमीन थी वे अपनी जमीन बँटाई पर किसान को दे देते थे। इसका मतलब हुआ कि 16,315 किसान वास्तव में कुल 1,27,045 एकड़ के क्षेत्र में स्वयं काश्त करते थे। यानि कि हर किसान औसतन लगभग आठ एकड़ भूमि में खेती करता था। यह न्यायसंगत नहीं था कि निर्णय किरायों के आधार पर हो चाहे वे लाभकर या अलाभकर हो और जिनका उपभोग केवल बहुत कम लोग अर्थात 869 बड़े जमींदार करते हों। 16,315 किसानों के पास जो जमीनथी उसके मूल्य तथा भूमि-कर, कानून की धारा 107 के अधीन मुनाफों का जो लाभ वे उठा रहे थे उसको ध्यान में रखते हुए निर्धारण किया जाना चाहिए था। बारदोली के किसान दलील दे रहे थे कि करों का निर्धारण एकड़ की औसत ऊपज को ध्यान में रखते हुए और भूमि-कर अधिकारियों द्वारा स्वीकृत बहुत ऊँचे दर्ज के मूल्यों को सही मानकर (यद्यपि रिपोर्ट के बाद से मूल्य काफी गिर गया था) 8 एकड़ जमीन मेंखेती करने वाले किसान को इतना लाभ नहीं होता था कि सरकार उस वक्त की मौजूदा कर निर्धारण की दर में बढ़ोतरी कर सके। वे इस कथन को सिद्ध करने को तैयार थे और उनका कहना था कि मुनाफे के 50 प्रतिशत को भी आधार माना जाये तो भी किसी बढ़ोतरी की जरूरत नहीं है और यदि मुनाफे के 25 प्रतिशत को आधार माना जाये तो लगान की मौजूद दरों में काफी कटौती करना जरूरी होगा।

इस प्रकार वे अपनी दलील के लिए ताल्लुक की वास्तविक परिस्थितियों पर निर्भर करते थे लेकिन उनकी इस दलील का आधार सरकारी रिपोर्टो के महत्वऔर यर्थाथता को संदेहास्पद मानना भी रहा। उनका कहना था कि

भूमि कर अधिकारी श्री जयकर ने कोई खास जाँच पड़ताल नहीं की। उन्होंने कुछ गाँवों का दौरा किया। गाँव वालों को लगान बढ़ाने के पक्ष के बारे में कोई अभ्यावेदन देने का मौका नहीं दिया और सरसरी तौर पर एक सर्वेक्षण तैयार किया। उन्होंने नितान्त आवश्यक आंकड़ें बिनाजांच किये अपने कार्यालय में तैयार किये और अपनी 30 प्रतिशत सिफारिशों के लिए कुल पैदावार के मूल्य में बढ़ोत्तरी पर निर्भर रहे। जयकर की जाँच जिस लापरवाही से तैयार की गई थी वह उसे निरर्थक बनाने के लिए काफी था। लेकिन एन्डरसन ने एक अन्य बहुत ठोस आधार पर श्री जयकर की रिपोर्ट पर शंका व्यक्त की जिनकी ओर जनता के प्रतिनिधियों ने भी ध्यान दिलाया था। उन्होंने श्री जयकर की रिपोर्ट के सबसे महत्वपूर्ण अंश को, अर्थातजिस पर वे कुल उपज व मूल्य पर अपनी सिफारिशें आधारित करते हैं, निरर्थक और सर्वथा खतरनाक कहकर रद्द कर दिया, क्योंकि उन सिफारिशों में उनके सुझावों का कोई औचित्य नहीं मिलना, बल्कि उनसे विरूद्ध तर्को का आभास मिलता था। इन हालात में श्री एण्डरसन का स्पष्ट कत्र्तव्य था कि सरकारों को नये सिरे से जाँच पड़ताल करने का सुझाव देते, लेकिन उन्होंने लक्ष्य का अतिक्रमण कर दिया और उन्होंने दरों के आँकड़ों के आधार पर अपनी सिफारिशें दे दी। यह एक ऐसा आधार था, जिनके औचित्य पर कई उच्च्च पदासीन सरकारी अफसरों ने भारी आपत्ति की थी और प्रस्तुत मामलों में आँकड़ों पर भी इस आधार पर कि उनकी जांच नहीं की गई है, भारी आपत्ति की। यदि श्री जयकर ने कोई वास्तविक जाँच पड़ताल न करके सैटलमेन्ट मेनुअल का मजाक उड़ाया था, तो श्री एण्डरसन एक कदम आगे बढ़ गये थे। उन्होंने सैटलमेन्ट मैनुअल का उल्लघंन किया। सैटलमेन्ट मैन्यूअल में लिखा था कि विचारणीय मुद्दों में किरायों को आधार मानना अनेक में से एक मुद्दा है और उनके आधार पर विचार करें भी तो जब तक उनका परिणाम काफी न हो, और जब तक उनकी विश्वसनीयता प्रमाणित न हो जाये, उन्हें निश्चित निर्णयों का आधार नहीं बनाया जा सकता। किराये के आँकड़ों पर पूरी तरह भरोसा रखकर और यह मानकर कि उनके महत्वपूर्ण होने के लिए अपेक्षित दोनों शर्ते पूरी हो गई है, श्री एण्डरसन ने भारी गलती की। श्री एण्डरसन एक जगह श्री जयकर पर यह दोष लगाते है कि उन्होंने किराये पर उठाये क्षेत्र और खुद मालिक द्वारा जोते गये क्षेत्रों के आँकड़े इकट्ठा करने का कोई प्रयत्न नहीं किया और फिर भी वह परिशिष्ट (क) पर गलती से इस निष्कर्ष पर पहुँच गये कि कुल क्षेत्र का कम से कम आधा भाग उन जमींदारों के पास है, जो स्वयं खेती नहीं करते। उनकी भूल का आधार यह है कि जो उन्होंने जल्दबाजी में सात साल के आँकड़ें 42923 एकड़, एक साल के आँकड़े मान लिये और 23995 एकड़ अर्थात कुल क्षेत्र की लगभग 18 प्रतिशत जमीन जो किसानों के अपने पास थी, उनके बारे में श्री जयकर के अनुमान की नितान्त उपेक्षा कर दी। श्री जयकर का अनुमान भी यद्यपि ऊपर से सही दिखता प्रतीत होता था, तथापि बिल्कुल सही नहीं, क्योंकि यह मौके पर ही की गई जाँच पर आधारित नहीं रहा था।

इन कारणों से श्री जयकर और श्री एण्डरसन, दोनों की रिपोर्ट बेकार थी और सरकार द्वारा 22 प्रतिशत की दर सर्वथा मनमाने तौर पर नियत की गई थी, क्योंकि वह किन्हीं नये या सही आँकड़ों पर आधारित नहीं थी।

सत्याग्रह का मूर्तरूप :-

इसलिए बारदोली के सत्याग्रहियों ने तब तक कोई लगान न देने की शपथ ली जब तक या तो

(1) बढ़ोतरी रद्द नहीं कर दी जाती या

(2) पूरे मामले की जाँच करने के लिए स्वतन्त्र निष्पक्ष न्यायाधीकरण की नियुक्ति नहीं की जाती।

इस प्रकार खुफिया पुलिस की फरवरी 1928 की गोपनीय रिपोर्ट से साफ झलकता है कि बारदोली के सत्याग्रह का प्रारम्भ बल्लभ भाई पटेल ने 12 फरवरी 1928 को कर दिया था। बारदोली आन्दोलन के प्रारम्भिक घोषणा में ही पटेल ने एक प्रश्न लोगों के सामने रखा कि जब्ती क्या है? क्या वे जमीन को इंग्लैंड ले जायेंगे?

पटेल के उक्त प्रश्न का भाव देखें, तो समझ में आता है कि कर नहीं देने पर सरकार जमीनों को जब्त करके, किस प्रकार अपना राजस्व प्राप्त कर सकती है, जब तक कि उस जमीन या भूमि को कोई और खरीद न ले अगर उसे कोई नही खरीदता तो ऐसे में यह सरकार क्या भूमि को इंग्लैंड ले जा सकती है। पटेल के इस भाव का सीधा अर्थ यह निकलता है कि ना सिर्फ वे किसानों को बढ़ी हुई दर से सरकार को राजस्व देने से मना करेंगे, अपितु अगर सरकार किसानों की भूमि को जब्त कर उसके विक्रय से राजस्व प्राप्त करने की चेष्टा भी करेंगे, तो ऐसा करने से भी वे उन लोगों को, जो कि उस जमीन को खरीदने की कोशिश करेंगे, आन्दोलन में सहयोग माँगने के मूल्य पर रोकेंगे। इसी के साथ पटेल ने अपने कौशल को अब आन्दोलन के स्वरूप व क्षेत्र में दिखाना प्रारम्भ कर दिया था। इसी के तहत उन्होंने गाँव में सभायें की। बारदोली ताल्लुक की लगभग आधी आबादी अनुसूचित जनजाति, पिछड़ी जाति एवं अनछुऐ जाति की थी, जो कि खेतों में किरायेदार या कृषि मजदूरी किया करते थे। इसके अतिरिक्त पाटीदार मण्डल और भूमिहीन किसान (किरायेदार) तथा मजदूरों और विभिन्न जातियों के लोग थे। सभी ने एक जबरदस्त सम्मिलित धर्मनिरपेक्ष एकता इस सत्याग्रह में दर्शायी, जो कि इस सत्याग्रह की खास बात थी।

यही नहीं, वहाँ रहने वाली अल्पसंख्यक जातियों यथा मुस्लिम एवं पारसियों की भी उस आन्दोलन में हिस्सा लेने के लिए और पाटीदारों, नेताओं के पीछे एक दीवार की भाँति खड़े रहने के लिए अल्पसंख्यक समूहों के अखिल भारतीय नेता जैसे डॉ. अंसारी, मौलाना शौकत अली, नरीमन और बर्राचा आदि नेता बारदोली ताल्लुक क्षेत्र में घूमते रहते थे, इसके अलावा बारदोली ताल्लुक के धनाड्य लोगों व मध्यम किसान, जो या तो पाटीदारों के या भू-स्वामी (बनिया) आदि के बीच के मतभेद में भी सुधार को खोजा गया।

इसके अलावा गरीब किसानों का सहयोग लेना भी इस आन्दोलन की सफलता के लिए अनिवार्य था। बारदोली ताल्लुक के 137 गाँवों के लगभग 17000 ऐसे भू-स्वामी थे, जो या तो अपनी जमीन को पुनः पट्टे पर

जुतवाया करते थे या मजदूरों को किराये पर लेकर अपने प्रबन्ध से खेती करवाते थे। ऐसे में जबकि भूमि की बहुत माँग हो ये भू-स्वामीभूमि से अपनी रोजी खोना नहीं चाहते थे और इस बात के पूरे आसार थे कि ये भू-स्वामीअपनी जमीन को बचाने के लिए सरकार को राजस्व दे देते। ऐसे में आन्दोलन के आयोजकों पर यह जिम्मेदारी बन गयी कि वे ऐसे गरीब किसानों का अपने आन्दोलन से जोड़े रखे जो कि इन भू-स्वामियों के यहाँ मजदूरी पर कृषि कार्य करते या उनकी भूमि को स्वयं पट्टे पर लेकर खेती करते। कारण स्पष्ट था कि जब ऐसे किसान ना तो उनकी भूमि पर मजदूरी के रूप में कोई कार्य करने को राजी होंगे और ना ही उनकी जमीन को पट्टे पर जोतने को राजी होंगे तो उन भू-स्वामियों के द्वारा सरकार को राजस्व देने पर भी कोई लाभ होने वाला नहीं था। क्योंकि ऐसे में जमीन पर फसल तो उगायी ही नहीं जा सकती थी।

सत्याग्रह के अन्तर्गत गाँव के किसानों को शीघ्र दिशा निर्देश भिजवाने के लिए एक प्रचार प्रसार विभाग बनाया गया, ताकि सत्याग्रह के नये विकास के बारे में लोगों को बताया जा सके। लगभग 1000 बुलेटिन (प्रपत्र) और पम्पलेट्स किसानों के बीच बाँटे गये और 4000 प्रतियाँ तालुक के बाहर भी भिजवाया गया।

बारदोली आन्दोलन को तीन स्तर पर चलाया जा रहा था प्रथम, राष्ट्रीय स्तर पर, द्वितीय, क्षेत्रीय स्तर पर और तृतीय, स्थानीय स्तर पर। गाँधीजी की छवि प्रथम असहयोग आन्दोलन और सामाजिक अवज्ञा आन्दोलन से एक राष्ट्रीय नेता की बनी थी। वे सीधे तोर पर इस आन्दोलन से जुड़े थे, किन्तु इस आन्दोलन को वे पीछे से पूरा सहयोग व दिशा-निर्देश दे रहे थे। उन्होंने आन्दोलन को सहारा देने के लिए उसके मुख्य अंग के रूप में कार्य करते हुए राष्ट्रीय स्तर पर 'यंग इण्डिया'व 'नवजीवन' जैसे समाचार पत्रों में अपने लेखों से, न कि बारदोली आन्दोलन के नेताओं की फालतू बड़ाई करने के, आन्दोलनकारियों को बढ़ावा देते रहे। इसके अलावा जब भी बारदोली किसानों और नेताओं को उनकी जरूरत हुई, वे उसके लिए तैयार रहे। क्षेत्रीय स्तर पर बल्लभभाई पटेल और दूसरे नेता गुजरात सभा और गुजरात कांग्रेस के सम्पर्क में रहे। बल्लभभाई पटेल, जिन्होंने कि गाँधीजी को असहयोग आन्दोलन के दौरान कानून प्रक्रिया में साथ देते हुए अपने आपको उनके आन्दोलन से पूरी तरह जोड़ लिया था, पूरे आन्दोलन में सक्रिय भूमिका अदा करते रहे जब पटेल ने बारदोली सत्याग्रह का नेतृत्व किया, तब वे अहमदाबाद नगरपालिका समिति और गुजरात कांग्रेस समिति के अध्यक्ष थे। खेड़ा आन्दोलन के दौरान भी उन्होंने एक अहम् भूमिका निभाई थी। अतः पटेल जो गुजरात के क्षेत्र, लोग व राजनैतिक वातावरण से अच्छी तरह से परिचित थे, उनसे बढ़िया नेता क्षेत्रीय स्तर पर कोई दूसरा नहीं हो सकता था।

8.3.2 बारदोली सत्याग्रह की तीव्रता

बारदोली सत्याग्रह अपनी सुव्यवस्थित योजना के तहत सुचारू रूप से आगे बढ़ रहा था, परन्तु सरकार इस मुद्दे को कोई बहुत ज्यादा अहमियत नहीं दे रही थी।इस आन्दोलन पर जे. मोनरेथ, सेक्रेटरी ऑफ द गवर्नमेन्ट ऑफबोम्बे ने 16/19 अप्रेल 1928 को अपने पत्र में सेक्रेटरी ऑफ द गवर्नमेन्ट ऑफइण्डिया, एच.जी. हेग को

लिखकर यह तथ्य एक बार फिर उजागर किया कि बारदोली ताल्लुका में राजस्व से संबंधित सत्याग्रह निरन्तर जारी हैं। साथ ही 5 अप्रेल को बॉम्बे क्रानिकल में प्रकाशित एक रिपोर्ट, जो कि ‘द सेक्रेट्री, सत्याग्रह, पब्लिसिटी, बारदोली, के नाम से थी, से पता चला कि पटेल ने 2 अप्रेल को बरधा में दिए अपने भाषण में वहाँ के संभागीय नेताओं के बारे में बहुत ही बढ़ा-चढ़ाकर बोला था।

बारदोली आन्दोलन अपने जोर पर आ रहा था। कार्यकर्ता बारदोली ताल्लुकों में घूम-घूमकर सभा कर रहे थे। दिन में महिलाऐं भी बहुतायत में उपस्थित रहती थी। कार्यकर्ता गाँव-गाँव में घूम-घूमकर राजस्व नहीं देने की प्रतिज्ञा पर लोगों से हस्ताक्षर करवा रहे थे। जहाँ छोटे भू-स्वामी तुरन्त आन्दोलन में सम्मिलित हो रहे थे, वहीं बड़े भू-स्वामीकुछ झिझक रहे थे। इस दौरान कुछ बनिया राजस्व देकर आंदोलन को चोट पहुँचाने का कार्य कर रहे थे, लेकिन कुल मिलाकर अधिकतर किसानों ने ऐसा नहीं किया था। माह मई के दौरान सरकार की तरफ से लगभग 1500 जब्ती के नोटिस, किसानों की अचल सम्पत्ति, मवेशी और अन्य चीज जो किसानों की थी, के बारे में जारी हो चुके थे।

अधिकारीगण जब भी जब्ती के नोटिस लाते थे, तो गाँव में घरों के दरवाजे बन्द या ताले लग जाते थे। आन्दोलन के कार्यकर्ताओं ने गाँव वालों को ड्रम व कन्चे दे रखे थे, ऐसे में जब भी जब्ती वाले लोग आते तो कार्यकर्ता ड्रम व कन्चे बजाकर उनको सतर्क कर देते। जिससे वे अपने घरों को बन्द कर जाया करते थे। इस तरह की कार्यवाहियों को अंजाम देने के लिए कार्यकर्ता बराबर सभाऐं करते, जिनमें कई बार पुरूषों से ज्यादा महिलायें भाग ले रही थी। वे अपनी सभाऐं भी किया करती थीं। वे गीत बनाती और उनके पतियों की गिरफ्तारी हो जाने पर उनके पीछे-पीछे अदालतें और रेलवे स्टेशनों पर गीत गाती जाती। इस बीच जातीय संगठनों द्वारा अपने जाति भाईयों में यह घोषणा की जा रही थी कि वे लोग कोई भी सरकार द्वारा जब्ती जमीन को नहीं खरीदेंगे।

सरकारी दमनकारी नीतियों के चलते किसानों द्वारा सरकारी कारिन्दों की आवाजाही में रूकावट पैदा करना प्रारम्भ कर दिया था। वे रास्ते पर अवरोधक लगा देतें। उनकी मोटर के टायरों को फाड़ देते थे।

सरकार लगातार राजस्व न देने पर नोटिस जारी कर रही थी और ऐसी स्थिति में उनकी सम्पत्ति की जब्ती से राजस्व प्राप्त करने की कोशिश कर रही थी। ऐसे में कुछ बनिये, जो पैसो का लेन-देन और बड़े भू-स्वामीथे, जो कि झिझक के बाद सत्याग्रह में सम्मिलित हुए थे, सरकार ने सबसे पहले उन्हें नोटिस थमाये। इनमें से कुछ गाँवों के लोगों ने सत्याग्रहियों को चोट पहुँचाने वाला कार्य करते हुए अपना बकाया जमा करा दिया किन्तु कानून के भय से ऐसी हरकत करने वाले या अपने आपको उसके हवाले करने वाले लोग ना के बराबर थे जबकि अधिकतर बड़े या छोटे किसान संघ के लोग अपनी कर ना देने वाली प्रतिज्ञा पर कायम रहें। इनके साथ ही ऐसे लोग, जो कि अमीर भू-स्वामियों के खेतों मजदूरों या हालीग्वाल की हैसियत से कार्य करते थे, अपने मालिकों के

साथ खड़े रहे और जब भी कोई सरकारी अधिकारियों का गाँव में किसानों की अचल सम्पत्ति, मवेशी, ऐसा ही कोई वस्तु को जब्त करने के लिए ऐसे गरीब लोगों या मजदूरों की सहायता की जरूरत होती थी, तो वह गाँधीजी के सुझाये मार्ग सविनय अवज्ञा का पालन करते सरकारी अधिकारियों की विनम्रता से इन्कार कर देते थे। ऐसे सत्याग्रह की मिसाल या उदाहरण अन्य नहीं है, जिसमें कि मालिक, गुलाम या सभी जाति के लोग, या अमीर और गरीब एक साथ किसी एक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कन्धे से कन्धा मिलाकर खड़े दिखें, जैसा कि बारदोली सत्याग्रह में देखने को मिला।

बम्बई सरकार द्वारा काफी प्रयास के बाद भी वो इस आन्दोलन से जुड़े लोगों को अलग करने में विफल रही। सरकार ने यह भी सोचा कि आन्दोलनकारियों के बीच ऐसी कौनसी गलती कराई जाये जिससे कि वो अलग-अलग हो जाये। इसके लिए सरकार ने जब्ती अधिकारियों के साथ पठानों की टोली को लगाया ताकि वे हिन्दू सत्याग्रहियों को डरायेंऔर धमकाऐं जिससे कि उनके बीच साम्प्रदायिकता के आधार पर कुछ ऐसा हो, जिससे कि आन्दोलन से जुड़े मुस्लिम नेता इस आन्दोलन से अलग हो जाये। इसी के चलते सरकार ने एक मुसलमान मामलातदार (ताल्लुके के स्तर का राजस्व अधिकारी) नियुक्त किया ताकि वो मुस्लिम किसानों को सत्याग्रहियों से अलग कर सकें। जिस तरह से बारदोली सत्याग्रह को एक साम्प्रदायिकता की आग में झोंकने जैसा कार्य हुआ और यह भी सत्य है कि किसानों की जब्त की गई अचल सम्पत्तियों को बहुत ही कम दाम पर या उस सम्पत्ति के वास्तविक दाम से बिल्कुल कमतर स्तर पर उसको नीलाम करने की कोशिश की गई।

इसी बीच विधान परिषद के आठ सदस्यों ने सत्याग्रह को सहयोग प्रदान करने के लिए विधान परिषद से अपना इस्तीफा देने की धमकी सरकार को दी थी। बल्लभभाई पटेल ने उन समृद्ध लोगों से भी सहयोग माँग जो कि बारदोली के निवासी थे और इधर-उधर बस गये थे। वे उनको ताल्लुक के सत्याग्रह के दौरान घट रही असामान्य स्थिति से भी अवगत करवा रहे थे।

वास्तव में सरकार का जितना राजस्व उस ताल्लुका में बन रहा था, उसका मात्र 1/6 भाग ही जुलाई तक संग्रह कर पाई।इस बीच राष्ट्रीय प्रेस में सत्याग्रहियों के पक्ष में अपनी टिप्पणियाँ करना प्रारम्भ कर दिया और गाँधीजी ने स्वयं यंग इण्डिया में सरकार की आलोचना की और गुजराती सदस्यों ने बॉम्बे विधान परिषद से अपना त्याग-पत्र दे दिये।

गाँधी जी ने बल्लभभाई पटेल को पत्र लिखकर जब भी वे उन्हे बुलाऐंगे गाँधी जी तुरन्त उसी दिन रवाना हो जायेंगे।

8.3.3 बारदोली दिवस

12 जून को बारदोली दिवस के रूप में मनाया गया। उस दिन अलग-अलग कस्बों में जिला कांग्रेस समिति के सदस्यों ने ताबड़तोड़ बैठकें की। उधर, बॉम्बे सिटी में एक छोटा समूह धन इकट्ठा करने में लगा था। प्रेस के सूत्रों से ऐसा जान पड़ रहा था किए पटेल आदि सज्जनों द्वारा किए जा रहे प्रयासों के अन्तर्गत कुछ दिनों पश्चात उन्हें उनके दावों पर जरूर कुछ छूट मिल सकती हैं।

बारदोली दिवस 12 जून के दिन ही पेशावर सिटी (पंजाब) में स्थानीय कांग्रेस समिति के सदस्यों ने एक बैठक बारदोली सत्याग्रह की जीत के लिए प्रार्थनाऐं की और सत्याग्रहियों को हरसंभव सहायता की पेशकश की। इसी प्रकार बड़ौदा जिले में भी बारदोली सत्याग्रहियों के पक्ष में आन्दोलन हुए और वहाँ भी सहायता की पेशकश की गई। करीब रूपये 200/- की राशि सहायता स्वरूप एकत्रित की गई।

बॉम्बे प्रान्त के बाहर पंजाब, लाहौर आदि जगह पर कांग्रेस समिति के सदस्यों द्वारा बारदोली दिवस 12 जून के दौरान कई बैठकें आयोजित की गई। सभी बैठकों में बारदोली के लोगों के लिए वित्तीय सहायता के लिए अपील की गई, जरूरत पड़ने पर हिन्दुस्तानी सेवादल के लोग बारदोली में वहाँ के लोगों की सहायता के लिए रवाना हो सकते हैं।

सरकार द्वारा जिस बारदोली सत्याग्रह को आन्दोलन के प्रारम्भ में मात्र एक स्थानीय हलचल माना जा रहा था वह बारदोली दिवस यानि 12 जून तक आते-आते एक राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप ले रहा था। फिर भी सरकारी रिपोर्टो में उसे अधिक महत्त्व नहीं दिया जा रहा था। इसी तरह की जून माह के अन्तिम पखवाडे में बिहार, उड़ीसा सरकार की गोपनीय रिपोर्ट से पता चलता है कि प्रान्त के आधे से ज्यादा जिलों में बारदोली दिवस की बैठकें आयोजित की गई व धन संग्रह किया गया, किन्तु सरकारी रिपोर्ट में इस बात पर खुशी प्रकट की गई कि ऐसी बैठकें अधिकतर सफल नहीं हुई और इन बैठकों में वास्तव में बहुत थोड़ा उत्साह देखने को मिला और धन संग्रह के नाम पर मात्र 130 रूपये इकट्ठे हुए।

बारदोली सत्याग्रह का असर भारत के अतिरिक्त अन्य पड़ोस के देशों जैसे बर्मा भी फैल चुका था। इस बीच जिला स्तर पर जिला कांग्रेस समितियों द्वारा बैठके आयोजित की जा रही थी। इसी तरह की एक बैठक जो कि 16 जून को आयोजित की गई, जिसमें सी.आर. दास को श्रद्धाजंलि देते हुए नौजवानों से उनके पदचिन्हों पर चलते हुए बारदोली सत्याग्रह में कूदने का आव्हान किया गया।

इसी तरह की एक अन्य बैठक 26 जून को जिला कांग्रेस समिति ने शंकरलाल बंसल की अध्यक्षता में आयोजित की, जिसमें अमृतसर के डॉ. सत्यपाल और कानपुर के हसरत मोहानी ने इस सत्याग्रह को जीवन्त बनाये रखने के लिए अपने विचार रखें।

1 जुलाई 1928 को भड़ौच जिला परिषद की बैठक हुई, जिसकी अध्यक्षता के.एफ. नरीमन ने की थी जिसमें गाँधीजी का एक सन्देश पढ़ा गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बारदोली की सहायता करने वाले लोग वास्तव में स्वयं अपनी ही सहायता करेंगे।

1 जुलाई, 1928 परिषद की बैठक में ही बल्लभभाई पटेल, जमना लाल बजाज, अब्बास तैयब जी और एच.जे. अमीन जैसे लोग सम्मिलित थे। इस परिषद ने कई प्रस्ताव पारित किए, जिसमें (1) बारदोली जनता के पक्ष में समर्थन किया गया, डटकर लड़ने के लिए उस ताल्लुक के लोगों को बधाई दी गई। (2) भड़ौच के लोगों से सरकार द्वारा जब्त की गई जमीन न खरीदने के लिए अनुरोध किया गया। (3) बारदोली के मामले में बम्बई विधान परिषद की सदस्यता छोड़ने वाले पार्षदों को बधाई दी गई। (4) इसके अलावा माननीय दीवान बहादुर हरीलाल देसाई, माननीय श्री देहलवी, माननीय सर चुन्नीलाल मेहता तथा ठाकुर साहब, जो कि अब तक बम्बई विधानसभा परिषद के सदस्य थे, उनके त्यागपत्र देने का अनुरोध किया गया।

के.एफ. नरीमन (सदस्य) विधान परिषदद्धकी अपील पर बॉम्बे सीटी के विद्यार्थियों ने 4 जुलाई को 12 जून ‘बारदोली दिवस’ के आधार पर बॉम्बे यूथ लीग बारदोली प्रोपागेण्डा एण्ड रिलीफ कमेटी, जिसके कि नरीमनअध्यक्ष है, के निमंत्रण पर बल्लभभाई पटेल बॉम्बे आये और उन्होंने एम्पायर थियेटर में भीड़ भरी बैठक में एक भाषण दिया और ऐसा बताया गया कि करीब 19000 रूपये इस अवसर पर एकत्रित हुए, जिसके बाद बैठक एक जुलूस के रूप में जाकर समाप्त हो गई।

पूना के विद्यार्थियों ने भी स्वेच्छा से बारदोली दिवस मनाया तथा अपना अध्ययन आदि का सारा काम बन्द रखा और दिनभर चन्दा इकट्ठा किया।

8 जुलाई को बम्बई में बॉम्बे विधान परिषद के 31में से 11 सदस्यों की कालिशन नेशनलिस्ट पार्टी की बैठक हुई, जिसमें बारदोली किसानों से सहानुभूति रखते हुए एक प्रस्ताव पारित किया गया, जिसमें सरकार से एक जाँच समिति बनाने और किसानों को राहत पहुँचाने, परिषद् के सदस्यों से त्यागपत्र देने, इत्यादि विषय सम्मिलित की गई।

एक आम सभा में श्री पटेल ने यह भी घोषणा की कि वे सरकार के किसी ऐसे प्रस्ताव को नहीं मानेंगे, जिसमें कि सरकारी राजस्व अधिकारी के द्वारा किया गया हो। उन्होंने सरकार को मतभेद दूर करने के लिए एक ऐसे स्वतंत्र जाँच समिति का गठन करने के लिए कहा जो सभी पत्रों के लिए स्वीकार्य हो। कि सरकार एक स्वतन्त्र समिति, जो कि दोनों पक्षों को मंजूर हो, बना दे।

अन्ततः 18 जुलाई को शिमला से सूरत आने पर बल्लभभाई पटेल के नेतृत्व में जिसमें अन्य लोगों में अब्बास तैयब जी, शारदा मेहता, भक्तिलक्ष्मी देसाई मीठूबहन पेटिट और कल्याण जी मेहता सम्मिलित थे, ने बारदोली किसानों के प्रतिनिधिकी हैसियत से बम्बई गर्वनर से बातचीत की और गर्वनर ने समझौते के लिए ऐसी शर्ते रखी।

जो किसी भी दृष्टि से समझौता वार्ता के लिए उचित नही था। बल्कि वार्ता के नाम पर सत्याग्रहियों को एक प्रकार से चेतावनी दे दी गई थी, जिसके नहीं मानने पर बारदोली के काश्तकारों पर समस्याओं का पहाड़ गिर सकता था।

8.4 आन्दोलन के दौरान गाँधीजी के विचार

गाँधीजी का कहना था कि बारदोली की जनता के लिए इससे बुरा और कुछ नहीं हो सकता कि वह सत्याग्रह का उस प्रतिज्ञा को तोड़ दें, जो उसने सोच समझकर की हैं, और जिसे उसने न जाने कितनी बार दोहराया हैं। गाँधीजी आश्वस्त थे कि बारदोली सत्याग्रह से अवश्य कुछ न कुछ प्राप्त होगा, और इस आन्दोलन के समर्थन में जिस प्रकार पूरे राष्ट्र में एक चेतना या जागृति उत्पन्न हुई है वह निश्चय ही शुभ सूचक है।

गाँधीजी ने यह भी कहा कि बारदोली आन्दोलन में भाग ले रहे लोग जितना अधिक त्याग तथा बलिदान करेंगे, देश और बारदोली की जनता को उतना ही अधिक लाभ होगा।

बारदोली के किसान गर्वनर द्वारा रखी गई शर्तो को मानने पर राजी नहीं हुए। इस वार्ता के विफल होने से गाँधीजी ने सरकार की कडी आलोचना की। इसके बाद गाँधीजी ने बल्लभभाई पटेल को उनके द्वारा पूरा समर्थन दिए जाने की बात भी कही।

8.4.2 गाँधीजी का महत्वपूर्ण लेख

‘नवजीवन’ में दिनांक 22-7-1928 को प्रकाशित एक लेख में गाँधीजी ने सत्याग्रह के पक्ष में लिखा कि ष्यह सही है कि सत्याग्रही की इस लड़ाई में लोगों की तन्दुरूस्ती बिगड़ गई है उनके ढोर-डंगर (मवेशी) दुबले हो गये हैं और कुछ मर गये हैं किन्तु सत्याग्रह में ऐसा होना स्वाभाविक हैं किन्तु सरकार से हम (सत्याग्रही) ऐसा हो जाने पर उसकी कोई क्षतिपूर्ति नहीं चाहते लेकिन जो कैद में पड़े है उनका क्या होगा, जिनकी जमीने कुर्क हो गई हैं, उनका क्या होगा जिनकी माल मिल्कियत कौड़ी के दाम नीलामी हो गई हैं? इसलिए यदि समझौता होना है, और यदि सरकार न्याय करवाना चाहती है, तो समझौतें के कागज पर दस्तखत होते ही -

1. सत्याग्रही कैदी रिहा किए जाने चाहिए।
2. कुर्क की हुई जमीनें (वे चाहे नीलाम हुई हो या नहीं हुई हो) वापस दी जानी चाहिए।

3. किसानों की भैंसे और बन्दूकें आदि जो कुर्क कर लिए गए हैं उनको नीलाम कर दिए गए हैं उनकी कीमत बाजार भाव से लौटाई जानी चाहिए।

4. जो तलाटी और पटेल आदि हटा दिये गये हैं, उनको बहाल किया जाना चाहिए। अथवा इनमे से जिन्होंने इस्तीफें दे दिए है उनको वापिस लेने की अनुमति मिलनी चाहिए।

5. लोगों को सत्याग्रह के सम्बंध में दी गई अन्य सजाऐं रद्द की जानी चाहिए।

सत्याग्रहियों का यह मानना था कि सरकारी विज्ञप्ति में उपरोक्त कोई भी बात दिखाई नहीं देती। इतना तो जाँच के सम्बंध में जाँच के पूर्व किया ही जाना चाहिए।

गाँधीजी ने 'नवजीवन' में 22-7-28 को प्रकाशित एक लेख में लिखा कि सरकारी विज्ञप्ति को देखते हुए श्री बल्लभभाई को समझौतें की बात को लम्बा करने की जरूरत नहीं किन्तु सत्याग्रही लड़ने के लिए तैयार रहते हुए ऊपर बताये समझौते की आशा भी ना छोड़े। गाँधीजी के इस लेख से स्पष्ट है कि उन्हें जिस प्रकार से यह आन्दोलन चल रहा था, उसकी सफलता के बारे में उन्हे कोई संदेह नही था और वे नहीं चाहते थे कि सत्याग्रही अपनी उचित मांगों से पीछे हटें।

गाँधीजी जिस प्रकार बल्लभभाई पटेल तथा अन्य सत्याग्रहियों में उत्साह बना, रखने के लिये अपनी ओर से प्रयास कर रहे थे उसी प्रकार वे सरकार से भी समाचार-पत्रों के माध्यम से इस सम्बंध में सीधा अनुरोध कर रहे थे। इसी के क्रम में गाँधीजी द्वारा समाचार पत्र यंग इण्डिया में अनुरोध किया कि सरकार वह रास्ता अख्तियार न करे, जिसकी सभी ने एक स्वर से निन्दा की है और जिसका औचित्य किसी भी आधार पर सिद्ध नहीं किया जा सकता।

सूरत में जितना कुछ देने का प्रस्ताव किया गया, वह उससे भी कम है, जितना कि कुछ विश्वसनीय अफवाहों के अनुसार खानगी तौर पर देने का वादा किया गया था। श्रीयुत् वल्लभभाई पटेल ने जो शर्त रखी थी, वे वही हैं, जो सदा से उनके मन में रही है और जिनसे वे तरह-तरह से सरकार को भी अवगत कराते रहे है, उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा, जो सम्मानपूर्ण समझौतें में सदा से न किया जाता हो।

गाँधीजी ने यह भी कहा कि बल्लभभाई ने सरकार की तरह असम्भव शर्त नहीं रखी हैं। वे सरकार से यह नहीं कहते हैं कि वे स्वीकार करें कि वे गलती पर हैं। उनके पत्र का सार यदि एक वाक्य बताया जाये तो यह है कि उन्होंने सरकार से इस सवाल को उसकी अपनी पसन्द की एक कमेटी को सौंप देने को कहा है और उसमें केवल एक शर्त रखी है, कि उसमें जनता का भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो। वे सरकार से ऐसी निष्पक्ष समिति की नियुक्ति से निकलने वाले स्वाभाविक और तर्कसम्मत परिणामों को स्वीकार करने का कहते हैं।

गाँधीजी ने सरकार के सामने दो विकल्प प्रस्तुत किये :- या तो वह भारत के जनमत के सामने झुककर बल्लभभाई के प्रस्ताव को स्वीकार कर ले या फिर अपनी झूठी प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए लोगों को आतंकित करने की नीतियां पुनः आग्रह करें। उन्होंने बम्बई सरकार से अनुरोध किया वे सत्य का मार्ग अपनाये।

जैसा कि गाँधीजी का अनुमान था गर्वनर ने बल्लभभाई पटेल के सुझाव को न मानते हुए सिर्फ बारदोली समस्या पर शुद्ध सरकारी नजरीया ही परिषद के भाषण में रखा।

गर्वनर के उक्त भाषण से साफ वही बातें उभर कर आती है, जो उन्होंने सूरत में सत्याग्रहियों से 13 जुलाई को उसके सूरत दौरे पर कही थी। गर्वनर ने सत्याग्रहियों को 15 दिन में उक्त बातें मानने का वक्त दिया।

गर्वनर के उक्त भाषण से अवगत होने के बाद गाँधीजी ने बल्लभभाई पटेल को 24 जुलाई 1928 को साबरमती आश्रम गुजरात से एक पत्र लिखा, जिसमें उनसे आग्रह किया गया कि वे गर्वनर के भाषण पर अत्यन्त संक्षिप्त उत्तर देवें। साथ ही गाँधीजी ने यह संभावना भी व्यक्त की कि वल्लभभाई को गिरफ्तार किया जा सकता है और इसलिए वे पहले से ही बारदोली पहुंचने की मंशा रखते है।

गाँधीजी के उक्त पत्रानुसार ही बल्लभभाई पटेल ने गर्वनर के भाषण के उत्तर में एक संक्षिप्त वक्तव्य जारी किया, जिसमें उन्होंने गर्वनर के उक्त भाषण का जवाब कुछ इस प्रकार दिया कि बारदोली के लोग अपना अविनय अवज्ञा करने का अधिकार मनवाने के लिए संघर्ष नहीं कर रहे हैं। वे सरकार द्वारा लगान में की गई वृद्धि को समाप्त कर देने या अगर वह समझती हो कि यह वृद्धि अनुचित नहीं है तो वास्तविकता का पता लगाने के लिए एक निष्पक्ष और स्वतन्त्र जाँच समिति नियुक्त कर देने को प्रेरित करने के उद्देश्य से सविनय अवज्ञा कर रहे हैं।

8.5 बारदोली में गाँधीजी का आगमन

2 अगस्त 1928 वह दिन था जब गाँधीजी स्वयं बारदोली आन्दोलनकारियों को सहयोग करने पहुँच गये थे और 3 अगस्त 1928 को बल्लभभाई पटेल ने समझौता वार्ता के लिए पूना प्रस्थान किया।

बारदोली रवाना होने से पहले गाँधीजी ने कहा था कि वल्लभभाई पटेल के आदेश पर बारदोली जा रहे बल्लभभाई मुझसे अक्सर सलाह मशविरा करते है, यह स्वीकारते हुए गाँधी ने कहा की वे बारदोली सरदार का स्थान लेने नहीं, बल्कि उनके अधीन काम करने जा रहे हैं।

बारदोली पहुँचने पर किसान लोग कीचड़-पानी से भरे रास्तों को लांघकर गाँधीजी के दर्शन करने के लिए विभिन्न स्थानों से आये और गाँधीजी वहाँ के लोगों को सत्याग्रह के प्रति दृढ़ निश्चय भाव को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। गाँधीजी ने जब वहाँ के लोगों से पूछा कि अगर बल्लभभाई को गिरफ्तार कर लिया जाता है और उनके साथ अन्य कार्यकर्ताओं को भी, तो क्या हिम्मत नहीं हार बैंठें? लोगो ने दृढ़तापूर्वक कहा कि बिल्कुल

भयभीत नही होंगे क्योंकि, बल्लभभाई पटेल ने कहा, इतना कुछ किया है कि जनता हर हाल में अपना वचन पूरा करने के लिए तैयार है।

4 अगस्त को गाँधीजी मोटर गाड़ी से सम्भाण पहुँचे। यहाँ स्वराज आश्रम में उनसे मिलने के लिये सम्भाण के स्वयंसेवकों तथा अपने-अपने पदों से इस्तीफे दे देने वाले पटेलों और तलाटियों के अतिरिक्त सम्भाण इलाके के 25 गाँवों के प्रतिनिधि भी आये थे।

बल्लभभाई की इच्छा से ही गाँधीजी कुछ गांवों को देखने गये और वहा के आस-पास के बीसीयों गाँवों से आये सैकड़ों किसानों से मिले। गाँधीजी ने सत्याग्रहियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि उन्होंने अत्यन्त साहस और बहादुरी का परिचय दिया हैं और उनसे अपेक्षित है कि वे शान्ति होने तक इस तरह की भावना का परिचय देते रहेंगे।

गाँधी ने गांवों के प्रतिनिधियों को आग्रह किया कि सब शान्ति चाहते है लेकिन सब सम्मान के लिए शान्ति चाहते है ओर सभी को अपनी लड़ाई उस सम्मानजनक समझौते तक जारी रखना होगा, जिसके लिए उन्होंने अब तक इतना त्याग किया है। साथ ही गाँधीजी ने सत्य और अहिंसा की ढाल के साथ अपनी लड़ाई जारी रखना आवश्यक बताया।

उन्होंने कहा कि यदि लोगो ने दृढ़तापूर्वक आखिरी आँच को सह लिया तो दुनिया भर में उनका पराक्रम का डंका बजने लगेगा यदि वे उस निर्णायत्मक परीक्षा में विफल रहे तो उनका पतन भी वैसा और ही जबरदस्त होगा।

8.6 बारदोली समझौता

पूना में समझौता वार्ता अपने अन्तिम दौर से गुजर रहा था। वार्ता में गर्वनर ने 23 जुलाई को विधान परिषद में दिये भाषण में रखी शर्तो के अनुसार ही समझौता हुआ। बल्लभभाई ने अपने सगे भाई बिट्ठलभाई की बात मानते हुए व पाटीदार भू-स्वामियों की कमियों को देखते हुए समझौता कर लेना ही उचित समझा, बल्लभभाई के पास इसको स्वीकारने के अलावा कोई चारा नहीं था और पुरानी लगान दर व नई लगान दर के बीच का हिस्सा बारदोली ताल्लुका के उस गुजराती व्यवसाई, जो कि बम्बई में रह रहा था, ने सरकारी खजाने में उतनी रकम जमा करा दी, जो कि प्रस्तावित 22 मालगुजारी के करीब थी।

8.7 सारांश

बारदोली किसान आन्दोलन के सभी पहलुओं पर गौर करने पर यह बात स्पष्ट होता है कि यह आन्दोलन को, जिस उद्देश्य के लिए लड़ा गया, उसमें तो यह सफल रहा ही, इसके साथ ही यह आन्दोलन पूरे भारतवर्ष की उस जनभावना को प्रेरित करने या जगाने में भी सफल हुआ जिससे उनमें ब्रिटिश शासन के अन्यायी पक्ष से लड़ने एवं

उसके लिए जागरूकता की क्षमता भी उत्पन्न हुई क्योंकि यह आन्दोलन सम्पूर्ण भारतवर्ष में पहचाना जाने लगा था।

उस काल के प्रचार-प्रसार माध्यमों द्वारा भी यह माना कि निःसन्देह बारदोली ताल्लुकों के किसानों को उनके ऊपर हो रहे अन्याय को बहुत हद तक दूर करने में बल्लभभाई पटेल का एक महत्वपूर्ण योगदान एवं समपर्ण रहा, किन्तु उसकी नीवं गाँधीजी द्वारा सन् 1922 में ही रखी जा चुकी थी। 1928 का बारदोली आन्दोलन करों में वृद्धि के विरोध स्वरूप उत्पन्न हुआ था। और अंततः यह आन्दोलन अपना उपयुक्त अधिकार प्राप्त करने में सफल रहा।

गाँधी जी ने आन्दोलन की सफलता पर प्रसन्नता व्यक्त की। गाँधी ने सत्याग्रहियों को जो विजय के लिये बधाई दी। लेकिन उन्हें अपनी इस विजय से निश्चित होकर आगे निष्क्रिय होकर चुपचाप बैठने से सावचेत किया। गाँधी जी ने उन्हे दुगनी शक्ति से रचनात्मक कार्य करने में जुट जाने को कहा और इस तरह भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रीय होने का आव्हान किया।

इस तरह से गाँधी जी ने भारत के स्वतंत्रता के लिए पृष्ठभूमि तैयार होने का आभास दिलाया है।

8.8 अभ्यास प्रश्न

1. बारदोली किसान आन्दोलन से आप क्या समझते हैं?
2. बारदोली किसान आन्दोलन की कार्ययोजना पर प्रकाश डालिए।
3. बारदोली किसान आन्दोलन में गाँधीजी की भूमिका की समीक्षा कीजिए।

8. 9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सेन, सुनील, पीजेन्ट मूवमेन्ट इन इण्डिया, के.पी. बागजची एण्ड कं., नयी दिल्ली, 1982
2. धनागरे डी. एन., पीजेन्ट मूवमेन्ट इन इण्डिया, 1920-1950, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1983

इकाई - 9

गाँधी : आध्यात्मिक व्यक्ति

इकाई रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 गाँधी: ईश्वर में आस्था

9.3 गाँधी: ईश्वर एवं व्यक्ति

9.4 आत्मबल

9.5 बुद्धि

9.6 पुनर्जन्म

9.7 कर्म

9.8 प्रार्थना एवं उपवास

9.9 प्रतिज्ञा

9.10 सारांश

9.11 अभ्यास प्रश्न

9.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान पायेंगे

- गाँधी की आध्यात्मिक एवं नैतिकता के प्रति धारणा
- गाँधी की ईश्वर के प्रति मान्यता
- गाँधी का आध्यात्मिकता के आयाम
- उपवास का महत्व

9.1 प्रस्तावना

गाँधीवाद का मूल आधार ईश्वर या सर्वव्यापक मौलिक सत्य सर्वान्तर्गत जीवित प्रकाश,जिसको सच्चिदानंद या ब्रह्म या राम या सत्य, कहा जा सकता है, ईश्वर स्वतः विद्यमान सर्वज्ञाता सजीव शक्तियों में से है जो विश्व की प्रत्येक दूसरी शक्ति में निवास करती है। गाँधी जी को गहन आध्यात्मिक अस्तित्व के विद्यमान होने में प्रबल विश्वास उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि से विरासत में मिला था, विशेष रूप से उनकी भक्तिमयी माँ से। टालस्टॉय के लेख बुद्ध के जीवन तथा गीता का अध्ययन तथा उनके रायचन्द भाई से सम्पर्क ने उनके नैतिक विश्वास को गहरा तथा प्रबल बना दिया था। गाँधी जी आध्यात्मिक आदर्शवादी थे किन्तु समकारित सम्प्रदाय के नहीं थे। वो अभिन्न निरपेक्ष की अवधारणा में नहीं बंधकर दयालु तथा भक्तों की प्रार्थनाओं का उत्तर देने वाले ईश्वर में विश्वास रखते थे। उन्होंने लिखा है कि "मै एक भी ऐसा उदाहरण याद नहीं कर सकता हूँ जब निर्णायक समय में मुझे ईश्वर ने त्याग दिया हो।" उनके विचार ईश्वरवादी वेदान्त विचारधारा के समान है। उनके अनुसार "आध्यात्मिक सत्य को तार्किक कौशल या प्रत्यय ज्ञान द्वारा नहीं समझा जा सकता है, किंतु आध्यात्मिक अनुभव, शुद्ध तथा अनुशासित पवित्र जीवन, व्यवहार तथा अभिप्रेरणा में अहिंसा के द्वारा समझा जा सकता है। प्रलोभनों के बीच तर्क ठीक नहीं होता है, विश्वास तर्क से सदैव श्रेष्ठ है।" अतः गाँधीजी की अहिंसा नीति का संश्लेषण दिखाई देता है। अहिंसा की धारणा का विकास, उपनिषदों, योगदर्शन तथा गीता में हुआ है, किंतु जैन धर्म तथा बौद्ध धर्म ने इस पर अत्यधिक बल दिया गया है। किसी भी दर्शन का प्रारम्भिक बिन्दु अनुभव होता है तथा गाँधी जी ने इस बात का दावा किया कि वे जितने अनुशासित होते गये सत्य की अनुभूति के उतने ही समीप होते चले गये। गाँधीजी के विचारों में मौलिक व्यक्तिवाद पर भी टिप्पणी की गई है क्योंकि सत्य के व्यक्तिगत अनुभव की पवित्रता पर बहुत अधिक बल दिया गया है। मानवता के महानतम तथा धार्मिक शिक्षकों ने शाश्वत मूल्यों के आन्तरिक अनुभव तथा वास्तविक अस्तित्व का सदैव परीक्षण किया है। गाँधीजी ने तर्कों तथा

व्यवहारिक प्रेक्षणों का विरोध नहीं किया। उनका तर्क था कि वे एक वास्तविक वैज्ञानिक है क्योंकि उन्होंने सत्य के साथ सदैव प्रयोग किये हैं। तथा प्रेक्षणों की पुनरावर्ती के द्वारा उन्होंने अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया है। पूछताछ की यह तार्किक तथा वैज्ञानिक प्रक्रिया केवल सामाजिक तथा राजनैतिक अस्तित्व वाले विश्व के लिए ही लागू होती थी। मौलिक सत्य में उनका विश्वास तर्क तथा प्रेक्षण से नहीं उत्पन्न हुआ था बल्कि आध्यात्मिक चिन्तन तथा अन्तः प्रेरणा से हुआ था गाँधीजी के व्यक्तित्व का सार प्रार्थना था। उन्होंने कहा था कि वे भोजन के बिना रह सकते हैं किन्तु प्रार्थना के बिना नहीं। प्रार्थना से आत्मा को बल मिलता है। प्रार्थना की क्रिया सर्वोत्तम शक्ति के लिए दैनिक उपासना है। सर्वसमर्थ तथा दयालु ईश्वर में विश्वास सत्याग्रह के लिए आवश्यक है। यह विश्वास भौमिक शक्ति की एकाग्रता को प्रबल शक्ति प्रदान करता है। ष्सत्याग्रह का हथियार केवल ईश्वर है।" ईश्वर में सजीव तथा सफल रक्षक का विश्वास ही व्यक्ति को निर्भय बनाता है। गाँधी इतिहास के दार्शनिक नहीं थे किंतु यदि हम उनके पृथक-पृथक विचारों को पुर्ननिर्मित करके इतिहास का दर्शन बनाये तो ज्ञात होता है कि उन्होंने ईश्वर ज्ञान के सिद्धान्त को ही स्वीकार किया है। उन्होंने कहा "ईश्वर की इच्छा के बिना कुछ भी नहीं हो सकता, यह उनके अपरिवर्तनशील शाश्वत नियम में प्रदर्शित होता है। ईश्वर अपरिवर्तनशील तथा सजीव नियम को दर्शाता है। महान भविष्यवक्ता अपने आत्मसंयम के साथ उस नियम की हल्की झलक मानव को प्रदान करते हैं।" उन्होंने कहा कि उनका विश्वास था कि ईश्वर की आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता है।गाँधी का विश्वास था कि चरम अर्थ में ईश्वर ही अन्तिम सत्य है तथा सर्वक्षमता युक्त है, तथा विश्व की वस्तुओं तथा गतियों का सर्वाच्च निर्धारक है, किन्तु गाँधी में निश्चयवाद वस्तुओं की अन्तिम व्याख्या के लिए ही प्रयुक्त किया गया था। उसका पतन कभी भी भाग्यवाद में नहीं होता है क्योंकि वे गीता की ऊर्जाओं तथा हठयोग के प्रबल पक्षधर थे। उनका पूर्ण जीवन निरन्तर क्रियाओं को सामाजिक कर्ता, पत्रकार, राजनैतिक नेता तथा नैतिक भविष्यवक्ता के रूप में एक उच्च्च अर्थ दिया था। गाँधी ने ईश्वर की सर्वात्कृष्टता में विश्वास तथा निरन्तर क्रिया करने पर बल दोनों को एक साथ संयोजित किया था।

9.2 गाँधी : ईश्वर में आस्था

ईश्वर में सजीव, अटल विश्वास आत्मा की प्राथमिकता आदि उनकी विचारधारा के केन्द्र है। उनका विश्वास इतना अटल है कि वे महसूस करते हैं कि वह हवा तथा पानी के बिना जीवित रह सकते हैं। किन्तु ईश्वर के बिना नहीं उनको यदि टुकड़ों में भी काटा जाये तो ईश्वर उनको मना नहीं करने की ताकत देगा। उनका निश्चित रूप से यह विचार है कि इस प्रकार के विश्वास के बिना पूर्ण जीवन सम्भव नहीं है तथा कोई भी व्यक्ति तब तक सत्याग्रह नहीं कर सकता जब तक ईश्वर से सजीव विश्वास न हो।

गाँधी इस बात पर ध्यान नहीं देते हैं कि किसी ने ईश्वर की क्या परिभाषा दी है, क्योंकि उन्हें यह ध्यान है कि "ईश्वर की अनगिनत परिभाषाएँ हैं उसके रूप अनगिनत है।" ईश्वर अवर्णनीय, अभेद्य है क्योंकि वह प्रत्येक व्यक्ति

के अन्दर है, वह प्रत्येक वस्तु में है, अतः उसका कोई वर्णन पर्याप्त नहीं है। गाँधी ने स्वयं को पवित्र चेतना, अवर्णनीय रहस्यात्मक शक्ति जो कि सबमें व्याप्त शुद्धतम सार आदि के रूप में माना है। सत्य शब्द की सत् शब्द से व्युत्पत्ति हुई हे जिसका अर्थ होता है होना यइमपदहद्ध सत्य के अतिरिक्त किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है। इसीलिए सत्य ईश्वर का अधिकतम् महत्वपूर्ण नाम है। यह कहने की अपेक्षा कि ईश्वर सत्य है, यह कहना अधिक सही होगा कि सत्य ही ईश्वर है। नास्तिक भी सत्य की आवश्यकता या शक्ति पर शंका नहीं कर सकता है। ईश्वर सत्य के अलावा भी बहुत कुछ है इसी कारण गाँधी यह कहना अधिक पसन्द करते हैं कि सत्य ही ईश्वर है तथा मानव वाणी की पहुँच तक यह ईश्वर की सम्पूर्ण परिभाषा है।

उनका विश्वास है ईश्वर या सत्य, केवल अन्तर्वती सत्य ही नहीं बल्कि भी है, वह केवल हमारे अन्दर ही नहीं बल्कि बाहर भी है, केवल ब्रह्माण्ड का जीवन ही नहीं इसके अतिरिक्त ब्रह्माण्ड का सृजनकर्ता, पालनकर्ता तथा न्यायाधीश भी हैं।

गाँधी का मत है कि ईश्वर व्यक्ति नहीं सत्य है उनका अपना नियम है फिर भी गाँधी का विश्वास है कि ईश्वर उनके लिए व्यक्तिगत है जो उनका स्पर्श चाहते हैं ईश्वर का भक्त ईश्वर के साथ प्रार्थना तथा शुद्धि के द्वारा व्यक्तिगत संप्रेषण कर सकता है। ईश्वर सृजनकर्ता शासक तथा ब्रह्माण्ड का स्वामी है उसकी इच्छा के बिना घास का एक पत्ता भी नहीं हिल सकता है।

ईश्वर हमारा न्यायाधीश है। वह धैर्यशाली है तथा हमें चेतावनी देता है। वह भयानक भी है। वह हमारे साथ वही करता है जो हम अपने पड़ौसी के साथ करते हैं। उनके साथ अज्ञान की कोई माफी नहीं है। कई बार जब गाँधी को लगा कि उन्होंने गलती की है तो उन्हें ऐसा भी लगा कि जैसे ईश्वर ने उनको चेतावनी दी है तथा उन्होंने अपने कार्यो को फिर से याद किया। गाँधी का विश्वास था कि प्राकृतिक आपदाएँ भी मानव जाति पर उनके पापों के प्रतिकार के कारण ही आती है।

ईश्वर असहायों का सहायक तथा निर्देशक है। एक सच्चे वैष्णव, गाँधीजी की जागते या सोते समय प्रत्येक क्षण ईश्वर का ध्यान था। वे ईश्वर को "आमने सामने देखने के लिए शोकाकुल थे तथा उनको परम सत्य ईश्वर की हल्की झलकियां अक्सर दिखाई देती थी। उनके लिए यह कष्ट था कि वे ईश्वर से दूर हैं। उनको ईश्वर पर पूर्णतः निर्भर होने का अहसास था, नम्रतापूर्वक ईश्वर के निर्देशन में उन्होंने यह पाया वर्ष बीतने पर उनकी आवाज भी अधिक सुनी जा रही थी। निराशा के समय में अधिकतम भयानक प्रयास में अन्तिम क्षणों में, ईश्वर की सहायता ने कभी भी गाँधी जी को असफल नहीं होने दिया था। ईश्वर की यह सहायता 'अदृश्य ईश्वर की दृश्य अंगुली' उनके लिए थी। उन्होंने ईश्वर के नाम पर व्रत रखे। इसका उनको गुप्त अनुभव था। यहाँ उनमें से एक उन्हीं के शब्दों में है "यह मेरे 21 दिन से सम्बन्धित हैं, छुआछूत निवारण के लिए व्रत। मैं सो गया था रात को 12 बजे मुझे किसी ने अचानक जगाया और फुसफुसाहट की आवाज सुनाई दी। तुम्हें व्रत रखना चाहिये। मैने पूछा कितने दिन? आवाज आई 21

दिन। मैने पूछा यह कब आरम्भ होगा? आवाज आई, तुम कल से आरम्भ कर दो। इस प्रकार का अनुभव मेरे जीवन में पहली या बाद में कभी नहीं हुआ। मेरा मन इसके लिए तैयार नहीं था। किन्तु सब बातें बहुत स्पष्ट थी।" दूसरे अवसर पर उन्होंने अनुभव को इन शब्दों में बताया कि "मैने कोई रूप नहीं देखा, किन्तु एक आवाज कभी दूर से कभी पास से सुनाई देती है। ऐसा लगता था कोई मानवीय आवाज मुझसे बात कर रही है तथा अप्रतिरोधी है। जब मैंने आवाज सुनी तब मैं स्वप्न नहीं देख रहा था। इस आवाज को सुनने से पहले मुझमें तीव्र संघर्ष उत्पन्न हुआ था। अचानक आवाज आई। मैने सुना, यह निश्चित किया कि यह आवाज सुनाई दे रही है तथा संघर्ष रूक गया। इसके अनुसार निश्चय किया गया व्रत तिथि तथा समय का निर्धारण कर लिया गया।

9.3 गाँधी : ईश्वर एवं व्यक्ति

गाँधीजी की भाषा आस्तिक है किन्तु विचारों में कैथोलिक हैं। उन्होंने ईश्वर को सत्य के साथ कैसे पहचाना है, यह हमने देखा है। वे स्वयं को प्रेम, नीति, कानून तथा चेतना से भी पहचानते हैं। उन्होंने कहा स्वयं में विश्वास को किसी निश्चित सीमा तक बढ़ाना ही ईश्वर है। तुम किसी सिद्धान्त में विश्वास करके यह कहते हो यह तुम्हारा ईश्वर है, मुझे यह ठीक नहीं लगता।

गाँधीजी के मन में ईश्वर तथा व्यक्ति के बीच में अन्त्तद्वन्द्व था। मानव तथा निम्न कोटि के प्राणियों में केवल आत्मा ही सत्य है। यह समय तथा स्थान से ऊपर है तथा प्रत्यक्ष पृथक अस्तित्व वालों को एकीकृत करता है। उन्होंने लिखा है कि मैं ईश्वर की पूर्ण एकता तथा मानवता में विश्वास करता हूँ हमारे शरीर अनेक हैं किन्तु आत्मा एक है। मैं अद्वैत में विश्वास करता हूँ मैं मानव तथा समस्त प्राणियों की एकता में विश्वास करता हूँ। गाँधी यह भी स्वीकार करते हैं कि सभी प्राणी चेतना तथा अचेतन दोनों प्रकार से आध्यात्मिक पहचान को समझने के लिए कार्य कर रहे हैं। ईश्वर तथा आत्मा में यह सम्बन्ध है कि यदि व्यक्ति अहम् की श्रृंखलाओं का खण्डन कर दें तथा मानवता का सागर में बह जाये तो वह अपने गौरव को बनाये रखता है, यदि वह ईश्वर तथा स्वयं के बीच एक बंधक बना ले, यह अनुभव करके कि यह अहम् है। इस अहम् अनुभव को रोक कर ही व्यक्ति ईश्वर के साथ एक हो सकता है।

यह महान सत्य, सम्पूर्ण जीवन की मौलिक एकता जो मानव मात्र के भाईचारे से बहुत ऊपर है, मानव को स्वामी नहीं, ईश्वर की रचना का सेवक बना देती है। आत्मा की एकता तथा उसकी प्रकृति उनके दर्शन को अन्य महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रदान करती है। आत्मा मनुष्य में ईश्वर का मस्तिष्क है। यह स्वयंकर्ता है तथा मृत्यु के बाद भी बनी रहती है। इसका अस्तित्व शरीर पर निर्भर नहीं करता है। किसी को कुछ भी होने पर शरीर समस्त शारीरिक द्रव्य को तथा सम्पूर्ण आत्मा को प्रभावित करता है। यदि एक व्यक्ति आध्यात्मिक होता है तो सम्पूर्ण संसार उसके साथ होता है यदि एक व्यक्ति का पतन होता है सम्पूर्ण विश्व का उसी मात्रा में पतन होता है।

9.4 आत्मबल

यह स्पष्ट है कि आत्म-बल तथा शारीरिक बल की तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि विश्व के समस्त बलों में आत्म-बल सबसे बड़ा होता है। उन्होंने आत्म-बल को अहिंसा से सम्बन्धित माना है, तथा यह बतायाहै कि अपूर्ण व्यक्ति उस सम्पूर्ण सार को ग्रहण नहीं कर सकता है। वह उसकी पूर्ण आभा को सहन नहीं कर सकता है बल्कि उसके अनन्त भाग को भी सहन नहीं कर सकता है, जब उसके स्वयं के अंदर सक्रिय हो जाती है तो आश्चर्य जनक कार्य कर सकता है।

ईश्वर तथा आत्मा के अस्तित्व में उनके विश्वास का आधार क्या हैघ् यह प्रश्न गाँधी जी की राजनैतिक विचारधारा को सशक्त बनाता है, क्योंकि गाँधीजी ने सत्य को ईश्वर के समान माना है तथा आध्यात्मिक सत्य के बारे में विचार करते समय यह ज्ञात होता है कि नैतिक व्यग्रता की परिस्थिति में सत्याग्रही सही क्रियाओं को निर्धारित करता है। गाँधीजी ज्ञानेन्द्रियों तथा तर्क को पूर्ण सत्य के विचारने का अपर्याप्त माध्यम मानते हैं। ईश्वर ने कहा है, वह अवर्णनीय, अमापनीय तथा अविचारनीय है। ईश्वर ज्ञानेन्द्रियों तथा बुद्धि से ऊपर है। हम प्रायः उसको ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा प्रत्यक्षीकृत करने में असफल हो जाते हैं, क्योंकि वह उनसे परे है। हम उसका अनुभव कर सकते हैं किंतु हम स्वयं को ज्ञानेन्द्रियों से दूर कर लेंगे। हमारे अन्दर देवी संगीत सदैव चलता रहता है, किंतु तेज ज्ञानेन्द्रियाँ, हल्के संगीत को दबा देती है। बुद्धि एक अवरोध का कार्य करती है अतः प्रत्यक्षीकरण बुद्धि तथा ज्ञानेन्द्रियों से परे होना चाहिये, इसका आधार एक सजीव विश्वास होना चाहिये। इस विश्वास का स्रोत हृदय है। ईश्वर को बुद्धि से नहीं समझा जा सकता है। बुद्धि केवल एक निश्चित सीमा तक समझ सकती है। यह विश्वास तथा विश्वास से प्राप्त अनुभव का विषय है, पूर्ण विश्वास से अनुभव की चाहत महसूस नहीं होती है। जो तर्क से परे है निश्चित ही तर्क करने योग्य नहीं है। किसी व्यक्ति से बिना प्रमाण के विश्वास करने के लिए कहना अतार्किक होगा। एक अनुभवी व्यक्ति के लिए दूसरे व्यक्ति से ईश्वर में विश्वास करने के लिए कहना तथा ईश्वर की उपस्थिति का प्रमाण देने में सक्षम नहीं होना, यह उसकी मजबूरी के लिए गलती मनवाना है तथा दूसरे को स्वयं को अनुभव में विश्वास करवाना है। विश्वास के बिना यह विश्व एक क्षण में ही शून्य हो जायेगा। सत्य विश्वास उन लोगों के तार्किक अनुभव का स्वायत्तीकरण है जिनको हम यह मानते हैं कि उन्होंने प्रार्थना तथा तप के द्वारा शुद्धिकृत किया हुआ जीवन जिया है। अतः विश्वास भविष्यवक्ताओं या अवतारों में जो पहले के युगों में हुए हैं, केवल एक अंधविश्वास ही नहीं है किंतु आन्तरिक आध्यात्मिक चाहत की संतुष्टि है। निर्देश देने का एक सूत्र यह है कि प्रत्येक माँग को अस्वीकार किया जाये जहाँ कोई प्रमाण प्रस्तुत करने का मामला हो तथा कोई प्रश्न किये बिना ही विश्वास की स्वीकृती हो व्यक्तिगत अनुभव के अतिरिक्त कोई और प्रमाण न हो। ईश्वर या आत्मा ज्ञान की वस्तु नहीं है। वह स्वयं ज्ञाता है अतः बुद्धि से परे है। ईश्वर को जानने की दो अवस्थाएँ हैं पहली अवस्था विश्वास है, दूसरी तथा अन्तिम अवस्था है अनुभव - अर्थात विश्वास से उत्पन्न होने वाला ज्ञान। विश्वास तर्क का विरोध नहीं

करता है किंतु इससे ऊपर है। विश्वास एक छठी इन्द्रिय है जो तर्क के विस्तार के बिना ही कार्य करता है। विश्वास कुछ नहीं है किंतु मनुष्य के भीतर स्थित ईश्वर की सजीव जाग्रति है।

9.5 बुद्धि

ईश्वर बुद्धि से ऊपर है अतः एक निश्चित सीमा तक ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार किया जा सकता है। इस कथन से गाँधी का आशय है कि बुद्धि की अपनी सीमाएँ है, अतः यह हमें मुक्त करती है ईश्वर के अस्तित्व के बारे में विश्वास करने के लिए।

एक तर्क जो गाँधीजी देते हैं कि ब्रह्माण्ड की व्याख्या सर्वोत्कृष्टता के सन्दर्भ की अवधारणा के बिना नहीं की जा सकती है। उसका कथन है "ब्रह्माण्ड में क्रम रेखाएँ हैं, एक अपरिवर्तनीय नियम है जो प्रत्येक वस्तु तथा प्रत्येक प्राणी को प्रशासित करता है। यह अन्धा कानून नहीं है, क्योंकि कोई अन्धा कानून सजीव प्राणियों के व्यवहार को प्रशासित नहीं कर सकता है। जगदीशचन्द्र बोस को शानदार शोध के लिए धन्यवाद है कि जिसने यह सिद्ध कर दिया कि पदार्थ में जीवन होता है। अतः सभी जीवों को प्रशासित करने वाला ईश्वर है। कानून तथा कानून बनाना एक ही है।"

गाँधीजी ने इस बात पर बल दिया है कि मानव में केन्द्रीय सत्य ही देवी है। ईश्वर में दृढ़विश्वास अच्छे जीवन के लिए तथा अहिंसा प्रतिरोध के प्रयोग के लिए आवश्यक है। अन्य भक्ति तथा कृतज्ञता भी सत्य की बुनियादी स्वामी भक्ति है। हमें आशा है कि कोई भी इसका विरोध नहीं करेगा ईश्वर की अवधारणा में गाँधी के विचार कैथोलिक उदारवादी हैं। उनके लिए ईश्वर सत्य तथा ब्रह्माण्ड के सामंजस्य का दूसरा नाम है। उनके ईश्वर तथा आत्मा में विश्वास को सन्तों तथा भविष्यवक्ताओं ने समर्थित किया है। अतः ईश्वर को हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने यह नियम बनाया है कि हम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हैं। हम अपने वर्तमान को सुधार सकते हैं जिस पर भविष्य निर्भर करता है।

9.6 पुनर्जन्म

पुनर्जन्म के सिद्धान्त के लिए उन्होंने लिखा है "मैं मेरे वर्तमान शरीर के अस्तित्व के बारे में जितना विश्वास करता हूं उतना ही पुर्नजन्म में भी विश्वास करता हूँ। इसलिए मैं यह जानता हूँ कि एक छोटा सा प्रयास भी बेकार नहीं होता है।"

ये दो सिद्धान्त केवल अप्रमाणित सिद्धान्त ही नहीं है ये वे नियम है जो भारतीय दृष्टाओं द्वारा आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि से निगमित किये गये हैं तथा अनुभव से सत्यापित किये गये हैं। कर्म के नियम को नैतिक निरन्तरता का नियम कहा गया है। यह मानव बुद्धि को प्रशासित करने वाला नियम है। भारतीय परम्परा के अनुसार हमारी

क्रियाएँ जो कि प्रेरक हैं, संस्कारों को पीछे छोड़ती हैं। ये गतिशील तथा कारक कारण है जो इस जीवन में ही नहीं क्रमागत जीवन में भी हमारा भविष्य निर्धारित करती हैं। इस नियम के अनुसार हमारा भविष्य वर्तमान में से बनता है तथा वर्तमान भूतकाल से बनता है। फिर भी इतना बल नहीं दिया गया जितना निरन्तरता पर, कर्म का सिद्धान्त ही मानवीय असमानता की तार्किक व्याख्या करता है। यदि हम यह स्वीकार कर ले कि ब्रह्माण्ड के पीछे एक उद्देश्यपूर्ण सत्य है।

पुनर्जन्म का सिद्धान्त जो हिन्दुओं में ऋग्वेद के समय से प्रचलित है यह कहता है कि मानव ने स्वयं को पूर्णतः नहीं समझा है स्वयं के विकास के लिए उसको अवसरों का प्रयोग करना चाहिये तथा मृत्यू के पश्चात इन अवसरों का अन्त नहीं होना चाहिये।

9.7 कर्म

कर्म के नियम को स्वीकार करने का अर्थ गाँधीजी के लिए यह नहीं है कि हमारा जीवन तथा क्रियाएँ पूर्णतः निर्धारित है ऐसा निश्चय नैतिक प्रयासों की विफल करता है तथा नीतिशास्त्र की जड़ काटता है मानव आत्मा की सृजनात्मकता को भी यह अस्वीकार करता है तथा मानव को स्वयं का प्रशासन स्थापित करने के लाभ से वंचित करता है। कर्म के नियम तथा स्वतंत्रता के बीच कोई विवाद नहीं है क्योंकि यह सिद्धान्त कहता है कि मानव स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है। भूतकाल के साथ निरन्तरता मानव को सृजनात्मक स्वतंत्रता प्रदान करती है। हमारे पूर्वजन्म के कर्म हमारी इच्छा के अभ्यास के प्रसार को सीमांकित करते हैं इसमें सन्देह नहीं है, हम जिस मुक्त इच्छा का आनन्द लेते हैं वह भीड़ भरे जहाज से कम है। हमें जितनी स्वतंत्रता मिली है उसे हम अपनी इच्छा से प्रयुक्त कर सकते हैं। ईश्वर महानतम प्रजातान्त्रिक है, गाँधीजी ने कहा है कि अच्छे और बुरे में चयन करने के लिए हमें ईश्वर ने मुक्त कर रखा है। गलती करने का अधिकार, अर्थात प्रयोग करना ही उन्नति की स्थिति है।

हमारी इच्छा स्वतंत्र है, हम परिणाम को प्रशासित नहीं कर सकते हैं, हम केवल संघर्ष कर सकते हैं। मानव स्वभाव को बदल सकता है, नियंत्रित कर सकता है। किन्तु इसका उन्मूलन नहीं कर सकता है। ईश्वर ने मनुष्य को इतनी स्वतंत्रता नहीं दी है। यदि तेन्दुआ अपने शरीर के धब्बों को बदल सकता है तो मानव भी अपनी आध्यात्मिक सरंचना की विशेषताओं को परिवर्तित कर सकता है। उनके अनुसार मानव भूतकाल की गलतियों के प्रभाव पर पूर्ण विरक्ति प्राप्त करके प्रतिक्रिया कर सकता है। किन्तु विरक्ति के लिए प्रयास के बावजूद भी कोई भी व्यक्ति अपने वातावरण या पालन-पोषण के प्रभाव को समाप्त नहीं कर सकता है। गाँधीजी पूर्ण स्वतंत्रता में विश्वास नहीं करते हैं क्योंकि यह मनुष्य की प्रकृति से पृथक या उत्कृष्ट मानने वाला बनाती है।

मानव आध्यात्मिक प्रकृति के कारण गाँधीजी सर्वमान्य विचार मानव पूर्णतः अपने समुदाय का प्राणी है को अस्वीकार करते हैं किंतु उन्होंने उसके प्रभाव को कम महत्वपूर्ण नहीं माना है। अधिकांश लोग वातावरण के द्वारा

नियंत्रित होते हैं। उनका मानना है कि मनुष्य को स्वतः निर्देश के द्वारा जीना चाहिये, अपनी इच्छा के अभ्यास के द्वारा कार्य करना चाहिये आदत के अनुसार नहीं।

मुक्त इच्छा से जुड़ी समस्या है बुराई की समस्या। गाँधीजी कहते हैं कि किसी भी तार्किक विधि से बुराई के अस्तित्व को नहीं बताया जा सकता है, फिर भी सीमित मानव भी इसे वास्तविक मानते हैं। ईश्वर के लिए कुछ भी अच्छा या बुरा नहीं है। अच्छाई तथा बुराई की आपेक्षिकता की धारणा उसके लिए स्वीकार्य नहीं है क्योंकि वास्तविक जीवन की समस्याओं के लिए इसका प्रयोग हमें नैतिक पथ-भ्रष्ठता की ओर ले जायेगा। अच्छाई तथा बुराई मानव के लिए आपस में स्पष्ट तथा भिन्न है तथा प्रकाश एवं अन्धकार का संकेत है। अच्छाई का स्वतः अस्तित्व है बुराई का नहीं। यह, अच्छाई के ऊपर परजीवी की तरह था। अच्छाई के द्वारा दिये गये आधार को हटाने पर यह स्वयं ही मर जायेगी बुराई स्वयं में बन्ध्य होती है। यह स्वविनाशी है। यह अच्छाई के अनुप्रयोग के द्वारा ही पल्लवित होती है तथा बनी रहती है। विज्ञान कहता है कि एक उत्तोलक एक वस्तु को गतिमान नहीं कर सकता जब तक इसको विश्राम बिन्दू नहीं मिल जाये जिसके विरूद्ध इसको प्रयुक्त किया जाये। इसी प्रकार बुराई पर विजय पाने के लिए इसको पूर्णतः इसके बाहर होना होगा, अर्थात् बिना मिलावट की अच्छाई वाले ठोस धरातल पर आना होगा। अतः बुराई को कम करने के लिए साधनों की शुद्धता आवश्यक है जब साधनों की शुद्धता पर बल दिया जाता है तो वह सचेत होता है कि कुछ निश्चित परिस्थितियों में जो अच्छा है वह भिन्न परिस्थितियों में बुरा हो सकता है। वह प्रगति की योजना में बुराई के स्थान को हटाने वाला नहीं है। विकास सदैव प्रयोगात्मक होता है। समस्त प्रगति गलतियों तथा उनके सुधार से ही होती है। कर्म तथा पुर्नजन्म का सिद्धान्त यह सुझाव देते हैं कि एक धीमी प्रक्रिया द्वारा मानव बुराई को कम करने में सक्षम होगा।

फिर भी गाँधीजी ने बुराई की दार्शनिक व्याख्या पर उतना अधिक ध्यान नहीं दिया जितना बुराई के विशिष्ट प्रकार जैसे राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक आदि पर ध्यान दिया था। मैं यह भी जानता हूँ उन्होंने 1928 में लिखा था कि यदि मैं बुराई के साथ तथा विरोध में संघर्ष नहीं करूँगा तो जीवन की कीमत पर भी ईश्वर को नही जान पाउँगा। उनके समस्त जीवन में उनका पहला कार्य बुराई के विरोध में कठोर संघर्ष करना था। उनके संघर्ष में उन्होंने समुदाय की अवहेलना नहीं की थी। उन्होंने एक नई नैतिक योजना का विचार किया। उनका दर्शन अहिंसा के पथ पर जीवन को राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय पक्षों में नियंत्रित करने की विधि से सम्बन्धित है। उनके हृदय के सबसे समीप उनकी चेतना के केन्द्र में व्यक्ति है। पहला पद उस प्राणी के साथ है जिसका नैतिक पुनः उद्भवन गाँधी के दर्शन का प्राथमिक विषय है। उन्होंने मानव जीवन के लक्ष्य की विवेचना की है तथा इसको प्राप्त करने के लिए प्राणी को कैसे रहना चाहिये इसकी भी विवेचना की है। ये नैतिक सिद्धान्त गाँधी के राजनैतिक दर्शन का अभिन्न अंग हैं क्योंकि इन सिद्धान्तों के अनुसार जीवन को अनुशासित करके एक व्यक्ति अच्छा नागरिक एवं वास्तविक सत्याग्रही बन सकता है।

गाँधी ने मन से कामेच्छा को बाहर निकालने के लिए आहार सम्बन्धी प्रतिबन्धों की सिफारिश की तथा आनन्द के जीवन से सम्बन्धित प्रतिबन्धों की सिफारिश की तथा आनन्द के जीवन से सम्बन्धित क्रियाओं की अवहेलना की। उन्होंने उपवास की सिफारिश भी की है। यह समस्त अनुशासन तब ही उपयोगी है जब मन शरीर के साथ सहयोग देता है अर्थात शरीर के लिए अनुपयोगी वस्तुओं के लिए बुरा स्वाद विकसित कर लेता है। गाँधी ने गलती के रथ में अथक प्रयास की भी सिफारिश की है, जो केवल ईश्वर की कृपा से आती है।

9.8 प्रार्थना एवं उपवास

गाँधी जी ने प्रार्थना की आवश्यकता पर बल दिया है तथा चेतना की आज्ञा का सतत पालन करने पर भी बल दिया है क्योंकि चेतना की आवाज ईश्वर की इच्छा है तथा प्रत्येक कार्य एवं प्रत्येक विचार के सही होने का अन्तिम निर्णायक है निश्चयपूर्वक तथा सतत् प्रयास आत्मविश्वास को उत्पन्न करने के लिए आवश्यक है।

संक्षिप्तता स्वयं को बाह्य व्यवहार तक सीमित रखने के बजाय गाँधी ने मानव के वास्तविक स्वास्थ्य पर ध्यान दिया है। जो उनका आध्यात्मिक लक्षण है। उन्होंने बताया कि मनुष्य को बाह्य व्यवहार में कैसे परिवर्तन करना चाहिये ताकि उसके ऊपर स्वामित्व हो जाये तथा स्वयं में सर्वोतम को समझना चाहिये। मनुष्य को केवल आदत के अनुसार ही नहीं रहना चाहिये स्व निर्देश अर्थात इच्छा के प्रयास के अनुसार रहना चाहिये।

गाँधी जी ने मौन, प्रार्थना तथा उपवास की आध्यात्मिक विकास के लिए सिफारिश की है तथा सत्य की विवेचना के लिए महत्वपूर्ण सहायक माना है। उनके अनुसार मौन सत्याग्रही के आध्यात्मिक अनुशासन का भाग है। उन्हें यह लगा कि वे मौन के लिए प्राकृतिक सक्षम है। मौन के समय उनका ईश्वर से उत्तम मिलाप हो सकता था। इससे उनकी आत्मा को आन्तरिक विश्राम मिलता था। मौन के समय आत्मा को स्पष्ट प्रकाश का मार्ग मिलता है। मनुष्य की प्राकृतिक दुर्बलता को नीचा करने के लिए मौन आवश्यक है अर्थात सत्य को चेतनापूर्वक या अचेतनतापूर्वक बढ़ाने या कम करने या परिवर्तित करने के तूफान पर विजय देता है। उपवास तथा प्रार्थना हमें शरीर से आत्मा को उत्तम मानने तथा हमारे दृष्टिकोण को स्पष्ट करने में सहायता प्रदान करते हैं। किंतु ये अवस्था प्रभाव के लिए ग्रहण किये गये यान्त्रिक आविष्कार नहीं होने चाहिये। प्रार्थना धर्म की आत्मा तथा सार है अतः प्रार्थना मनुष्य के जीवन का केन्द्र होना चाहिये क्योंकि कोई भी व्यक्ति धर्म के बिना नहीं रह सका है तथा प्रार्थना बिना आन्तरिक शान्ति नहीं मिलती है। शरीर के लिए भोजन आवश्यकता से भी अधिक आवश्यक प्रार्थना है। किसी के लिए भोजन की अधिकता हो सकती है किन्तु प्रार्थना की नहीं। व्यर्थ की पुनरावृति नहीं है, तथा उपवास भी केवल शरीर का भूखा रहना ही नहीं है।

प्रार्थना हृदय से होती है। जो ईश्वर को विश्वास से जानता है तथा उपवास बुराई या बुरे विचार, क्रिया या भोजन से दूर रहना है। हृदय से की गई प्रार्थना अन्दर से उत्पन्न उत्कण्ठा होती है। जो स्वयं को प्रत्येक शब्द प्रत्येक क्रिया

तथा प्रत्येक विचार द्वारा अभिव्यक्त कर देती है। प्रार्थना में उपवास जीवन का संचार करता है तथा आत्मा को शान्ति प्रदान करता है। उपवास प्रार्थना का शुद्धतम रूप है। उपवास के बिना प्रार्थना नहीं होती है तथा उपवास प्रार्थना का अभिन्न अंग नहीं है, शरीर का कष्ट है। इस प्रकार का उपवास एक प्रकार का तप है तथा तीव्र आध्यात्मिक प्रयास है। गाँधी जी ने स्व-शोधन के लिए 21 दिन का उपवास किया था उसका वर्णन इस प्रकार किया है "प्रार्थना के निर्बाधित 21 दिन।" उपवास प्रार्थना का एक अभिन्न अंग है तथा यह वृहत चरित्र का होना चाहिये। गाँधी जी ने स्वल्पाहार वह भोजन जो शरीर से सेवा करवाने के लिए काफी है को शरीर का सतत् उपवास माना है।

गाँधीजी ने उपवास तथा प्रार्थना की सम्भावनाओं पर अपने जीवन पर जो शोध किये उनका एक अद्भूत रिकार्ड है वे उपवास करने में कुशल थे जो उनके जीवन का भाग था तथा यह एक विज्ञान में बदल गया था।प्रार्थना को उन्होंने सबसे बड़ा हथियार माना है। 1931 में उन्होंने कहा था समय के साथ-साथ इसके बिना जीवन नीरस तथा रिक्त लगता था। एक भी क्षण ऐसा नहीं था जब उन्होंने ईश्वर की उपस्थिति को अनुभव नहीं किया हो। उनका कोई भी कार्य प्रार्थना के बिना नहीं होता था। ईश्वर ने प्रतिक्रिया में उनसे कुछ नहीं चाहा, अन्धकार के समय में भी उन्होंने ईश्वर को समीप पाया। महत्वपूर्ण निर्णय लेने के समय उन्होंने स्पष्ट और सही सुना उनके अन्दर से छोटी सी आवाज आई। यह आन्तरिक आवाज ही ईश्वर की आवाज थी। इस आवाज का गाँधीजी आज्ञा पालन करते थे।

सत्याग्रह के शस्त्रागार में सर्वाधिक शक्तिशाली हथियार उपवास है। गाँधी इसको तीक्ष्ण हथियार कहते हैं तथा इसको एक विज्ञान मानते हैं। असहयोग से विरोधी द्वारा निष्क्रिय कष्ट होता है, उपवास से स्वतः दण्डित कष्ट होता है। असहयोग के विरोध में यह सीमित प्रयोग है तथा उपयोग तथा अनुप्रयोग के बीच की पहचान है तथा सत्याग्रही और दुराग्रही के बीच की पहचान है।

यह अध्यात्मिक हथियार इतना नाजुक है तथा इसमें नैतिक संवेदनशीलता की इतनी अधिक आवश्यकता होती है कि गाँधीजी जैसे महान सत्याग्रही ने भी एक बार इसे प्रयोग में गलती कर दी थी। उनके राजकोट के उपवास के समय जो कि स्वयं में न्यायोचित था बाद में गाँधीजी को लगा कि उनको ब्रिटिश सरकार द्वारा मध्यस्थता नहीं लेनी चाहिये थी। इससे उपवास भंग हो गया था तथा उस प्रान्त के ठाकुर को परिवर्तित करने का साधन बन गया था, उस ठाकुर को गाँधीजी पुराने पारिवारिक सम्बन्धों के कारण अपना पुत्र मानते थे तथा जिसके प्रतिज्ञा भंग करने का कारण यह उपवास किया गया था। बाद में गाँधीजी ने इस मध्यस्थता के परिणाम के रूप प्राप्त लाभ को त्याग दिया था।

उपवास, तप या आत्माभिव्यक्ति के शोधन के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है, जैसा पहले भी बताया गया है, अर्थात् उपवास शरीर की अपेक्षा आत्मा की उत्कृष्टता प्राप्त करने में प्रयुक्त होता है। यह किसी व्यक्ति की स्वयं की गलतीयों तथा असफलताओं को बताता है तथा यह एक महान अनुशासन है तथा किसी व्यक्ति के विकास

के लिए शक्तिशाली कारक है एक उदाहरण फरवरी 1922 में चोराचोरी विद्रोह के बाद गाँधीजी ने पाँच दिन का उपवास व्यक्तिगत शुद्धि के लिए रखा था, यह एक प्रार्थना थी जो नैतिक वातावरण में थोड़ी सी भिन्नता के लिए भी स्वयं को समायोजित होने योग्य साधन बनाने के लिए की गई थी। दूसरा उदाहरण जो शोधन उपवास का है वह है मई 1933 में 21 दिन का उपवास जिसे गाँधीजी ने स्वयं के शोधन तथा सहयोगियों के शोधन के लिए हृदय की प्रार्थना के रूप में अधिक सतर्कता के साथ हरिजनों के लिए किया था।

अन्याय के विरोध का साधन तथा बुरा करने वाले को परिवर्तित करने का साधन तथा बुरा करने वाले को परिवर्तित करने का साधन भी उपवास है। यह शुद्ध तथा प्रेमी हृदय की प्रार्थना का सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। यह बुरा करने वाले की प्रकृति को बदलने की प्रार्थना है। गाँधीजी जैसे व्यक्ति का उपवास जनता की विचारधारा पर बहुत अधिक प्रभाव डालता है। गाँधीजी के अनुसार जनता को प्रभावित करने की यह तकनीक अधिक प्रभावशाली है क्योंकि जनता के मन को भाषण तथा लेखों के द्वारा अधिक प्रभावित नहीं किया जा सकता है किंतु जिसको वे अच्छी तरह समझ सकते हैं, उसके द्वारा मन को प्रभावित किया जा सकता है अर्थात सर्वोत्तम तथा सर्वमान्य विधि उपवास की विधि है। उन्होंने कहा कि प्रयुक्त करने पर यह सर्वोत्तम अचूक उपाय है केवल हृदय की भाषा, उपवास को जनता समझती है तथा जब यह पूर्णतः स्वार्थरहित हो तो यह हृदय की भाषा होती है।

किन्तु इस हथियार को सरलता से प्रयुक्त नहीं किया जा सकता है। इसको कभी-कभी , अनुभवी निर्देशन में या इस कला में कौशलयुक्त व्यक्ति द्वारा ही प्रयुक्त किया जा सकता है। बिना तैयारी तथा पर्याप्त विचार के बिना यह सत्याग्रही उपवास नहीं होता है किन्तु भूख हड़ताल है। गाँधीजी ने उन व्यक्तियों की योग्यता निर्धारित की है जो सत्याग्रह कर सकते हैं तथा वह अवसर जब सत्याग्रह सही ढंग से किया जा सकता है।

उपवास करने की केवल शारीरिक क्षमता की सत्याग्रही की योग्यता नहीं है उसमें आध्यात्मिक पूर्णता तथा स्पष्ट विचारधारा होनी चाहिये। ईश्वर में सजीव विश्वास अपरिहार्य है। विश्वास की कमी, गुस्सा, अधैर्य था स्वार्थपरायणता का सत्याग्रही उपवास में कोई स्थान नहीं है। ये सब उपवास को हिंसात्मक बनाते हैं। सत्य तथा अहिंसा के अतिरिक्त सत्याग्रही में यह आत्म विश्वास होना चाहिये कि ईश्वर उसे आवश्यक शक्ति प्रदान करेंगे, तथा यदि उपवास में थोड़ी सी भी कमी होगी तो वह उसे तुरन्त छोड देगा। इसमें अनन्त धैर्य, दृढ़संकल्प, उद्देश्य की एक विचारधारा तथा पूर्ण शान्ति की आवश्यकता होती है। शीघ्र ही किसी व्यक्ति के लिए ये सब गुण विकसित करने असंभव है अतः कोई भी व्यक्ति जिसने अहिंसा के नियमों के पालन में स्वयं को नहीं लगाया है सत्याग्रही उपवास को नहीं रखे। गाँधीजी के अनुसार सत्याग्रही उपवास की इच्छा रखने वालों में आध्यात्मिक शोधन के लिए उपवास का कुछ व्यक्तिगत अनुभव होना चाहिये।

उक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि समस्त जनता द्वारा उपवास ठीक ढंग से तथा प्रभावशाली तरीके से प्रयुक्त नहीं किया जा सकता है, जबकि व्यक्तिगत तथा सामूहिक तनावों में इसका स्थान है। इसका प्रयोग केवल चुने हुए तथा योग्य व्यक्तियों द्वारा ही किया जा सकता है।

9.9 प्रतिज्ञा

"मै नियमित रूप से चरखा कातता हूँ, किन्तु प्रश्न यह है कि मुझे इससे प्रतिज्ञाबद्ध होना चाहिये या नहीं?" एक संवाददाता ने पूछा तो गाँधी जी ने उत्तर दिया, "बचपन से ही प्रतिज्ञा करने का अभ्यस्त होने का कारण इस प्रथा का में पक्षधर हूँ। यह संकट के समय पर मेरा बचाव करती है। मैंने देखा है कई लोगों को यह गुप्त संकट से बचाता है। प्रतिज्ञा के बिना जीवन ऐसा है जैसा जहाज लंगर के बिना या पत्थर के बजाय बालु मिट्टी पर बने हुए भवन जैसा है। प्रतिज्ञा व्यक्ति के चरित्र को स्थायित्व तथा दृढ़ता प्रदान करती है। इन आवश्यक गुणों से सहित व्यक्ति पर क्या विश्वास किया जा सकता है। समझौता प्रतिज्ञाओं का आपसी विनिमय होता है इसी प्रकार किसी को वचन देते समय भी व्यक्ति प्रतिज्ञाबद्ध हो जाता है।

पुराने समय में प्रख्यात व्यक्तियों के मुख से निकले शब्द एक बंध जितने महत्वपूर्ण माने जाते थे। लाखों रूपये का लेन-देन मौखिक समझौते से हो जाता था। वास्तव में हमारी सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था प्रतिज्ञा के शब्दों की पवित्रता पर आधारित है यदि समझौते में इस तरह का स्थायित्व या अन्तिमता नहीं होती तो संसार छिन्न भिन्न हो जाता। हिमालय अपने स्थान पर अचल है। यदि हिमालय की दृढता समाप्त हो जाये तो भारत का विनाश हो जायेगा। सूर्य, चन्द्रमा तथा अन्य आकाशीय पिण्ड नियमित रूप से गति करते हैं। यदि ऐसा नहीं हो तो मानवीय गतिविधि रूक जायेगी। किंतु हम यह जानते हैं कि सूर्य युगों-युगों से निश्चित समय पर उगता रहा है तथा भविष्य में भी उगता रहेगा। चन्द्रमा एक शीत चक्र हमेशा घटता बढता रहेगा हम अपने कार्यो के लिए सूर्य तथा चन्द्रमा को साक्षी बनाते हैं। हमारा कलेण्डर उनकी गतियों पर आधारित है, हमारा समय उनके उदय तथा होने पर नियन्त्रित होता है।

यहि नियम आकाशीय पिण्डों को नियन्त्रित करता है, व्यक्ति के लिए भी प्रयुक्त किया जाता है। प्रतिज्ञाबद्ध नहीं होने वाले व्यक्ति पर कभी भी पूर्ण विश्वास नहीं किया जा सकता है। यह कहना अहंकारपूर्ण है कि यह स्वतः ही हो गया। मुझे स्वयं को प्रतिज्ञाबद्ध क्यों करना चाहिये। संकट के समय भी मैं अपनी देखभाल ठीक से कर सकता हूँ। मुझे शराब के विरोध में क्यों प्रतिज्ञाबद्ध होना चाहिये मैं कभी पीता नहीं हूँ। किसी-किसी अवसर पर प्याला पीने का आनन्द बिना किसी कारण के मैं क्यों छोड़ूँ। इस प्रकार के तर्क करने वाले व्यक्ति को इस प्रकार के दुर्गुण के कभी हटाया नहीं जा सकता है।

झूठी प्रतिज्ञा संदिग्ध होती है तथा प्रस्ताव को धोखा देती है। कोई भी व्यक्ति इस संसार में दृढता के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता है। जैसे एक ऐसे सिपाही पर आप क्या विश्वास कर सकते हैं जिसमें दृढ़ता और निश्चय नहीं हो कौन कहता है कि मैं दृढ़ता रखूँगा जब तक रख सकता हूँ। किसी मालिक से उसका पहरेदार कहे कि वह सुरक्षा तब तक रखेगा जब तक रख सकता है तो वह सो नहीं सकता है। कोई भी सिपाही विजय प्राप्त नहीं कर सकता जब तक वो चैकन्ना जब तक रह सके। नियम का पालन नहीं करे।

मेरे पास इच्छा से चरखा कातने वालों के बहुत से उदाहरण हैं। उनमें से प्रत्येक जल्दी या देर से दुखी हो गया था। दूसरी तरफ, विधानपूर्वक चरखा कातने वालों ने उनका जीवन परिवर्तित कर दिया जो इसको मन से करते हैं उन्होंने सूत के बड़े-बड़े गठ्ठर एकत्रित कर दिये। एक प्रतिज्ञा समकोण की तरह है। एक निरर्थक समकोण एक बड़ी संरचना के भद्देपन तथा अच्छाई के बीच, दृढ़ता तथा अस्थिरता केबीच अन्तर कर सकता है। इसके साथ पूरे जीवन का स्थायित्व तथा अस्थिायित्व पवित्रता आदि प्रतिज्ञा लेने पर निर्भर कर सकते हैं।

आधुनिकीकरण तथा गम्भीरता प्रतिज्ञा के लिए अत्यावश्यक है यह कहना उपयुक्त होगा। ऐसी प्रतिज्ञा लेना जिनको लेना सरल नहीं है या किसी की क्षमता से परे है, विचारहीनता को तथा संतुलन की चाह को धोखा देना होगा। एक प्रतिज्ञा को औपबन्धिक बनाया जा सकता है। बिना इसकी क्षमताओं को खोये। जैसे - एक घंटे रोज चरखा कातने की प्रतिज्ञा लेना गलत नहीं होगा। तथा 200 गज सूत रोज कातने की प्रतिज्ञा लेनायात्रा तथा बीमारी को छोडकर। इस प्रकार की प्रतिज्ञा लेना सरल होगा। किसी प्रतिज्ञा की आवश्यकता इसकी निष्पत्ति की कठिनाई में नहीं होती है किंतु इसके लिए किये गये दृढ़ निश्चय में अधिक होती है।

प्रतिज्ञा लेने के लिए आत्मनिरोध अत्यावश्यक है कोई भी खाने पीने खुश रहने की प्रतिज्ञा नहीं ले सकता है यह चेतावनी आवश्यक है क्योंकि मैं ऐसे उदाहरण जानता हूँ जब प्रश्न करने योग्य बातों को प्रतिज्ञा के द्वारा छिपा दिया गया। असहयोग के समय किसी ने सुना भी होगा कि आपत्ति उठाई गई थी मैं सरकारी नौकरी से त्यागपत्र कैसे दे सकता हूँ जब मैंने इसके साथ सेवा करने का समझौता किया है। या मैं अपनी शराब की दुकान कैसे बन्द कर सकता हूँ जब मैंने इसे चलाने का पाँच वर्ष का समझौता किया है। कभी-कभी ऐसे प्रश्न भ्रमित कर देते हैं। लेकन सोचने पर यह ज्ञात होता है कि प्रतिज्ञा कभी भी अनैतिक क्रिया कोसमर्थन देने के लिए नहीं प्रयुक्त की जाती है। एक प्रतिज्ञा व्यक्ति को ऊपर की ओर ले जाती है।कभी भी अद्यःपतन की ओर नहीं ले जाती है।”

प्रतिज्ञा के संबन्ध में उनके विचारों के कारण लोगों ने यह सोचा कि उन्होंने संभवतः प्रत्येक विचार का समर्थन किया जो धार्मिकता के नाम पर था। एक संवाददाता ने पूछा कि गाँधीजी मृत आत्माओं के साथ संप्रेषण की संभावना में विश्वास करते हैं या नहीं। गाँधी जी ने जवाब दिया कि ऐसे संप्रेषण में अविश्वास को प्रमाणित करने के लिए मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है। किन्तु मैं ऐसे संप्रेषण करने या उनके लिए प्रयत्न करने का प्रबलता से विरोध करता हूँ। ये अक्सर धोखा देने वाले तथा कल्पना के उत्पाद होते हैं। यह प्रथा माध्यम तथा आत्मा दोनों के लिए

हानिकारक है ऐसे संप्रेषणों की संभावना मानना भी हानिकारक है। इस प्रकार की आत्मा का प्रयास स्वयं को भूमि से पृथक करके उपर उठना होना चाहिये किन्तु ये भूमि को आकर्षित करती है तथा स्वयं को उससे बांध लेती है। एक आत्मा शरीर रहित होने के कारण शुद्ध नहीं होती है। जब यह आत्मा भूमि पर थी उस समय की समस्त दुर्बलताओं को अपने साथ रखती है। भूमि पर रहने वालों के साथ आत्मा का संप्रेषण चाहे सूचना हो या सलाह सही तथा खुशी देने वाला नहीं होता है। इस प्रकार के नियम विरोधी संयोजन से आत्मा को मुक्त करवाना चाहिये।

एक अन्य संवाददाता ने पूछा कि क्या वे वृक्ष पूजा में विश्वास करते हैंघ् गाँधीजी ने जवाब दिया यह मूर्ति पूजा के पुराने प्रश्न को उठाता है। मैं मूर्ति-पूजा का समर्थक तथा विरोधी दोंनों हूँ ।जब मूर्ति-पूजा में अंधविश्वास तथा सिद्धान्त सम्मिलित होने लगते हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि इसको सामाजिक बुराई मानकर इसके विरूद्ध संघर्ष किया जाये। दूसरी तरफ किसी व्यक्ति द्वारा अपने आदर्शों को मूर्त आकृति में भावनात्मक रूप से लगाकर मूर्ति-पूजा करना मनुष्य की जन्मजात प्रकृति है तथा यह भक्ति के लिए सहायक है। अब तक वृक्ष पूजा में कुछ भी बुराई नहीं मानने का मैं यह समझता हूँ कि यह काव्य सौन्दर्य या करूणा की प्रवृत्ति है। यह उस सम्पूर्ण वनस्पति जगत के लिए सच्चे आदर को दर्शाता है जो अपनी सुन्दर आकृतियों तथा रूपों के साथ यह घोषणा करता है कि यह लाखों जीभों वाले होते तो जीवन को सहायता देते। अतः ऐसे देश में जहाँ पर वृक्षों की कमी है वृक्ष-पूजा का आर्थिक महत्व बहुत अधिक है। सरल मन वाली जो महिला वृक्षों की पूजा करती हैं उनके पास उनके कार्य को तार्किक समझ नहीं होती है। वे इसकी कोई व्याख्या नहीं कर पाती है कि वे वृक्ष-पूजन क्यों करती हैं। वे सरलता से यह कार्य करती है तथा अपने विश्वास को भी सरलता से बताती है। इस प्रकार के विश्वास को तुच्छ नहीं समझना चाहिये, वह एक महान तथा शक्तिशाली बल है जिसका भण्डार हमारे पास होना चाहिये।

9.10 सारांश

हम यह कह सकते हैं कि गाँधीजी ने मानवता के सभी धर्मो का आध्यात्मिक तथा नैतिक सार स्वीकार किया है। इसी कारण हम उनको आध्यात्मिक व्यक्तित्व के रूप में मानते हैं। गाँधीजी विवेकशीलता एवं लाभप्रद इच्छाओं के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया। उन्होंने आध्यात्मिकता के विभिन्न आयामों जैसे प्रतिज्ञा, उपवास, मौन, प्रार्थना, ईश्वर में विश्वास, आत्मबल आदि पर जोर दिया। गाँधी व्यक्ति को एक नैतिक एवं आध्यात्मिक व्यक्ति बनाना चाहते थे।

9.11 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी के आध्यात्मिकता के प्रति दृष्टिकोण की व्याख्या कीजिये।

2. गाँधी के ईश्वर सम्बन्धित विचारों की विवेचना कीजिये।

3. गाँधी के आध्यात्मिकता के विविध आयामों का उल्लख कीजिये।

9.12 संदर्भ ग्रंथ

1. एन्टोनी कोपले, गाँधी अगेन्स्ट द टाइड

2. बोराई, एच. गाँधीएण्ड मोडर्न इण्डियन लिबरलस

3. बोराई, एच. गाँधीएण्ड द न्यू वर्ड आर्डर

4. धवन गोपीनाथ, द पालिटिकल फिलॉसॉफी ऑफ महात्मा गाँधी

5. नारायण हजारे, सुभाष चन्द्र हजारे, अमरेश्वर मिश्रा, ईटरनल गाँधी

इकाई -10

लंदन में गाँधीजी का विद्यार्थी जीवन

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 गाँधी का लंदन में छात्र जीवन (1888-1891)

10.2.1 लंदन जाने का निर्णय

10.2.2 एक छात्र का जीवन

10.2.3 कानून का अध्ययन

10.2.4 एक शाकाहारी

10.2.5 एक थियोसोफिस्टस्

10.2.6 लंदन से विदाई

10.3 गाँधी के लंदन में छात्र जीवन का महत्व

10.4 सारांश

10.5 अभ्यास प्रश्न

10.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप जान पाएंगे :-

- गाँधी ने लंदन में एक छात्र के रूप में कैसा जीवन व्यतीत किया
- इस दौरान उन्होंने लंदन में क्या सीखा, क्या देखा और क्या महसूस किया
- इन सबका उनके आगामी जीवन पर क्या प्रभाव पडा।

10.1 प्रस्तावना

गाँधी जी ने लंदन में 2 वर्ष और 8माह तक विद्यार्थी जीवन बिताया। इस दौरान की घटनाओं ने उनके जीवन को महत्वपूर्ण ढ़ंग से प्रभावित किया। इस दौरान उन्होंने ब्रिटिश जीवन को महत्वपूर्ण ढ़ंग से समझा, उस शहर के प्रति गहरा लगाव प्रकट किया जिसमें अंग्रेज लोगों के प्रति पे्रमभाव भी शामिल था। गाँधी जी के लिए लंदन व्यावसायिक प्रशिक्षण का स्थान नहीं था बल्कि इसने उनकी बौद्धिक चेतना व नैतिक परिपक्वता विकसित की और उनका मस्तिष्क आध्यात्मिक प्रश्नों के प्रति खोला। यह सभी उन्होंने अपने अंग्रेज मित्रों, सहयोगियों एवं अध्यापकों के माध्यम से किया। लेकिन एक युवा व्यक्ति के रूप में भी उन्होंने इंग्लैण्ड से बहुत कुछ सीखा। उन्होंने ब्रिटिश मानसिकता का ज्ञान हासिल किया जिसने उसकी स्थिति, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के लिए प्रवक्ता के रूप में और ब्रिटिश लोगों को भारतीय दृष्टिकोण के व्याख्याकार के रूप में, व्यापक रूप से प्रभावित किया।

युवा गाँधी लंदन के बारे में बहुत कुछ जानते थे, वे न केवल यह जानते थे कि वहाँ चार मिलियन से ज्यादा लोग रहते है बल्कि वे वहाँ की सामाजिक जटिलताओं के बारे में भी जानते थे। उन्होंने शहरी जीवन के कुछ चुनिंदा पहलुओं के बारे में ही अनुभव किया था। औपचारिक जानकारी अपने लॉ विध्यालय के शैक्षणिक कार्यक्रम के दौरान ही प्राप्त की। हालाँकि उसका धार्मिक और सामाजिक रूचि दो उत्केन्द्रीय समूह के साथ अपने वार्तालाप के द्वारा विकसित हुई साथ ही कुछ शाकाहारियों और थियोसोफिस्टों के साथ सम्पर्क से यह सभी मध्यम वर्ग से संबंद्ध रखते थे। जो कि ब्रिटिश राष्ट्र का नैतिक आधार निर्मित करते थे। गाँधीजी भी भारत के इसी तरह की समक्षकीय वर्ग से जो कि बनिया जाति के थे, आये थे। गाँधीजी ने अपना विशेष प्रकार का लंदन यहाँ देखा जो न तो बहुत शक्तिशाली था और न ही बहुत गरीब था। मुख्य रूप से जो लोग उसके वर्ग के थे वे व्यवसाय और धार्मिक मामलों में खुली रूचि रखते थे। यहाँ गाँधी जी ने कुछ गाईडों की सहायता से अपना मार्ग आसान बनाया उनमें बहुत सारे उनके पूर्ववर्ती लंदन आये भारतीय छात्र शामिल थे। यहाँगाँधी जी ने कानून की

पढ़ाई करते हुये कई शाकाहारी लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित किया, शाकाहार के सम्बंध में अपने विचार निर्धारित किये ओर साथ ही थियोसोफिस्टों के साथ सम्पर्क बनाकर सृष्टि की संकल्पना के सम्बंध में पश्चिमी और पूर्वी विचारों का सम्मिश्रण किया।

10.2 गाँधी का लंदन में छात्र जीवन (1888-1891)

प्रोफेसर जेम्स डी. हंट ने अपनी पुस्तक 'गाँधी इन लंदन' में गाँधी के लंदन में बिताये छात्र जीवन को निम्नोक्त रूप से वर्णित किया है-

10.2.1 लंदन जाने का निर्णय

मोहनदास गाँधी 18 वर्ष की उम्र में नये अंग्रेजी भाषा शैक्षणिक तंत्र की कई समस्याओं से पार पा चुके थे। उन्होंने राजकोट में स्थित काठियावाड़ हाई विध्यालय से स्नातक की परीक्षा उत्त्रीण की। बम्बई विश्वविद्यालय से मैट्रिक परीक्षा उत्त्रीण की और भावनगर के समालदास महाविध्यालय में प्रवेश लिया। यह महाविध्यालय 4 वर्ष पुराना था जिसमें सात शिक्षक, साठ छात्र थे। यहाँ बी.ए. का पाठ्यक्रम तीन वर्ष का था। इसके बाद छात्र कानून की पढ़ाई करने बम्बई जाते थे। गाँधी जी ने इंग्लैण्ड़ जाने का निर्णय लिया क्योंकि कई भारतीय छात्रों ने अंग्रेजी भाषा में पढ़ाई की और उस देश की महान् सभ्यताई उपलब्धियों को सीखा और अपने प्राचीन समाज में नई शक्तियों को कार्य करने की पहचान कराने पर बल देते थे, जो कि अंग्रेजों का सपना था। जिसको कुछ लोग चाहते थे। गाँधी जी शादीशुदा होने के कारण अपने सपने को पूरा करने में बाधा मानते थे क्योंकि वे सोचते थे कि इंग्लैण्ड़ केवल अविवाहित व्यक्ति ही जा सकते है और साथ ही किसी भी सुव्यवस्थित भारतीय परिवार में ऐसी आजादी मिलना असम्भव था। पूरे परिवार का हित हो तो इस सम्बंध में निर्णय किया जा सकता था। गाँधी ने अपने निर्णय को परिवार के द्वारा व परिवार के लिए बदल दिया।

गाँधी परिवार काठियावाड़ के नगर राज्य की छोटी सी दुनिया में सुप्रसिद्ध था। गाँधी के पिता कर्मचंद गाँधी पोरबंदर के दिवान थे। जब ब्रिटिश अधिकारी उन्हें राजकोट का न्यायाधीश बनाया तो उन्होंने अपनी पहचान एकता व निष्ठा बनाऐ रखने के रूप में स्थापित की। चूंकि कर्मचंद ने राजा की सेवाओं से स्वंय को कई अवसरों से वंचित रखा। इसलिए जब 1885 में उनकी मृत्यु हुई तब वे अपने परिवार के लिए विरासत में केवल कुछ जमीन के अलावा कुछ नहीं छोड़ के गये। यह सम्पत्ति भी ब्रिटिश सरकार द्वारा स्थापित नई आर्थिक व राजनीतिक शक्ति के द्वारा प्रभावित हुई।

कर्मचंद गाँधी शक्ति संरचनाओं में बदलाव के प्रति सचेत थे। इसलिए उन्होंने अपन पुत्रों को राजकोट में अंग्रेजी पाठशाला में दाखिला दिलवाया। भारत में अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली टीण्बीण्मेकाले के द्वारा शुरू की गई थी। इसके पीछे निहित उद्देश्यों को 'मिनिट ऑन एजूकेशन' (1835) में उद्वित करते हुए बताया कि "वे लोगों का एक ऐसा

वर्ग तैयार करना चाहते है, जो रक्त ओर रंग से भारतीयें हों, लेकिन रूचि, मत, नैतिकता और बुद्धि में अंग्रेज हों।" गाँधी के दो छोटे भाई लक्ष्मीदास ओर कृष्णदास हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने में अक्षम थे इसलिए उनके लिए नौकरी के अवसर भी सीमित थे। राजकोट और काठियावाड में वकालत का भविष्य तेजी से बदल रहा था। भारतीय जीवन में जो कानून लागू था वह अंग्रेजी कानून था, जिसका अध्ययन मोदनदास ने बम्बई विश्वविद्यालय के महाविध्यालयों में किया। इसी दौरान कई महत्वाकांशी काठियावाड़ी वकीलों ने इंग्लैण्ड़ जाकर प्रशिक्षण प्राप्त कर नई कानून व्यवस्था के लाभ लेने के सपने देख रहे थे। हालांकि कई लोग जैसे राजकोट के गुलाम मोहम्मद मुंशी, मोरवी, प्रांजीवन जे. मेहता, दलपतराम बी. शुक्ला आदि ने इंग्लैण्ड़ से प्रशिक्षण प्राप्त किया।

इसी समय मोहनदास कर्मचंद गाँधी समालदास महाविध्यालय में अध्ययन कर रहे थें। उन्हें वहाँ कक्षाओं में व्याख्यान समझने में दिक्कत होती थी। परीक्षा में अंक बहुत कम प्राप्त होते थे। इसलिए वे प्रथम टर्म समाप्त होने के पश्चात् राजकोट लौट आये। इस समय उनके परिवार के उत्तरदायी सलाहकार माउजी देव ने सलाह दी कि समय बदल गया है और आप अपने पिता की गद्दी को बिना उचित शिक्षा प्राप्त किये सहीं ढ़ंग से नहीं सम्भाल पाओगे। उन्होंने कहाँ कि यहाँ से स्नातक करने में 4-5 वर्ष लग जाऐंगे, लेकिन फिर भी दीवान का पद हासिल नहीं होगा। यदि तुम दीवान का पद चाहते हो तो आप उसे लंदन भेज दो। इस सलाह से गाँधी प्रसन्न हुए और उनके परिवार के मुखिया लक्ष्मीदास ने इससे सहमति जताई। इस प्रस्ताव को मूर्त रूप लेने में कई समस्याऐं आई। सर्वप्रथम तो परिवार के अन्य सदस्यों में सहमति ही नहीं बन पाई। ओर यदि सहमति बनी तो धन के अभाव की समस्या सामने आ गई और इससे भी बढ़ कर जाति विरोध की सम्भावना थी। युवा मोहनदास ने जो कि दूर दृष्टा थे, एक के बाद एक अवरोधो को समाप्त किया। माँ के संदेहों को भी दूर किया और अपने चाचा की सहमति प्राप्त करने के लिए पोरबंदर गये ओर ब्रिटिश साम्राज्य के प्रशासक सर फ्रैडरिक लेले से वित्तीय सहायता चाहीए लेकिन लेले ने मना कर दिया। गाँधी ने अपनी पत्नी के गँहनें बेचने का प्रस्ताव रखा लेकिन सम्बंधियों ने धन उपलब्ध करवाया। उन्होंने माँ को जैन साधु के समक्ष इंग्लैण्ड में शराब, परस्त्रीगमन और मांस के निषेध की शपथ ग्रहण कर विश्वास दिलाया।9 अगस्त, 1888 को लक्ष्मणदास के साथ बॉम्बे की यात्रा के लिए रवाना हो गये।

बम्बई में उन्हें एक और बाधा का सामना करना पड़ा। हिंद महासागर में ग्रीष्मकालीन तुफानों के समाचारों ने लक्ष्मणदास को अपने भाई की सुरक्षा की चिंताओं को बढ़ा दिया। इसलिए उन्होंने अच्छे मौसम का इंतजार करना चाहा और साथ ले गये धन को एक संबंधी के पास रख वापस राजकोट लौट आए। जाति नेताओं ने धर्म के नाम पर बैठक बुलाई और मोहनदास को बुलाया ओर कहाँ कि वे विदेश नहीं जा सकते ओर जो उनकी सहायता करेगा, उनको भी उनके साथ जाति से बाहर कर दिया जाऐगा। जब गाँधी को पता लगा कि 4 सितम्बर को टी.टी. मजूमदार इंग्लैण्ड़ जा रहे हैं तो गाँधी ने भी उनके साथ जाने का निर्णय लिया लेकिन संबंधी ने गिरवी रखा धन देने से मना कर दिया। आखिर में परिवार के मित्रों ने धन उधार दिया और 4 सितम्बर को गाँधी जी

इंग्लैण्ड़ के लिए रवाना हो गए। गाँधी ने इंग्लैण्ड़ जाने की अपनी पहल का उद्देश्य स्पष्ट करते हुये कहाँ कि मैं सोचता हूँ कि मैं इंग्लैण्ड़ बेरिस्टर बनने के लिए नहीं जाऊंगा बल्कि मैं इंग्लैण्ड़ को जो कि दार्शनिकों, कवियों और सभ्यता का केन्द्र है को समझने में सक्षम होऊगा।

10.2.2 एक छात्र का जीवन

गाँधी जी 29 सितम्बर 1888 को लंदन पहुँचे। यह यात्रा उनके जीवन के लिए बड़ी साहसी यात्रा थी। गाँधी ओर उसके भारतीय साथियों को विक्टोरिया होटल के रास्ते के बारे में बताया गया, जो कि वहाँ कि सबसे अच्छी ओर मंहगी होटल थी। वहाँ के आकर्षण को देखकर गाँधी जी की आँखें चैंधियां गई ओर वहाँ के लोगों की पोशाक को देखकर भी गाँधी जी ने अपने आपको गरिमाहीन स्थिति में पाया। लंदन में गाँधी जी अपने घर से दूर जरूर थे लेकिन अकेले नहीं थे क्योंकि उसके कई कठियावाड़ी साथियों ने उसे संरक्षण प्रदान किया। उन्हें शीघ्र ही डॉ. प्रांजीवन मेहता की ओर से टेलीग्राम भी प्राप्त हुआ।

उन्होंने आरम्भ में कई महिनों तक अंग्रेजों के रहने के तौर-तरीकों की छानबीन करने और समझने में व्यतीत किये। 8-9 महिनों तक वे एक आंग्ल-भारतीय विधवा महिला के घर रहें क्योंकि सामान्यतः अंग्रेजी तौर-तरीकों और परम्पराओं के समझने के क्रम में परिवारों के साथ रहना वांछनीय माना जाता हैं। गाँधी जी एक कानून के विद्यार्थी के रूप में अपेक्षाकृत रूप से अलगाव में रहे थे। वहाँ कोई कैम्पस जीवन नहीं था। कुछ कक्षाओं और व्याख्यानों वे शामिल होते थे। उन्होंने खाने, ठहरने, मित्रता और मनोरंजन के लिए अपने सभी प्रबन्ध स्वयं ही किया। इनमें आने वाली समस्याऐं भारतीय विद्यार्थियों के असाधारण नहीं थी, क्योंकि विदेश में जाकर रहने वाले हर विद्यार्थी को इन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। गाँधी के समान ज्यादातर भारतीय विद्यार्थियों का अंग्रेजी लोगों का पहले कोई सम्पर्क नहीं होता था। उनके शिक्षक भी उन्हें केवल कक्षा कक्ष तक ही जानते थें।

धीरे-धीरे गाँधी जी अंग्रेजों के सभी रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा से परिचित हो गये थें। गाँधी जी को वहाँ रहने की व्यवस्था करने में कई समस्याऐ हुई थी। आरम्भ में गाँधी जी को अपने आपको अंग्रेजी जेन्टलमैन बनाने की कोशिश में बहुत ज्यादा खर्चा करना पड़ा। इसके लिए उन्होंन नृत्य कला, वक्तृत्व कला, वायलिन वादन करना सीखा तथा कपड़ों पर भी अधिक व्यय किया। लेकिन 3 महिनों के पश्चात् ही उन्हें यह महसूस हो गया कि वह अपने कानून अध्ययन के बजाय इन तनूकमिजाजी गतिविधियों पर समय और धन का अपव्यय कर रहे हैं। आगे चल कर उन्होंने यह निश्चित कर लिया कि वे सादा खाना खाऐंगे ओर कम से कम खर्चा करेंगे। इसके लिए उन्होंने 30 शेलिंग प्रति सप्ताह का कमरा ओर बोर्ड किराये पर लिया। लेकिन अगले वर्ष उन्होंने ज्यादा धन बचाने ओर आजादी के लिए एक कमरों का सैट लिया। 1890 की गर्मी में उन्होंने स्वयं ही खाना पकाना शुरू कर दिया और उन्होंने प्रति सप्ताह 14 शेलिंग की बचत करना शुरू कर दिया।

कनूनी बार के लिए अध्ययन के कार्य के दौरान उन्हें अन्य गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय दिया जाता था लेकिन गाँधी के लिए इस समय का सदुपयोग कैसे किया जाए यह समस्या बन गई थी। उन्होंने 'गाईड' में प्राईवेट स्टेडी के लिए कई योजनाओं का जिक्र किया। इनमें सबसे ज्यादा उन्होंने बच्चों के लिए कुछ परीक्षाओं के लिए अध्ययन करने को चुनने की सलाह दी। उन्होंने लंदन यूनिवर्सिटी की मैट्रिक परीक्षा में भाग लेने का चुनाव किया। उसके लिए विशेष तैयारी कक्षाऐं भी उपलब्ध थी। इस परीक्षा में गाँधी जी आरम्भ में अनुत्तीर्ण रहे, लेकिन जून 1890 में उत्तीर्ण हुए। उन्होंने गाईड में यह सलाह दी कि एक छात्र इस परीक्षा को पास करने के पश्चात् लंदन विश्वविद्यालय से तीन वर्षो में एल.एल.बी. की डिग्री हासिल कर सकता है जो कि 'इन्नस ऑफ कोर्ट' में टर्मस की पूर्व शर्त थी, लेकिन वे स्वंय समय पर मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण नहीं करने के कारण इस अवसर का लाभ नहीं ले सकें।

इसी दौरान गाँधी सार्वजनिक मामलों के प्रति भी जागरूक रहे। उन्होंने लंदन से प्रकाशित कई समाचार पत्रों की खोज कर दैनिक रूप से पढ़ना शुरू किया। जो कि उनके विश्वविद्यालय के समसामयिक मामलों का हिस्सा थे। वह लिबरल विचारधारा वाला 'डेली न्यूज' अनुदारवादी विचारधारा वाला 'डेली टेलीग्राफ' और 'पलमाल गजट' जो कि सबसे ज्यादा बौद्धिक और प्रभावशाली समाचार पत्र था को पढ़ते थे। गाँधी जी उस समय इंग्लैण्ड़ में उभर रही 'फेबियनवादी विचारधारा' के प्रति भी जागरूक थे। उन्होंने 1889 में प्रकाशित 'फेबियन एशेज इन सोसलिज्म' के एक लेखक ऐनीबीसेन्ट के बारे में जिक्र किया और उसके साथ थियोसोफी के सम्बंध में वार्तालाप की गई। इसी तरह उन्होंने अगस्त 1889 की महान् 'लंदन डॉक स्ट्राइक' का भी जिक्र किया जो कि ब्रिटिश इतिहास में अब तक का सबसे बड़ा श्रमिक प्रदर्शन था। इस श्रमिक हड़ताल के प्रमुख नेता कार्डिनल मैनिंग से भी मुलाकात की।

लंदन में रहते हुए गाँधी जी न केवल अंग्रेजी संस्कृति को समझने, कानून का अध्ययन करने और वहाँ की सामाजिक व राजनीतिक घटनाओं तथा विचारधाराओं के प्रति ही सचेत नहीं रहे बल्कि वे कई भारतीय मामलों में भी सलंग्न रहें। हालांकि इस दौरान वे भारतीय राजनैतिक जीवन की गतिविधियों में बहुत धीमी गति से लेकिन निरंतर शिरकत कर रहे थे। गाँधी के लंदन पहुँचनेसे तीन वर्ष पहले 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई थी, और जुलाई 1889 में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की ब्रिटिश कमेटी की स्थापना हुई थी, जिसके सबसे पहले सक्रिय कार्यकर्तादादा भाई नौरोजी बने थें और वे हीब्रिटिश संसद के पहले भारतीय सदस्य बने थे। नौरोजी के साथ रहकर गाँधी जी ने लंदन में अपने शर्मिलेपन को त्यागा था। हालांकि गाँधी जी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की गतिविधियों में निरंतर भाग नहीं लेते थे लेकिन नौरोजी और डब्ल्यू. सी. बनर्जी द्वारा स्थापित लंदन इंण्डियन सोसायटी (1865) की बैठकों में वे भाग लेते थे। इन बैठकों में सुधारवादी तरीके से भारतीय मामलों पर चर्चा होती थी। 1886 में अब्दुला अल-मामुन सूरावर्दी द्वारा स्थापित अंजुमन-इ-ईस्लाम,जो बाद में पान-ईस्लामिक सोसायटी बनी, की बैठकों में भी गाँधी भाग लेते थें।

इसके अतिरिक्त ब्रिटिश छत्र-छाया में स्थापित दो संगठनों, जो कि भारतीय विद्यार्थियों की सहायता हेतु गठित किये गये थे, जिनमें शामिल थे -1867 में मेरी कारपेंटर द्वारा स्थापित 'द नेशनल इंण्डियन एसोसियशन इन ऐड ऑफ एजूकेशन इन इंण्डिया' जो विशेषकर के छात्रों के लाभों के लिए गठित किया गया था। यह संगठन कई पुस्तकें और मासिक पत्र पत्रिकाऐं भारतीय विद्यार्थियों की सहायता के लिए प्रकाशित करता था। एक अन्य संबंधित संगठन 'द 'नॉर्थब्रूक इंण्डियन सोसायटी' अंग्रेजी घरों में रहने वाले भारतीय विद्यार्थियों के लिए संरक्षण की योजना चलाती थी और पुस्तकालयों का रख-रखाव करती थी। जहाँ कभी-कभी गाँधी जी यात्रा करते थे।

जनवरी 1890 की लंदन यूनिवर्सिटी मैट्रिक परीक्षा में गाँधी जी अनुत्तीर्ण रहे, लेकिन उन्होंने अपनी पढ़ाई जारी रखी। जून की परीक्षा में वे उत्तीर्ण हुए, इसी समय उन्होंने अपनी कानून की पढ़ाई शुरू की और मार्च 1890 में रोमन कानून परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् उन्होंने दिसम्बर 1890 में आयोजित बार की अंतिम पढ़ाई के लिए गंभीर तैयारी शुरू की और वे उत्तीर्ण हुए। जून 1891 तक वे लंदन में ठहर सकते थे चूँकि उनके पास पर्याप्त समय था इसलिए उन्होंने शाकाहारियों और थियोफिस्टों के साथ अपनी गतिविधियों और वार्तालापों को गहन किया।

10.2.3 कानून का अध्ययन

गाँधी अपने पुराने पारिवारिक सलाहकार माउजी देव के तर्कों से उत्तेजित हो इंग्लैण्ड़ जाने का मन बनाया। उनके इंग्लैण्ड़ जाकर कानून की पढ़ाई करने और उसका लाभ लेने का पूरा श्रेय ब्रिटिश कानूनी शिक्षा तंत्र को जाता हैं। ब्रिटेन में वकीलों की दो श्रैणियाँ बटी हुई थी। एक 'सॉलीसीटर्स' और दूसरी 'बेरिस्टर्स'। सॉलीसीटर्स बेरिस्टरों के अधिनस्थ होते है जो निम्न न्यायालयों में उपस्थित होते है और वादी से कानूनी सलाह हेतु सीधा सम्पर्क साधते है और इनका प्रशिक्षण लम्बा और बड़ा श्रम साध्य होता था। वहीं बेरिस्टर्स को यह विशेष अधिकार होता था कि वे उच्च स्तरीय न्यायालयों में ही सुनवाई करें है। वे वादी से कानूनी सलाह हेतु सीधा सम्पर्क नहीं साधते थे। सभी बेरिस्टर्स 'इन्नस ऑफकोर्ट'कहलाने वाले चार प्राचीन लंदन सोसायटीज में से किसी एक के सदस्य होते थे और वही वे अपना प्रशिक्षण प्राप्त करते थे।

'इन्नस ऑफ कोर्ट' चार मध्यकालीन परिसर है जो लंदन की टेम्स नदी के किनारे पर स्थित हैं। इन्हें द टेम्पल के नाम से जाना जाता है। यह दो भागों में विभाजित है - इन्नर टेम्पल और मिडिल टेम्पल। इन्नर टेम्पल ओर मिडिल टेम्पल में बेरिस्टर्स 13वीं सदी से प्रशिक्षण प्राप्त करते आ रहें थे। यहीं कानूनी विश्वविद्यालय माने जाते हैं। इनके मध्य मुख्यतः केवल सामाजिक अंतर होता है और कुछ हद तक आर्थिक। इनमें इन्नर टेम्पल सबसे ज्यादा प्रसिद्धि प्राप्त और विशाल हैं। यह केवल औपचारिक रूप से विश्वविद्यालय के छात्रों के लिए ही खुलता था ओर यहाँ एक आरामदायक लाईब्रेरी हुआ करती थी। ज्यादातर भारतीय और ओपनिवेशी छात्र इसी में प्र्रवेश लेते थे। आरंभ में गाँधी जी ने भी ओर बाद में जवाहरलाल नेहरू ने भी इसी में प्रवेश लिया था। कानूनी बार में इन्नस ऑफकोर्ट के 72 डिनर्स में उपस्थित हो, दो परीक्षाऐ उत्तीर्ण कर तथा 21 वर्ष की उम्र प्राप्त कर के ही प्रवेश पाया

जा सकता था। यहाँ डिनर में उपस्थिति से तात्पर्य यह नही कि खाना खाया ही जाए बल्कि डिनर में एक घंटा उपस्थित हो ओर फीस अदा कर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने मात्र से था, चूँकि गाँधी जी पूर्णतया शाकाहारी थें। वे मांस मदिंरा से परहेज करते थे। परीक्षाऐ लिखित और मौखिक दोनों रूप में होती थी। जिनमें रोमन लॉके चार टर्म की एक परीक्षा होती थी ओर उसके पश्चात् कॉमन लॉ की नौ टर्म की परीक्षा योग्यता के लिए अपेक्षित थी। बहुत से भारतीय विद्यार्थी यहाँ पहुँचते थे ओर इस सुप्रसिद्ध कानूनी पढ़ाई तंत्र का लाभ लेते थे।

कानून की परीक्षाओं के लिए पाठ्यपुस्तकों का खर्चा लगभग 10 पौण्ड का होता था। ज्यादातर विद्यार्थी नोटस और शिक्षकों की सहायता लेते थे। पाठ्यपुस्तकों की पूर्णतया अवहेलना करते थें। गाँधी जी का विश्वास था कि ट्यूशन पढ़ने वाले छात्र चाही गई विषय वस्तु से परे कभी नहीं जाते हैं और परीक्षा के तुरंत बाद वे सब भूल जाते हैं जो उन्होंने सीखा। उन्होंने घोषणा की कि स्वाध्याय के समान कुछ भी नहीं हैं। इसलिए उन्होंने कानून की कुछ पाठ्यपुस्तकों का अध्ययन किया। जिसकी सूची उन्होंने 'गाईड टू स्टूडेन्ट' नाम पुस्तिका में प्रकाशित की। उन्होंने रोमन कानून की परीक्षा के लिए संक्षिप्त सारांशों या नोटस् की बजाय पुस्तकों का अध्ययन किया जिनमें डब्ल्यू.ए. हन्टर की 'इंट्रोडॉक्शन टू द रोमन लॉ' (1885) तथा थामस कॉलेट सेंडर्स (1859) की 'द इंसिट्यूटस ऑफ जस्टिनियन, विद् इंगलिश इंट्रोडॉक्शन,ट्रांसलेशन एवं नोटस् (1859) का अध्ययन किया।

बार की कानूनी अंतिम की परीक्षा 15 से 20 दिसम्बर 1890 में आयोजित हुई। इस दौरान उन्होंने 9 महिनों तक कठोर परिश्रम किया और इंग्लैण्ड़ के कॉमन लॉ का अध्ययन किया। साथ ही लॉ ऑफप्रोपर्टी, क्रिमिनल लॉ ओर इक्विटी की पाठ्यपुस्तकों का भी अध्ययन किया। इन्होंने लॉ ऑफप्रोपर्टी के अध्ययन हेतु जोसुआ विलियमस की पुस्तक 'प्रिंसिपल्स ऑफ द लॉ ऑफरियल प्रोपर्टी', 'इन्टेंडेड एज ए फस्ट बुक फॉर द यूज ऑफ स्टूडेंटस इन कन्वेंसिंग (1887), 'विलियम डगलस एडवर्डस की पुस्तक, ए कम्पेंडियम ऑफ लॉ आफ प्रोपर्टी इन लैण्ड (1888), तथा लुईस ए गुडवे की 'द मार्डन लॉ आफ रियल प्रोपर्टी, विद एन इंट्रोडंकशन फॉर द स्टूडेंटस (1885) तथा 'मोर्डन लॉ आफ पर्सोनल प्रोपर्टी (1887) का अध्ययन किया।

कॉमन लॉ की परीक्षाओं के लिए उन्होंने जॉन इन्द्रमौर की पुस्तक 'प्रिंसिपल्स ऑफकॉमन लॉ', हर्बर्ट ब्रुम की पुस्तक 'कमेंट्रीज ऑन कॉमन लॉ डीजाईंड एस इंट्रोडक्ट्री टू इटस् स्टडी' (1888) का अध्ययन किया तथा इक्विटी की परीक्षा के लिए एडमण्ड एच.टी. स्नेल की पुस्तक 'द प्रिंसिपल्स ऑफ इक्विटी, इंटेंडेड फॉर द यूज ऑफस्टूडेटस एण्ड द प्रोफेशन, (1887) का अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त फ्रेडरिक डी व्हाईट एण्ड ऑवन डी. टू डॉअर की पुस्तक 'लीडिंग कैसेज इन इक्विटी,(1886) का अध्ययन किया।

गाँधी ने 1890 के बंसत, ग्रीष्म व शरद के दौरान इस परीक्षा की तैयारी की यह वह समय था जिसमें उन्होंने जून 1890 में लंदन मैट्रिक परीक्षा के दूसरी बार तैयारी की थी। गर्मी में एक महिना ब्राईटन में व्यतीत किया और बसंत में कमेटी ऑफ द लंदन वेजिटेरियन सोसायटी के सदस्य चुने गये और शरद में मितव्ययता तथा स्वपाक के

निरंतर परीक्षण किए। इन गतिविधियों में इनकी बढ़ती सलंग्नता ने कानूनी अंतिम परीक्षा बार की फाईनल की अच्छी तैयारी में कोई व्यवधान नहीं डाला ओर 109 में से 77 उत्तीर्ण छात्रों में 34वां स्थान प्राप्त किया। यह समाचार उनको 12 जनवरी 1891 को प्राप्त हुआ ओर आगामी 6 महिनें उसके पास शेष बचें जिसमें उन्होंने कई शाकाहारियों ओर थियोफिस्टों के साथ संवाद कायम करने ओर उनके विचारों को समझने का अवसर मिला।

10.2.4 एक शाकाहारी

गाँधी जी ने लंदन यात्रा पर रवाना होने से पूर्व अपनी माता को मांस ओर मदिंरा से परहेज रखने का वचन दिया था। भारतीय धर्मशास्त्रों में विशेषकर के तैतरीय उपनिषद् में शाकाहार की शक्ति को बतलाया गया हैं। जहाज में यात्रा के दौरान अंग्रेज लोगों ने गाँधी जी को बताया कि बिना अंग्रेजी खाने के वे स्वस्थ नहीं रह सकते। लंदन में कोई भी बिना मांस खाऐ नहीं रहता है। गाँधी ने अपनी यात्रा में अपने साथ ले गये फलों ओर मिठाईयों का सेवन किया। उनके साथ सहपाठियों ने कहा कि अनपढ़ माँ के समक्ष ली शपथ का कोई महत्व नहीं होता हैं ओर आपको अंग्रेजी खान-पान का सेवन करना चाहिए, लेकिन गाँधी जी ने अपने वचनों को नहीं तोड़ा। वे लंदन में शाकाहार रेस्टोंरेंटो की खोज में दूर-दूर तक पैदल चलते थे। आखिर में उन्हें इन्नर टेम्पल के समीप एक शाकाहारी रेस्टोरेंट मिला, जिसके बारे में उन्होंने कहाँ कि उसके दृश्य ने मुझे ऐसे आन्नदित किया जैसे एक बच्चा अपनी खोई वस्तु को प्राप्त करने के पश्चात् करता हैं। उन्होंने लंदन में हेनरी साल्ट द्वारा रचित पुस्तक, ए पली फॉर वेजीटेरियनिज्म, का अध्ययन किया जिसने उनको खाने पर खर्च कम करने को प्रेरित किया ओर शाकाहारितावाद के पक्ष में वैज्ञानिक और नैतिक आधार प्रदान किया ओर अब गाँधी जी का पूर्ण रूप से शाकाहारी खान-पान में विश्वास जम चुका था। उन्होंने साल्ट, हार्वर्ड विलियम्स, ऐन्ना किंग्सफोर्ड, डॉ. थोमस आर. एलीनसन तथा दूसरे लोगों के शाकाहार के सम्बंध में लिखे गये विचारों का अध्ययन किया। उन्होंने लंदन के सभी रेस्टोरेंटो के पतो को ढूढ़ने के लिए 'द वेजिटेरियन मेसेंजर'खरीदा। उन्होंने लंदन वेजिटेरियन सोसायटी, जो कि एक युवा संगठन था जो शाकाहारी आंदोलन को बढ़ावा देने के लिए स्थापित की गई थी, उसकी सदस्यता ग्रहण की। जनवरी 1888 में एक साप्ताहिक पत्र 'द वेजिटेरियन' शुरू किया गया। यह पत्र मानवता, शुद्धता, धैर्य, स्वास्थ्य, धन ओर प्रसन्नता को बढ़ावा देने के लिए शुरू किया गया। शीघ्र ही अगले कुछ वर्षो में लंदन वेजिटेरियन सोसायटी का तेजी से फैलाव हुआ। उसने न केवल शाकाहारी ही रेस्टोरेंटों के साहस को बढ़ाया बल्कि भाषणों, बहसो व व्याख्यानों के द्वारा शाकाहारी दर्शन को लंदन के सभी रेस्टोरेंटों में फैलाने का प्रयास किया।

अर्नोल्ड एफ. हिल्स नामक एक धनी उद्योगपति ने वेजिटेरियन सोसायटी को न केवल वित्तीय समर्थन प्रदान किया बल्कि उसको संगठनात्मक नेतृत्व भी प्रदान किया। सोसायटी के द्वारा प्राकाशित द वेजिटेरियन नामक

साप्ताहिक पत्र ने टॉल्स्टॉय, थोरो ओर एडवर्ड कारपेंटर, साल्ट आदि के शाकाहार के सम्बंध में विचारों को प्रचारित-प्रसारित किया।

गाँधी जी 19 सितम्बर 1890 को लंदन वेजिटेरियन सोसायटी की कार्यकारिणी समिति के सदस्य बने ओर उसकी बैठकों में नियमित रूप से उपस्थित होते थे, जब तक की जून 1891 में वें भारत के लिए रवाना हुए। बैठकों में किए गए शाकाहार संबंधी विचारों की बहस से पता लगता हैं कि गाँधी जी ने इंग्लैण्ड़ में शाकाहारी आंदोलन में योगदान दिया। उनका यह योगदान शाकाहारिता पर साहित्य के रूप में लिखे गये एक सिरीज के 6 लेखों के रूप में जो कि भारतीय शाकाहारियों पर लिखे गये थे, के रूप में सामने आया। जिसमें उन्होंने अल्कोहल को मानवता का शत्रु बताया ओर कहाँ कि भारतीय शारीरिक रूप से इसलिए कमजोर नहीं होते है कि वे भोजन में मांस का सेवन नहीं करते, बल्कि इसके पीछे वास्तविक कारण यह था कि बाल विवाह की सबसे खराब प्रथा वहाँ प्रचलित थी ओर भारतीय नैतिक रूप से कमजोर होते हैं।

10.2.5 एक थियोसोफिस्टस्

शाकाहारियों के साथ-साथ ब्रिटिशर्स के एक दूसरे समूह ने भी युवा गाँधी का स्वागत किया और उसे आध्यात्मिक पोषण प्रदान किया। गाँधी की रूचि आरम्भ से ही धर्म में थी वे नियमित रूप से चर्च की प्रार्थना सभाओं में जाते थें, विशेषकर सिटी टेम्पल कांग्रेगेसनल चर्च, लेकिन यह थियोसोफिकल सोसायटी के सदस्यों में से एक था, जो कि उनकी धार्मिक चिंताओं को सबसे ज्यादा स्पर्श करता था।

थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना 1875 में न्यू योर्क में हुई थी। इसकी सह-संस्थापक ओर मुख्य प्रवक्ता हेलना पेट्रोना ब्लोवार्टसकी उस समय लंदन में थी। उस समय गाँधी जी एक विद्यार्थी थे। वे गहन रूप से हिंदूवाद ओर बुद्ध दर्शन के प्रति ऋणी थे। थियोसोफी दर्षन ने उन्हें संस्कृत के क्लासिकस के अध्ययन करने को प्रोत्साहित किया। गाँधी जी पहली बार 1889 में थियोसोफी दर्शन के सम्पर्क में आये। दो अंग्रेज मित्रों की गाँधी ने भगवत् गीता के अध्ययन में सहायता की थी ओर उन्होंने उनको 'ब्रोधर्स' कहकर पुकारा, लेकिन वे बारट्राम ओर आर्चीबोल्ट केटले के रूप में पहचाने जाते थें। वास्तव में वे चाचा ओर भतीजे थे, इस धनी थियासोफिस्टों का निवास स्थान 17,लेंस डाउने रोड़, नोटिंगहिंल पर स्थित था। गाँधी जी उनके सम्पर्क में कैसे आये, यह पता नहीं है लेकिन इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि वे दोनों शाकाहारी होते। उन्होंने सर एडविन अर्नोल्ड द्वारा अनुदित गीता का अध्ययन कर रहे थे। 'दी साँग सेलेसियल' को समझने के लिए एक भारतीय की जरूरत थी जो उनको संस्कृत के मूल भाव को समझा सकें। गाँधी ने इस स्थिति का सामना करने में अपने आपको शर्मिंदा पाया क्योंकि न तो उन्होंने कभी ऐसी दैवीय कविता संस्कृत में पढ़ी थी न ही गुजराती में। इस प्रकार थियोसोफी ने उन्हें अपनी विरासत के अध्ययन करने को प्रेरित किया।

मई 1889 में एनीबीसेन्ट ने थियोसोफी धर्मांतरण की घोषणा की इससे पूर्व वह एक पत्रकार, फेबियन समाजवादी, श्रमिक संगठनकर्ता आदि के रूप में जानी जाती थी। 1891 में चार्ल्स ब्रैडले को दफनाने के समय गाँधी भी उपस्थित हुए। ब्रैडले भारतीय सुधारों ओर स्वशासन के मित्र थे इसलिए एनीबीसेन्ट पहले से ही लंदन में भारतीय समुदाय के द्वारा बहुत सम्मान हासिल किए हुए थी। 1889 में उन्होंने अपने भाषण ष्वाई आइ बीकेम थियोफिस्ट, में कहाँ कि थियोसोफी मुक्त चिंतन के द्वारा असमाधानीय मनोवैज्ञानिक प्रश्नों से निपटने में सक्षम बनाया। उनमें से कई समस्याऐं जिन्हें सूचीबद्ध किया है वे हमारे बौद्धिक शरीर में उत्पन्न होते हैं और अनुभव की समस्या इसी प्रकार अतिंद्रीय दृष्टि की घटना स्वप्नों और सम्मोहन करते हैं। उसने सिद्धी या आध्यात्मिक शक्तियों में गहरी रूची दिखाई, जो हिन्दू परम्परा में पोषित हुई हैं और घोषणा की कि थियोसोफी के विचार शिक्षकों के भाईचारे के द्वारा सिखाये जा सकते हैं, जो इन शक्तियों को असाधारण मात्रा तक विकसित करते हैं। उन्होंने मानव के थियोसोफिल अवधारणा प्रतिपादित की जा मुख्य रूप से हिंदूवाद से ग्रहण की गई थी। उन्होंने समझाया कि मानव निकाय में तीन स्तरीय आध्यात्मिक तत्व विद्यमान होते हैं। उन्होंने पुनर्जन्म, कर्म ओर मानव और जानवरों के अलावा अन्य जीवित वस्तुओं में विश्वास की रक्षा की तथा युवा गाँधी के केन्द्रीय सत्य के प्रति अपनी निष्ठा में अपने विचारों की पुष्टि की।

गाँधी ने ब्लावाटस्की के 'ए की टू थियोसोफी'1889 पर टिप्पणी करते हुए कहाँ कि इसने मुझ में हिंदूवाद की पुस्तकों को पढ़ने की इच्छा को जगाया ओर हिंदूवाद को रूढ़ियों से बचाने ओर उसके पुनुरूथान करने को प्रेरित किया।जहाँ पश्चिमी जगत मूलतः भौतिक कल्याण पर बल देता वही पूर्वी देश आध्यात्मिक आधार उपलब्ध करवाते है जिसका कि आधुनिक विज्ञान में अभाव था ओर इन सब से ऊपर भारत ने आध्यात्मिकता का वैश्विक स्रोत भी बनकर उभरा। गाँधी ब्रिटिश थियोसोफिल सोसायटी के अध्यक्ष ओर उपाध्यक्ष एडवर्ड मेटलैण्ड ओर एन्ना किंग्स फोर्ड से भी मिले जो कि थियोसोफिस्ट और शाकाहारी थें। मेटलैण्ड ने गाँधी को 'द परफैक्ट वे' तथा 'द न्यू गोस्पेल ऑफइन्टरपिटेशन,नामक पुस्तकें भेजी। इन पर गाँधी ने टिप्पणी करते हुए कहाँ कि मुझे दोनों पंसद थी और दोनों हिंदूवाद का समर्थन करती हुई प्रतीत होती थी। गाँधी ने मेटलैण्ड की इन पुस्तकों को साथ लाऐ ओर उन्होंने दक्षिणी अफ्रीकी यात्रा के दौरान भी इन पुस्तकों के बारे में प्रचार प्रसार किया।

10.2.6 लंदन से विदाई

12 जून 1891 को इस नये बेरिस्टर ने 11.45 बजे लीवरपुल स्ट्रीट स्टेशन से ट्रेन पकड़ी कुछ ही क्षणों में अपना शैक्षणिक शहर छौड़ दिया। टेलबुरी डॉग्स के लिए रवाना हुए वहाँ से भारत जानी वाली पी.एण्ड ओ. बोट कम्पनी के जहाज में भारत को रवाना हुए। लोगों के एक छोटे से समूह के बीच गाँधी जी एक सेलीब्रिटी पहले ही बन चुके थें ओर उन्होंने विदाई साक्षात्कार कहा कि, "निष्कर्ष में मैं यह करने को बाध्य हूँ कि मेरे इंग्लैण्ड़ ठहरने के तीन वर्षो के दौरान मैंने कई कार्य बिना किए छोड़ दिये ओर कई कार्य किये जो शायद मैं यहाँ नहीं आता तो नहीं कर

पाता। फिर भी मैं एक बड़ी सांत्वना मेरे दिल को यह देता हूँ कि मैं यहाँ से बिना मांस ओर मदिरा का सेवन किये बिना लौटुंगा और यह भी कि मैं मेरे व्यक्ति अनुभव से यह जानता हूँ कि इंग्लैण्ड़ में बहुत से शाकाहारी रहते हैं।"

इस प्रकार उसने अपनी भावनाओं के प्रति निष्ठा की पुष्टि की। वें अपने सदउद्देश्य के प्रति सच्चे बने रहें ओर यह सब उन्होंने अंग्रेज लोगों के महत्वपूर्ण समूह के साथ सम्बंध बनाते हुए किया।

10.3 गाँधी के लंदन में छात्र जीवन का महत्व

गाँधी ने लंदन में छात्र जीवन के रूप में दो वर्ष ओर आठ माह बिताये। इस दौरान कई कार्यो को सम्पन्न किया और उन्हें ऐसा करते हुए बहुत संतुष्टि भी हुई। वह अपने परिवार की स्थिति सुधारने में सक्षम हुए ओर इससे भी अधिक वें सफलतापूर्वक अपनी औपचारिक शिक्षा कार्यक्रम को पूरा कर चुके थे और व्यवसाय में प्रवेश करने योग्य हो चुके थे। उन्होंने अतिरिक्त शैक्षणिक योग्यताओं के बतौर लंदन यूनिवर्सिटी की मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होंने न केवल अंग्रेजी बोलने ओर लिखने के क्षेत्र में ही अपनी योग्यता को बढ़ाया बल्कि बहुत सी दिशाओं में अपनी क्षमताओं का विकास किया। उन्होंने अंग्रेजी लोगों के तौर-तरीकों को समझा ओर ग्रहण भी किया। उन्होंने अंग्रेजों के घरों में रहते हुऐ एक पारम्परिक समाज के जरूरी रहन-सहन के तरीकों ओर कार्यो को देखा और समझा उनका व्यक्तिगत विकास 18-21 वर्ष की उम्र के मध्य हुआ, जो कि सामान्यतः एक युवा व्यक्ति का होता है। उन्होंने घर से बहार रहते हुए अपने आपको जीवित रखना सीखा व धन का प्रबंधन सीखा। अपनी यात्राऐं करने और रहने तथा भोजन का प्रबंधन भी सीखा, जो कि उनके जीवन में अंत तक उपयोगी व लाभदायक रहा।

उन्होंने लंदन में छात्र जीवन के दौरान अध्ययन कौशल में विशेषज्ञता हासिल की ओर उन्होंने यह भी सीखा की ट्यूशन के बजाय स्वाध्याय ज्यादा महत्वपूर्ण होता है और मूल पाठ्यपुस्तकों का अध्ययन परीक्षा के साथ-साथ विषय के बारे में अच्छी समझ विकसित करने के लिए जरूरी हैं। उन्होंने वहाँ रहते हुए धर्म ओर शाकाहार के मामलों में रूचि दिखाई। उन्होंने एनीबीसेन्ट ओर मेटलेण्ड के थियोसोफिकल विचारों को समझा और अपने हिंदू सार्वजनिक मामलोंको समझा और प्राप्त धार्मिक विरासत को समझते हुए उसके पुनरूत्थान पर बल दिया। लंदन छोड़ते समय वे धार्मिक रूप से काफी अस्त-व्यस्त थें। राजनीतिक रूप से उन पर उदार समाजवाद का प्रभाव दिखाई देता है और उन्होंने विश्वास जताया कि भारतीयों को सरकार में सहभागिता बढ़ानी चाहिए। उन्होंने अंग्रेजी सभ्यता का भारत पर पड़ने वाले प्रभावों के बारे में आशंका जताई लेकिन सार रूप में यह कहना होगा कि उन्होंने ब्रिटेन में बहुत कुछ सीखा। और इसने उनके भावी जीवन को अत्यन्त प्रभावित भी किया।

10.4 सारांश

गाँधी की छात्र रूप में लंदन यात्रा और प्रवास को इस अध्याय में रेंखाकिंत किया गया है जिसमें सर्वप्रथम उनकी लंदन यात्रा के बारे निर्णय के कारणों को बताया गया हैं जिसके पिछे मूल कारण उनकी लंदन जाकर उच्च अध्ययन कर अपने सपनों को साकार कर परिवार की आर्थिक स्थिति को सदृढ़ करने का विचार अंतर्निहित था। यात्रा के दौरान उन्होंने कई सांस्कृतिक, राजनीतिक व आर्थिक अनुभव प्राप्त किए। कानून की पढ़ाई के दौरान वे लंदन जैसे विदेशी शहर में रहते हुए वहाँ के लोगों से सम्पर्क बनाकर उनके रहन-सहन, वेशभूषा, खान-पान, आचार-विचार व नागरिक जीवन से परिचित हुए और वहाँ अपने जीवन के विविधि आयामों को विभिन्न गतिविधियों- धार्मिक, राजनीतिक आदि में शिरकत कर विकसित किया। साथ ही हिन्दू धर्म की विरासत के बारे में जागरूकता हासिल की। थियोसोफिकल गुरूओं के साथ सम्पर्क बढ़ा कर उन्होंने भारतीय लोगों की प्रमुख शाकाहारी विशेषताओं को ब्रिटिश समाज में पाया और इस सम्बंध में उन्होंने साल्ट के विचारों की बड़ी प्रशंसा की। उन्होंने वहाँ रहते हुए कई सार्वजनिक संगठनों की सदस्यता ग्रहण की और कई सार्वजनिक मंचों की बैठकों में भाग लिया। अंत में कानून की पढ़ाई पूरी कर 1891 में भारत लौट आये। उनका इंग्लैण्ड बीता विद्यार्थी जीवन से जो उन्होंने सीखा उसको उन्होंने 'गाईड टू इंग्लैण्ड़' नामक छोटी सी पुस्तिका में उपबन्धित किया ताकि इंग्लैण्ड़ जाने वाले भारतीय विद्यार्थियों को सही मार्गदर्शन मिल सके। यह उनके विद्यार्थी जीवन की एक बहुत बड़ी देन थी।

10.5 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी जी कानून की पढ़ाई हेतु लंदन जाने का निर्णय क्यों लिया था?
2. गाँधी के लंदन के छात्र जीवन का वर्णन कीजिए।
3. गाँधी जी के छात्र जीवन का महत्व स्पष्ट कीजिए।

10.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जेम्स डी. हंट, गाँधी इन लंदन, नटराज बुक्स, भारत, 1993
2. गाँधी एम.के., सत्य के साथ मेरे प्रयोग, नवजीवन अहमदाबाद, 2005
3. गाँधी, एम.के., हिन्द स्वराज, नवजीवन, अहमदाबाद, 2005

इकाई - 11

गाँधी का व्रत सम्बन्धी विचार

इकाई रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 व्रतः अर्थ एवं आवश्यकता

11.3 गाँधी के एकादश व्रत

11.3.1 सत्य

11.3.2 अहिंसा

11.3.3 अस्तेय

11.3.4 अपरिग्रह

11.3.5 ब्रह्मचर्य

11.3.6 अस्वाद

11.3.7 अभय

11.3.8 अस्पृश्यता निवारण

11.3.9 कायिक श्रम

11.3.10 सर्वधर्म समभाव

11.3.11 स्वदेशी

11.4 व्रत की महत्ता

11.5 सारांश

11.6 अभ्यास प्रश्न

11.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.0 उद्देश्य

मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन के विकास के लिए व्रतनिष्ठा जैसा उत्तम अन्य कोई साधन नहीं है। अधिकांश लोग समाजए राष्ट्र और विश्व के उत्कर्ष की बात करते हैं परन्तु प्रायः वे भूल जातें हैं कि व्यक्ति ही किसी भी समाज अथवा राष्ट्र की मूलभूत इकाई होता है और जब तक व्यक्ति का जीवन शुद्ध नहीं होगा समष्टि का हित-साधन कदापि नहीं हो सकता। प्रस्तुत अध्याय में गाँधी जी द्वारा समय-समय पर अपनी प्रार्थनाओं, पत्रों और आश्रमवासियों को दिये गये व्रत सम्बन्धी निर्देशों का प्रस्तुतीकरण किया गया है। इस अध्याय के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेंगे कि :-

- मानव जीवन में व्रत क्यों आवश्यकता है
- किस प्रकार व्रत जीवन को उद्धतता प्रदान करते हैं
- गाँधी जी के एकादश व्रत क्या हैं और उनका अनुशीलन कैसे किया जाए और
- व्रतों का मनुष्य, समाज, राष्ट्र और अन्ततः सम्पूर्ण विश्व पर किस तरह सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा व इनका क्या महत्त्व है।

11.1 प्रस्तावना

व्रतों का सदैव से ही भारतीय सांस्कृतिक परम्परा मे महत्वपूर्ण स्थान रहा है। हिन्दूए जैन और बौद्ध-धर्म ग्रंथों के अनेक पृष्ठों पर सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य आदि व्रतों की महिमा गायी गयी है। प्राचीनकाल में मोक्षमार्गी साधु सन्त या ऋषि-मुनि तक ही इन व्रतों का पालन सुरक्षित था। सामान्य लोगों के लिए इन व्रतों का पालन आवश्यक नहीं माना जाता था। परन्तु हर एक बात का सामाजिक दृष्टि से विचार करने वाले गाँधी जी को साधु सन्त के लिए एक धर्म और सामान्य लोगों के लिए दूसरा धर्म - यह भेद विचित्र लगा। उन्होंने सामान्य जन के लिए भी व्रत पालन को आवश्यक माना। इतना ही नहींए जिनको समाज सेवा करनी हैए उनके लिए व्रत पालन अनिवार्य हैए यह बात प्रथम बार दृढ़तापूर्वक कहकर गाँधी जी ने अपने आश्रमी जीवन में इन पाँच व्रतों को प्रमुख स्थान दिया।

एक सतत् जागरूक सामाजिक नेतृत्वकर्ता की दृष्टि से उन्होंने वर्तमान भारतीय समाज में प्रविष्ट कुछ विकृतियों को देख लिया और उनके निवारण के लिए छः नये व्रतों की आवश्यकता महसूस की। इन छः व्रतों में से अस्वाद तथा अभय का विचार धर्मशास्त्रों में एक या दूसरे स्वरूप में विद्यमान रहा हैए परन्तु शरीरश्रम अछूतोद्धारए सर्वधर्म समभाव तथा स्वदेशी के व्रत बिलकुल नये हैं। उनके नाम लेने मात्र से स्पष्ट होता है कि वे हमारी संस्कृति में प्रविष्ट दोषों के निवारण के लिए ही थे।

गाँधीजी जिस प्रकार समाज की नव-रचना करना चाहते थेए उसमें इन एकादश व्रतों के पालन का प्रमुख स्थान था। आश्रम उसकी प्रयोगशाला थी। उनकी मान्यता थी कि यदि आश्रम के छोटे से समुदाय में ये व्रत मूर्तिमन होंगे तो विशाल जन-समाज भी उन्हें आत्मसात् करेगा। साबरमती में 15 साल तक व्रतों के पालन का एक सामूहिक प्रयोग उन्होंने किया। इस अभिनव प्रयोग के द्वारा उन्होंने बता दिया कि सत्य, अहिंसा आदि व्रत मात्र मोक्षमार्गी साधु-सन्तों के लिए ही नहीं हैं, बल्कि सामान्य जन-समाज भी उसका आचरण कर सकता है। एकान्त गुफा का आश्रय लिये बिना भी संयम बरता जा सकता है। स्त्रियों के साथ सेवा-कार्य करते हुए भी निर्विकार रहा सकता हैं। गृहस्थ रहकर भी ब्रह्मचर्य पालन हो सकता हैं। हरिजन-सवर्ण या ऊँच-नीच के भेद मिटाकर सबके साथ समरस हो सकते हैं। छोटे माने जाने वाले काम यज्ञ-भावना से कर सकते हैं। भिन्न-भिन्न धर्म और विचार-धारा के लोग अपनी-अपनी मान्यताओं का निर्वाह करते हुए कुटुम्ब भाव से साथ रहकर देश-सेवा के कार्य कर सकते हैं। धन होने पर भी धन के ट्रस्टी बनकर गरीबों की सेवा के लिए सादगी से जी सकते हैं और अबला मानी जाने वाली स्त्रियाँ भी निर्भयता की मूर्ति बनकर पुरुषों के साथ कन्धे-से-कन्धा मिलाकर काम कर सकती हैं। इस तरह व्रत पालन से कैसी समाज-परिवर्तनकारी शक्ति खड़ी हुईए इसे गाँधी जी ने अपने जीवन और आश्रम के प्रयोगों द्वारा सिद्ध कर दिया।

11.2 व्रत : अर्थ एवं आवश्यकता

व्रत का सीधा-सादा अर्थ है 'स्व –नियम' अर्थात् स्वयं द्वारा नियमों का पालन करना। हिन्दू, जैन, बौद्ध आदि प्रायः सभी धर्मों में ऐसे यम-नियम बताये गये हैं। हिन्दू-धर्म में अनेक व्रत जाने पहचाने हैं और प्राचीनकाल से हमारा स्त्री-समाज तथा कुछ अंशों में पुरुषवर्ग भी इसका आचरण करता आया है। ऐसे व्रत ज्यादातर आरोग्य तथा धार्मिक दृष्टि से आयोजित होते हैं।

गाँधी जी की माता एक व्रतनिष्ठ महिला थीं और अनेक कठिन व्रतों का पालन करती थी। उनकी व्रतनिष्ठा का बालक मोहन पर गहरा असर पड़ा। गाँधी जी के नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास में उनके द्वारा अलग-अलग समय पर लिये हुए व्रतों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

गाँधी जी को व्रतों का प्रथम अनुभव 19 साल की उम्र में हुआ जब वे पढ़ाई के लिए इंग्लैण्ड जा रहे थे। सामान्यतया ऐसा माना जाता था कि ठण्डे मुल्कों में शराब पीना, मांसाहार करना, आदि अनिवार्य होता है। फिर ऐसे मुल्कों में जाकर युवक बिगड़ जाते हैं, ऐसी भी मान्यता थी। इसलिए शराब नहीं पीना, मांसाहार नहीं करना तथा पर-स्त्री से दूर रहना, इन तीन व्रतों का संकल्प गाँधी जी को उनकी माता ने जैनमुनि श्री बेचरजी स्वामी के पास करवाया था। विलायत में अध्ययन करते समय इन तीन साल की अवधि में इन व्रतो के पालन में बापू को अनेक कठिनाईयों एवं मुसीबतों का सामना करना पड़ा, बावजूद इसके वे अडिग रहे। वहाँ उन्होंने भोजन के भाँति-भाँति के प्रयोग किये। प्रारम्भ में उनकी दृष्टि आरोग्य सम्भालने की थी, परन्तु समय व्यतीत होने पर उससे नैतिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि भी मिली। इसलिए खुराक मन में विकार उत्पन्न न करें, वह सात्त्विक हो, इसका गाँधी जी अच्छी तरह ध्यान रखने लगे। दूसरा महत्त्वपूर्ण परिणाम यह आया कि किशोरवय में उनमें जो तीव्र विषय-वासना उत्पन्न हुई थी, उसे वे अंकुश में रख सके तथा आगे चलकर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का संकल्प कर सके।

दक्षिण अफ्रीका के अपने प्रवास में उन्हें यह अनुभव होने लगा कि सार्वजनिक सेवक का निजी जीवन नहीं होना चाहिए। 1906 में दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह शुरू करने के समय तक उन्होंने अपनी पत्नी कस्तूरबा की सहमति से ब्रह्मचर्य व्रत का संकल्प लिया और आजीवन उसका पूर्णतः पालन किया। 1912 में टालस्टॉय फार्म में उन्होंने दूध का भी त्याग किया। तब से लेकर 1919 के जनवरी माह तक उन्होंने दूध नहीं लिया लेकिन मुम्बई में उनकी तबीयत खराब होने के कारण बकरी का दूध लेना प्रारम्भ किया। ऐसे ही 1915 में उन्होंने चौबीस घण्टे में भोजन में पाँच ही वस्तुएँ लेने व रात्रि भोजन का त्याग करने का व्रत लिया और अन्त तक उसका पालन किया। इस व्रत निष्ठा ने उन्हें एक महानमानव के रूप में प्रतिष्ठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। जिस जीवन में आग्रह नहीं है, वह जीवन ही नहीं है। गाँधी बचपन से ही सत्याग्रही थे। सत्याग्रह शब्द भले 1906 में दक्षिण अफ्रीका में सार्वजनिक रूप से सामने आया, परन्तु उसके पहले से ही बापू का जीवन एक सत्याग्रही का रूप धारण कर चुका था और इस स्थिति तक पहुँचने में उने द्वारा लिये गये भाँति-भाँति के संकल्प तथा व्रतों ने बहुत बड़ा योगदान दिया।

गाँधीजी ने खुद ‘मंगल प्रभात’ नामक व्रतों की पुस्तिका के अन्त में इसी विषय पर एक लेख लिखा है, जिसमें उन्होंने बताया है कि ‘व्रत यानी अडिग निश्चय .... देह जाए या रहे, मुझे तो धर्मपालन करना ही है, ऐसा भव्य निश्चय करने वाले ही ईश्वर की झाँकी का लाभ कभी न कभी प्राप्त कर सकते हैं। व्रत लेना, यह निर्बलता का सूचक नहीं है बल्कि बल का सूचक है। अमुक काम करना उचित हैए तो फिर करना ही चाहिए, उसका नाम व्रत है।’

इस प्रकार व्रत की छोटी-बड़ी परिभाषा देने के बाद गाँधी जी कहते हैं, "ईश्वर खुद निश्चय ही व्रत की सम्पूर्ण मूर्ति है। सूर्य महाव्रतधारी है ...... इस प्रकार व्रत की विशेषता सर्वव्यापक है।" इस प्रकार देखने से मानव जितना व्रतनिष्ठ होगाए उतना ही वह ईश्वर के ज्यादा नजदीक होगा।

आखिर में तो यह शरीर भी ईश्वर की पहचान का साधन है। उसके द्वारा आत्मसाक्षात्कार करना है, तो उसके लिए जीवन को तैयार करना पड़ेगा। व्रत ऐसे जीवन में अत्यन्त सहायक हैंए इसलिए व्रत की आवश्यकता निर्विवाद है और उस दृष्टि से बापू के एकादश व्रतों को समझा जाय तथा जीवन में उतारने का प्रयत्न किया जाय तो यह समस्त मानव समाज हेतु कल्याणकारी सिद्ध होगा।

11.3 गाँधी जी के एकादश व्रत

1915 में जब गाँधी दक्षिण अफ्रीकी प्रवास के उपरान्त भारत लौटे तब उन्होंने अहमदाबाद में 'सत्याग्रह आश्रम' स्थापित किया। इसमें रहने वाले सत्याग्रहियों को उन्होंने एकादश व्रत के पालन का निर्देश दिया। आश्रम के लिये निर्धारित इन एकादश व्रतों का उद्देश्य कोई यांत्रिक फार्मूला निर्धारित करना नहीं था अपितु यह सत्याग्रही व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक विकास में सहायक हैं। इन व्रतों को निम्न प्रकार से व्यक्त किया गया है-

11.3.1 सत्य

सत्य शब्द संस्कृत के 'सत्' से बना है जिसका अर्थ है - अस्तित्व। गाँधी जी ने अपने व्रतों में सत्य को सर्वोच्च स्थान दिया है। उन्होंने कहा कि 'सत्य ही ईश्वर है' । गाँधी का यह दृढ़ मत था कि सत्य का पालन किसी भी परिस्थिति में वांछनीय है। संस्कृत के इस सूक्ति – 'सत्यान्नास्ति परो धर्म', अर्थात् सत्य के सिवा कोई अन्य धर्म नहीं हैए को स्वीकार करते हुए गाँधी जी कहते हैं कि मनुष्य के विचारए वाणी और आचरण में सत्य का होना निहायत जरूरी है। बिना सत्याचरण के व्यक्ति निर्भय नहीं हो सकता। अतः सत्याग्रही को निम्न चार लक्षणों को निश्चय ही धारण करना चाहिए - संयम, स्वैच्छिक गरीबी, निर्भयता तथा सत्य-सेवा।

गाँधी जी ने कहा कि पौराणिक रूप से देखें तो प्रह्लाद इस संसार का प्रथम सत्याग्रही था, जिसने भगवान के नाम को अनेक मुसीबतों को सहन करके भी नहीं छोड़ा और अन्त में सत्य की ही विजय हुई। ऐसे वीर सत्याग्रही दुनिया भर मेंए हरेक समय मेंए हरेक धर्म में हुए हैं। जिनमें सुकरातए ईसा मसीह, हसन-हुसैन आदि अनेक सन्त महात्माओं के नाम लिए जा सकते हैं।

11.3.2 अहिंसा

अहिंसा सदैव से ही भारतीय संस्कृति की मेरूदण्ड रही है। हिन्दू, बौद्ध व जैन सभी धर्मो में इसे आदर्श मूल्य के रूप में स्वीकृति मिली है। सिर्फ मनुष्यों के प्रति ही नहीं वरन् समस्त जीव मात्र के प्रति तथा समग्र सृष्टि के प्रति प्रेम ही उसका स्वरूप है। अर्थात अहिंसा का अर्थ है जीव मात्र के प्रति दया, करूणा तथा समस्त प्रकार के राग-द्वेष का त्याग। इस तरह अहिंसा यानि सबके प्रति निर्बाध प्रेम है।

गाँधी जी ने कहा कि 'सत्यही परमेश्वर है'। ऐसे शुद्ध सत्य की प्राप्ति का एक मात्र साधन, अहिंसा, ही है, जो मानव को अपने गन्तव्य की ओर निरंतर ले जाने में सहायक है। उनका कहना है – "अहिंसा के बिना सत्य का शोध और उसकी प्राप्ति असंभव है। अहिंसा और सत्य एक दूसरे से इस प्रकार गुंथे हुए हैं कि उन्हें पृथक करना प्रायः असम्भव है। वे एक ही सिक्के, बल्कि कहिए कि धातु की चिकनी और बिना छाप वाली चक्रिका के दो पहलू है। गाँधीजी के अहिंसा सम्बन्धी विचारों से निम्न बातें स्पष्ट होती हैं -

■सत्य की प्राप्ति ही जीवन का ध्येय है तथा उसे प्राप्त करने का एकमात्र साधन अहिंसा ही है।

■अपने विरोधी के प्रति भी हमें प्रेम का भाव रखना होगा।

■करूणा से प्रेरित अथवा निःस्वार्थ भाव से की हुई रागद्वेष रहित हिंसा भी अहिंसा के बराबर है।

■अनिवार्य रीति से की गयी हिंसा भी अहिंसा है। जैसे अपने दैनिक जीवनचर्या, कृषि-क्रियाकलापों आदि में व्यक्त हिंसा भी अहिंसा की ही श्रेणी में आती है।

■अहिंसा वीरों का स्वरूप है कायरों का नहीं। गाँधी जी ने अत्याचार के समक्ष दिखाये जाने वाले कायरता को अहिंसा मानने से इंकार किया है।

■अहिंसा खाद्य-अखाद्य से परे है।

■अहिंसा का स्वरूप अत्यन्त व्यापक है। कुविचार, उतावलापन, मिथ्या भाषण, द्वेष, किसी का बुरा चाहना, जो जगत को चाहिए उस पर कब्जा रखना, शोषण, व्यभिचार, व्यक्तियों पर आक्षेप करना तथा स्वाभिमान को हानि पहुँचाने वाले वचन बोलना ये दस प्रकार हिंसा के विविध रूप हैं, इसलिए बापू ने व्रतपालन में अहिंसा को दूसरा ही स्थान दिया है।

आज चारों ओर फैली हुई हिंसा के वातावरण में यह अहिंसा हमारे जीवन में व्रत रूप में प्रविष्ट हो, तो विश्व शान्ति का स्वप्न जरूर साकार हो सकता है।

11.3.3 अस्तेय

अस्तेय का अर्थ है ‘अचैर्य’ अथवा चोरी न करना। मानव जीवन में नैतिक मूल्यों का जो महत्व है, वह अस्तेय के व्रत से ही आता है। अस्तेय का अर्थ सिर्फ चोरी न करना ही नहीं है अपितु बिना कुछ बताये कोई वस्तु न लेना अथवा छीनना, किसी परायी वस्तु को पाने की कामना न करना आदि अस्तेय व्रत के अन्तर्गत आते हैं।

गाँधी जी ने अपनी पुस्तिका ‘मगल प्रभात’में चोरी के छह प्रकार बताये हैं -

1. किसी की वस्तु बिना पूछे लेना,
2. किसी के पास से बिना आवश्यकता के वस्तु ले लेना,
3. रास्ते में पड़ी वस्तु उठा लेना,
4. अपनी जरूरतें बढ़ाते जाना,
5. उपवास के दौरान खाने का चिन्तन करना, तथा
6. किसी का खोजा हुआ विचार अपने नाम से चलाना।

अस्तेय सम्बन्धी अपने विचार अभिव्यक्त करते समय उन्होंने स्पष्ट किया कि प्रकृति उतना ही उत्पन्न करती है जितने की समाज को आवश्यकता है। अतः जो भी व्यक्ति अपनी मूलभूत आवश्यकताओं से अधिक पाने का प्रयास करता है वह चोरी करने का दोषी है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि गाँधी जी ने कितनी सूक्ष्मता से अस्तेय व्रत के बारे में चिन्तन किया है। जो समाज इस व्रत को जिस हद तक अमल में लाएगा निश्चित रूप से वह समाज उतना ही सुखी हो सकेगा।

11.3.4 अपरिग्रह

अपरिग्रह का अर्थ है कि जिस वस्तु की आवश्यकता आज हमें नहीं है, वैसी किसी चीज का संग्रह हमें नहीं करना चाहिए। जीवन-पर्यन्त गाँधी जी ने अपरिग्रह का व्रत धारण किए रखा। दक्षिण अफ्रीका से लौटते हुए गाँधी द्वारा स्वयं को प्राप्त अमूल्य भेटों को स्वयं के पास न रखकर उनका ट्रस्ट बना देना, भारत की गरीबी को देखकर (उड़ीसा में एक अधनंगी महिला को देखकर) उन्होंने सिले-सिलाये वस्त्र का त्याग कर देना तथा आजीवन घुटने तक धोती धारण करना, ये उदाहरण अपरिग्रह व्रत में उनकी आस्था के प्रमाण है।

गाँधी जी का कहना था “परमात्मा परिग्रह नहीं करता है, अपनी जरूरत की चीज वह रोज पैदा कर लेता है।” उन्होंने बार बार यह बात दुहराई कि यदि सब लोग अपनी जरूरतों के अनुसार ही संग्रह करें, तो किसी को कमी न हो और सबको सन्तोष प्राप्त हो।

इस तरह अपरिग्रह का सीधा-सीधा अर्थ है - जीवन की जरूरतें जितनी हो सके, उतनी कम करते जाना। जितनी जरूरतें कम होंगी, मानव उतना ही सुखी होगा। जरूरतें बढ़ती जाए और वे न मिलें, तब हमें दुख होता है। इसलिए मनुष्य जितनी आवश्यकताएँ कम करता जाता है, उतना ही वह सच्चा सुखी होता है। भारतीय संस्कृति का यही लक्षण माना गया है। यही गाँधी के ट्रस्टीशिप का भी आधार है।

अपरिग्रह का अर्थ समझाते हुए गाँधी जी कहते हैं – “जब तक करोड़ों लोगों को पूरे वस्त्र तथा भोजन नहीं मिल जाते हैंए तब तक तुम्हें और मुझे अपने पास जो कुछ भी है, उसे रखने का अधिकार नहीं है। तुम और हम ज्यादा समझते हैंए इसलिए हमें अपनी जरूरतों में जरूरी परिवर्तन करना चाहिए तथा स्वेच्छा से भुखमरी का शिकार भी बनना चाहिए, जिसमें से अपने आप ही अपरिग्रह व्रत पैदा हो जाता है।

आज की दुनिया भुखमरी, बेरोजगारी, गरीबी आदि अनेक गंभीर समस्याओं से आक्रांत है। ऐसे में यदि समाज गाँधी जी द्वारा सुझाये गए अपरिग्रह के व्रत को अमल में लाना शुरू कर दे तो निश्चित रूप से इन समस्याओं का समूल निराकरण हो सकेगा।

11.3.5 ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य का शाब्दिक अर्थ है - ब्रह्म की चर्या अर्थात् ब्रह्म की खोज में लगे रहना। सरल अर्थों में ब्रह्मचर्य का अर्थ है - संयमी जीवन। गाँधी ने इसे ‘सर्वेन्द्रिय संयम’ कहा है। ईश्वर ने मानव को दस इन्द्रियाँ दी हैं - पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा पाँच कर्मेन्द्रियाँ। इन सभी इन्द्रियों का संयम हमारे जीवन-विकास के लिये अत्यावश्यक है। गाँधी जी के तीन बन्दर (बुरा न देखो, बुरा न सुनो और बुरा न बोलो) इसके ज्वलंत उदाहरण हैं, जिन्हें वो हमेशा अपने मेज पर रखते थे तथा प्रेरणा प्राप्त करते थे।

गाँधी जी कहते हैं कि सारे व्रत सत्य से ही उद्भूत हुए हैं। सत्य की आराधना करने वाला किसी अन्य वस्तु की आराधना नहीं कर सकता। ष्हिन्द स्वराज,में गाँधी जी ने सत्याग्रही के लिए ब्रह्मचर्य-पालन को आवश्यक लक्षण बताया है। स्वयं गाँधी जी ने 1906 में कस्तूरबा की सहमति से ब्रह्मचर्य व्रत का संकल्प लिया तथा आजीवन उसका पालन किया।

हमारे धर्मों में कंचन-कामिनी से सतर्क रहने की बात प्राचीन काल से ही की गई है। अनेक मध्यकालीन सन्तों ने भी इस ओर ध्यान आकृष्ट किया है। फिर भी धर्म के नाम पर अनेक दुराचार हुए हैं और होते रहे हैं। जैन और बौद्ध

धर्म में भी ब्रह्मचर्य का महत्व वर्णित है। अपने प्रिय शिष्य आनन्द के बौद्ध भिक्षुणियों के संघ में प्रवेश के प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए बुद्ध ने कहा कि, "यह धर्म पाँच हजार वर्ष चलने वाला होगा तो पाँच सौ वर्ष में खत्म हो जायेगा।" अर्थात् वहाँ भी आचारशुद्धि और ब्रह्मचर्य पर अत्यधिक जोर था।

परन्तु गाँधी अपने जीवन द्वारा यह दर्शाते हैं कि 'ब्रह्मचर्य की कसौटी हिमालय की चोटी पर नहीं, बल्कि लोगों के बीच रह करके होती है।' अर्थात ब्रह्मचर्य का पालन अर्थात् संयमी जीवन पारिवारिक जीवन जीते हुए भी किया जा सकता है।

इक्कीसवीं सदी में दुनिया में अनेक वैज्ञानिक व तकनीकी क्रान्तियाँ सम्भव हुई हैं। अनेक प्रकार की खोजें मानव को और अधिक भोगवादी बनाने में सहायक हुई हैं ऐसे में ब्रह्मचर्य की बात जनसामान्य को भले ही अप्रिय लगे परन्तु बढ़ते हुए जनाधिक्य तथा उससे जनित अनेक समस्याओं का हल तलाशने का 'ब्रह्मचर्य-व्रत' के पालन के अलावा कदाचित कोई प्रभावी विकल्प दुनिया के पास नहीं है।

11.3.6 अस्वाद

देशकाल के अनुरूप गाँधी जी ने पंच महाव्रतों – सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य के उपरान्त जिन छह नये व्रतों का अधिष्ठान किया है उसमें प्रमुख है अस्वाद। ब्रह्मचर्य के पालन में जिस सर्वेन्द्रिय संयम की बात गाँधी जी ने की है उसमें स्वादेन्द्रिय संयम अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हमारे यहाँ प्राचीन समय से ही प्रचलित है कि 'जिसने रस को जीता उसने सब कुछ जीता।'

गाँधी जी ने अस्वाद व्रत को ब्रह्मचर्य के साथ जोड़ा है। उन्होंने अनुभव के आधार पर यह बताया कि जिस सीमा तक स्वादेन्द्रिय पर हमारा नियंत्रण होगा उस सीमा तक ब्रह्मचर्य का पालन सरल होता जायेगा। उनका कहना था कि भोजन केवल शरीर को जीवित रखने के उद्देश्य से ही ग्रहण किया जाना चाहिए इसलिए उसे औषधि समझकर ग्रहण किया जाना चाहिए।

गाँधी जी शरीर को ईश्वर अर्थात् सत्य की खोज का साधन मानते थे। इसलिये उन्होंने इस बात पर बल दिया कि आत्मा के विकास के लिये सादा भोजन आवश्यक है। 1915 में सत्याग्रह आश्रम में आने के बाद उन्होंने रात्रि भोजन का त्याग कर दिया और भोजन में मूल उपयोग में आयी पाँच चीजों से अधिक नहीं लेने का निर्णय किया। अपने भोजन के प्रयोग सम्बन्धी निष्कर्षों के आधार पर वह दावा करते हैं कि व्यक्ति को शायद ही दवा लेने की आवश्यकता पड़ती है।

सामान्यतः यह स्वीकार्य है कि शरीर के सर्वाधिक रोगों की उत्पत्ति पेट सम्बन्धी रोग से ही होती है। ऐसे में यदि अस्वाद व्रत का पालन किया जाय तो निश्चित तौर पर शारीरिक आरोग्य का सुख सहज ही प्राप्त किया जा सकता है।

11.3.7 अभय

अभय से तात्पर्य है 'भय रहित होना'। बिना अभय के सत्य का टिक पाना सम्भव नहीं है। निर्भयता और सत्य एक सिक्के के ही दो पहलू हैं। एक के बिना दूसरे का होना असंभव है। सत्यवादी ही अभय बन सकता है और निर्भय व्यक्ति ही सत्यवादी हो सकता हैए इसलिए अभय को 'सद्गुणों का सेनापति' कहा जाता है।

गाँधी जी की यही मान्यता थी कि यदि मनुष्य किसी भी रूप या आकार में सत्य की प्रतिज्ञा का पालन करना चाहता है तो उसे निर्भीक होना चाहिए। निर्भीकता किसी भी सत्यव्रती का पहला आवश्यक लक्षण है। उनका मत था कि जो व्यक्ति ईश्वर से डरता है उसे किसी अन्य व्यक्ति से डर नहीं लगेगा चाहे वह कितना ही प्रभावशाली क्यों न हो।

भारत की स्वतंत्रता संघर्ष में भी गाँधी जी का सबसे बड़ा योगदान भारतीय जनता को निर्भयता का पाठ पढ़ाना था जिसने भारतीय जनता को अन्तिम समय तक संघर्ष के लिए तैयार किया। गाँधी जी का कहना है कि 'जो सत्य परायण रहना चाहता है, वह न जाति-पाँति से डरे, न सरकार से डरे, न चोर से डरे, न गरीबी से डरे, न रोग से, न मौत से डरे। उनका कहना था कि स्वराज का अर्थ है – "मृत्यु भय का त्याग। निर्भय प्रजा ही स्वराज्य के योग्य होती है।"

यदि समाज आज निर्भयता के इस मंत्र को स्वीकार करने में तत्परता दिखाये तो इस बात में कोई सन्देह नहीं कि हम एक भ्रष्टाचार मुक्त और सुदृढ़ समाज की दिशा में आगे बढ़ सकेंगे।

11.3.8 अस्पृश्यता निवारण

अस्पृश्यता समस्त मानव समाज पर एक कलंक की भाँति ही है, जिसके द्वारा अस्पृश्य जातियों को मानवीय अधिकारों से वंचित कर दिया जाता है। गाँधी जी ने मानव-मानव के बीच किसी प्रकार के भेद को नकारा। उनकी दृढ़ मान्यता था कि 'कोई भी व्यक्ति अछूत नहीं हो सकता क्योंकि सभी में एक ही अग्नि की चिन्गारी विद्यमान है।'किसी को भी अछूत मानना गलत है। स्वच्छता और अस्पृश्यता दो अलग उपकरण हैं। स्वच्छता हरेक के लिए जरूरी है। अगर कोई अस्वच्छ व्यक्ति अस्पृश्य माना जाय तो स्वच्छ कोई भी व्यक्ति स्पर्श योग्य क्यों नहीं माना जाय? उसमें जाति-बिरादरी का भेद हो ही नहीं सकता। हिन्दू धर्म में तो स्पष्ट कहा गया है, 'आत्मवत् सर्वभूतेंषु।' जैसे हम वैसे अन्य। सब में समान आत्मा है। छुआछूत को दूर करने के सम्बन्ध में गाँधीजी ने कहा कि

यह प्रतिज्ञा केवल अछूतों से मित्रता करके ही पूरी नहीं की जा सकती वरन् प्रत्येक जीव से उसी प्रकार प्रेम करना चाहिए जिस प्रकार हम स्वयं से करते हैं। छुआछूत समाप्त करने का अर्थ है समस्त संसार से प्रेम एवं उसकी सेवा करना। गाँधी जी अस्पृश्यता निवारण को अहिंसा का ही एक अंग मानते हैं।

11.3.9 कायिक श्रम

श्रम अथवा परिश्रम की उपयोगिता सदैव से ही स्थापित रही है। ईशोपनिषद् में लिखा है "कुर्वन्नेवेह कर्माणि जीजिविशेत् शतं समाः।' अर्थात् कार्य करते-करते सौ वर्ष जीने की इच्छा करो। गीता भी कहती है, "जो बिना श्रम किए खाता है, वह चोरी का खाता है।" बाइबिल में भी वर्णित है, "तू पसीना बहाकर रोटी प्राप्त कर।" इन सूत्र वाक्यों तथा कायिक श्रम की महत्ता को स्थापित करने के उद्देश्य से गाँधी जी ने अपने एकादश व्रत में इसको शामिल किया।

जॉन रस्किन की पुस्तक 'अनटू दिस लास्ट' (Unto this Last) से प्रेरित हो गाँधी ने जिस सर्वोदय सिद्धान्त का प्रतिपादन किया उसमें भी वह बताते हैं कि, "सादा मजदूरी का किसान का जीवन ही सच्चा जीवन है।" 1915 में स्थापित 'सत्याग्रहाश्रम' में यह नियम था कि आश्रम के सारे कार्य स्वयं आश्रमवासी ही करेंगे। अपनी 'बुनियादी तालीम' सम्बन्धी अवधारणा प्रस्तुत करते हुए भी उन्होंने उद्यम द्वारा शिक्षा की बात कही। चरखा-कातने को उन्होंने यज्ञ-कार्य बताया तथा प्रतिदिन कम-से-कम आधा घण्टा कातने के श्रम को प्रतीक रूप में बताया और स्वयं नियमित रूप से यह यज्ञ कार्य करते थे।

आज समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है समाज में श्रम और श्रमिक की महत्ता को स्थापित करने की। यदि गाँधी जी द्वारा सुझाये गये शरीरश्रम के व्रत को समाज में स्थान मिल जाये तो यह न सिर्फ सामाजिक समता की दिशा में एक अग्रगामी कदम होगा अपितु बेरोजगारी और गरीबी जैसी विकट समस्याओं का भी निराकरण हो सकेगा।

11.3.10 सर्वधर्म समभाव

कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं होता है। अतः उसके द्वारा स्थापित धर्म भी पूर्ण नहीं हो सकते। इसी को स्पष्ट करते हुए गाँधी जी कहते हैं, "हम पूर्ण सत्य को पहचानते नहीं हैं, इसलिए उनका आग्रह करते हैं। इसी से पुरुषार्थ की गुंजाइश है। इसमें अपनी अपूर्णता की स्वीकृति आ गई है। यदि हम अपूर्ण हैं तो हमारे द्वारा कल्पित धर्म भी अपूर्ण है, स्वतंत्र धर्म सम्पूर्ण है। .... सब अपनी-अपनी दृष्टि से, जब तक दृष्टि बनी है, तब तक सच्चे हैं। पर झूठा होना असम्भव नहीं है। इसीलिए हमें सब धर्मो के प्रति समभाव रखना चाहिए और जो कुछ उसमें ग्राह्य है उसे ग्रहण करना चाहिए।"

गाँधी जी बचपन से ही धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे क्योंकि उनकी माता एक धर्मपरायण हिन्दू महिला थी। इंग्लैण्ड में अपने अध्ययन के दौरान उन्होंने लगभग सभी धर्मों के महत्वपूर्ण ग्रंथों जैसे – गीता, उपनिषद्, रामचरितमानस, बाइबल, कुरान, अवेस्ता आदि का अध्ययन किया था। इन ग्रंथों के अध्ययन के उपरान्त गाँधी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सभी धर्मो में अनेक अच्छी बातें शामिल हैं, साथ ही कुछ त्याज्य बातें भी हैं। अतः यदि सभी का सभी धर्मों के प्रति समान आदर भाव हो तो उन सभी अच्छी बातों को अपने व्यवहार में लेकर मानव समाज उत्कर्ष की अवस्था को प्राप्त कर सकता है। इस मंथन के बाद ही उन्होंने सर्वश्रेष्ठ मानव धर्म को अपनाने की बात की जिसकी आधारशिला सर्वधर्म-समभाव ही था। अपने आश्रम में प्रार्थना में उन्होंनें सभी धर्म-ग्रन्थों जैसे गीता, कुरान, बाइबल के उपयोगी तत्वों को शामिल किया।

अनेकों वर्षों से भारतीय समाज की यह विशेषता रही है कि यहाँ विभिन्न धर्मों, जातियों, भाषाओं के लोग निवास करते रहे हैं। यहाँ उर्दू के महान कवि मो. इकबाल की रचना 'सारे जहाँ से अच्छा .... उन पंक्तियों 'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना' का आचरण किया जाता रहा है। वर्तमान में न केवल भारत अपितु दुनिया के अनेक हिस्सों में धार्मिक कट्टरपंथ की समस्या जटिल रूप धारण करती जा रही है। ऐसे में यदि सर्वधर्म समभाव के व्रत का संकल्प समाज के अधिकाधिक लोगों द्वारा धारण किया जाय तो अनेको धार्मिक झगड़ों का अन्त हो सकता है तथा विश्वशान्ति का सपना साकार हो सकता है।

11.3.11 स्वदेशी

गीता में कहा गया है - स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।' अर्थात् धर्म का पालन ही श्रेयस्कर है। स्वदेशी के पीछे भी यही मन्तव्य निहित है। गाँधी जी का मानना था कि 'स्वराज्य' की कुंजी स्वदेशी में ही है। अपने भारत भ्रमण के दौरान गाँधी ने यह महसूस किया कि भारत की अवनति का मुख्य कारण स्वदेशी को भूलकर विदेशी को अपनाना ही है। इसलिये उन्होंने स्वदेशी व्रत को अपने एकादश-व्रत में शामिल किया।

गाँधी जी ने स्वदेशी को केवल आर्थिक क्षेत्र तक ही सीमित नही रखा बल्कि इसे राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्रों तक विस्तृत किया। आर्थिक क्षेत्र में उन्होंने दैनिक जीवन के प्रयोग की वस्तुओं के स्थानीय उत्पादन जैसे - वस्त्र के लिए खादी तथा अन्य ऐसे ही कुटीर उद्योगों को विकसित करने पर बल दिया। उन्होंने इस हेतु वस्तुओं को खरीदते समय प्रत्येक व्यक्ति द्वारा इन बातों पर विचार करने की आवश्यकता बतायी कि 'मेरे द्वारा खर्च किया हुआ पैसा किसके हाथ में जायेगा?' 'इससे अन्तिम लाभ किसको पहुँचेगा?', आदि। ऐसा करने से व्यक्ति स्वदेशी की महत्ता को समझ सकेगा। राजनैतिक क्षेत्र में स्वदेशी का अर्थ स्पष्ट करते हुए वे बताते हैं कि, ग्राम-स्वराज, पंचायती राज, विकेन्द्रीकृत सत्ता ये सब स्वदेशी धर्म के अन्तर्गत ही आते हैं। ग्रामों को स्वावलम्बी, शोषणमुक्त बनाने के लिए यह कदम अत्यन्त आवश्यक है।

सांस्कृतिक क्षेत्र में स्वदेशी की बात करते हुए उनका मानना है कि हमारे आचार-विचार भी देश की संस्कृति, सभ्यता के अनुरूप हों, यह जरूरी है। शैक्षणिक क्षेत्र में स्वदेशी का अर्थ है मातृभाषा और राष्ट्र-भाषा का आग्रह। साथ ही उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि "स्वदेशी में स्वार्थ के लिए स्थान नहीं है। खुद कुटुम्ब के लिएए कुटुम्ब गाँव के लिएए गाँव देश के लिए और देश विश्व-कल्याण के लिए बलिदान दे, यह स्वदेशी भावना है।" इस प्रकार गाँधी के स्वदेशी में परदेशी का तिरस्कार नहीं है, परन्तु जैसे राष्ट्रीयता को समझे बिना अन्तर्राष्ट्रीयता की बाते करना बेईमानी है, वैसे स्वदेशी के आचरण से ही 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना सिद्ध हो सकती है।

11.4 व्रत की महत्ता

गाँधी जी जिस नवीन समाज की रचना करना चाहते थे वह वैयक्तिक एवं समष्टिक दृष्टि से अवश्यम्भावी परिवर्तन के आधार पर ही सम्भव था। इसलिए गाँधी जी ने व्रतों के पालन को अपरिहार्य बताया। उन्होंने इस हेतु एकादश व्रतों-सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अभय, अस्पृश्यता-निवारण कायिक-श्रम, सर्वधर्म-समभाव तथा स्वदेशी व्रतों को अपनाने की आवश्यकता महसूस की।

व्रत संयम के प्रतीक हैं। ये अनुकरणीय हैं क्योंकि ये व्यक्ति के चारित्रिक विकास में सहायक हैं। प्रत्येक व्रतीं को अहिंसा, अस्तेय अपरिग्रह व ब्रह्मचर्य के साथ ही निडरता, अछूतोद्धार, शरीरश्रम, सर्वधर्म-समन्वय सदृश मूल्यों को आत्मसात् करना आवश्यक होगा। यदि व्यक्ति स्वयं इन अनिवार्य गुणों का आत्मसात् करने में असफल होगा तो अन्य व्यक्तियों पर उसका प्रभाव शून्य होगा और एक नवीन सृजनात्मक समाज की रचना का लक्ष्य अप्राप्य ही रहेगा। गाँधी का मानना था कि जो अपने प्रतिकूल हो वैसा आचरण दूसरों के प्रति नहीं करना चाहिए (आत्मनः प्रतिकूलानि परेशां न समाचरेत) ऐसा करने के लिए व्यक्ति को अपना चरित्र अनुकरणीय बनाना होगा। उसके कथनी और करनी में किसी प्रकार का द्वैत नहीं होना चाहिए।

गाँधी जी के सुझाये गए इन व्रतों एवं मूल्यों का अनुकरण करके एक ओर जहाँ मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने अमेरिका में नागरिक अधिकारों के आंदोलन का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया वहीं दक्षिण अफ्रीका में नेल्सन मंडेला ने रंगभेद के विरूद्ध सफल सत्याग्रह किया और विजय पायी। अनेक ऐसे ही प्रयोग इन व्रतों एवं मूल्यों की महत्ता को सहज ही उद्घाटित करते हैं।

11.5 सारांश

एकादश-व्रत सम्बन्धी संकल्पना द्वारा गाँधी जी नैतिक नियमों की एक आचार संहिता प्रस्तुत करते हैं जो सत्याग्रहियों के चरित्र का निर्माण करती है। गाँधी जी ने स्वयं कहा है "मै महसूस करता हूँ और अपने पूरे सार्वजनिक जीवन के दौरान मैंने महसूस किया है कि हमें आवश्यकता है, जिसकी एक राष्ट्र को आवश्यकता

होती है, परन्तु शायद विश्व के सभी राष्ट्रों से अधिक हमें अभी तुरंत जिस चीज की आवश्यकता है वह कुछ और नहीं, चरित्र निर्माण है और इससे कम कुछ भी नहीं।"

इस तरह व्रत पर महात्मा गाँधी के विचार समग्र मानव जाति के मार्गदर्शक सिद्धान्त साबित होते हैं। उनको आचरण में लाकर निश्चित रूप से न केवल एक आदर्श समाज व्यवस्था का निर्माण हो सकता है अपितु विश्व-शान्ति और विश्व बन्धुत्व की अवधारणा भी साकार हो सकती है। यह सकल मानवता को गाँधी जी की अनुपम देन है।

11.5 अभ्यास प्रश्न

1. व्रत से क्या तात्पर्य है, स्पष्ट करें।
2. किस प्रकार व्रत व्यक्ति और समाज के उन्नयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं? चर्चा करें।
3. गाँधी जी के एकादश व्रत सम्बन्धी संकल्पना को समझाइये।
4. व्रत की महत्ता पर एक संक्षिप्त निबंध लिखें।

11.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गाँधी, एम. के., मेरे सपनों का भारत, राजपाल एण्ड सन्स, नई दिल्ली।
2. प्रभु, आर.के. तथा राव, यू.आर. (संपादन) महात्मा गाँधी के विचार,नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
3. किशोर लाल मशरूवाला,गाँधी-विचार-दोहन, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली।
4. शर्मा, बी.एम., गाँधी दर्शन के विविध आयाम, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
5. शाह, दशरथ लाल, गाँधी जी के एकादश व्रत, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।

इकाई - 12

वॉयकोम सत्याग्रह

इकाई रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 वॉयकोम सत्याग्रह की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं कारण

12.3 एजवाओं द्वारा प्रतिरोध

12.4 वॉयकोम सत्याग्रह और महात्मा गाँधी

12.5 वॉयकोम सत्याग्रह और पेरियार

12.6 वॉयकोम सत्याग्रह और श्री नारायण गुरू

12.7 अंतिम कार्यवाही और समझौता

12.8 वॉयकोम सत्याग्रह का महत्व

12.9 सारांश

12.10 अभ्यास प्रश्न

12.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

12.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों को वॉयकोम सत्याग्रह के बारे में यह बताना है कि:-

- वॉयकोम सत्याग्रह की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या थी।
- किन कारणों को लेकर यह सत्याग्रह हुआ।

- ऐजवाओं का इस सत्याग्रह में क्या योगदान रहा।
- वॉयकोम सत्याग्रह में गाँधी, पेरियार व श्री नारायण गुरू की क्या भूमिका रही और
- सत्याग्रह के परिणामस्वरूप क्या अंतिम कार्यवाही हुई और उसके क्या परिणाम निकले

12.1 प्रस्तावना

वॉयकोम सत्याग्रह केरल में रूढिवादिता के विरुद्ध पहला व्यवस्थित रूप से संगठित प्रतिरोध था जो पद्दलित वर्गो को अधिकार दिलाने के लिये किया गया था। इतिहास में पहली बार निम्न जाति के लोगों ने भारतीय राजनीति में मुखर रूप से अपने नागरिक अधिकारों की मांग की। केरल में बीसवीं सदी में हुआ।

वॉयकोम सत्याग्रह के समान पूरे भारत का ध्यानाकर्षण करने वाला महत्वपूर्ण जनप्रतिरोध नहीं हुआ। वाइकोम (मध्य ट्रावनकोर) में एक छोटा-सा मंदिर था। यह कस्बा अपने शिव मंदिर के लिए प्रसिद्ध है, जो कि बीसवीं सदी के जातिवाद व रूढिवादिता का गढ था। उन दिनों यहाँ यह प्रथा प्रचलित थी कि अवर्णां को मंदिर में प्रवेश की अनुमति नहीं थी न ही वे मंदिर के चारों ओर की सार्वजनिक सडकों पर चल सकते थे। सूचनापट्टों के द्वारा विभिन्न जगहों पर अवर्णो को उनकी निम्न सामाजिक स्थिति के बारे में याद दिलाया जाता था और इससे भी ज्यादा असहनीय स्थिति यह थी कि उन सडकों पर एक ईसाई या मुसलमान तो स्वतन्त्र रूप से आ जा सकते थे लेकिन अवर्ण नहीं। उन्हें दो-तीन मील लम्बे घुमावदार मार्ग से चल कर गुजरना होता था। जब अय्यान कली नामक एक दलित नेता जो कि पुलाया जाति का सदस्य था। इस सड़क पर बेल गाडी से यात्रा कर रहा था तब सवर्णों ने उसे बैलगाडी से उतर कर घुमावदार रास्ते से जाने को कहा और बैलगाडी को उसी रास्ते से उसके बिना ही जाने को कहा।

12.2 वॉयकोम सत्याग्रह की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं कारण

ट्रावनकोर की सरकार ने 1865 में एक अधिसूचना जारी कर राज्य की सभी सार्वजनिक सडकों को सभी जातियों के लिए खोल दी, लेकिन पुनः 1884 में एक नई अधिसूचना जारी कर पुराने आदेश को रद्द कर दिया और कहा कि इसकी अवज्ञा करने वाले को कठोरतम दण्ड दिया जायेगा। जब मामला उच्च न्यायालय के समक्ष समीक्षार्थ प्रस्तुत हुआ, तो न्यायालय ने राजमार्गो और ग्राम सडक के बीच अन्तर करते हुए कहा कि सरकारी अधिसूचना में जिन्हें सार्वजनिक सडकें अधिसूचित है, उनका सम्बन्ध राजमार्गो से है न कि ग्राम सडकों से। और चूँकि वॉयकोम मंदिर के चारों ग्राम सडकें है न कि राजमार्ग इसलिए उक्त अधिसूचना का आदेश यहाँ लागू नहीं होता है। लेकिन सरकार ने संवर्णो के हित में काम करते हुए अवर्णो के लिए इन सडकों को प्रतिबन्धित ही रखा।

वॉयकोम में लगभग 200 वर्ष पहले अवर्णो द्वारा मंदिर में प्रवेश का प्रयास किया गया था जिसका बहुत बुरा अंत हुआ। बालारमा वर्मा नामक ट्रावनकोर के राजा थे और कुन्चकुट्टी पिल्लई नामक व्यक्ति उसका दिवान था। वॉयकोम और उसके चारों और के लगभग 200 एजवा युवा लोगों ने मंदिर में प्रवेश कर पूजा करने का निर्णय लिया और इसके लिए एक दिन नियत किया गया। इस बात की खबर मंदिर प्रशासन ने राजा तक पहुँचाई। राजा ने प्रशासन से इसके विरूद्ध कठोर कार्यवाही करने का निर्देश दिया। जब एजवा लोगो ने जुलूस के रूप में संगठित हो मंदिर की पूर्वी सडक की ओर से मंदिर में प्रवेश करने का प्रयास किया तब बडी मात्रा में सशस्त्र लोगों ने उन निहत्थों पर अंधा-धुंध गोलियां चलाई। मृतकों को मंदिर के पूर्वोत्तर की ओर स्थित तालाब में गाढ दिया गया। इस तालाब को 'दलावाकुलाम' से जाना जाता है क्योंकि इस सशस्त्र कार्यवाही में दिवान (दालावा) का हाथ था। एक अन्य घटना ने इस कार्यवाही को और तेज कर दिया जब श्री नारायण गुरू को भी मंदिर के चारों और की सडक से गुजरने से रोक दिया गया। श्री नारायण गुरू महान् मनीषी थें, जो महाकवि कुमारन आसन के गुरू थें। इनके साथ काफी बडी संख्या में लोग एकजुट हो वॉयकोम सत्याग्रह को बढावा दिया।

12. 3 एजवाओं द्वारा प्रतिरोध

एजवा प्रतिनिधियों (कोचु कुन्जन चाकर, कुन्जु पन्निकर, कुमारन् असन) ने ट्रावनकोर विधायिका में अवर्णो द्वारा मंदिर के चारों ओर की सार्वजनिक सडकों के प्रयोग का मामला पहली बार 1905 में उठा दिया। लेकिन सत्तापक्ष ने अपने अखडपन्न के कारण इस मामले पर चर्चा से इंकार कर दिया और धार्मिक मामला बता कर टाल दिया। 1920-21 में कुमारन असनने भी इस प्रश्न को उठाया और तब यह निर्णय लिया गया कि कुछ क्षेत्रों की सडकों की आवाजाही खोल दी जाए। टी.के. माधवन जो कि एस.एन.डी.पी. (श्री नारायण धर्म पालन योगम) के संगठन सचिव थें, जब ट्रावनकोर विधायिका के सदस्य बने तब उन्हें यह महसूस हुआ कि यह अमानवीय समझौता है। माधवन चाहते थें कि मंदिर प्रवेश की खुली छूट हो लेकिन उन्हें इस तरह का संकल्प लाने से रोक दिया गया। माधवन तत्कालीन दीवान से उनके निवास पर जा कर मिले ओर उक्त निर्णय पर पुनर्विचार का निवेदन किया, लेकिन दीवान ने मना कर दिया। माधवन ने महाराजा से मिलने की अनुमति चाही, लेकिन मना कर दिया गया। माधवन ने दीवान के समक्ष खीझते हुए कहा कि, "हमें विधायिका के समक्ष हमारी समस्याओं को उठाने के अधिकार से रोका जा रहा है और हमें महाराजा से मिलने की अनुमति नहीं दी जा रही है, तब हम हमारी समस्याओं का समाधान कैसे कर पायेंगे? क्या हमें ट्रावनकोर छोड देना चाहिए?" प्रतिउत्तर में दीवान ने कहा कि, "आप समस्या के समाधान के लिए ट्रावनकोर छोड सकते है।"

माधवन का मुख्य उद्देश्य बिना शर्त मंदिर प्रवेश की अनुमति प्राप्त करना था। इसके लिए पहला जरूरी कदम उनकी नजर में मंदिर की चारों ओर की सार्वजनिक सडकों का प्रयोग करना था। श्री नारायण धर्म पालन योगम की गतिविधि के रूप में वे मंदिर के चारों ओर की सडकों के प्रयोग की मनाही के विरूद्ध वॉयकोम में प्रतिरोध

करने का विचार रखते थें। पन्निकर ने लिखा है कि श्री नारायण गुरू के नेतृत्व में ऐजवा लोगों ने अपने को एकजुट किया और उथान किया तथा केरल के सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक वातावरण में दुर्जेय शक्ति बनकर उभरे, हालाँकि एस.एन.डी.पी. सभी पद्दलित लोगों की आवाज बनकर उभरा। पन्निकर ने इसे जाति के नाम अत्याचारों के विरूद्ध प्रतिकात्मक लडाई बनाने और सम्पूर्ण विश्व का ध्यानाकर्षण करने के लिऐ राष्ट्रीय एवं सार्वदेशिक रूप देने का सुझाव दिया। यह सब करने के लिऐ इसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की गतिविधि बनाने तथा महात्मा गाँधी का सहयोग पाने की आवश्यकता थी।

12.4 वॉयकोम सत्याग्रह और महात्मा गाँधी

23 सितम्बर 1921 को टी.के.मधवन तिरूनेलवी में महात्मा गाँधी से मिले और एजवाओं की एस.एन.डी.पी. के द्वारा दशाओं में सुधार व उपलब्धियों की प्रशंसा की। क्योंकि उन्होंने स्कूलों में प्रवेश पाने का अधिकार प्राप्त कर लिया था। गाँधी जी सहमत थे कि उनका मंदिर प्रवेश समय आ चुका था। गाँधी ने इसे राज्य कांग्रेस समिति में उठाने के लिए लिखा। माधवन ने सरदार पनिकर और के.पी. केशव मेनन के साथ काकिनाडा ए.आई.पी.सी. बैठक, 1923 में भाग लिया यहा माधवन ने बैठक में अस्पृश्यता उन्मूलन की आवश्यकता पर बल दिया। काँग्रस ने अस्पृश्यता निवारण को अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में शामिल करने की सहमति प्रदान की और वॉयकोम आन्दोलन को पूरा समर्थन देने को कहा तथा केरल प्रांतीय कांग्रेस कमेठी (के.पी.सी.सी.) को इसके लिए प्राधिकृत किया गया। 24 जनवरी 1924 की एर्णाकुलम के.पी.सी.सी. की बैठक में अस्पृश्यता उन्मूलन समिति का गठन किया गया, जिसमें के. केलप्पन को समन्वयक तथा टी.के. माधवन, कुरूर नीलकांत नम्बूदरी, टी.आर.कृष्णस्वामी अय्यर एवं के.वेलायुद्ध मेनन को सदस्य बनाया गया। साथ ही एक प्रचार समिति का भी गठन किया गया।

28 फरवरी 1924 को के.पी.सी.सी., अस्पृश्यता उन्मूलन समिति एवं प्रचार समिति वॉयकोम पहुँच कर एक बडी बैठक का आयोजन किया जिसमें टी.के. माधवन ने अस्पृश्यता उन्मूलन समिति से मंदिर के चारों और सूचना-पट्टों पर लगी बाध्यकारी सूचना को हटाने का निवेदन किया। अगले दिन पुलाया महासभा बैठक में सड़कों पर समिति ने अवर्णों का जुलूस निकाने का प्रस्ताव पारित किया।

यह समाचार चारों ओर तेजी फैल गया। जिसके प्रति लोगों की मिली जुली प्रतिक्रिया हुई। सवर्णो ने बैठक में भाषण तो धैर्यपूर्वक सुने लेकिन जुलूस निकालने के प्रस्ताव को नहीं पचा सकी। वें स्थानीय मजिस्ट्रेट, पुलिस इंस्पेक्टर और तहसीलदार के साथ कांग्रेस नेताओं से मिल ओर जुलूस को स्थगन करने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने वादा किया कि यदि उन्होंने समय दिया तो साम्प्रदायिक तनाव को रोकेंगे और जुलूस को सफल बनोंगे। कांग्रेस ने परिस्थितियों को समझा और सही रूप से योजना तैयार करने में समय का सदुपयोग किया। और 30 मार्च 1924 को जुलूस निकालना तय हुआ। इसी दौरान स्थानीय मजिस्ट्रेट ने साम्प्रदायिक तनाव को लेकर चिंता

जताते हुऐ जुलूस को रोकने का आदेश दिया। तब अस्पृश्यता उन्मूलन समिति ने अपनी रणनीति बदली और उसने प्रतिदिन सभी जातियों से तीन स्वंयसेवक चुनकर भेजने का निर्णय लिया बजाय जुलूस निकालने के। मंदिर से कुछ दूरी पर एक सत्याग्रह आश्रम बनाया गया। आश्रम स्वंयसेवकों से भरा हुआ था, जो देश के सभी भागों से आये थें। सत्याग्रह का स्थल पूर्वी सडक को बनाया जहाँ निषेधाज्ञा बोर्ड लगा हुआ था कि 'ऐजवा और अन्य निम्न जातियों का यहाँ से गुजरना निषेध है।' लगभग 100 पुलिसकर्मी किसी भी घटना से निपटने के लिए लाठियाँ लेकर खडे थे और वे सत्याग्रह आरम्भ स्थल की पल-पल की खबर ले रहे थे।

30 मार्च 1924 को सुबह कार्यवाही का अह्वान हुआ। चुनिंदा स्वयंसेवकों का पहला दल जिसमें कुञ्जप्पेय (पुलयान), बहुलेयान (ऐजवा) और बी.जी.पन्निकर (नायर) सत्याग्रही शामिल थे। आश्रम छोडने से पहले उन्हें यह हिदायत दी गई थी कि वे शान्ति-पूर्वक बिना प्रतिरोध के यात्रा करें। सत्याग्रहियों ने खादी, गाँधी टोपी और माला पहन रखी थी और वे कांग्रेस के झण्डे के साथ पदयात्रा कर रहे थे और शेष सभी स्वंयसेवक उनका अनुसरण करते हुए 'सत्याग्रह की जय, महात्मा गाँधी की जय' के नारे लगाते हुए चल रहे थे। वे सभी सूचना-पट्ट से 50 मीटर दूर रूक गये और तीन स्थलों का चयन किया जहाँ निषेधाज्ञा बोर्ड लगे हुए थे। पुलिस ने उन्हें रोककर अपनी जाति पूछी और कहा कि निम्न जाति के लोगों को यहाँ से गुजरने की अनुमति नहीं होगी, केवल सवर्णो को ही होगी। पुलिस ने उन्हें रोक दिया, सत्याग्रही धैर्यपूर्वक गिरफ्तार करने तक इंतजार करते रहे। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया। न्यायालय ने बिना सोचे-समझे उन पर जुर्माना लगा कर जेल भेज दिया। उन्होंने जुर्माना भरने से मना कर दिया, तब कोर्ट ने उनकी सजा और बढा दी। उनकी गिरफ्तारी के विरोध में जुलूस निकाले गये और सार्वजनिक बैठके हुई। इन बैठकों मे चारों ओर से लोग एकत्रित हुऐ और उनमें नेताओं के प्रेरणादायी भाषण सुनकर नई चेतना का संचार हुआ।

सत्याग्रहियों ने 5-6 अप्रेल, 1924 को दो दिन के लिए हिन्दू जाति के नेताओं और कांग्रेस के बीच समझौता के लिए सत्याग्रह को स्थगित रखा, लेकिन सभी वार्तायें विफल रही और सत्याग्रह पुनः शुरू हुआ। टी.के.माधवन और केण्पीण्केशव मेनन स्वयंसेवक बने उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। यह संघर्ष 10 अप्रेल तक इसी तरह चलता रहा, सत्याग्रहियों को विवादित स्थल तक पहुँचने से रोकने की कोशिश के क्रम में पुलिस ने सडक पर अवरोधक लगाने की नई तकनीक अपनाई और पुलिस ने सत्याग्रहियों को गिरफ्तार करना छोड दिया तो सत्याग्रहियों उपवास रखना शुरु कर दिया, लेकिन उनका उपवास सत्याग्रह के गाँधीवादी सिद्धांत के विरूद्ध होने के कारण गाँधी जी ने इसकी अनुमति नहीं दी। पुलिस को भी उनको गिरफ्तार नहीं करने की रणनीति को सही नहीं माना, इसलिए उसने विरोध को दबाने के लिए हथियारों का सहारा लेना चाहा। धीरे-धीरे सत्याग्रह ट्रावनकोर के महाराजा श्री मुलाम थिरूनाल के शासन के विरूध हुआ। वह और उसका मंत्री दिवान बहादुर टीण्राघवाह्य उग्र रूढिवादिता के स्तम्भ थें, जो टोटो की पुरानी परम्परा को बनाये रखना चाहते थे। दिवान ने ट्रावनकोर विधायिका में सवर्णो का मजबूत बचाव करते हुए और सत्याग्रह को नकारते हुऐ एक उग्र भाषण दिया।

इसी दौरान गाँधी जी के पास इस प्रतिरोध के स्थगन के लिए हजारों पत्र आये। भारत के सभी समाचार पत्रों में इस सत्याग्रह के बारे में शीर्ष समाचार छपे। विभिन्न राज्यों से सहायतार्थ धन आया। पंजाब के अकालियों ने वॉयकोम में सत्याग्रहियों के लिए मुत भोजन व्यवस्था उपलब्ध करवाई। गैर-हिन्दू जैसे, बेरिस्टर जार्ज जोजफ, भाजेमाथराम् मथूनी एवं अब्दुल रहमान (यंग इण्डिया के मुख्य सम्पादक) ने गाँधी जी के समक्ष सत्याग्रह करने का प्रस्ताव रखा। लेकिन गाँधी जी ने इनके किसी भी प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। गाँधी जी ने 24 अप्रेल 1924 को यंग इण्डिया में लिखा कि, "इस रूप में हिन्दूओं के लिए बहार से मदद स्वीकारना उचित नहीं है, क्योंकि ऐसी स्वीकारोक्ति सुधार के प्रति स्थानीय हिन्दूओं के लिए धोखा होगा, यदि सत्याग्रही स्थानीय हिन्दुओं के प्रति सहानुभूति रखते है तो उन्हें स्थानीय स्तर से ही धन प्राप्त करना चाहिए जितना उन्हें चाहिए।"

6 अप्रेल 1924 को गाँधी जी ने जार्ज जोजफ को लिखा कि, "इस रूप में वॉयकोम के लिए मैं सोचता हूँ कि हिन्दूओं को इस काम के लिए तैयार करना चाहिए, जो अपने आप शुद्ध हृदय रखते है। यह काम तुम तुम्हारे पैन से कर सकते हों। लेकिन आन्दोलन को संगठित करके नहीं और न ही सत्याग्रह के प्रस्ताव के द्वारा। यदि तुम नागपुर के कांग्रेस अधिवेशन में अस्पृश्यता के श्राप को हटाने के लिए हिन्दू सदस्यों से आह्वान करों। अस्पृश्यता हिन्दूओं के लिए पाप है और वे भी इससे पिडित है। वे अपने शोषित भाई और बहिनों के प्रति ऋणी होंगे। यह उनकी शर्मिंदगी है और उनका गौरव बनेगा जब वे इस काले पाप से स्वयं को धो लेंगे। एक शुद्ध हिन्दू की गुप्त प्रेम पीडा हजारों हिन्दूओं के हृदयों को शुद्ध करने के लिए पर्याप्त है लेकिन अस्पृश्यों की और से हजारों गैर-हिन्दूओं की पीडा हिन्दूओं को अपरिवर्तनीय रखेगी। सुधार अन्दर से ही आते है और वे स्थाई भी होते है।" जार्ज जोजफ को यह पत्र मिलता, उससे पूर्व उन्होंने सत्याग्रह किया और उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। अकालियों ने भी अपने को गाँधी के शब्दों से अलग कर लिया। वॉयकोम केम्प में 200 स्वयंसेवक मौजूद थे। कुछ समय पश्चात् केम्प का संचालन कठिन हो गया। यह बात जब बेलग्राम कांग्रेस में गाँधी के ध्यान में लाई गई तब कांग्रेस ने अपनी और से 1000 रूपये प्रतिमाह अपने कोष से देने की अनुशंसा प्रदान की। विनोबा भावे और स्वामी श्रृद्धानन्द जैसे महत्वपूर्ण लोगों ने भी इस आन्दोलन स्थल की यात्रा की और लोगों को नैतिक संबल प्रदान किया।

12.5 वॉयकोम सत्याग्रह और पेरियार

14 अप्रेल को ई.वी.रामास्वामी नायकर (पेरियार) अपनी पत्नि श्रीमति नक्कामई पेरियार और अपने अनुयाईयों के साथ वॉयकोम आये और सत्याग्रह का प्रस्ताव रखा। सत्याग्रह के मुखिया के रूप में पेरियार दो बार जेल गये। गाँधी ने वॉयकोम के मामले से अपने को अलग रखा और अन्य धार्मिक समूहों की बढती भूमिका पर चिंता जताई । सिक्ख समुदाय ने खर्चो को पूरा करने का प्रस्ताव रखा, बर्मा, सिंगापुर, मलेशिया से गैर-ब्राह्मण आप्रवासियों ने और मुस्लिमों व ईसाइयों ने भी सहायतार्थ धन भेजा। गाँधी ने इन परिस्थितियों में सभी चीजों को

हिन्दू मामले के तहत रखना चाहते थे, हालांकि अंत में उन्होंने इससे समझौता कर लिया। मंदिर क्षेत्र की गलियों को हरिजनों या अस्पृश्यों के लिए खोल दिया और 1936 में मंदिर प्रवेश की अनुमति प्रदान कर दी गई।

वॉयकोम का कांग्रेस पार्टी के प्रमुखों द्वारा संगठित सत्याग्रह के स्थान के रूप में चुनाव किया गया। पेरियार को मदुरई जिले की यात्रा करने के दौरान सत्याग्रह में शामिल होने की इच्छा बताने का पत्र मिला और वें तत्काल वॉयकोम को रवाना हुए। जहाँ उन्होंने सार्वजनिक बैठकों को सम्बोधित किया, जबकि यह निषेधित था इसलिए उन्हें एक महिनें की जेल की सजा हुई। गाँधी जी धीरे-धीरे परेशानी में फंस गये। क्योंकि सत्याग्रह ने साम्प्रदायिक दंगों का रूप ले लिया और परिणामतः मुस्लिम धर्म परिवर्तन को बढावा मिला। पेरियार को जेल से मुक्त करते वक्त वॉयकोम छोडने का निर्देश दिया गया, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया और पुनः उनको छः माह की जेल हुई। इसी दौरान उनकी पत्नि नक्कामई पेरियार ने संगठित महिला आन्दोलन चलाया। उन्होंने श्रीमति जोजफ, श्रीमति टी.के.माधवन और श्रीमति गोविंदन चानर के साथ मिलकर 'महिला समिति' का गठन किया। इस समिति ने घूम-घूम कर ग्रामीण महिलाओं को सत्याग्रह का अर्थ और उद्देश्य बताया और उन्हें इसमें शामिल होने के लिए प्रेरित किया तथा स्वयंसेवकों के लिए आवश्यक सामग्री जुटाई। 20 मई 1924 को महिलाओं ने सत्याग्रह करने का प्रस्ताव रखा। श्रीमती टी.के. माधवन के साथ श्रीमती पेरियार को गिरफ्तार कर लिया, लेकिन बाद में रिहा कर दिया। इनके नेतृत्व ने महिलाओं में साहस और एकजुटता का भाव भर दिया।

जब राजा की अप्रत्याशित मृत्यु हुई तो पेरियार का त्रिवेंद्रम जेल से रिहा कर दिया गया क्यों कि उससे अतिरिक्त परेशानी का भय था। बाद में पेरियार को पुनः सार्वजनिक कानून तोडनेके कारण जेल भेज दिया गया। इस बार उन्हें मद्रास जेल भेजा गया। इसी दौरान गाँधी और महारानी के बीच में मंदिर क्षेत्र की गलियां खोलने का समझौता हुआ। पेरियार की अनुपस्थिति में गाँधी जी ज्यादा सफल नहीं हो सकें। पेरियार ने यह मान लिया कि समझौते से वॉयकोम सत्याग्रह का अंत हो गया। 1925 में मद्रास प्रेसीडेंसी कांग्रेस ने पेरियार को वॉयकोम सत्याग्रह में योगदान के लिए प्रंशसा प्रस्ताव पारित किया और बाद में उसे वॉयकोम हिरो की संज्ञा भी दी गई।

12.6 वॉयकोम सत्याग्रह और श्री नारायण गुरू

श्री नारायण गुरू ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की गतिविधियों में कभी भी किसी भी प्रकार की में रूचि नहीं दिखाई थी, लेकिन उन्होंने अपने आपको वॉयकोम सत्याग्रह के साथ जोडा क्योंकि यह राजनीतिक स्वतन्त्रता के लिए प्रतिरोध नहीं था बल्कि हिंदू समाज को उसके कलंको से मुक्त करने का आन्दोलन था और यह सब गुरू ने अपनी कार्यवाहियों और संदेशों के द्वारा किया।

लेकिन गाँधी और गुरू के बीच सत्याग्रह की कार्यप्रणाली को लेकर कुछ गलतफहमियां उत्पन्न हो गई, क्योंकि गुरू का कहना था कि वॉयकोम सत्याग्रहियों को सड़क पर लगे अवरोधकों को हटाकर मंदिर में प्रवेश करना

चाहिए। इसे गाँधी जी खुली हिंसा मानते थे, क्योंकि अवरोधकों को फाँद कर पार करना सत्याग्रह के नियमों का उल्लघंन करना था, लेकिन वास्तव में गाँधी और गुरू के बीच में कोई वास्तविक विरोध नहीं था, क्योंकि गुरू भी इन कथनों पर बल देते थे कि 'सत्याग्रहियों में पीड़ा सहनें और त्याग की ईच्छा होनी चाहिए, प्रहारों को सहन करे बिना आक्रांताओं पर प्रहार करें, सरकार को सत्याग्रही अपने इरादों के बारे में सूचित करें और किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं होनी चाहिए।' गाँधी जी गुरू को 'थय्याओं' का अध्यात्मिक नेता मानते थे जिसने वॉयकोम में सत्याग्रह की प्रचलित पद्धति को अस्वीकार कर दिया। गुरू ने गाँधी के यंग इण्डिया में लिखे लेखों के विरूद्ध कोई प्रतिक्रियात्मक कथन नहीं किया क्योंकि तर्क करना और जीतना गुरू की रणनीति में नहीं था, उन्होंने अपने विचारों को कार्यवाहियों के द्वारा प्रकट किया।

गुरू ने वॉयकोम के निकट अपने वैल्लूर मठ को सत्याग्रहियों के प्रयोग हेतु सौंप दिया और वहाँ उन्होंने मुख्यालय बनाया। उन्होंने अपनी ओर से एक हजार रूपये का योगदान भी दिया तथा शिवगिरी में विशेष कर संग्रह बक्सा स्थापित किया। उन्होंने अपने दो प्रिय शिष्यों, स्वामी सत्यव्रत और कोटूकोइकला, को सत्याग्रह के काम के लिए नियुक्त किया। 27 सितम्बर 1924 को जब सत्याग्रह चरम पर था, गुरू ने इस स्थल की यात्रा की। वे नाव के द्वारा वॉयकोम पहुँचे जहाँ हजारों लोगों ने उत्सुकता से उनका स्वागत किया। अगले दिन उन्होंने एक सार्वजनिक बैठक की अध्यक्षता की और वहाँ गाँधी के अच्छे स्वास्थ्य और कल्याण की कामना की। वहाँ गुरू ने कहा कि मैं आंदोलन में भाग लेने नहीं आया, केवल लोगों के लिए प्रार्थना करने के लिए आया हूँ।

गुरू आश्रम में दो दिन के लिए ठहरे, वे चारों और घूमे, सभी व्यवस्थाओं को देखा और फिर सब के साथ बैठ कर खाना खाया। स्वयं सेवक उनको अपना करीबी सलाहकार समझते थे और उनकी उपस्थिति एवं प्रशंसा ने स्वंयसेवकों पुनर्जिवित किया। मार्च 1925 को जब गाँधी जी सत्याग्रह स्थल पर आये, वें शिवगिरी में गुरू से मिले। दोनों ने हिंसा को नकार दिया और आंदोलन को सहज रूप से चलने पर बल दिया। इसी दौरान महात्मा ने महसूस किया कि वॉयकोम सत्याग्रह की सफलता के लिए सवर्णो का सहयोग भी जरूरी है, इसलिए वॉयकोम के अन्य नेताओं को सलाह दी कि सवर्णो से मिलकर बना एक जुलूस त्रिवेंद्रम की ओर ले जाना चाहिए ताकि अवर्णो के साथ समरसता उत्पन्न हो सकें और उनके कार्य को पूरा समर्थन मिल सकें। 1 नवम्बर 1924 को 500 सवर्णो का एक जुलूस मन्नाथू पदमनाभन के नेतृत्व में वॉयकोम से त्रिवेंद्रम की और रवाना हुआ, जिसका प्रत्येक स्थान पर अप्रत्याशित स्वागत हुआ। जब 12 नवम्बर 1924 को जुलूस त्रिवेंद्रम पहुँचा, तब 100 लोगों का एक जुलूस भी सूचिंद्रम से पेरूमल नायडू के नेतृत्व में वहाँ पहुँचा और एक बडी सार्वजनिक बैठक का आयोजन हुआ।

12.7 अंतिम कार्यवाही और समझौता

13 नवम्बर 1924 को छनग्नासेरी परमेश्वरन् पिल्लई के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल महारानी सेथू लक्ष्मीबाई से मिला और 25000 से ज्यादा लोगों द्वारा हस्ताक्षरित एक मैमोरेण्डम प्रस्तुत किया जिसमें राजशाही के प्रति वफादारी प्रकट करते हुए वॉयकोम मंदिर के चारो तरफ की सभी सड़कों को सभी वर्गो के लोगों के लिए खोलने की प्रार्थना की गई। लेकिन महारानी ने यह कह कर टाल दिया कि ऐसे मामलों पर विधायिका के अन्दर निर्णय लिए जाते है। फिर एस.एन.डी.पी. के सचिव श्री एन.कुमारन् द्वारा 7 फरवरी 1925 को इस सम्बंध में एक प्रस्ताव विधायिका में प्रस्तुत किया गया, जो 21 के मुकाबले 22 मतों से पराजित हुआ। इससे सत्याग्रहियों का मनोबल टूट गया और रूढिवादियों के हौसले बढ गये। इस दौरान गाँधी ने सत्याग्रहियों को धैर्य और शान्ति बनाये रखने का उपदेश देकर उनके मनोबल को बढाने का प्रयास किया। हालांकि इस दौरान रूढिवादियों ने अवर्णो पर अत्याचार बढा दिये, जिनको पुलिस भी चुपचाप देखती रही।

सवर्णो के अत्याचारों के विरूद्ध प्रतिरोध के रूप में राज्यव्यापी प्रतिरोध शुरू हुआ। जिसमें बड़े सवर्ण मंदिरों का बहिष्कार किया गया, उनके राजस्व में कमी लाई गई। सवर्ण महासभा ने सत्याग्रह के विरूद्ध बैठके आयोजित की गयी। इससे तनाव बढता चला गया और सत्याग्रहियों ने भी सत्याग्रह की धीमी निष्क्रिय पद्धति को हिंसा और गुण्डावाद से निपटने में अप्रभावी बताया। गाँधी ने तुरन्त सत्याग्रह के सिद्धांतों के परीक्षण के लिये स्थलों का दौरा किया। इस क्रम में 10 मार्च 1925 को वे अपने सचिव महादेव देसाई, पुत्र रामदास, अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर और सी. राजगोपालाचारी के साथ वॉयकोम आये। वे आश्रम में ठहरे, स्वंयसेवकों से बात की और उन्होंने सत्याग्रह के सिद्धांतों, त्याग और पीड़ा सहने की भूमिका को स्पष्ट कर सत्याग्रहियों का साहस बढाने का प्रयास किया।

उन्होंने रूढिवादी सवर्ण नेताओं से मिल एक समझौते पर पहुँचनेका प्रयास किया। इस क्रम में उनके सचिव ने सवर्ण नेता, दिवान नीलकण्ठन नम्बूद्री को आश्रम में आने का निमंत्रण भेजा, लेकिन नम्बूद्री ने आमंत्रण को अस्वीकार किया और कहा कि जिन्हें मिलना है, वे घर आ जायें। जब अगले दिन गाँधी जी अपने सहयागियों के साथ नम्बूद्री के घर पहुँचे तब गाँधी जी उसके घर की ड्यौडी पर बैठै और नम्बूद्री और उनके साथी अन्दर कमरें मे बैठे। नम्बूद्री का विश्वास था कि गाँधी और उसके साथी अस्पृश्यों को स्पर्श करने के कारण अपवित्र हो गये। इसलिए उनको घर में आने अनुमति नहीं दी जा सकती।

गाँधी और नम्बूद्री के बीच तीन घंटे तक वार्ता चली। वार्ता के दौरान गाँधी ने तीन व्यावहारिक प्रस्ताव रखें -

1. अस्पृश्यता का धर्मशास्त्रों में उपबन्ध नहीं मिलता है इसलिए समाप्त कर दिया जाए, लेकिन रूढिवादियों ने बचाव करते हुए कहा कि यह आदि शंकराचार्य द्वारा शुरू की गई प्रथा थी। इस पर गाँधी ने कहा एक निष्पक्ष हिंदू पण्डित द्वारा आदि शंकराचार्य की स्मृतियों का परीक्षण करवाया जाये और यदि इसका उपबन्ध नहीं मिले तो इसे समाप्त कर दिया जाये।

2. सवर्णो द्वारा एक जनमत संग्रह करवाया जाए, यदि सवर्णो का बहुमत अवर्णों के लिए सड़को को खोलने की ईच्छा जताये तो उन्हें खोल देना चाहिए।

3. अंतिम प्रस्ताव में गाँधी ने मध्यस्थता का विकल्प रखा।

रूढिवादियों को इसमें से कोई भी प्रस्ताव स्वीकार्य नहीं था, उनका विश्वास था कि अवर्णो को अपने कर्मों के कारण पीड़ा सहनी पड़ती है। परिणामतः गाँधी बिना समझौते के वापस लौट आये। सत्याग्रह निरंतर जारी रहा।

आखिर में गाँधी ने ट्रावनकोर पुलिस कमिश्नर डब्ल्यू.एच. पिट्ट को लिखा कि वे गुण्डावाद को समाप्त करें। पिट्ट एक यूरोपियन होने के नाते इस मामले में ज्यादा बेहतर हस्तक्षेप कर सकते थे। पिट्ट ने सरकार पर दबाव बनाने को सहमत हुए कि सभी अवरोधक हटाये जाये और निषेधाज्ञा आदेश वापस ले लिए जाये, बशर्ते कि गाँधी सत्याग्रहियों को निषेधाज्ञा बोर्ड से आगे न बढने का निर्देश दें। हालांकि पुलिस सत्याग्रह स्थल पर बनी रहेगी जब तक की समझौते की शर्ते लागू नहीं हो जाती। पत्र व्यवहार के द्वारा अंततः एक समझौते पर पहुँचे। सरकार ने फरवरी 1924 को पारित निषेधाज्ञा आदेशों को वापस लेने पर सहमत हुई और गाँधी जी सत्याग्रह की वापसी पर सहमत हुए। सरकार ने मंदिर के उत्तर, दक्षिण व पश्चिम की सड़कों को सभी के लिए खोल दिया लेकिन पूर्व की और जाने वाली सड़क को केवल सवर्णो के लिए आरक्षित रखा। 8 अक्टूबर 1925 को गाँधीजी एक आदेश जारी कर सत्याग्रह को वापस लेने के लिए कहा।

12.8 वॉयकोम सत्याग्रह का महत्व

वॉयकोम सत्याग्रह का बड़ा महत्व रहा, क्योंकि इस सत्याग्रह के माध्यम से एक तो हिंदू समाज की सबसे ग्रणित बुराई - अस्पृश्यता के उन्मूलन का मार्ग प्रशस्त हुआ। दूसरा, अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को केरल में अपनी भूमिका बढाने का अवसर मिल गया, जो कि अभी तक केवल ऊँची जाति एवं वर्गो तक सीमित थी, अब वह वर्गदल से जनदल में रूपांतरित हो गई। तीसरा, वॉयकोम प्रतिरोध ने सामुदायिक सामंजस्य को बढावा दिया, क्योंकि इसमें सवर्णो के साथ अवर्ण, ईसाई, मुस्लिम और सिक्ख नेताओं ने एकजुट हो सक्रिय रूप से लोगों में एकता व समानता स्थापना हेतु कार्य किया। आखिर में, सबसे अधिक महत्व यह है कि वॉयकोम सत्याग्रह में गाँधी जी ने अपने सत्याग्रह के सिद्धांतों का पहली बार सबसे व्यापक व प्रभावी रूप से एक साधन के रूप में परीक्षण किया और इसे सिद्ध भी किया।

12.9 सारांश

वॉयकोम सत्याग्रह (1924-25) भारत के ट्रावनकोर (अब केरल का भाग) में हिन्दू समाज में अस्पृश्यता के विरूद्ध हुआ। यह आन्दोलन कोट्टायम के निकट वॉयकोम के शिव मंदिर पर केन्द्रित था, जिसका उद्देश्य समाज

के सभी वर्गो के लिए वॉयकोम में स्थित मंदिर की और जाने वाले सार्वजनिक सडकों पर स्वतन्त्र आवाजाही सुनिश्चित करना। इस सत्याग्रह में पेरियार, श्री नारायण गुरू, एस.एन.डी.पी. के साथ महात्मा गाँधी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और अंत में ट्रावनकोर कमीश्नर के सकारात्मक हस्तक्षेप से सरकार औरगाँधी के बीच में एक समझौता हुआ जिसमें वॉयकोम मंदिर की तीन और की सड़के सभी वर्गो के लिए खोल दी गई। गाँधी ने अक्टूबर 1925 को सत्याग्रह की वापसी का आदेश पारित किया और इसके साथ ही हिन्दू समाज अस्पृश्यता के कलंक को धोने का मार्ग प्रषस्त हुआ।

12.10 अभ्यास प्रश्न

1. वॉयकोम सत्याग्रह की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं कारणों को स्पष्ट कीजिए।
2. वॉयकोम सत्याग्रह में गाँधी जी की भूमिका को रेखांकित कीजिए।
3. वॉयकोम सत्याग्रह में पेरियार और श्री नारायण गुरू के योगदान को बताइए।
4. वॉयकोम सत्याग्रह की समाप्ति हेतु हुए समझौते का विश्लेषण कीजिए।

12.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. देसाई, ए.आर., भरतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, मैक्मिलन इण्डिया लिमिटेड, बम्बई, 1996
2. नन्दा, बी.आर., गाँधी एण्ड हिज क्रिटिक्स, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1985
3. चन्द्रा, विपिन, भरत का स्वतन्त्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1995
4. प्यारेलाल, महात्मा गाँधीः द लास्ट फेज, वाल्यूम – 2, नवजीवन, अहमदाबाद, 1958

इकाई - 13

नोआखली सत्याग्रह

इकाई रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 नोआखली दंगों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं कारण

13.3 नोआखली दंगों का फैलाव व प्रभाव

13.4 नोआखली सत्याग्रह की गाँधीवादी रणनीति एवं नेतृत्व

13.4.1 बंगाल के गांवों का दौरा

13.4.2 श्रीरामपुरा में एक माह का पड़ाव

13.4.3 शान्ति-समितियों की रणनीति

13.4.4 गाँधी को आई.एन.ए. का सहयोग

13.4.5 गाँधी और शरणार्थी कैम्प

13.4.6 नेहरू जी का नोआखली आगमन

13.4.7 गाँधी जी का रचनात्मक कार्यक्रम

13.5 सारांश

13.6 अभ्यास प्रश्न

13.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

13.0 उद्देश्य

इस ईकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों को नोआखली सत्याग्रह के सम्बंध में यह जानकारी देना है कि :-

- नोआखली साम्प्रदायिक दंगों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या थीघ्
- नोआखली साम्प्रदायिक दंगे क्यों हुऐ?
- नोआखली दंगों का अन्य प्रांतों पर क्या प्रभाव पड़ा?
- नोआखली दंगों को शांत करने में गाँधी की 'एकला चलों की रणनीति' कितनी सफल रही? तथा
- इस सत्याग्रह का महत्व क्या रहा?

13.1 प्रस्तावना

यह महात्मा गाँधी द्वारा व्यक्तिगत रूप सेलड़ी गई सत्याग्रह की अंतिम लडाई थी। अगस्त 1946 में जब जिन्ना ने 'प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस' मनाया तब बंगाल में साम्प्रदायिक दंगे भड़के विशेषकर के पूर्वी बंगाल के नोआखली और बिहार में । गाँधी जी 'एकला चलो की रणनीति' तथा 'ब्रह्मचर्य के नियमों' का परीक्षण कर इन साम्प्रदायिक दंगों को शांत करने व पुनः सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था बहाल करने का निरन्तर अथक प्रयास किया लेकिन अंततः देश के विभाजन और अंग्रेजों द्वारा सत्ता हस्तांतरण की योजना को गाँधी जी ने मौन सहमति प्रधान की, क्योंकि साम्प्रदायिक दंगे विकराल रूप धारण कर चुके थे, हालांकि गाँधी जी हृदय से देश का विभाजन नहीं चाहते थे, लेकिन आखिर में बहुमत के समक्ष मौन आत्म-समर्पण कर दिया।

13.2 नोआखली दंगों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं कारण

नोआखली आजादी से पूर्व पूर्वी बंगाल का हिस्सा था, वर्तमान में यह बांग्लादेश में है। यहाँ स्वतंन्त्रता से एक वर्ष पूर्व बड़ी मात्रा में साम्प्रदायिक दंगे हुए थे, क्योंकि इन दिनों बांग्लादेश की स्थिति बड़ी जटिल थी। इस प्रांत में 54 फीसदीमुस्लिम आबादी थी, वहीं 44 फीसदी हिन्दू आबादी थी, और ज्यादातर मुस्लिम आबादी पूर्वोत्तर भाग में निवास करती थी। इस जनसांख्यिकी सरंचना और विशेष बदलाओं के कारण इस प्रांत में मुस्लिम लीग की सरकार बनी। यह एक गठबंधन सरकार थी, जो यूरोपियनों के साथ मिलकर बनाई गई थी। हिन्दू राष्ट्रवादी दल, हिन्दू महासभा ने इसका विरोध किया। बाद में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान यह सरकार भंग हो गई और मुस्लिम लीग तथा कांग्रेस कै बीच सांविधानिक गतिरोध बढता गया। जिन्ना ने लाहौर प्रस्ताव के द्वारा द्वि-राष्ट्र सिद्दांत पर पाकिस्तान के निर्माण की मांग की उनकी इस मांग को धीरे-धीरे व्यापक मुस्लिम जन समर्थन मिलने लगा। जब 1946 में केबिनेट मिशन भारत आया और उसने जिन्ना की पाकिस्तान की मांग को अस्वीकार कर दिया और अंतरिम सरकार तथा सविधान निर्माण सभा के गठन का प्रस्ताव रखा। संविधान निर्माण सभा के चुनावों में मुस्लिम लीग को अप्रत्याशित सफलता मिली जिससे जिन्ना का हौसला बढ़ गया। उन्होंने नेहरू के

नेतृत्व में गठित अंतरिम सरकार में शामिल होने से मना कर दिया और जब गर्वनर जनरल ने अंतरिम सरकार का गठन कर दिया तो जिन्ना ने 'प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस' मनाया और परिणामतः पूर्वी बंगाल, बिहार, पंजाब आदि प्रांतों में साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे। इसमें पूर्वी बंगाल के नोआखली में साम्प्रदायिक दंगों की स्थिति एक खतरनाक स्थिति में पहुँच गईए जहाँ हिन्दुओं को मुस्लिम धर्म स्वीकार करने के लिए बाध्य किया जा रहा था। महिलाओं के साथ बलात्कार व एक-दूसरे के समुदाय की मार-काट व नरसंहार का बढ़ावा दिया जा रहा था।

गाँधी ने जब इन दंगों के बारे में सुना तो वे बिना दूसरे साथियों और राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी की सहायता व सलाह का इंतजार किये अकेले ही नोआखली के लिए निकल पड़े और उन्होंने व्यक्तिगत रूप से अपने अन्य सहकर्मियों - प्यारेलाल, सुशीला नैय्यर, एन.के.बोस, मनु गाँधी आदि के साथ मिलकर शान्ति कायम करने का प्रयास किया।

13.3 नोआखली दंगों का फैलाव व प्रभाव

पूर्वी बंगाल के उत्तर दिशा में स्थित नोआखली जिले के रामगंज पुलिस स्टेशन के क्षेत्र में 10 अक्टूम्बर 1946 को साम्प्रदायिक दंगे भड़के, जो धीरे-धीरे मुस्लिम लीग के संगठित क्रोद्योंन्माद में रूपांतरित हो गया। इन्होंने शीघ्र ही नोआखली के रायपुर, लक्ष्मीपुर, बेगमगंज व संदीपपुर पुलिस स्टेशन को गिरफ्त में ले लिया तथा टिप्पेरा के फरीदगंज, हाजीगंज, लक्ष्मणगंज, चूड़ाग्राम आदि पुलिस स्टेशनों पर यह हिंसा आग की तरह फैल गई । हिंसा में मरने वालों के आंकडें संदेहास्पद है, क्योंकि जहाँ हिन्दू प्रेस ने इसे हजारों में बताया, वही मुस्लिम प्रेस इससे नकारती है। गाँधीवादी अशोक गुप्ता की रिपोर्ट के अनुसार 2000 हिन्दूओं को मुस्लिम धर्म अपनाने के लिए बाध्य किया गया, एक मारा गया और छः की दबाव में शादी करवाई गई। दूसरी और सरकारी आंकड़ों के अनुसार यह संख्या 200 ही थी।

एकाएक भड़के दंगों में बाजारों को लूटा गया, रामगंज पुलिस स्टेशन में बड़ी बैठक हुई और गुलाम हुसैन ने एक भडकाऊ भाषण दिया। सुरेन्द्रनाथ बोस, राजेन्द्रलाल राय चैधरी और अन्य प्रभावीशाली हिन्दू महासभा के नेताओं पर हमले हुए। भारत के अन्य भागों में नोआखली नरसंहार के प्रतिक्रिया स्वरूप दंगे भड़के। सबसे ज्यादा दंगे बिहार में भड़के। 30 अक्टूम्बर से 7 नवम्बर 1946 तक हुए नरसंहार ने भारत विभाजन को अपरिहार्य बना दिया। छपरा एवं सरन जिले में खतरनाक हिंसा भड़की। 25-28 अक्टूबर में शीघ्र ही पटना मुंगेर और भागलपुर भी साम्प्रदायिक दंगों के सकंट में फंस गये। यहाँ मरने वालों की संख्या बताना बहुत कठिन था क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में सहीं आंकड़े प्राप्त नहीं हो सकें। ब्रिटिश संसद में दिये गये वक्तव्य के अनुसार लगभग 5000 हजार लोग मारे गये, जबकि स्टेट्समैन पत्रिका के अनुसार यह सख्ंया 7500-10000 के बीच थी। कांग्रेस पार्टी के अनुसार यह सख्ंया 2000 थी। जिन्ना इसे 30000 बताया, हालांकि 3 नवम्बर तक सरकारी स्तर पर मरने वालों की सख्ंया 445 बताई गई। कुछ अन्य प्रांतों में जैसे - संयुक्त प्रांत के गुरू मुक्तेश्वर में हिन्दू यात्रियों पर एक वार्षिक धार्मिक मेले में हिन्दू यात्रियों पर हुये हमले में 1000-2000 लोग मारे गये और पंजाब तथा उत्तरी-पश्चिमी सीमा

प्रांत में भी 1946 के अंत और 1947 के प्रारम्भ में साम्प्रदायिक दंगे भड़के, जिनके परिणामस्वरूप कांग्रेस पार्टी ने भारत विभाजन के साथ सत्ता हस्तांतरण के विकल्प को बिना गाँधी जी की सलाह के स्वीकार कर लिया।

13.4 नोआखली सत्याग्रह की गाँधीवादी रणनीति एवं नेतृत्व

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् जब गाँधी जी के अहिंसक मार्ग द्वारा सत्याग्रह करने पर प्रश्न उठने लगे और यह शंका जताई गई कि समूह के द्वारा अहिंसा का प्रयोग सम्भव नहीं लगता है। अपवाद स्वरूप एक व्यक्ति ही अहिंसा के मार्ग का अनुसरण कर सकता है। हालांकि गाँधी जी का दृष्टिकोण स्पष्ट था कि जो एक स्त्री या पुरूष बिना प्रतिरोध के अहिंसा के मार्ग का अनुसरण करता है और अपना जीवन त्याग देता है तो वह बहादुरी का सबसे उच्च स्वरूप होगा। यदि यह सम्भव नहीं होतो मरते दम तक प्रतिरोध करते रहना चाहिए और जो प्रतिरोध नहीं करता है, वह कायर होता है। वह हिंसा करने वाले पुरूष से भी निम्न स्तर का होता है।

जब गाँधी जी ने वर्धा में पूर्वी बंगाल में हुये दंगों के बारे सुना तो वे बिना दूसरे के सहयोग की चिंता किये स्वंय नोआखली की लिए के रवाना हो गये और 29 अक्टूबर को कलकत्ता पहुँचे और वहाँ सीधे सादेपुर में खादी प्रतिष्ठान आश्रम में पहुँचे। अगले दिन प्रार्थना के दौरान उन्होंने सभी लोगों से हिन्दू और मुसलमानों के ह्दयों की एकता स्थापित करने का उपदेश दिया। और उन्होंने कहाँ कि "मै यहाँ पूरे वर्षभर रूक सकता हूँ और यदि आवश्यक हुआ तो मैं यही मरुंगा, लेकिन मैं असफलता नहीं देखना चाहूँगा।" उन्होंने अहिंसा के परीक्षण का बड़ा कदम उठाने का निर्णय लिया। उन्होंने महसूस किया कि यदि बंगाल को बचाया जा सकता है तो पूरे भारत को बचाया जा सकता है।

13.4.1 बंगाल के गांवों का दौरा

नवम्बर के प्रथम सप्ताह में बिहार में हुए दंगों के समाचार मिलें। 25 अक्टूबर को नोआखली में मारे गये हिन्दूओं को श्रृद्धाजंली देने हेतु पूरे बिहार में बैठके आयोजित हुई थी तथा छपरा तथा पटना की बैठकों में बड़ी मात्रा में दंगों को रोकने का अह्वान किया गया। गाँधी जी ने नोआखली जाने का निर्णय लिया। 4 नवम्बर 1946 को गाँधी ने एन.के. बोस को बताया कि वह स्थानीय समाचार पत्रों की खबरों से महत्वपूर्ण जानकारी जुटा ली हैं। इसकों लेकर के गाँधी बहुत चिंतित थे। 7-20 नवम्बर के बीच गाँधी ने छउमुहानी, दातापारा, कजीरखील एवं मधेपुर के गांवों में समय बिताया और मामलों की जानकारी जुटाई। 7 नवम्बर को बड़ी मात्रा में लोग गाँधी से मिले। यहाँ गाँधी ने अपनी भावनाओं को प्रकट किया और कहाँ कि एक भी व्यक्ति को दबाव पूर्वक धर्म परिवर्तन कराना या एक महिला अपहरण या बलात्कार करना मेरे सिद्धांतों के विरूद्ध है। आप और हम प्रत्येक गांव और घरों की यात्रा करेंगे तथा शान्ति और विश्वास बहाल करेंगे। उन्होंने हिन्दूओं को यह संदेश दिया कि पूर्वी बंगाल में रहने वाले अंकेले हिन्दू को मुसलमानों के बीच जाना होगा और जीवित रहना होगा और यदि जरूरी हुआ तो हिरों की

तरह मरना भी होगा। नोआखली के मजिस्ट्रेट मिस्टर डी.एफ. मैकेनरी छाउमुहानी प्रार्थना सभा में आये और कहाँ कि स्थिति ठीक नहीं है। फिर भी गाँधी जी ने लक्षम गांव की यात्रा की जो नौआखली और चांदीपुर के आधार रूप में स्थित था। जहाँ कम-ज्यादा मात्रा में दंगों को भड़काने वाले तत्व उपस्थित थे। अगले कुछ दिनों में गाँधी जी ने लक्ष्मीपुर थाना क्षेत्र के गांवों का दौरा किया और देखा कि लोगों के घरों जला दिया गया था और दबाव पूर्वक धर्मातंरण करवाया गया था। यहाँ एक सप्ताह तक रूकने बाद गाँधी जी ने अपने दल के लोगों को अलग-अलग भेजने क निर्णय लिया और प्रत्येक व्यक्ति को एक गांव का कार्यभार सौपा और उन्हें अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों की देखभाल करने और उनकी सुरक्षित वापसी व पुनर्वास बहाल करने का दायित्व सौंपा, लेकिन गाँधी ने केवल उन्हीं लोगों को यह दायित्व सौंपा जो ईमानदार और सहासी थे, तथा खतरों से अपने आप जूझने की क्षमता रखते थे।

13.4.2 श्रीरामपुरा में एक माह का पड़ाव

20 नवम्बर को गाँधी जी श्रीरामपुर के लिए रावाना हुए जो कि रामगंज पुलिस स्टेशन के उत्तर-पश्चिम में दो मील दूरी पर स्थित एक छोटा गाँव था। वहाँ उन्होंने अपने आपको सत्य ओर अहिंसा के परीक्षण में संलग्न रखा। यहाँ गाँधी जी शान्ति मिशन को संगठित करने के लिए कुछ समय तक रूकने का निर्णय लिया। इस समय उसके सहकर्मियों को दूर दराज के गांवों में भेज दिया। श्रीरामपुर एक अस्थाई मुख्यालय बन गया। गाँधीजी ने मीराबेन को यह लिख कि “वे सभी साथी जो दिल्ली से मेरे साथ आये और नोआखली के विभिन्न गाँवों में फैल गये है। ठक्कर बापा मुझे मेरे काम में सहयोग करते है। यहाँ नाव के अलावा कोई यातायात का साधन उपलब्ध नहीं है और वे भी दस दिन तक ही चल पायेगी, क्योंकि उसके बाद नहरों में पर्याप्त पानी नहीं होगा। मुझे यह अलगाव पसन्द है, लेकिन तुम सोच सकती हो कि इन लोगों के साथ इन गरीब लोगों के लिए क्या होना चाहिए जो ऐसा विकट जीवन जी रहे है।”

यहाँ गाँधी जी ने अगला का कार्यक्रम बनाने से पहले लोगों की नब्ज को समझा और महसूस किया। उन्होंने लोगों के विश्वास को जीता। गाँधी को विश्वास था कि सहास, नियमित प्रार्थना सभाऐं तथा रचनात्मक कार्यक्रम के व्यक्तिगत उदाहरण हिन्दू और मुस्लिम समुदाय के बीच एकता स्थापित करेगें और वातावरण को बदल देंगे। रामगंज पुलिस क्षेत्र के कई गांवों में उनके 15 कार्यकर्ता ठहरे हुऐ थे। गाँधी जी की शान्ति योजना चार आधार स्तम्भों पर - आध्यात्मिक प्रयास, मनुष्य की तात्विक अच्छाई, प्रेम और बहादुर की अहिंसा टिकी हुई थी। उनके शान्ति योजना का उद्देश्य हिन्दू अल्पसंख्यकों के हृदयों में बहादुरी का भाव भरना और गलतियों का पश्चताप करवाना, लेकिन शान्ति कार्यकर्ताओं के लिए बहादुरी की उच्चता को प्रदर्शित करने का काम करने की पूर्व अपेक्षा की। 2 दिसम्बर को गाँधी जी ने एक प्रश्न के जवाब में कहाँ कि मैं यहाँ कोई निष्क्रिय होकर नहीं बैठा हूँ बल्कि में यहाँ चीजों का अध्ययन कर रहा हूँ और खोई हुई ताकत को प्राप्त कर रहा हूँ। मेरा विचार अंतिम व्यक्ति

को लाभ पहुँचाने के परीक्षण के दौर से गुजर रहा है जो एक गांव से दूसरे गाँव तक और शरणार्थियों की वापसी का भाव।

13.4.3 शान्ति-समितियों की रणनीति

शाहिद सूरावर्दी के नेतृत्व वाली बंगाल सरकार ने उनकी शान्ति योजना को नकार दिया। उसने सुझाव दिया कि सामाजिक विश्वास की पुनर्बहाली के लिए शान्ति समितियों की स्थापना की जाए। 22 नवम्बर को गाँधी जी सरकारी प्रवक्ता के साथ हिंदू-मूस्लिम दोनों समुदायों के प्रतिनिधियों के साथ मिलें और लम्बी बहस के बाद प्रत्येक गाँव, प्रत्येक कस्बा और पुलिस थाना स्तर पर एक शान्ति समिति का गठन किया जाना जाने का प्रस्ताव रखा।

इस समिति की अध्यक्षता सरकारी अधिकारी करेगा। प्रथम शान्ति समिति रामगंज पुलिस क्षेत्र में स्थापित की गई, जिसकी पहली बैठक आयोजित हुई। फ्रांसिस ठक्कर ने लिखा है कि समिति की बेैठक के दौरानगाँधी जी ने शान्ति समिति योजना को ध्यानपूर्वक सुना, जिसके द्वारा प्रत्येक समुदाय के एक सम्मानीय सदस्य को यह कहाँ कि वे अपने गाँव या क्षेत्र में अन्य समुदाय के सदस्यों को नुकसान पहुँचाने वाले कृत्यों को रोकेंगेए चाहे उसमें अपना जीवन भी क्यों न देने पड़े।

इन समितियों का मुख्य काम राहत और पुनर्वास कार्य निष्पादित करना था। उन्होंने उन असामाजिक तत्वों को खोजने का भी काम कियाए जो दंगे भड़काने के लिए जिम्मेदार थे। गाँधी ने यह भी कहाँ कि समितियों के सदस्यों के लिए बहादुरी और सत्य दो सद्गुणों को धारण करने की योग्यता जरूरी है। गाँधी जी बंगाल सरकार के द्वारा सुझाए गए शान्ति समिति के विचार के प्रति मोहित नहीं थेंए उनके लिऐ शान्ति का सबसे उत्तम फार्मूला यह होगा कि एक हिंदू और एक मुस्लिम दो आदमियों को एक गांव की देखभाल का जिम्मा सौपा जायेगाए जिसमें हिंसा की पूनरावृति नहीं होगी और यहाँ तक की इसको रोकने में उनका जीवन भी समाप्त हो जाये तो भी।

बंगाल सरकार द्वारा आयोजित शान्ति समितियां ज्यादा सफल नहीं रही क्योंकि सरकार स्वयं का हित कम नहीं करना चाहती थी। थानों में दंगाईयों के विरूद्ध मामले भी दर्ज नहीं हुए और सदस्य भी निष्क्रिय रहेए जबकि दूसरी और गाँधी के सह-कार्यकर्ताओं में से कई गांवों में निवास करते रहे और गाँधीवादी तरीके का बचाव और पुनर्वास कियाए जिससे कुछ प्रभाव दिखने लगे। गाँधी ने स्वयं कई अवसरों पर कहाँ कि वे इस क्षेत्र में तब तक रहेंगे तब तक की हिन्दू-मुस्लिम आपस में सादगीपूर्ण व मित्रवत् तरीके से नहीं रहने लग जाऐंगे। इस मामले में उन्होंने बिड़ला को लिखा कि ईश्वर अकेला ही मनुष्यों को बेडियों से मुक्त रख सकता हैं। 2 दिसम्बर को प्यारेलाल श्रीरामपुर आयें और गाँधी से मिलकर ‘करो या मरो’ का अर्थ जाना। प्यारेलाल इस बात के गवाह थे कि महात्मा कई बार आडे-तिरछे नालों और सकड़े पुलों को पार करते थे। कई बार गाँधी जी अकेले भी कोशिश

करते थे, लेकिन कई बार एन.के. बोस उनको सहारा भी देते थे। दिसम्बर के आरम्भ में गाँधी जी ने इस जिले के कई गाँवों का दौरा करने का निर्णय लिया, क्योंकि उन्होंने महसूस किया किया कि श्रीरामपुरमें लम्बे तक ठहरना ज्यादा प्रभावकारी नहीं होगा।

गाँधी के अनुसार बंगाल सरकार के प्रयास ज्यादा प्रभावी नहीं थे। मेरे प्रयासों के बावजूद भी बहुत कम लोग अपने गांव और घर को लौटे थे। इसलिए गाँधी जी ने सुझाया कि विश्वास पुनर्बहाली के लिए तटस्थ जाँच बिठाई जाऐ। दूसरी और बंगाल के मुख्यमंत्री गाँधी जी से बिहार की गतिविधियों को देखने का निवेदन कर रहे थे। उनका तर्क था कि आपका यहाँ ठहरना आपके स्वंयसेवकों के द्वारा कई प्रमाण तैयार कर देंगे........... और स्थानीय मुसलमानों पर अभियोग जारी रहेंगे, विशेषकर के मुस्लिम लीग कर्मियों पर।

अपने सम्पूर्ण जीवन में जब कभी गाँधी जी स्वयं को अहिंसा और सत्य के मार्ग पर नहीं पाते तो इसका दोष स्वयं अपने ऊपर लेते। यह उनकी आत्म.निरीक्षण की योग्यता थी, जो सामाजिक समस्याओं केसमाधान का वैकल्पिक मार्ग खोजने को प्रेरित करती थी। उन्होंने अगाथा हरीशन को लिखा कि ष्जब मुझेअंधेरा घेरता है……. जो कि मेरी अपनी सीमाओं के कारण होता है। तब मैं मेहसूस करता हूँ कि अहिंसा कि मेरी तकनीक कुछ चाह रही है।”

सत्य और अहिंसा पूर्ण साधन थे लेकिन इसके निर्वाहक अपूर्ण थे इसलिए आत्म-निरीक्षण की आवश्यकता थी। एक अन्य सन्दर्भ में गाँधी ने यह कहाँ कि यदि बंगाल में शान्ति नहीं होगी तो वें नहीं सोचते कि शेष भारत शान्तिमय रह सकता हैं, क्यों कि बंगाल भारत का केन्द्र बिन्दु है। व्यक्तिगत बहादुरता कीगाँधी की योजना बहुत से लोगों के लिए आकर्षक नहीं थी लेकिन गाँधी जी ने कहाँ कि यदि कुछ उदाहरण भी स्थापित कर सके तो वे पर्याप्त होंगे। उन्होंने निर्मल चटर्जी को, जो कि हिन्दू महासभा के अध्यक्ष थे, कहा कि उन्होंने प्रत्येक गांव में एक कार्यकर्ता नियुक्त किया, जो वहा के निवासियों के हृदयों को मजबूत बनाएगा। गाँधीजी इस विचार के विरुद्ध थे कि सामुहिक सुरक्षा के लिए नोआखली की हिन्दू जनसखं्या को अलग कर दिया जाए। जैसा कि बंगाल सरकार चाहती थी। पूर्वी बंगाल में कई राहत प्रदाता संगंठन थे। इन सभी को गाँधी जी ने यह संदेश दिया कि वे प्रभावित लोगों की सहायता करें न कि बंगाल सरकार की।

13.4.4 गाँधी को आई.एन.ए. का सहयोग

गाँधी जी की भतीजी मनु गाँधी ने नोआखली में गाँधी जी के कार्यों में शामिल होने को ईच्छुक थी। लेकिन गाँधीजी चाहते थे कि वह आखिर तक उनके साथ रहे। मनु के पिता ने एक पत्र में गाँधी को लिखा कि नोआखली का वातावरण ज्यादा ही खराब है, लेकिन गाँधी ने कहाँ कि यदि तुम ऐसा मानते हो तो मनु मेरे साथ कैसे रूक सकेंगी। गाँधी जी ने गांव-गांव और घर-घर की यात्रा की और अपने मिशन के बारे मे बताया। कभी-कभी वे

हथियार लिए घुमते लोगों से भी मिलते कई बार मायूस चेहरों और बन्द दरवाजों को भी देखते। गाँधीवादी ढ़ांचे में सहभागिता के तरीके व्यापक रूप से व्यक्तिवादी थे। इनके प्रभाव लम्बे समय में दिखाई देते थे। महात्मा के दिमाग में कभी भी उनके प्रति संदेह नहीं होता था। उन्होंने अपने सहकार्यकर्ताओं को हर परिस्थिति से जूझने को तैयार रहने का संदेश दिया।एक भूतपूर्व आई.एन.ए. आफिसर निरंजन सिंह गिल गाँधी जी से मिले और अपनी योजना के बारे बताया कि वह कुछ आई.एन.ए. सैनिकों को गाँधी जी की सुरक्षा और उनके राहत कार्यो के लिए तैनात करना चाहते है। यह विचार गिल का था, जिसे सरदार पटेल ने समर्थन दिया, जो कि गाँधी जी की सुरक्षा को लेकर चिंतित थें। गिल ने पटेल को पूर्वी बंगाल की खराब स्थिति के बारे में बताया कि यह लगभग तय है कि "बंगाल के मंत्री चाहते है महात्मा का मिशन असफल हो जाये, ताकि पाकिस्तान के निर्माण की और कदम बढे। यदि मिशन सफल रहा तो मुस्लिम लीग के पाकिस्तान निर्माण का विचार मुश्किल से ही मूर्त रूप ले पायेगा।" परिणामतः लगभग 150 आदमी कर्नल जीवन सिंह के नेतृत्व में गाँधी के सहयोग के लिए सम्मिलित हुए। श्रीरामपुर में एक महिनेठहरने के बाद गाँधी को वहाँ के वातावरण में बदलाव दिखाई दिया.........उनकी प्रार्थना सभाओं में ज्यादा लोग आने लगे शरणार्थी घरों को लौटने लगे और लोगों में विश्वास भी देखने को मिला। इस सन्दर्भ में सीग्राजगोपालाचारी ने गाँधी जी को लिखा कि "आपने पहली बार सकारात्मक अहिंसा के क्षेत्र में धकेल दिया है और आप विजयी बनोगे। मुझे आशा है कि आपका नया अनुभव और ज्यादा समृद्ध होगा।" हालांकि बंगाल सरकार गाँधी जी से नाखुश थी, और बार-बार गाँधी जी को बिहार जाकर सहयोग करने की सलाह दे रही थी।

इस दौरान एन.के. बोस और सुशीला नैय्यर के बीच टकराव उत्पन्न हुआ, हालांकि दोनों ही गाँधी जी के बहुत करीबी थे। 17 दिसम्बर को गाँधी जी और सुशीला नैय्यर के बीच कहासुनी हो गई। सुशीला नैय्यरगाँधी जी के साथ पैदल दौरो पर जाना चाहती थी, लेकिन गाँधी जी इसके लिए सहमत नहीं थे। 10 दिसम्बर 1946 को मनु गाँधी श्रीरामपुर आ पहुँची। अगले दिन गाँधी ने उसे बताया कि उसे क्या करना था। गाँधी ने मनुबैन के साथ अपने ब्रह्मचर्य के अनुप्रयोगों को पुनः शुरू करने का निर्णय लिया।

13.4.5 गाँधी और शरणार्थी शिविर

कुछ दिनों बाद मनु गाँधी श्रीरामपुर आई जो सरकार के लिए अच्छा प्रमाण बना। नन्दीग्राम के शरणार्थी कैम्प के 300 शरणार्थियों की रसद सामग्री रोक दी गई। कई शरणार्थियों वापस लौटने को मजबूर किया गया, साथ ही गाँधी जी पर रसद सामग्री की गुणवता में बाधा पहुँचाने का आरोप लगाया गया। रामगंज राहत समति के सचिव ने गाँधी को चावलों के नमूने दिखाते हुये कहाँ कि यह सामग्री मानव उपभोग के लिए लाभकारी नहीं है। बंगाल के प्रधानमंत्री एच.एस. सूरावर्दी बिहार की घटनाओं को लेकर ज्यादा चिंतित और बार-बार गाँधी से वहाँ से चले जाने को निवेदन कर रहे थे। गाँधी ने कहाँ कि उनका उद्देश्य बंगाल की लीग सरकार के प्रति प्रतिबद्धता प्रदर्शित

करना नहीं है। उनका मुख्य उद्देश्य दोनों समुदायों के बीच आत्मिक एकता स्थापित करना था। दिसम्बर के आरम्भ में पटेल ने गाँधी को लिखा कि आपको वहाँ एक महिने से ज्यादा समय हो गया है, अभी तक साम्प्रदायिक आग बुझने का कोई संकेत नहीं मिला है। साथ ही ठक्कर बापा को भी पटेल ने अपनी आशंका व्यक्त की कि कोई भी नोआखली पीड़ितों के लिए एक शब्द भी नहीं बोलते है, मुझे आश्यर्य है कि इसका क्या उपाय है और कैसे बापू का फार्मूला इस समस्या का समाधान करेगा।

13.4.6 नेहरू जी का नोआखली आगमन

26 दिसम्बर, 1946 को नेहरू जी नोआखली आये। इस दिन एन.के. बोस ने गाँधी को आजाद में प्रकाशित हामिद्उद्धीन खान का प्रेस नोट की प्रतिलिपि दिखाई जिसमें गाँधी पर कई आरोप लगाये। इससे गाँधी काफी आहत हुए, इसके प्रतिउत्तर में गाँधी जी ने लिखा कि इस पत्र को लिखने की प्रक्रिया में मैं इसे छोटा नहीं करना चाहता था, यदि मैं आपको मेरे गहरे दुखः के कुछ भाव बताता। बाद में शाम को नेहरू, शंकर राव देव, कृपलानी और मृदुला साराभाई विचार-विमर्श के लिए आये। जिसमें 6 दिसम्बर को ब्रिटिश सरकार द्वारा जारी किये गये वक्तव्य और गाँधी की आसाम कांग्रेसियों को अपने आपको स्वतन्त्र घोषित करने की सलाह पर चर्चा हुई। नेहरू जी गाँधी जी को वापस दिल्ली चलने के लिए सहमत करने में असफल रहें। नेहरू जी ने अपने एक प्रेस साक्षात्कार में कहाँ कि “नोआखली में मनुष्य अत्यधिक गरीबी और दुखः तथा भय के दबाव में जीते है। इस समस्या को महात्मा जी अपने मार्ग के द्वारा सुलझाने का प्रयास कर रहे है और इसके परिणाम लोगों के मस्तिष्क पर पड़ेंगे|” इस दौरान बंगाल के गर्वनर सर फ्रेडरिक बुरोज ने इस क्षेत्र में गाँधी की गतिविधियों के बारे लार्ड वैवल को लिखा कि “मुझे भय है कि पूर्वी बंगाल के मुसलमान इस बुढ़े आदमी से परेशान हो गये है और मैं उसकी व्यक्तिगत सुरक्षा को लेकर चिंतित हूँ।”

13.4.7 गाँधी जी का रचनात्मक कार्यक्रम

27 नवम्बर 1946 से 2 जनवरी 1947 तक गाँधी जी श्रीरामपुर में रूके रहे और स्वंय वहाँ अपने प्रतिनिधियों के साथ काम का बॅंटवारा कर काम करते रहे। गाँधी ने अपनी शक्ति अर्जित की और अपने आपकों पैदल यात्रा करने के लिए सक्षम बनाया। गाँधीवादी सत्याग्रह में सामाजिक सहभागिता का मुख्य माध्यम सत्य, अहिंसा और बहादुरता में अटल विश्वास के साथ व्यक्तिगत हस्तक्षेप करना था। गाँधी जी चारों और उजड़े गाँवें में गये, प्रार्थना सभाओं को सम्बोधित किया, धर्म से लेकर स्वच्छता तक के मुद्दों पर लोगों से बात की और दूसरों को इसका अनुसरण करने की इजाजत दी। उससे पहले गाँधी जी ने कभी भी साम्प्रदायिक एकता के आधार जैसे रचनात्मक कार्यक्रम पर इतना बल नहीं दिया था। नोआखली में गांव पुनर्रचना, स्वच्छता, स्वास्थ्य एवं आत्मशुद्धिकरण पर बल दिया। यह सभी आश्रम जीवन के अंग थे इसलिए व्यवहार में सत्याग्रह और आश्रम समानार्थी ही है।

दिसम्बर के आरम्भ में उन्होंने पाया कि एक बच्चा बुखार और कब्ज से पिड़ित था। गाँधी ने स्वयं उसका ईलाज करने का निर्णय लिया। उनका सम्पूर्ण ध्यान उसके बारे में सम्पूर्ण जानकारी जुटाने में ज्यादा था, जब बोस ने उन्हें सुझाया कि वह उनको यह काम करने की इजाजत दे तब गाँधी ने उसे वस्तिर्कम कैसे प्रशासित किया जाता है, उसके बारे में विस्तृत जानकारी दी। गाँधी जी ने श्रीरामपुर की प्रार्थना सभाओं में गांवों की खराब दशा को सुधारने पर बहुतबल दिया, साथ ही स्वास्थ्य और स्वच्छता की दशाओं पर भी लोगों का ध्यान बाँटा। गाँधी जी चाहते थें कि ग्रामीण भारत की सभी मूलभूत समस्याओं का सामूहिक रूप से समाधान हों। क्योंकि सामंजस्यकारी सम्बंध समुदायों के बीच विश्वास पुनर्बहाल करेगा और इससे गरीबी और अज्ञानता विलुप्त हो जाऐगी। श्रीरामपुर पड़ाव के अंतिम समय में स्थितियों में बड़ा महत्वपूर्ण बदलाव आया - अब बहुत सारे शरणार्थी घरों को लौटे, इसके अलावा शेष जनता ने गाँधी के सादगीपूर्ण व्यवहार के प्रति संतोष जताया। समाचार पत्रों में लिखा कि गाँधी का साम्प्रदायिक समस्या के समाधान का तरीका बहार से शान्ति थौपने का नहीं था बल्कि आंतरिक रूप से काम करने में निहित था।

चाँदनीपुर की एक प्रार्थना सभा में गाँधी जी ने कहाँ कि उसका मिशन नोआखली में रहने वाले दो जुड़वाँ समुदायों के मध्य मैत्री स्थापित करना था। वह यह बहादुरों की अहिंसा की वकालत कर कर रहें थे, गाँधी ने कहाँ कि केवल इसी पद्धति के द्वारा हिन्दू और मुसलमानों के बीच भय ओर पारस्परिक संदेह का प्रतिबिंब हट सकता है। इस भावना के साथ नोआखली में उनका मिशन चरम पर नहीं पहुँचा। गाँधी ने अपने आपको अकेला पाया। उसके सहयोगी उनसे अलग हो गये। गाँधी जी इस स्थिति के साथ निराश थे लेकिन उन्होंने अपनी पद्धति को त्यागा नहीं, वें अच्छी तरह से जानते थे कि उनका असहयोग शुद्ध रूप से अहिंसक है और इसके प्रभाव अवश्य आऐंगे। यह व्यवहार का साधन नहीं बल्कि हमेशा पूर्ण बनी रही धारणा है। नोआखली क्षेत्र में गाँधी जी ने बहुत से गांवों को दौरे हेतु चुना, जहाँ सम्भव हुआ तो वे मुस्लिम घरों में ठहरे और लोगों से व्यक्तिगत सम्बंध बनाये। वें यह भी चाहते थे कि इससे स्थानीय लोग उचित साफ-सफाई व स्वच्छता का पाठ सीखेंगे।

पैदल यात्रा के दूसरे पडाव पर वे मासिमपुर में प्रार्थना सभाओं में रामधुनी गाई, इससे कई मुस्लिम उनकी सभाओं से उठकर चले गये। गाँधी जी एक ईश्वर में विश्वास करते थे, जो लोग पहले सभाओं में से उठकर चले गये थे वे बाद में लौट कर आये। गाँधी जी ने अपनी यात्रा को जारी रखा, लोग उनके सैन्य सुरक्षा व्यवस्था को देखकर डरा हुआ महसूस करते थे। इससे चारों और यह भी अफवाह फैली की चारों और सैना के द्वारा शान्ति स्थापना के प्रयास किये जा रहे है, लेकिन हमेशा सचेत रहने वाले गाँधी जी ने इन घटनाओं से सीखा और कहाँ कि मुझमें विश्वास करों या नहीं, मैं केवल एक घोषणा कर सकता हूँ कि मेरा अपना कोई संरक्षणकर्ता नहीं है, ईश्वर के अलावा। उन्होंने सूरावर्दी से निवेदन किया कि वे अपने सैनिक सुरक्षा तंत्र को हटाले। यह मेरे सच्ची मित्रता के कार्य में बाधा पहुँचा रहा है।

जनवरी के दूसरे सप्ताह में गाँधी जी जब काकरपाड़ा में पहुँचे और वहाँ प्रार्थना सभा में पाया कि लोगों की संख्या अपर्याप्त थी। शाम को कुछ मुस्लिम युवा गाँधी से उलझ पड़ें, और एक मुस्लिम युवा ने पूछा कि "क्यों नहीं वे पाकिस्तान की मांग को मानकर भारत को आजादी दिला देते है" गाँधी जी ने जवाब दिया कि, "जब मैं भारत की आजादी के बारे में सोचता हूँ तो मैं इसे अपनी आंतरिक शक्ति के आधार पर बिना किसी विदेशी सहायता के हासिल करना चाहता हूँ। एक बार पूरे देश को आजादी प्राप्त हो जाऐ, उसके बाद में हम पाकिस्तान या अखण्ड हिन्दूस्तान के बारे में निर्णय कर सकते है।"

12 जनवरी को गाँधी जी से पाकिस्तान या गृह-युद्ध के दो विकल्पों में से किसे प्राथमिकता देंगे के बारे में पूछने पर गाँधी जी ने जवाब दिया कि "दोनों ही विकल्प गलत है, और यह सोचना ही गलत है कि गृह-युद्ध से पाकिस्तान हासिल किया जा सकता है।" लगभग सभी गांवों में कोई न कोई व्यक्ति गाँधी जी से यह पूछता कि गाँधी जी बिहार क्यों नहीं गये और उनकी नोआखली में अहिंसा की क्षमता के बारे में प्रश्न किये गये थे, उन्हें 'आधुनिक बुद्ध' की भी सज्ञा दी गई। गाँधी ने कहा कि वे 'आधुनिक बुद्ध' नहीं है और यह भी निर्दिष्ट किया कि वे जारी संहारक-युद्ध को नहीं रोक सकते थें क्योंकि वें सर्वोच्च सत्ता नहीं रखते थे। गाँधी जी नोआखली में अहिंसा की ताकत का परीक्षण करने आये थे। यथार्थवादी गाँधी ने अपनी तकनीकों की सीमाऐं स्वीकार की थी न की उनको त्यागा था।"

18 जनवरी को गाँधी के समक्ष जिन्ना और उनके मध्य समझौते की सम्भावना का मुद्दा उठाया तब उन्होंने लोगों से निवेदन किया कि , उन्हें न तो मुस्लिम लीग या न ही कांग्रेस और न ही हिन्दू महासभा की ओर अपनी दैनिक समस्याओं के समाधान के लिए नहीं देखना चाहिए। इसके लिए उन्हें अपने अन्दर की और झाँककर देखना चाहिए, और यदि वे ऐसा कर सकें तो उनकी पड़ौसी शान्ति की इच्छा पूरी होगीए जिसका प्रभाव उनके नेताओं पर भी पड़ेगा।,अताकौरा गांव में गाँधी जी को रास्तों या मार्गो के साथ जुझना पड़ाए वहाँ बहुत तंग रास्ते थेए लोग आसानी से चल-फिर नहीं सकते थें। गाँधी जी ने वहाँ स्वंय रास्तों को चैड़ा करवाया।

3 फरवरी 1947 को महात्मा गाँधी सादुलखिल पहुँचे और इस प्रकार पैदल यात्रा का पहला चरण समाप्त हुआ।

2 फरवरी को 'हरिजन' में के.जी.मशरूवाला की और से गाँधी के शान्ति की रचनात्मक पुनर्बहाली की तकनीकों के बारे में महत्वपूर्ण विशलेषण प्राप्त हुआ। मशरूवाला ने लिखा कि "शान्ति की स्थापना करना एक रचनात्मक गतिविधि है न कि रक्षात्मकए निरोधात्मक और प्रतिरोधात्मक। उन्होंने यह भी लिखा कि साम्प्रदायिक राजनीति और समाज का आपराधिक हिस्सा दोनों एक साथ बढ रहे है। यदि साम्प्रदायिक राजनीति का मैत्रीपूर्वक समाधान हो जाता है तो साम्प्रदायिक हत्याऐं रुक सकेगी, लेकिन इससे हत्यारों का अंत नहीं होगा। यह सत्य है कि संगठित अपराध समाज में सामाजिक रूगणता का एक भाग था।" गाँधी ने 1940 में लिखा था

कि, “गुण्डें आकाश से नहीं गिरे थे न ही वें बुरी आत्माओं की तरह थें, वे समाज की कुव्यवस्था के उत्पाद है और इसलिए उनके अस्तित्व के लिए समाज ही जिम्मेदार है।”

इस प्रकार नोआखली में गाँधी द्वारा किए गए प्रयायों में दोनों समुदायों के समक्ष आदर्श भाई-चारे के रूप में रहने का उदाहरण प्रस्तुत करनाए साफ-सफाई, स्वास्थ्य, स्वच्छता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार करना शामिल था।

फरवरी 1947 के अंत तक ज्यादातर कार्य सम्पन्न हो चुके थेए लेकिन शरणार्थियों की समस्या अभी तक बनी हुई थी इसलिए गाँधी जी यह जानकर आश्चर्यचकित हुए कि बंगाल सरकार शरणार्थियों के केम्प बंद कर चुकी थी। इसलिए नोआखली के जिला मजिस्ट्रेट को लिखा कि, “जहाँ तक मैं समझता हूँ आपको बिना सूचना के एकाएक राशन नहीं रोकना चाहिएए जो शरणार्थियों में बाँटा जाता है।” 17 फरवरी 1947 को गाँधी जी देवीपुर पहुँचे जहाँ एक बड़ी भीड़ ने उनका स्वागत किया। यहाँ गाँधीजी एक कांग्रेस कार्यकर्ता पर माल्यार्पण कार्यक्रम में हुए समय और धन की बर्बादी पर नाराज हुए। 21 फरवरी 1947 को गाँधी जी बिसकाताली पहुँचे जहाँ स्वागत समिति द्वारा हाथों से लिखे विज्ञापनों में गाँधी से बिहार जाने की मांग की गई थी और नोआखली में समय बर्बाद नहीं करने को कहाँ गया। आखिर में गाँधी जी हेमचार पहुँचे और वहाँ उन्होंने ठक्कर बापा के साथ लम्बा विचार-विमर्श किया और स्थिति को समझने में समय का सदुपयोग किया। यहाँ उन्हें सैयद मोहम्मद की और से एक पत्र प्राप्त हुआ जिसमें उन्हें बिहार जाने का अनुरोध किया गया था, क्योंकि बिहार की स्थिति की काफी खराब हो चुकी थी और सैयद मोहम्मद मानते थे कि गाँधी जी की उपस्थिति इस स्थिति को सुधारेगी और हिन्दुओं और मुसलमानों का कल्याण होगा। 2 मार्च 1947 को गाँधी बिहार के लिए रवाना हो गये।

इस प्रकार गाँधी जी चार माह तक बंगाल रहे, जिसमें 6-20 नवम्बर 1946 तक 11 गांवों का दौरा किया। उसके बाद एक महिने तक श्रीरामपुर में ठहरे और 2 जनवरी से 2 मार्च 1947 तक उन्होंने नोआखली के 56 गांवों का पैदल दौरा किया और 116 मील लम्बी यात्रा की। इन सभी स्थलों का उन्होंने तीर्थ यात्रियों की तरह दौरा किया। क्योंकिजिस तरह तीर्थ यात्री नंगे पांव दौरा करते है वैसे ही उन्होंने बंगाल के इन क्षेत्रों का दौरा किया।

13.5 सारांश

अगस्त 1946 में पूर्वी बंगाल के नोआखली में मुस्लिम लीग के प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस मनाने के दौरान भड़के दंगे, जिसमें दबाव पूर्वक धर्मान्तरण, हत्याऐं, लूट, बलात्कार, आगजनी आदि घटनाऐं हो रही थी। इन दंगों को रोकने के गाँधी जी नोआखली पहुँचे और उन्होंने चार महिने तक वहाँ गांव में घूम-घूम कर प्रार्थना सभाओं का आयोजन कर हिन्दू और मुस्लिम समुदायों के बीच विश्वास और मित्रता बहाल कर एकता स्थापना की। उन्होंने गाँवों में अपने रचनात्मक कार्यक्रमों के तहत – स्वास्थ्य, साफ-सफाई, स्वच्छता तथा आत्म-शुद्धिकरण के कार्यो

पर बल दिया, साथ ही गाँव छोड़कर भागे लोगों की वापसी के लिए राहत और पुनर्वास कार्य पर बल दिया। गाँधी जी ने गांव-गांव में शान्ति समितियों का गठन कर दोनों समुदायों के बीच आत्मिक-एकता की स्थापना पर बल दिया। बंगाल सरकार के मुख्यमंत्री सूरावर्दी गाँधी जी को बार-बार बंगाल छोड़ बिहार जाने पर बल देते रहे, लेकिन गाँधी जी निरन्तर सत्य और अहिंसा के मार्गो का अनुसरण करते हुऐ साम्प्रदायिक तनाओं को कम करने का प्रयास करते रहे। इस सम्बंध में गाँधी जी को काफी सफलता मिली, वे स्वयं पूर्वी बंगाल के हिन्दू अल्पसंख्यकों में विश्वास बहाल करने व उनके व्याप्त भय को दूर करने के लिए मुसलमानों की बस्तियों में अकेले घूमने व मुसलमान भाईयों के साथ रहने की रणनीति का अनुसरण किया ताकि हिन्दूओं मुसलमानों के प्रति विद्यमान भय और शंका समाप्त हो और एकता कायम हो। अंत में 3 मार्च 1947 को बिहार के लिए रवाना हो गया क्योंकि वहाँ भी साम्प्रदायिक दंगों के कारण स्थिति दिन प्रतिदिन खराब होती जा रही थी।

नौआखाली सत्याग्रह के दौरान गाँधीजी ने एकला चलो की रणनीतिक अहिंसा की पद्धति का परीक्षण किया और उसकी सीमाओं को जाना व समझा लेकिन अहिंसा को त्यागा नहीं। बल्कि अहिंसक साम्प्रदायिक एकता स्थापना में मिली सफलता ने उनके विश्वास को और मजबूत किया।

13.6 अभ्यास प्रश्न

1. नोआखली दंगों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व कारणों की व्याख्या कीजिए।
2. नोआखली सत्याग्रह में गाँधी के नेतृत्व और रणनीति का वर्णन कीजिए।
3. क्या गाँधी जी नोआखली सत्याग्रह में अपने उद्देश्यों में सफल रहे थे?

13.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. नन्दा, बी.आर., गाँधी एण्ड हिज क्रिटिक्स, ओ.यू.पी. नई दिल्ली, 1995
2. कस्तूरी, भस्यम, वाकिंग अलॉन, विजन बुक्स, नई दिल्ली, 2008
3. चन्द्रा विपिन, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1995

इकाई - 14

महात्मा गाँधी: एक जननेता के रूप में

इकाई रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 दक्षिण अफ्रीका में सत्यग्रह की शुरूआत

14.3 भारत में गाँधी का पदार्पण एवं नेतृत्व

14.3.1 चम्पारण सत्याग्रह (1917)

14.3.2 अहमदाबाद सत्याग्रह (1917)

14.3.3 खेड़ा सत्याग्रह (1918)

14.4 अखिल भारतीय संघर्ष की शुरूआतः रॉलत सत्याग्रह (1919)

14.5 खिलाफत आन्दोलन और गाँधी (1920)

14.6 असहयोग आन्दोलन (1920-1922)

14.6.1 निषेधात्मक कार्यक्रम

14.6.1 रचनात्मक कार्यक्रम

14.7 सविनय अवज्ञा आन्दोलन (1930-1934)

14.8 भारत छोड़ो आन्दोलन (1942)

14.9 समीक्षा

14.10 सारांश

14.11 अभ्यास प्रश्न

14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

14.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय मे गाँधी को एक नेतृत्वकर्ता के रूप में दिखाया गया है। उनके सत्याग्रह प्रयोगों तथा जनआन्दोलनों के विभिन्न रूपों की विस्तार से चर्चा की गई है। इस अध्याय के अध्ययन के बाद आपः

- एक जननेता के रूप में गाँधी के आविर्भाव को रेखांकित कर सकेंगे
- सत्याग्रह व अन्य आन्दोलनों के गाँधीवादी तरीकों से परिचित हो सकेंगे
- एक सीमित जनाधार के संगठन कांग्रेस को एक राष्ट्रव्यापी भूमिका में सफलतापूर्वक बदल देने के उनके प्रयासों को देख सकेंगे
- साम्प्रदायिक सौहार्द व रचनात्मकता द्वारा आम जनता को एक महान उद्देश्य से जोड़ देने के उनके तकनीकों की विवेचना कर सकेगें।

14.1 प्रस्तावना

19वीं संदी के उत्तरार्द्ध में जहाँ उदारवादी राष्ट्रवादी कहे जाने वाले बुद्धिजीवियों ने औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के बारे में एक जटिल समझ सफलतापूर्वक विकसित कर ली थी वहीं 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध में चरमपंथी कहे जाने वाले नेताओं ने उपनिवेशवाद के खिलाफ संघर्ष की राजनीति को जन्म दिया था। लेकिन गाँधी के दौर में आकर ही जनता और नेताओं के बीच स्वतःस्फूर्तता और संगठन के बीच बेहतर समझ-बूझ और व्यवहार विकसित हुआ। सबसे बढ़कर यह गाँधी ही थे, जिन्होंने जनता के बीच जाकर उन्हें लामबंद किया और राष्ट्रीय आन्दोलन की नींव इस अवधारणा पर रखी कि आम जनता राजनीति की विषय वस्तु है, उसका भाजन नहीं।

दक्षिण अफ्रीका के अपने प्रवास के दिनों से ही गाँधीजी अपने जीवन भर जनता-नेता द्वन्द्वात्मकता की समस्या से जूझते रहे और उनकी राजनीति की सबसे सुदृढ़ आधार जनता का संघर्ष कर सकने की क्षमता, उसकी निडरता, उसकी आत्म बलिदान की भावन, साहस और उसके नैतिक बल पर उनका अपार विश्वास था।

गाँधी जी के नेतृत्व को निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत समझा जा सकता है :-

●सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ दक्षिण अफ्रीका में उनके द्वारा चलाये गये सत्याग्रह

●भारत में सार्वजनिक जीवन (नेतृत्व) का प्रारंभिक चरण

चम्पारण सत्याग्रह

अहमदाबाद सत्याग्रह

खेड़ा सत्याग्रह

रॉलत एक्ट के विरूद्ध संघर्ष

खिलाफत व असहयोग आन्दोलन का नेतृत्व

सविनय अवज्ञा आन्दोलन का नेतृत्व

भारत छोड़ो आन्दोलन का नेतृत्व

गाँधी जी के सार्वजनिक जीवन की शुरूआत का प्रथम दर्शन हमें उनके दक्षिण अफ्रीका के प्रवास में मिलता है। ध्यातव्य है कि दादा अब्दुल्ला के मुकद्दमें की पैरवी करने दक्षिण अफ्रीका गये गाँधी को वहाँ की रंगभेद की नीति तथा भारतीय व एशियाई देशों के नागरिकों के प्रति होने वाले अत्याचारों ने अंदर तक झिंझोड़ कर रख दिया और एक शर्मीला बैरिस्टर तीन वर्षों के भीतर ही एक प्रमुख नेतृत्वकर्ता बन गया। उन्होंने भारतीय श्रमिकों का संगठन, मंत्रियों को स्मरणपत्र तथा समाचार पत्रों में ढेर सारे लेख भारतीयों की दशा में सुधार लाने के उद्देश्य से लिखना शुरू कर दिया। दादा अब्दुल्ला के मुकद्दमें की समाप्ति के बाद जब उन्होनें भारत आने का निर्णय किया उसी समय उनके तमाम भारतीय सहयोगियों ने उनसे कुछ दिन और वहाँ रूककर अधिकार प्राप्ति हेतु संघर्ष में भारतीयों के मार्गदर्शन का आग्रह किया। मानवता के महान पैरोकार गाँधी उनके आग्रह को नकार नहीं सके और उन्होनें दक्षिण अफ्रीकी सरकार के अन्यायकारी कानूनों के विरूद्ध अंहिसक आन्दोलन के शुरूआत का निश्चय कर लिया।

14.2 दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह की शुरूआत

वैसे तो 1894 में ही जब प्रिटोरिया की सरकार ने हिन्दुस्तानियों को मताधिकार से वंचित करने काविधेयक पारित किया तभी गाँधी ने उस विधेयक के विरोध में गंभीर सघर्ष के शुरूआत की सलाह लोगों को दी तथा लोगों को संगठित करने के उद्देश्य से 22 मई 1894 को 'नाटाल इण्डियन कांग्रेस' की स्थापना की परन्तु दक्षिण अफ्रीका में गाँधी के सत्याग्रह का आरम्भ 22 अगस्त 1906 को ट्रांसवाल सरकार के 'एशियाटिक रजिस्ट्रेशन बिल' के विरूद्ध संघर्ष से हुआ । इसमें भारतीयों को अपमानित करने के उद्देश्य से यह प्रावधान किया गया था कि आठ वर्ष की आयु से प्रत्येक भारतीय का रजिस्ट्रेशन आवश्यक था और परमिट की जाँच के लिए पुलिस

कभी भी भारतीयों के घर में घुसकर पूछताछ कर सकती थी। इसके अतिरिक्त भारतीयों से कहीं भी रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र के लिए पूछताछ की जा सकती थी। गाँधीजी ने लम्बे समय तक भारतयों के नागरिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष किया किन्तु आशानुकूल परिणाम न मिलने पर गाँधीजी ने सत्याग्रह करने का निश्चय किया।

इन प्रावधानों के विरूद्ध गाँधीजी ने 11 सितम्बर, 1906 को जोहान्सबर्ग के एम्पायर थियेटर में यह निर्णय लिया कि वे इस अत्याचार का विरोध करेंगे। यहाँ पर भाषण देते हुए गाँधी जी ने कहा, “मेरे सामने केवल एक ही रास्ता है वह यह है कि मैं ऐसे कानून के समक्ष समपर्ण करने के पूर्व मरना पसन्द करूंगा। यहाँ तक कि सब लोग भी मुझे छोड़कर चले जायेंगे तो भी मैं अकेला ही अपने व्रत पर दृढ़ बना रहूँगा।” इसी प्रतिज्ञा को सत्याग्रह का शुभारम्भ माना गया।

इस आन्दोलन ने पूरे उपनिवेश में एक भूचाल का काम किया तथा गाँधी को 10 जनवरी 1908 को दो मास के कारावास की सजा मिली। इसी बीच एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम में दक्षिणी अफ्रीकी सरकार के प्रतिनिधि जनरल स्मट्स ने गाँधी से समझौता किया कि यदि भारतीय स्वेच्छा से अपना रजिस्ट्रेशन कराने पर सहमत होते हैं तो वे इस कानून को रद्द कर देंगे। समझौते के आधार पर गाँधी व अन्य की रिहाई हो गयी और गाँधी ने स्वयं अपना रजिस्ट्रेशन कराया परन्तु फिर भी बिल को रद्द नहीं किया गया। इस अनुभव से गाँधी को गहरा धक्का लगा।

गाँधी ने अब आन्दोलन की रूपरेखा बदल दी और यह निर्णय किया कि अब सभी रजिस्ट्रेशन पत्रों की होली जलाएंगे व हरेक स्थान पर न घूमने के आदेशों की अवहेलना जारी रखते हुए स्वेच्छा से जेल जायेंगे। अनवरत् आन्दोलन जारी रखने से सत्याग्राहियों की आर्थिक स्थिति खराब होने लगी। इसी बीच जर्मन नागरिक केलेन बाख ने गाँधी को सहायता के उद्देश्य से 1100 एकड़ का फार्म खरीद कर सत्याग्रहियों को सहायता के लिए प्रदान किया। गाँधी ने इसे टालस्टॉय फॉर्म नाम दिया। यह स्थान गाँधी के नवीन प्रयोगों का स्थल बना जहाँ सभी धर्मों, जातियों, तथा भिन्न प्रकार के लोग एक साथ रहते थे। गाँधी ने यहाँ अहिंसा, सामाजिक सद्भाव, शिक्षा तथा श्रम सम्बन्धी विचारों का परीक्षण व कार्य रूप में उनका प्रयोग किया।

गाँधी ने एशियाटिक बिल का विरोध के लिए जिस सत्याग्रह की शुरूआत की वह लगभग चार वर्षों तक चला। इस सत्याग्रह के दौरान एक महत्वपूर्ण घटना यह रही कि एक सरकारी मेहमान के रूप में गोपालकृष्ण गोखले ने दक्षिण अफ्रीका का दौरा किया। गाँधी से उनकी मुलाकात हुई। गोखले ने गाँधी को विश्वास दिलाया कि एशियाटिक बिल रद्द कर दिया जायेगा। वे आन्दोलन वापस ले लें लेकिन गाँधी ने अपनी आशंका जताई जो अन्ततः सच साबित हुई। गोखले की यात्रा का दूसरा महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि गोखले ने गाँधी को भारत की दयनीय हालत से परिचित कराया। इस तरह गाँधी भारत में अपने अभियान के शुरूआत से पूर्व ही यहाँ की स्थिति से काफी परिचित हो चुके थे।

इसी तरह की एक अन्य महत्वपूर्ण घटना दक्षिण अफ्रीकी सुप्रीम कोर्ट द्वारा एक भारतीय दम्पत्ति के विवाह को गैर-कानूनी घोषित करना साबित हुआ। कोर्ट के इस निर्णय से हिन्दू, मुस्लिम व पारसी सभी विवाह अवैध घोषित हो गये। इससे गैर इसाई महिलाओं में व्यापक असंतोष उत्पन्न हुआ तथा सत्याग्रह आन्दोलन और तेज हुआ। अब इसमें महिलाओं एवं मजदूरों की भी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित होने लगी। गाँधी ने एक सार्वजनिक भाषण के दौरान कहा कि "यह संघर्ष मानवता के लिए है और इस प्रकार यह धर्म की लड़ाई है।"

इस आन्दोलन के पक्ष में दक्षिण अफ्रीका में रेलवे के गोरे कर्मचारी भी हड़ताल पर चले गए। इस तरह यह सत्याग्रह अत्यन्त व्यापक हो गया लेकिन इसी बीच गाँधी ने यह कहते हुए कि "सत्याग्रह का उद्देश्य किसी को बर्बाद करना, नीचा दिखाना या कमजोर बनाकर उस पर विजय प्राप्त करना नहीं अपितु सत्याग्रही को चाहिए कि वह अपनी ईमानदारी, बहादुरी एवं आत्मत्याग से विरोधी को प्रभावित करे और उसके हृदय को जीते। गाँधी के इस सहयोगी रूख ने जनरल स्मट्स के हृदय को प्रभावित किया और 30 जून 1914 को दोनों के मध्य एक समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत सभी विवाहों को वैध घोषित किया गया तथा नाटाल के भारतीय मजदूरों पर लगने वाले कर को समाप्त घोषित किया गया। यह भी तय हुआ कि 1920 के बाद भारत से मजदूरों को नहीं लाया जायेगा। गाँधी ने इसे दक्षिण अफ्रीकी भारतीयों के लिए 'मैग्नाकार्टा' की संज्ञा दी।

दक्षिण अफ्रीकी सत्याग्रह का महत्वपूर्ण परिणाम यह रहा कि यह व्यापक स्तर पर अहिंसा के सामाजिक एवं राजनीतिक प्रयोग का महान उदाहरण बना जिसने एक अपरिपक्व व स्वभावतः संकोची बैरिस्टर को परिपक्व और अदम्य साहसी नेता बना दिया। यही वह जगह थी जहाँ गाँधी जी ने भावी कार्यक्रमों के लिए स्वयं को तैयार कर लिया। इस तरह गाँधी का प्रथम कर्मक्षेत्र दक्षिण अफ्रीका बना जहाँ गाँधीने सर्वप्रथम सत्याग्रह का सफल प्रयोग किया और एशिया के एक प्रभावशाली नेता के रूप में उभरे।

14.3 भारत में गाँधी का पदार्पण व नेतृत्व

दक्षिण अफ्रीका में अपने सत्याग्रह के सफल प्रयोग से उत्साहित गाँधी 09 जनवरी 1915 को भारत वापस लौटे। अपने राजनैतिक गुरू गोखले (गोपालकृष्ण गोखले को गाँधी अपना राजनैतिक गुरू मानते थे) के निर्देशानुसार उन्होनें भारतीय लोगों की दशा व यहाँ के परिस्थितियों का अध्ययन करने तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओ के विचारों को जानने के उद्देश्य से अनेक स्थानों का भ्रमण किया। दक्षिण अफ्रीका की तरह हीगाँधी ने यहाँ भी 1915 में 'साबरमती आश्रम, अहमदाबाद) की स्थापना की। भारतीय परिवेश में भी गाँधी ने सत्याग्रह का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जो आगे चलकर अमूल्य साबित हुए। अपने नेतृत्व के अद्भुत गुण से राष्ट्रीय आन्दोलन के संचालन से पूर्व उन्होनें कई स्थानीय समस्याओं का सत्याग्रह द्वारा सफलतापूर्वक निराकरण किया। इनमें प्रमुख थे -

14.3.1 चम्पारण सत्याग्रह (1917)

गाँधी ने सर्वप्रथम भारत में बिहार के चम्पारण नामक स्थान पर किसानों का नेतृत्व किया। ध्यातव्य हो कि चम्पारण के राजकुमार शुक्ल के आग्रह पर गाँधी चम्पारण पहुँचे। यहाँ के किसानों को अपनी कुल भूमि के 3/20 हिस्से पर अनिवार्यतः नील की खेती करनी पड़ती थी। इसे 'तीनकठिया पद्धति' कहते थे। गाँधी की इस यात्रा को वहाँ के कमिश्नर ने अवैध घोषित करते हुए उन्हें चम्पारण छोड़ देने का आदेश दिया। गाँधी ने उस आदेश को यह कहते हुए मानने से इंकार कर दिया कि भले ही उन्होनें कानून की अवहेलना की हो किन्तु उनके लिए मानवता के उच्चतर कानून को अन्तःकरण की आवाज को मानना आवश्यक है। साथ ही गाँधी ने अदालत में सरकारी आदेश न मानने की अपनी गलती स्वीकार की।

अन्ततः इस मुकदमे में गवर्नर ने अपनी गलती स्वीकार की और गाँधी से सहयोग माँगा। गाँधी की सलाह पर एक 'कृषक जाँच समिति' का गठन किया गया जिसके सदस्य गाँधी भी बनाये गये। जाँच के उपरान्त गाँधी की सलाह पर 'तीनकठिया पद्धति' समाप्त घोषित की गई और गाँधी का पहला प्रयास सफल रहा। इस घटना ने गाँधी को आम किसानों में लोकप्रिय बनाया।

14.3.2 अहमदाबाद सत्याग्रह (1917)

अहमदाबाद मिल मालिकों व मजदूरों के बीच 'प्लेग बोनस' को लेकर छिडे विवाद ने गाँधी को मजदूरों के बीच अपने सत्याग्रह के प्रयोग और नेतृत्व का अवसर प्रदान किया। मजदूरों की माँग थी कि प्रथम विश्वयुद्ध के बाद बढ़ी मंहगाई की तुलना में उन्हें मिलने वाला बोनस काफी कम है, जबकि मिल मालिक इसे समाप्त करना चाहते थे। गाँधी ने मिल मालिकों और मजदूरों को इस पूरे मामले को एक ट्रिब्यूनल को सौंपने पर राजी कर लिया लेकिन मिल मालिकों ने शीघ्र ही हड़ताल का बहाना करके अपने को ट्रिब्यूनल से अलग कर लिया। उन्होंने मजदूरों के लिए 20 प्रतिशत बोनस की घोषणा की साथ ही इसे न स्वीकार करने वाले मजदूरों को नौकरी से निकाल देने की धमकी दी। इस पूरे मामले से गाँधी बहुत क्षुब्ध हुए तथा मजदूरों को हड़ताल पर जाने को कहा। गाँधी ने 35 प्रतिशत बोनस की माँग की। उन्होनें मजदूरों से अहिंसा का मार्ग अपनाने का आह्वान किया तथा उनके उत्साह हेतु खुद भी अनशन पर बैठने का निर्णय लिया। गाँधी के इस निर्णय का मिल मालिकों पर व्यापक असर पड़ा और उन्होनें 35 प्रतिशत बोनस देना स्वीकार किया। इस तरह अन्ततःगाँधी ने मजदूरों के हितों का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया।

14.3.3 खेड़ा सत्याग्रह (1918)

गुजरात खेड़ा जिले के किसानों की स्थिति अतिवृष्टि (1917) एवं अनावृष्टि (1918) के कारण अत्यन्त सोचनीय हो गई थी। परन्तु फिर भी सरकार ने किसानों को लगान माफ करने से स्पष्ट इंकार कर दिया था। गाँधी

का ध्यान इस ओर आकृष्ट कराया गया तो उन्होंने फरवरी 1918 में बम्बई में सत्याग्रह की घोषणा की। वह सरकार को बताना चाहते थे कि नागरिकों की राय के बिना वह उन पर हुकूमत नहीं चला सकती। गाँधी ने किसानों को लगान न देने की शपथ दिलाई। साथ ही यह भी कहा कि अगर सरकार गरीब किसानों का लगान माफ कर देती है तो, वे किसान जो लगान दे सकते हैं स्वेच्छा से लगान दे देंगे। चार महीने की संघर्ष के बाद सरकार ने यह निर्देश दिया कि केवल उन्ही किसानों से लगान वसूली की जाए जो देने की स्थिति में है। इस तरह गाँधी का मकसद पूरा हो गया और आन्दोलन समाप्त घोषित कर दिया गया।

चम्पारण, अहमदाबाद और खेड़ा के सत्याग्रह के प्रयोगों ने गाँधी को प्रारम्भिक तौर पर अपने नेतृत्व के तकनीक को आजमाने का अवसर दिया। साथ ही गाँधी को देश की जनता विशेषकर किसानों-मजदूरों के नजदीक आने व उनकी समस्याओं को जानने का अवसर उपलब्ध कराया था। गाँधी को इसके माध्यम से जनता की ताकत व कमजोरियों का भी एहसास हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि राजनीतिक कार्यकर्ता विशेषकर युवा पीढ़ी उनको श्रद्धा की नजर से देखने लगे और इस दौरान गाँधी जी ने भारतीय जनता के बीच एक जन नेता के रूप में अपनी पहचान बना ली।

14.4 अखिल भारतीय संघर्ष की शुरूआतः रॉलत सत्याग्रह (1919)

चम्पारण अहमदाबाद और खेड़ा के सत्याग्रह की सफलता ने गाँधी को साहसी और भारतीय जनमानस में काफी लोकप्रिय बना दिया था। अपने इसी विश्वास के कारण उन्होंने फरवरी 1919 मे प्रस्तावित रॉलत एक्ट (इसके अन्तर्गत आतंकवादी गतिविधियों की संभावना के नाम पर ब्रिटिश सरकार किसी भी भारतीय को बंदी बना सकती थी), के विरूद्ध देशव्यापी आन्दोलन का आह्वान किया। कहा जा सकता है कि इसी आन्दोलन ने गाँधी को पहली बार एक अखिल भारतीय नेतृत्व का अवसर प्रदान किया।

संवैधानिक प्रतिरोधों के बेअसर होने पर गाँधी ने पुनः सत्याग्रह के शुरूआत की पहल की। देशव्यापी हड़ताल, उपवास व प्रार्थना सभाओं को आयोजित करने का निर्णय हुआ। कुछ निश्चित कानूनों की अवमानना का भी निर्णय हुआ। इस हेतु 6 अप्रेल की तारीख निश्चित हुई। किन्तु दिल्ली में कुछ गलतफहमीवश 30 मार्च को ही हड़ताल आयोजित हो गई और काफी हिंसा भड़की। जल्दी ही यह हिंसा पंजाब व बम्बई तक भी फैल गई। गाँधी ने गुजरात और बम्बई की यात्रा कर लोगों से शान्ति बनाये रखने की अपील की। इस बीच पंजाब में सैफुद्दीन किचलू एवं डाक्टर सत्यपाल की गिरफ्तारी के विरोध में 13 अप्रेल 1919 को जालियाँवाला बाग (अमृतसर) में एक सभा आयोजित हुई। इस सभा पर जनरल डायर ने निहत्थी जनता पर गोलियाँ चलाने का आदेश दिया जिससे व्यापक नरसंहार हुआ तथा हजार की संख्या में लोग मरे। पंजाब में मार्शल लॉ लागू कर दिया गया और हिंसा की बढ़ती भूमिका को देख गाँधी ने 18 अप्रेल को सत्याग्रह के वापसी की घोषणा कर दी।

इस तरह रॉलत एक्ट तथा जालियाँवाला बाग घटनाक्रम ने पहले अंग्रेजी हुकूमत के प्रति नरम रवैया रखने वाले एक नेता को पूरी तरह असहयोगी बना दिया।

14.5 खिलाफत आन्दोलन और गाँधी (1920)

प्रथम विश्वयुद्ध में अंग्रेजों ने मुसलमानों का सहयोग प्राप्त करने के लिए तुर्की के प्रति उदार रवैया बरतने का वादा किया था। किन्तु, युद्धोपरान्त वे अपने वायदे से मुकर गये और तुर्की के खलीफा, जिन्हें भारतीय मुसलमान भी अपना धर्मगुरू स्वीकार करते थे, को अपदस्थ कर दिया तथा तुर्की का बँटवारा करने की संधि कर ली। भारतीय मुसलमानों में अंग्रेजों के इस निणर्य के विरूद्ध तीव्र प्रतिक्रिया हुई और वे स्वयं को ठगा हुआ सा महसूस करने लगे। नवम्बर 1919 में एक खिलाफत सम्मेलन बुलाया गया जिसमें गाँधी भी विशेष आमंत्रित अतिथि के रूप में शामिल हुए। गाँधी ने भी अनुभव किया कि अंग्रेजों ने मुसलमानों को धोखा दिया है।

इस क्रम में गाँधी ने खिलाफत कमेटी को अंग्रेजी सरकार के खिलाफ अहिंसक आन्दोलन की सलाह दी। 9 जून 1920 को इलाहाबाद में हुए एक सम्मेलन में खिलाफत नेताओं ने सर्वसम्मति से गाँधी के अहिंसक आन्दोलन के सुझाव को स्वीकृति प्रदान की तथा गाँधी को उसके नेतृत्व की जिम्मेदारी सौंपी। इस प्रकार तत्कालीन समय में वे मुस्लिमों के भी सर्वमान्य नेता के रूप में सामने आये। कालान्तर में उन्होनें खिलाफत को भी असहयोग आन्दोलन से सम्बद्ध करने का निर्णय लिया और इस आन्दोलन द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता का एक मजबूत आधार तैयार किया।

14.6 असहयोग आन्दोलन (1920-22)

ब्रिटिश सरकार द्वारा 1917 में गठित मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड कमेटी के रिपोर्ट के आधार पर भारतीय शासन अधिनियम, 1919 पारित किया गया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इन सुधारों को (मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार) पूरी तरह अपर्याप्त, असंतोषजनक तथा निराशाजनक बताया। सितम्बर 1920 में कलकत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन बुलाया गया जिसमें मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के अन्तर्गत निर्मित भारतीय परिषद अधिनियम पर विचार किया गया। गाँधी ने इसी सत्र में ‘असहयोग कार्यक्रम’ प्रस्तुत किया। उदारवादी नेताओं के विरोध के बावजूद वे अपने विचार पर दृढ़ रहे तथा कांग्रेस ने उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। तत्पश्चात् 1920 दिसम्बर में नागपुर में हुए नियमित कांग्रेस अधिवेशन में भी असहयोग प्रस्ताव को भारी बहुमत से स्वीकृति मिली। कांग्रेस ने अपना लक्ष्य घोषित किया – ‘शान्तिपूर्ण और वैधानिक तरीकों द्वारा स्वराज की प्राप्ति।’ साथ ही इस आन्दोलन के नेतृत्व का जिम्मा पुनः गाँधी को सौंपा गया। पट्टाभि सीतारमैया ने इसे ‘भारतीय इतिहास में एक नूतन युग के प्रारंभ’की संज्ञा दी है।

असहयोग आन्दोलन की शुरूआत करने से पूर्व गाँधी ने देशव्यापी यात्राएँ की तथा लोगों को इसके कार्यक्रमों व उद्देश्य से अवगत कराया और उनसे सहयोग की अपील की। गाँधी ने इसके संचालन के लिए दो प्रकार के कार्यक्रम बनाये – 1) निषेधात्मक तथा 2) रचनात्मक

14.6.1 निषेधात्मक कार्यक्रम

इसका अर्थ था सरकार के प्रति असहयोग करना। इन कार्यक्रमों में शामिल थे - सरकारी उपाधियों का बहिष्कार सरकारी विद्यालयों एवं अदालतों का बहिष्कार, विधान-परिषदों का बहिष्कार, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, दमनकारी कानूनों की सविनय अवज्ञा, सरकारी सेवाओं का बहिष्कार, करबंदी तथा सरकारी उत्सवों, आयोजनों का बहिष्कार, आदि।

14.6.2 रचनात्मक कार्यक्रम

इसके अन्तर्गत उन कार्यों को शामिल किया गया जो जनता के कल्याण के साथ राष्ट्रीयता की भावना की अभिवृद्धि में सहायक हों। ऐसे प्रमुख कार्यक्रम थे - पंचायतों का गठन, कांग्रेस के झंडे के नीचे देश को संगठित करना, विदेशी कपड़ों की जगह खादी का प्रयोग करना, हिन्दू-मुस्लिम एकता का पुनस्र्थापना, दलितों का उत्थान, मद्यपान निषेध हेतु प्रयास करना, राष्ट्रीय विद्यालयों एवं कालेजों की स्थापना करना, आदि।

गाँधी ने प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान प्राप्त 'केसर-ए-हिंद' की उपाधि ब्रिटिश सरकार को वापस लौटाकर इस आंदोलन की शुरूआत की। इसके साथ ही हजारों की संख्या में लोगों ने सरकारी अदालतों, विध्यालय महाविध्यालयों का बहिष्कार आरंभ कर दिया और बिहार, काशी, गुजरात एवं अलीगढ़ में राष्ट्रीय विद्यापीठ खोले गए। इस आंदोलन में हिन्दू और मुसलमानों ने समान रूप से भाग लिया। साथ ही सरकार का दमन चक्र चलता रहा। इसी बीच 5 फरवरी 1922 को चौरी-चौरा में हुई एक हिंसक घटना ने गाँधी को पूरी तरह विचलित कर दिया व 12 फरवरी को बारदोली में उन्होंने असहयोग आन्दोलन को वापस लेने का ऐलान कर दिया।

गाँधी के आंदोलन वापस लेने के निर्णय की तीव्र आलोचना हुई। नेहरू, सुभाषचन्द्र बोस आदि अनेक नेताओं ने इसे दुर्भाग्यपूर्ण बताया लेकिन गाँधी इससे तनिक भी विचलित न हुए। गाँधी एक दूरदृष्टा थे तथा वह भविष्य की रणनीति पर सर्तकतापूर्वक काम कर रहे थें। एक ओर जहाँ वे अपने अहिंसा के मार्ग का त्याग नहीं कर सकते थे वहीं दूसरी ओर एक भविष्यदर्शी नेता के रूप में वे ब्रिटिश सरकार को चौरी-चौरा घटना के आघर पर सम्पूर्ण आन्दोलन को कुचलने का मौका नहीं देना चाहते थे। दूसरी ओर उन्हें यह भी स्पष्ट भान था कि अहिंसक तथा निहत्थे लोगों पर हमले से पूरा जनमत उनके खिलाफ हो सकता है।

आन्दोलन को वापस लेने के पीछे गाँधी की मंशा उसकी उर्जा को बनाये रखने तथा जनता को हतोत्साहित होने से बचाये रखने की थी। ध्यातव्य है कि असहयोग आन्दोलन ब्रिटिश सरकार के खिलाफ पहला राष्ट्रवादी आन्दोलन था और ऐसे में प्रारम्भिक दौर में ही किसी तरह का हमला भविष्य के लक्ष्य को हमसे दूर कर सकता था। इस तरह असहयोग आन्दोलन के वापसी का निर्णय एक दूरदर्शी कदम था।

असहयोग आन्दोलन ने भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी आन्दोलन ने पहली बार देश की जनता को एकत्रित किया था। कांग्रेस को सही मायनों में देश के प्रत्येक वर्ग की वास्तविक प्रतिनिधित्व करने वाली संस्था के रूप में पहचान दिलाई तथा साम्प्रदायिक सौहार्द का अद्भूत नजारा पेश किया। नेहरू ने इस सम्बन्ध में कहा, "गाँधी के असहयोग आन्दोलन ने आत्म निर्भरता एवं अपनी संचित शक्ति का पाठ पढ़ाया।" असहयोग आन्दोलन के दौरान ही गाँधी की असाधारण प्रतिभा ने देशवासियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। गाँधी के कुशल नेतृत्व में कांग्रेस समाज के सबसे निचले हिस्से तक पहुँच गई और वे सम्पूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन के सर्वमान्य नेता के रूप में स्थापित हुए।

14.7 सविनय अवज्ञा आन्दोलन (1930-34)

गाँधी के नेतृत्व में दूसरा महत्वपूर्ण आन्दोलन था - सविनय अवज्ञा आन्दोलन। 1929 में हुई कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में 'पूर्ण स्वराज्य' का लक्ष्य घोषित किया गया तथा कांग्रेस कार्यकारिणी को यह अधिकार दिया गया कि वह सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करे। फरवरी 1930 में साबरमती आश्रम में हुई कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में गाँधी को इस बात का अधिकार दिया गया कि वह जब जैसे चाहें सविनय अवज्ञा आन्दोलन की शुरूआत कर सकते हैं। गाँधी जन आंदोलनों के मर्मज्ञ थे। उन्होनें सबसे पहला कार्य इस उद्देश्य से किया ताकि ब्रिटिश सरकार को जनता की दृष्टि में पूरी तरह गलत सिद्ध किया जा सके। इसी उद्देश्य से उन्होंने वायसराय को एक 11 सूत्रीय मांग पत्र सौंपा जिसमें मद्य निषेध, नमक कर का अंत, विदेशी वस्त्र पर आयात पर निषेध कर लगाया जाना, आदि शामिल था। साथ ही इस बात का विश्वास दिलाया गया था कि यदि ये माँगे मान ली गई तो वह प्रस्तावित आन्दोलन नहीं करेगें। परन्तु लार्ड इरविन ने यह कहते हुए कि इससे देश में अराजकता व अशान्ति के फैसले का खतरा है, मांगो को अस्वीकार कर दिया तथा प्रस्तावित आन्दोलन के दमन की रूप रेखा बनाना शुरू कर दिया। अब गाँधी बाध्य होकर आन्दोलन करने पर मजबूर हुए।

गाँधी की नजर में नमक कानून एक ऐसा कानून था जिससे समाज का अन्तिम व्यक्ति भी गंभीर रूप से प्रभावित हो रहा था। इसलिए ही उन्होनें इसे 'सर्वाधिक दमनकारी कानून' की संज्ञा दी। गाँधी ने निश्चय किया कि वह गांव-गांव पैदल चलकर समुद्र तट पहुँचेंगे और कानून तोडेंगे। लोगों को आकर्षित करने का यह अद्भुत तरीका था। अपनी निश्चित योजना के तहत गाँधी अपने चुने हुए 78 अनुयायियों के साथ 12 मार्च 1930 को साबरमती से डाँडी की ओर चल पड़े। 240 किमी0 लम्बा यह अभियान 24 दिनों में पूरा हुआ। 6 अप्रैल को गाँधी जी ने

समुद्रतट से मुट्ठी भर नमक उठाकर नमक कानून को तोड़ा और इस तरह सविनय अवज्ञा आन्दोलन की शुरूआत की। गाँधी की इस यात्रा ने लोगों के दिलों को आलोकित किया और उनमें राष्ट्रीयता के प्रति अद्भुत भावना का संचार किया। गाँधी जहाँ-जहाँ से गुजरते हजारों की भीड़ मार्गो के किनारों पर खड़ा होकर उनका अभिनंदन करती व चरखा चलाकर उनके प्रति सम्मान जताती।

यह एक ऐसा आन्दोलन था जो राष्ट्रीय आन्दोलन में आम जनता की भागीदारी की दृष्टि से बेमिसाल था। शीघ्र ही यह आन्दोलन देश के कोने-कोने में फैल गया। संयुक्त प्रान्त में जहाँ मजदूरों की हड़तालें विध्यालय कालेजों के बहिष्कार, किसानों की लगान बंदी आदि ने जोर पकड़ा वहीं उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त में खुदाई खिदमतगारों (जिन्हें लाल कुर्ती के नाम से भी जाना जाता है) ने ब्रिटिश उपनिवेश के खिलाफ अहिंसक आन्दोलन को संगठित किया तथा श्रमजीवियों के हालत में सुधार की मांग की। पेशावर में गढ़वाल रायफल के जवानों ने अपने ही देश के नागरिकों के खिलाफ गोली चलाने से इंकार कर यह स्पष्ट संकेत दिया कि अब वास्तव में अंग्रेजी राज्य की नींव हिलने लगी है।

अंग्रेजी सरकार द्वारा सत्याग्रहियों के प्रति क्रूरतापूर्ण रवैये के खिलाफ गाँधी ने वायसराय को अपने दूसरे कूच की सूचना दी तथा नमक कर न उठाये जाने की स्थिति में धरसाना नमक निर्माणशाला पर अधिकार कर लेने की घोषणा की। इसके मद्देनजर 4 मई को वायसराय ने गाँधी की गिरफ्तारी का आदेश दिया और उन्हें यरवदा जेल भेज दिया गया। लेकिन गाँधी के गिरफ्तारी की उग्र प्रतिक्रिया हुई और आन्दोलन और तेज हो गया। अमेरिकी पत्रकार वेब मिलर ने अंग्रेजी सरकार के दमन चक्र को बयाँ करते हुए लिखा है, "बीसेक देशों में समाचार भेजने के अपने कार्यकाल के 18 वर्षो के दौरान मैनें असंख्य नागरिक विद्रोह देखे हैं, दंगे, गली कूचों मे मारकाट और विद्रोह देखे हैं लेकिन धरसाना जैसा भयानक दृश्य मैंने अपने जीवन में कभी नहीं देखा है। सबसे आश्चर्यजनक बात स्वयंसेवकों का अनुशासन था। ऐसा मालूम पड़ता था कि उन्होंने गाँधी के अहिंसा के सिद्धान्त को पूरी तरह आत्मसात कर लिया हो।" 25 जनवरी 1931 को कोर्ट ने बिना शर्त गाँधी के रिहाई की घोषणा की। 5 मार्च 1931 को गाँधी-इरविन समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत सविनय अवज्ञा के स्थगन को स्वीकार किया गया तथा यह भी तय हुआ कि काँग्रेस द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में भाग लेगी। गाँधी कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए। लेकिन अनुदार दल की गाँधी-इरविन समझौते में रूचि नहीं थी। अतः उसने फिर फूट डालो-राज करो की नीति का अनुसरण जारी रखा। साम्प्रदायिक मुद्दों पर सम्मेलन फिर असफल हुआ। गाँधी इससे अत्यन्त क्षुब्ध हुए तथा निराश होकर वापस लौटे।

इसी बीच कांग्रेस ने सरकार को एक प्रस्ताव दिया कि यदि सरकार दमन का रूख छोड़ने को तैयार हो तो कांग्रेस सहयोग को तैयार है अन्यथा सविनय अवज्ञा आन्दोलन पुनः प्रारंभ करना पड़ेगा।

गाँधी जी ने पुनः सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारम्भ करने की घोषणा की, लेकिन इससे पूर्व ही गाँधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया। इससे सविनय अवज्ञा आंदोलन और अधिक तीव्र हो गया तथा जेल जाने वालों की संख्या 1 लाख 25 हजार तक पहुंच गई। गाँधीजी 8 मई, 1933 को रिहा कर दिए गए और 19 मई को आंदोलन 11 सप्ताह के लिए स्थगित कर दिया गया। इसके बाद व्यक्तिगत अवज्ञा आंदोलन प्रारम्भ किया गया और उसे भी अंततः 7 अप्रेल, 1934 में समाप्त कर दिया गया। सविनय अवज्ञा आंदोलन गाँधीजी के नेतृत्व में किया गया एक ऐसा अहिंसात्मक आंदोलन था जिसने भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की नींव हिला दी। सुभाष चन्द्र बोस ने गाँधी जी के डांडी अभियान की तुलना, एलबा, से लौटकर आने के बाद नेपोलियन के पेरिस अभियान से की। सविनय अवज्ञा आंदोलन के परिणामस्वरूप सन् 1935 के भारत शासन अधिनियम में ब्रिटिश सरकार को सीमित मात्रा में प्रान्तीय स्वायत्तता की मांग स्वीकार करनी पड़ी।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में सविनय अवज्ञा आन्दोलन दूसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण संघर्ष था। ज्यूडिथ ब्राउन के शब्दों में, "1930-34 के बीच गाँधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन से भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण आयाम जुड़ा। इसने समग्र राष्ट्र को अपने प्रभाव में ले लिया था। महिलाओं की जितनी भागीदारी इस आंदोलन में दिखी वह अभूतपूर्व थी। कहा जा सकता है गाँधी ने इस आन्दोलन के माध्यम से सम्पूर्ण राष्ट्र को जगाने का कार्य किया तथा अंग्रेजी साम्राज्य को बुरी तरह झकझोर कर रख दिया।" बी.एल. ग्रोवर ने लिखा है कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन के बाद भारत के राजनीतिक मंच पर उन्हे 'भारत भाग्य विधाता' की संज्ञा दी जाने लगी।

14.8 भारत छोड़ो आन्दोलन (1942)

भारत छोड़ो आन्दोलन, सम्पूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान भारतीय जनता की वीरता व लड़ाकूपन की अद्वितीय मिसाल पेश करता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जिन परिस्थितियों में यह संघर्ष छेड़ा गया वैसी प्रतिकूल परिस्थितियाँ कभी भी उत्पन्न नहीं हुई थीं। युद्ध की स्थिति की आड़ में अंग्रेजी सरकार ने राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रतिबंधित कर रखा था। भ्रमपूर्ण क्रिप्स प्रस्तावों के द्वारा भारतीय जनता को स्वशासन का काल्पनिक रूप दिखलाकर उसका समर्थन हासिल करने की ब्रिटिश सरकार की चाल को समझते गाँधी व अन्य राष्ट्रीय नेताओं को देर न लगी। क्रिप्स मिशन के तुरंत बाद ही गाँधी जी ने कांग्रेस कार्यसमिति के लिए एक प्रस्ताव तैयार किया जिसमें अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए कहा गया था। साथ ही यह भी कहा गया कि यदि अंग्रेज सरकार भारत से अपने साम्राज्य की समाप्ति की घोषणा कर दे तो कांग्रेस मित्र राष्ट्रों को युद्ध में सहयोग करेगी, अन्यथा गाँधी के नेतृत्व में 'स्वराज प्राप्ति का अहिसंक संघर्ष' प्रारम्भ किया जायेगा। इस प्रस्ताव को कांग्रेस कार्यसमिति ने 14 जुलाई 1942 को वर्धा में ही पारित कर दिया।

8 अगस्त 1942 को अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की ग्वालिया टैंक, बम्बई की बैठक में अंग्रेजों 'भारत छोड़ों' का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया। अपने ओजस्वी सम्बोधन में गाँधी ने कहा, "एक मंत्र है, छोटा सा मंत्र, जो मैं आपको देता हूँ। उसे आप अपने हृदय में अंकित कर सकते हैं और अपनी साँस-साँस द्वारा व्यक्त कर सकते हैं। वह मंत्र है – 'करो या मरो'। या तो हम भारत को आजाद करायेंगे या इस कोशिश में अपनी जान दे देंगे। अपनी गुलामी का स्थायित्व देखने के लिए हम जिंदा नहीं रहेंगे।" गाँधी के उस भाषण पर टिप्पणी करते हुए इंदु विद्यावाचस्पति ने लिखा है कि, "गाँधी उस रात ऐसे बोल रहे थे मानो उनकी अन्तरात्मा से भगवान बोल रहा हो।"

आन्दोलन के लिए एक विस्तृत कार्यसूची जारी की गई थी जिनमें नमक बनाना, गैर कानूनी सभाओं की सदस्यता, वकालत, शिक्षण संस्थानों, न्यायालयों आदि का परित्याग, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, बिना टिकट यात्रा करना, गाड़ियाँ रोकना, हड़ताल आदि शामिल थे। 9 अगस्त को प्रातः गाँधी सहित सभी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया तथा गाँधी को आगा खाँ पैलेस में कैद रखा गया। नेताओं की गिरफ्तारी सुनकर जनता में भारी आक्रोश उत्पन्न हो गया और सरकार की दमन नीति ने उनके भीतर विद्रोह की भावना पैदा कर दी, जनता ने परिवहन प्रणाली को नुकसान पहुँचाना, रेलवे व थानों को जलाने जैसी उग्र गतिविधियाँ शुरू कर दी। 'गाँधी की जय' तथा 'गाँधी को छोड़ दो' के साथ ही 'अंग्रेजों भारत छोड़ो'का नारा चारों ओर गूंजने लगा।

गाँधी को सरकार के दमन चक्र की तथा हिंसा की जानकारी हुई तो उन्होंने आत्मशुद्धि हेतु 21 दिनों का उपवास शुरू कर दिया (10 फरवरी 1943) को यद्यपि गाँधी की स्वास्थ्य काफी चिन्ताजनक हो गया फिर भी उन्होंने अपना उपवास सफलतापूर्वक पूरा किया। सरकार को यह आभास हो गया कि गाँधी की मुक्ति आवश्यक है। अतः 6 मई 1944 को गाँधी को जेल से छोड़ दिया गया।

8 अगस्त 1942 को शुरू किए गए भारत छोड़ो आन्दोलन का एकमात्र उद्देश्य भारत को स्वतंत्र कराना था। यद्यपि यह आन्दोलन अपने लक्ष्य की सिद्धि करने में सफल नहीं हुआ परन्तु इसके अत्यन्त दूरगामी परिणाम निकले। इसने जनता में असाधारण जागृति पैदा की, इसकी तीव्रता ने भारत के प्रति अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जनमत तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस तरह यह पूरे स्वतंत्रता आन्दोलन का सर्वाधिक महत्वूपर्ण घटक साबित हुआ।

14.9 समीक्षा

भारतीय राष्ट्रवासियों के सर्वाधिक महत्वपूर्ण नेता के रूप में गाँधी का आविर्भाव 1920 तक हो गया था और कहा जा सकता है कि 1945 तक वे समग्र रूप से कांग्रेस पर छाये रहे। इसलिए ही इस युग को गाँधी युग (1920-45) भी कहा जाता है।

भारत के राष्ट्रवादी नेता के रूप में गाँधी की भूमिका का मूल्यांकन अत्यन्त दुरूह कार्य है। इसका कारण यह है कि एक साथ ही गाँधी भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई पड़ते हैं - जैसे, हिन्दू धर्म सुधारक की भूमिका, समाज सुधारक की भूमिका, राष्ट्रीय आन्दोलन के नेता की भूमिका, आदि। इनमें से किसी एक को अलग करके देखने पर कदाचित हम उनकी भूमिका के साथ न्याय नहीं कर सकते। पं. जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में "उनमें बराबर ही आन्तरिक द्वन्द्व छिड़ा हुआ होता था। आन्तरिक द्वन्द्व हमारी राष्ट्रीय राजनीति में भी छिड़ा रहता था। एक ओर राष्ट्रीय नेता के रूप में गाँधी थे तो दूसरी ओर महज एक इंसान के रूप में गाँधी जिनका पैगम्बरी संदेश न सिर्फ भारत वरन सारी मानव जाति और विश्व के लिए समर्पित था।"

गाँधी भारत को आधुनिक और जनवादी बनाने वालों में महानतम व्यक्ति थे। नोबल पुरस्कार विजेता वी.एस. नायपॅाल के शब्दों में, "गाँधी ने भारत को जैसा देखा वैसा अन्य किसी भारतीय ने नहीं देखा। उनकी दृष्टि सीधी थी और यह सीधापन क्रांतिकारी था और है। गाँधी ठीक वही देखते हैं जो एक पर्यटक देखता है। जो साफ सपाट है, उसे वे अनदेखा नहीं करते हैं। वे बनारस के भिखारियों को देखते हैं, निर्लज्ज पुरोहितों को देखते है और गंदगी को। वे डाक्टरों, वकीलों और पत्रकारों की घिनौनी हरकतों को देखते है। वे यह देखते है कि काम से भारतीय कैसे कन्नी काट लेते हैं। उनकी निगाह से न भारतीय नजरिया ओझल होता है न भारतीय समस्या। वे इस जड़ीभूत और सुस्त समाज की गहराई में झांककर देखते हैं।" गाँधी के सफलता के पीछे एक बड़ा कारण उनका सामाजिक आधार था। जनमानस की जो समझ गाँधी के पास थी वैसा अन्य किसी भी नेता में मिलना अत्यन्त दुर्लभ है।

किसी भी जनान्दोलन में राजनैतिक कार्य लोगों की चेतना, उनके भोगे हुए अनुभव और सामाजिक परिस्थितियों से अपने आप पैदा होने वाले उनके असंतोष पर आधारित होता है। नेताओं को न सिर्फ इस जन चेतना के अनुरूप कार्य करना होता है वरन् उन्हें इसे प्ररित करना, जागृत करना, शिक्षित व निर्देशित करना भी होता है। अपने अनेक राजनैतिक, सामाजिक, नैतिक, क्रियाकलापों द्वारा गाँधी ने अपने समस्त सार्वजनिक जीवन में समय-समय पर अनेक महत्वपूर्ण आन्दोलनों को सशक्त नेतृत्व प्रदान किया।

भारत में किए जाने वाले आन्दोलन के नेतृत्वकर्ता के रूप में गाँधी की रणनीति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष यह था कि उन्होनें ब्रिटिश समाज के कुछ वर्गों को अपने पक्ष में कर लेने अथवा उन्हें तटस्थ कर देने का सफल प्रयास किया। उन्होनें ब्रिटिश जनता को कभी शत्रु के रूप में पेश नहीं किया बल्कि ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों के विरूद्ध आन्दोलन किया। इस तरह उन्होनें ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता व ब्रिटिश प्रजा के बीच स्पष्ट

अन्तर किया। यह गाँधी के नेतृत्व की अनोखी विशेषता थी जो उन्हें दुनिया भर में चलाये जाने वाले सभी आन्दोलनों व नेताओं से पृथक करता है।

गाँधी हमेशा यह मानते थे कि नेता स्वयमेव कोई आन्दोलन पैदा नहीं कर सकते अपितु आन्दोलन तो जनता पैदा करती है। जनता अपने आप ही आन्दोलन की ओर आगे बढ़ती है और नेता उसका नेतृत्व तभी कर सकता है जब वह उसकी मंशा को ठीक-ठीक भाँप सके। उनका स्पष्ट मानना था कि नेता व जनता के बीच पारस्परिक विश्वास का सम्बन्ध होना चाहिए। 5 फरवरी 1939 को 'हरिजन' में एक लेख में नेताओं, जनजागरूकता व जनान्दोलन के बीच राजनैतिक सम्बन्धों पर उन्होनें लिखा, "लाखों लोगों में जागरूकता लाने में समय लगता है। इसे मशीन से नहीं बनाया जा सकता। यह रहस्यमय ढंग से आती है या आती प्रतीत होती है। राष्ट्रीय कार्यकर्ता सिर्फ जनमानस की पूर्वापेक्षा की प्रक्रिया तेज कर सकते हैं।" वे बार-बार इस बात को दोहराते थे कि कोई भी नेतृत्व जनता को अपने मर्जी से इस्तेमाल नहीं कर सकता। 1942 में एक ब्रिटिश पत्रकार के प्रत्युत्तर में उन्होनें कहा कि, "मेरा प्रभाव, बाहर के लोगों को भले ही व्यापक लगे, बहुत सीमित है। मेरे पास लोगों की समस्याओं को सुलझाने के लिए अभियान चलाने की शक्ति हो सकती है, क्योंकि लोग इसके लिए तैयार हैं और उन्हें कोई मददगार चाहिए। लेकिन मुझमें ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जिससे मैं लोगों की ऊर्जा ऐसी दिशा में ढकेल सकूँ, जिसमें उन्हें खुद कोई रूचि नही हैं।

14.10 सारांश

समय-समय पर गाँधी ने अपने नेतृत्व में जिन जनान्दोलनों का संचालन किया उनकी कुछ मुख्य प्रवृत्तियों को निम्न प्रकार से देखा जा सकता है :-

नेताओं और समर्थकों तथा स्वतःस्फूर्तता और संगठन के बीच सम्बन्धों पर गाँधी की समझ को उनके द्वारा चलाये गये आन्दोलनों की शैली और व्यवहार में स्वतः ही देखा जा सकता है। गाँधी ने प्रत्येक आन्दोलन को अत्यन्त ही सावधानी से राजनीतिक वैचारिक रूप से खड़ा किया। जनभावनाओं की उनकी समझ अत्यन्त ही सटीक थी। जनभावनाओं की यह समझ ही उन्हें अन्य राष्ट्रवादी नेताओं की नेतृत्व क्षमता से मीलों आगे खड़ा कर देती है। वे आन्दोलन की तीव्रता को लोगों की भावनाओं की बढ़ती गर्मी के साथ नजदीकी तालमेल से विकसित कर लिया करते थे। उच्च स्तर के नेता, निचले क्रम के नेता और कार्यकर्ताओं को धीरे-धीरे एक अनुशासित जनता के साथ जोड़ दिया जाता था। उनकी कोशिश होती थी कि जो माँगे प्रस्तुत करनी है उनकी प्रकृति मूलतः लोगों को बड़े पैमाने पर एकजुट करने की हो। इस तरह गाँधी वास्तविक जननेता के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं। कदाचित् जनता के इसी अद्भुत नेतृत्व क्षमता के कारण उन्हें 'राष्ट्रपिता' की संज्ञा दी गई।

14.11 अभ्यास प्रश्न

1. 'गाँधी एक जननायक थे' इस पर अपने विचार प्रस्तुत करें।

2. सत्याग्रह पर एक आलोचनात्मक टिप्पणी लिखें।

3. स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन में गाँधी की भूमिका का परीक्षण कीजिए।

14.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चन्द्र, विपिन, भारत का स्वाधीनता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

2. कुमार, प्रभात, स्वतंत्रता संग्राम और गाँधी का सत्याग्रह, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

3. अग्रवाल, प्रेमलता, युग देवता महात्मा गाँधी, कुमार पब्लिशिंग हाउस, मेरठ

4. सिन्हा, मनोज (संपादन), गाँधी अध्ययन, ओरियँट लांगमैन, नई दिल्ली

5. जोशी, एम.सी., गाँधी, नेहरू, टैगोर तथा अम्बेडकर, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद